# पाठक से

जब मैंने राष्ट्रीय आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर एक उपन्यासमाला लिखने का निश्चय किया था, तब मुझे इसका अनुमान नही था कि बाद को चलकर यह कार्य दुरूह सिद्ध होगा और हम अपने को इस प्रकार बुरी तरह बाध रहे हैं। यो मैं राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास के विभिन्न अगो पर कुछ शोध कर चुका था। 'भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास' बीस साल पहले ही लिख चुका था। प्रकाशित होते ही ब्रिटिश सरकार ने उसे जब्त कर लिया था। बीच मे सात साल जब्त रहने के बाद उसके कई सस्करण हुए और अब पाचवा परिवर्द्धित सस्करण इस उपन्यास के साथ ही प्रकाशित हो जाएगा ऐसी आशा है। इसी प्रकार राष्ट्रीय आन्दोलन का एक बृहत् इतिहास लिख चुका था। इसके अतिरिक्त एक स्वयसेवक के नाते १९२१ से लेकर १९४७ तक राष्ट्रीय आन्दोलन से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध भी रहा, फिर भी ज्यो-ज्यो उपन्यासमाला आगे बढती जाती है, त्यो-त्यो कठिनाइया भी जटिल होती जा रही है।

युग बदलता है, साथ-साथ वीर बदलते है, वीरता की धारणा बदलती है, विचारधारा मे नये मोड आते है, विरोधी विचारो का आपस मे टकराव होता और नये विचार जन्म लेते है; इन अपेक्षाकृत सामूहिक भावनाओ के साथ-वैयक्तिक क्षेत्र के विचार जैसे प्रेम, विरह आदि की धारणा मे भी कुछ न कुछ परिवर्तन हो रहे हैं, कम से कम उनका स्फुरण और ही रग लाता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो इस माला का पहला उपन्यास 'नया सवेरा' किसी और सतह पर था, 'रैन अधेरी' दूसरी ही सतह पर था और अब 'रगमच' की भावभूमि उन दोनो से भिन्न है। इस उपन्यास का पात्र प्रेमचन्द 'रैन अधेरी' के कुणाल आदि से पृथक् है।

इतिहास लिखने का केवल यह उद्देश्य नही हो सकता कि अतीत के भूले-

बिसरें चित्र ज्यो के त्यो पेश कर दे, विशेषकर यदि इतिहास कला का माध्यम ग्रहण करे तो उसका सृजनात्मक पहलू तभी साफल्यमण्डित माना जाएगा जब उससे भविष्य के लिए भी इगित उभरे ।

इस उपन्यास मे जहा कही भी ऐतिहासिक पुरुष जैसे महात्मा गाधी, सरदार भगतसिंह आदि के सम्बन्ध मे जो भी तथ्य दिए गए है, वे कल्पना पर आधारित नही बल्कि प्रामाणिक है ।

कानपुर के दगे के विषय मे हमने यह जो दिखलाया है कि लाहौर षड्यन्त्र के दण्डितो की फासी के प्रतिवाद मे यह एक विद्रोह के रूप मे शुरू हुआ था, पर पुलिस वालो ने इसे साम्प्रदायिक दगे के रूप मे बदल दिया, यह भी ऐतिहासिक है और आज भी कानपुर में बहुत-से ऐसे लोग जीवित होगे जो उक्त दगे के इस रूप से परिचित है ।

इस उपन्यास मे कहानी को कराची काग्रेस तक ला दिया गया है । आशा करता हू कि माला के शेष उपन्यास भी पाठक के हाथो मे जल्दी ही पहुचते जाएंगे क्योकि कठिनाइया जितनी बढ रही है, मेरी ज़िद भी उसी अनुपात से बढ रही है ।

१९० खैबरपास हॉस्टल
दिल्ली-८

—मन्मथनाथ गुप्त

# १

बाबाजी अपने पुत्र कुणाल और पुत्रवधू रुक्मिणी का दाहकर्म करके श्मशान से लौटे तो बिल्कुल मौन थे। जब तक दोनो की सम्मिलित चिता जलती रही तब तक बडे ज़ोर से गीता के श्लोक दुहराते रहे—

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥
अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥
आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्वदति तथैव चान्य।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति श्रुत्वाप्येन वेद न चैव कश्चित् ॥

चिता की बेतुकी और अनवरत चिटचिटाहट के साथ कही जैसे इन श्लोकों का आन्तरिक तालमेल बैठता था। ये श्लोक मानो चिता की चिटचिटाहट पर रनिंग कमेन्ट्री थे। ऐसा ज्ञात होता था जैसे महर्षि वेदव्यास या जिन्होने भी इन श्लोको की रचना की हो, उन्होने कृष्णपक्ष की अंधेरी रात मे चिता के उजाले मे बैठकर इन श्लोको की रचना की थी। श्रोताओ के मन मे एक अजीब-सी विरक्ति जगती थी, जिसका मतलब यही था कि यह ससार असार है।

आनन्दकुमार श्मशान मे बरावर बाबाजी के पास बने रहे, केवल इतने पास कि निगरानी बनी रहे। थोडे समय मे ही उन्होने जान लिया था कि वृद्ध बहुत ही भावुक व्यक्ति हैं, इतने भावुक कि उनके लिए चिता मे कूद पडना भी कोई असम्भव बात नही थी। पर तीन घटे, जब तक कि चिता जलती रही, बाबाजी एक ही स्थान पर स्थिर दीपशिखा की तरह अचल-अटल रेत मे जमे

रहे। न उन्होने चिता की तरफ जाने की चेष्टा की और न कुछ और किया। आनन्दकुमार उनके ही इर्द-गिर्द बने रहे, पर वे एक स्थान पर नही रहे। वे यदा-कदा दूसरे लोगो से कुछ बातचीत भी करते जाते थे।

जब चिता बहुत कुछ जल चुकी, लपटे शान्त-सी हो गई और एक छोटी-सी लौ ही रह गई, तब बाबाजी की श्लोको की आवृत्ति की गति भी धीमी पड गई, जैसे लपटो के साथ-साथ वे भी धीमे पड गए हो। असल मे अब बाबाजी के मन मे शोक की जगह आश्चर्य, महान् आश्चर्य था।

यह सब कैसे हो गया? ३०-३५ साल पहले उस बालक का जन्म हुआ था। वह दिन बाबाजी को कभी भूलता नही था। पहला लडका था। बाप होने के नाते घबडाहट की मात्रा अन्य सब भावनाओ से अधिक थी या यो कहिए कि सब भावनाए मिलकर रासायनिक रूप से घबडाहट मे परिणत हो गई थी।

जब पुत्र-जन्म की खबर मिली तो घबडाहट का स्थान खुशी ने ले लिया, पर यह खुशी भी सोलहो आने खुशी नही थी। इसमे कई और उपादान थे। पत्नी के प्रति सहानुभूति तथा शुभेच्छा, नवजात बालक के प्रति, न जाने गुड्डे के प्रति भावना जैसी कोई गुलगुली भावना थी और थी भविष्य-चिन्ता। बहुत दूर भविष्य की चिन्ता।

'जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु' कहते-कहते बाबाजी को एक हिचकी-सी आई। चिता अब राखो का ढेर बनती जा रही थी, तो यह अन्तिम मिलन-सूत्र भी समाप्त होने को था। अब उस दिन उत्पन्न उस बालक के साथ (न जाने क्यो उसके साथ अब उस बालिका का चित्र भी आ रहा था, जिसका नाम सर्वजया था) सभी सूत्र छिन्न होने वाले थे।

बाबाजी मिरगीग्रस्त व्यक्ति की तरह एकदम से उठ खडे हुए—नही, नही, ऐसा नही। किसी भी दाम पर उसे रोकना पडेगा।

वे चिता की तरफ बढने ही वाले थे कि पीछे से आनन्दकुमार ने उनका हाथ थाम लिया। बाबाजी का शरीर भी शायद भीतर ही भीतर भस्मीभूत हो चुका था। आनन्दकुमार के हाथो मे वे फूल की तरह समा गए। आनन्दकुमार ने कहा—मृत्यु तो प्राणिमात्र की अन्तिम गति है, पर यह मृत्यु बहुत ही निम्ली रही ··

बाबाजी को इस भाष्य से कोई सान्त्वना नही मिली। आधी की तरह कुछ शब्द उनकी जीभ के अग्र भाग पर आए, गए—मुझे नही चाहिए यह गौरवमय मृत्यु, मुझे मेरे बालक और बालिका लौटा दो!—पर इतने ही मे उनका ध्यान एकत्र उस भीड पर गया जो शहीद को अपनी अन्तिम श्रद्धाजलि देने के लिए एकत्र हुई थी और छटते-छटते भी कुछ रह ही गई थी····

उन्हे इस भीड पर भी क्रोध आया, पर जब उडती हुई दृष्टि से उन्होने भीड के दो-तीन चेहरो को देखा जिनकी आखो के कोर गीले थे, बाल बिखरे हुए थे, दाढिया बढी हुई थी, तब उन्होने आनन्दकुमार के हाथो मे सम्पूर्ण रूप से आत्मसमर्पण कर दिया। बडी विवशता से बोले—अब क्या करना होगा ?

आनन्दकुमार ने भी उसी लहजे मे कहा—लौटना होगा।

बाबाजी के मन ने कहा कि इस समय लौटने से तो न लौटना ही अधिक सरल होता। कहा लौटना है ? क्यो लौटना है ? लौटने से क्या उद्देश्य सिद्ध होगा ? अब जीने मे क्या धरा है ?

—लौटना होगा ' लौटना होगा लौटना होगा

आनन्दकुमार ने उनका हाथ पकड रखा था। बाबाजी मे लगभग कोई इच्छाशक्ति नही रह गई थी। जीवन मे इतनी विवशता है ? 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु' इसमे ध्रुव शब्द कितना भयकर है! ध्रुवतारा से भी ध्रुव ? तो फिर लौटकर क्या होगा ? अपने को भी तो एक दिन· फिर क्यो न आज ही ·। अभी

—लौटना होगा लौटना होगा लौटना होगा···

पर वे आनन्दकुमार के स्नेहपगे हाथो को झटक नही सके और जैसे फूलो का पौधा माली के हाथो मे इस आशा से आत्मसमर्पण कर देता है कि उसका फूल देवता के सिर पर चढेगा, उसी पवित्र भावना से बाबाजी ने आनन्दकुमार के साथ सारे अन्तिम अनुष्ठान किए और उन्हीके साथ नहाकर घर लौटे।

रास्ते मे बाबाजी ने कहा—मुझे सबसे ज्यादा दुःख तो उस लडकी का है। लडके ने तो जो कुछ किया उसे भुगता, उसके लिए वह तैयार था, पर उस फूल-सी बच्ची को यह दुर्भोग क्यो मिला ?

आनन्दकुमार ने इसके उत्तर मे कुछ नही कहा क्योकि वे जानते थे, यह तुलनात्मक वक्तव्य असल मे कोई अर्थ नही रखता। जब वे दोनो इतने अभिन्न

थे जैसे पानी और लहर, बल्कि सुर और ताल, तो उनके भाग्य को अलग-अलग करके देखने-दिखाने का कोई अर्थ ही नही होता। विधाता ने उन्हे अलग-अलग पैदा किया था, पर रुक्मिणी ने अपने पातिव्रत्य या प्रेम के तेज से विधाता के उस विधान को व्यर्थ कर दिया था। हा, कुणाल का त्याग किसी और कोटि का था और रुक्मिणी का त्याग किसी और कोटि का। एक का समष्टि-प्रधान था, दूसरे का व्यष्टि-प्रधान, या उसमे समष्टि-व्यष्टि का प्रश्न ही नही उठता था; दोनो एक दूसरे मे खोकर अभिन्न हो गए थे। बाबाजी के कथन के उत्तर मे आनन्दकुमार ने उनका हाथ धीरे से दबा दिया था।

जब बाबाजी आनन्दकुमार के पुस्तकालय वाले कमरे मे बैठे, तो एकाएक उन्होने कहा—अब मैं क्या करूगा ?

इस छोटे-से प्रश्न मे सत्तर वर्ष के जीवन की सजोई हुई सारी व्याकुलता थी। इस प्रश्न मे सैकडो अन्य प्रश्न थे। इस व्याकुलता मे कुणाल की मा की मृत्यु के समय की व्याकुलता से लेकर जीवन मे पडी हुई कितनी ही टक्करों, टकराहटों और थपेडो की व्याकुलता थी। सबसे बढकर व्याकुलता यह थी कि आज से तीस-पैतीस साल पहले जिस बालक के आने पर मैंने खुशिया मनाई थी, आज उसे उसकी पत्नी के साथ चिता पर चढा देने के बाद मै क्या करूगा ?

आनन्दकुमार ने सारी परिस्थिति समझ ली। वे यह प्रयास करने लगे कि बाबाजी की दृष्टि शहादत वाले पहलू पर बार-बार केन्द्रित की जाए। वे जानते थे कि इसमे कृतकार्य होना असम्भव नही तो टेढी खीर अवश्य है। फिर भी वे बोले—मरना तो सबको है ही, इसलिए किसी अच्छे लक्ष्य के लिए मर जाना बहुत बडा सौभाग्य है।

बाबाजी ने अप्रत्याशित तेजी के साथ कहा—बूढे बाप को जिन्दा छोडकर ?

बाबाजी ने ये शब्द किसी प्रकार व्यग्य मे नही कहे थे, बल्कि उनका हृदय बैठा जा रहा था, उसीकी इसमे अभिव्यक्ति थी। यदि व्यग्य था तो अपने प्रति।

श्यामा तथा रूपवती भी अन्त तक हिम्मत बटोरकर वहा आई। आनन्दकुमार के साथ उनकी आखो-आखो मे कुछ बाते हुई। अगले ही क्षण श्यामा और रूपवती चली गईं। थोडी देर मे श्यामा हाथ मे दूध का एक गिलास लेकर मूर्तिमती करुणा की तरह लौटी। वह दिल पत्थर करके आई थी। उसकी दबी

हुई पगचाप यह बता रही थी कि जो कार्य वह करने जा रही है, वह उसे पूर्ण रूप से नही जच रहा था क्योकि उसने स्वय भी तब से जल के अलावा कुछ नही लिया था। वही क्यो, किसीने कुछ नही लिया था। रूपवती श्यामा के दो-तीन कदम पीछे थी और जैसे हरएक कदम वस्तुत नाप-तौलकर रख रही थी।

केवल आनन्दकुमार का मन सब प्रकार की दोष-बोध की भावनाओं से मुक्त था, शिशु के मन की तरह। वे श्यामा के हाथ से दूध का गिलास लेते हुए बोले—बाबाजी, श्यामा आपके लिए दूध लाई है।

जीना, चिता छोडकर चल देना, फिर उसके बाद अब यह दूध ? यह तो हद थी। बाबाजी के मन का रबड इतना तनने के लिए तैयार नही था। एकाएक उनके चेहरे पर जाने कैसी ऐंठन आई। वे बोले—मुझे बाबाजी न कहो। मै घोर पापी हू। मैं इतना बडा कायर हू कि यह श्रद्धेय भेष इसलिए ओढ रखा था कि यदि कुछ बुरा-भला हो ही जाए तो मुझे पता न चले। मै साधु नही शुतुरमुर्ग हू। तभी तो भगवान ने मुझे यह दोहरी-तेहरी सजा दी है।

आनन्दकुमार जानते थे कि जिन परिस्थितियो में शहादत हुई है, उनमे शोक के चगुल से छुटकारा पाना सहज नही था। बोले—आप धार्मिक अर्थ मे बाबाजी न सही, आज आप देश भर के बाबा है, जो आदर्श कुणाल और रुक्मिणी ने प्रस्तुत किया है, उसके कारण आप देशवासियो के श्रद्धेय और पूजनीय हो गए है। बाबाजी का रूप तो आपका बाहरी रूप था, असली रूप तो अब सामने आया है।

इसपर बाबाजी उठकर खडे हो गए। बोले—यह अजीब युग आ गया। पहले लोगो की कदर खानदान, कुल और मा-बाप के कारण होती थी, पर आज यह उल्टी गगा बह रही है। मेरी प्रशसा इसलिए हो रही है कि मैं जगदीश का बाप हू। नही-नही, आप मुझे दूध के लिए न कहिए।

आनन्दकुमार भी साथ-साथ खडे हो गए थे, पर इस बीच मे दूध का गिलास उनके हाथ से श्यामा के हाथ मे जा चुका था। वे बोले—अच्छा दूध न पीजिए, बैठिए तो सही। अब तो जो होना था हो चुका।

थोडी देर तक किसीने कुछ नही कहा, फिर बाबाजी बैठ गए। शायद उनकी समझ मे यह बात आने लगी थी कि जो कुछ भी हुआ, हुआ और जो कुछ भी है, है। एक समुद्र-यात्री, जिसका सर्वस्व समुद्र के गर्भ मे समा चुका हो,

किनारे पर पहुचकर जिन आखो से ससार को देखता है उन्ही आखो से श्यामा और रूपवती को देखते हुए वे एकाएक पूछ बैठे—यह लडकी कौन है? यह तो उतनी ही बडी है जितनी बडी सर्वजया थी।

श्यामा की आखे डबडबा आईं। बोली—हा, मै उम्र मे दीदी की ही तरह हू, पर उनकी तरह भाग्यवती नही हू।

वृद्ध की सर्द पडी हुई आखो मे जैसे जीवन-सुलभ कौतूहल की एक चिनगारी चमक उठी। बोले—यह कैसे?

तब आनन्दकुमार ने थोडे मे सारी कथा कह सुनाई और अन्त मे बोले—इसके पति महेन्द्र को फासी हो गई, पर इसे बच्चे की देखभाल करनी थी।

कही पर जैसे बूढे के पीडित हृदय को किसीने और कोच दिया। बोले—सर्वजया के बच्चा तो नही था, पर मै बूढा तो था। वह मेरे लिए ही जीवित रहती। अब मेरी देख-रेख कौन करेगा? खास करके जब उसने आश्रम मे जाकर मुझसे स्नेह बढाया, फिर बाह छोड दी · ·

बाबाजी ने अन्तरिक्ष की ओर देखा, फिर किसीके उद्देश्य से हाथ उठाकर प्रणाम किया और बोले—नही-नही, हम अकिचन, नगण्य, क्षुद्रातिक्षुद्र तेरी अपरम्पार लीला कैसे समझ सकते है? जगदीश भी तो अकेला जा रहा था। उसका साथ वह कैसे न देती? फिर मानो कुछ हसी करते हुए बोले—उस चाद-सी सूरत के पीछे जाती कि इस बूढे खूसट के पीछे आती? मै अकेला ही रह लूगा और अकेला क्यो, तुम सब लोग तो हो। बे—चा—रे जगदीश के पास कौन रहता?

आनन्दकुमार सासारिक मामलो मे दक्ष नही थे, वे असहाय की तरह कालीन की तरफ देख रहे थे मानो उनकी समझ मे न आ रहा हो कि इस परिस्थिति का अन्त कैसे होगा। श्यामा ने भी दूध का गिलास छिपा लिया था, तब रूपवती सामने आई, बोली—महाराज, आप तो बडे ज्ञानी है। पुनर्जन्म मानते हैं, कर्मफल मानते है, ईश्वर मे आस्था है फिर आपको इतना शोक क्यो हो रहा है?

बाबाजी ने रूपवती को कुछ क्षणो तक ऐसे देखा जैसे उसकी बाते किसी अज्ञात भाषा मे कही गई हो, फिर एकाएक जैसे उनकी जिह्वा पर वाणी आई। बोले—बेटी, बीस साल से मैं अपने चित्त को इस अफीम पर पाल रहा हू, पर

समय पडने पर यह कुछ काम न आई। कभी काम नही आई थी। जब जगदीश की मा मरी थी, तब जितनी व्याकुलता हुई थी, आज उतनी ही बल्कि उससे ज्यादा व्याकुलता है। मैंने देखा है, आश्रम मे जो लोग आते थे, वे कई बार मेरे धार्मिक उपदेश सुनकर तृप्त हो जाते थे। पर वह तो सारा धोखा था। मैं तो जानता हूं, जो जल मैं लोगो को पिलाता था, वह जल ही नही था, बल्कि मृगमरीचिका थी। मै उनके सामने मृगमरीचिका की रचना करता था।

सबने बारी-बारी से बाबाजी को समझाने का प्रयत्न किया। पर कोई भी सफल नही हो सका। परिणाम यह हुआ कि घर मे किसीने खाना नहीं खाया। आनन्दकुमार को बहुत अधिक शोक हुआ था, फिर भी शायद वह इस रूप मे शोक की अभिव्यक्ति न करते, पर मेजबान के नाते वे भी सबके साथ सामान्य बहाव मे बहते रहे। किसीकी समझ मे नही आ रहा था कि कैसे क्या होगा। बाबाजी को खिलाए बिना खाने की बात तो अकल्पनीय थी।

अतिथि-धर्म भी यही कहता था, लौकिक धर्म भी यही।

## २

अगले दिन सुबह भी सब लोगो ने देखा कि बाबाजी रात को जिस मुद्रा मे पुस्तकालय मे बैठे थे, अब भी उसी मुद्रा मे बैठे है। आनन्दकुमार बडी रात तक उनका साथ देते रहे, फिर वे वही सो गए, शायद अपनी इच्छा के विरुद्ध।

श्यामा और रूपवती उन दोनो को देख गई थी, पर किसीने कुछ नही कहा था और इनमे से कोई भीतर नही आया। उन दोनो को बाबाजी के सम्बन्ध मे विशेष चिन्ता थी और रूपवती तो गृहस्वामिनी होने के नाते यह समझती थी कि इस समस्या को सुलझाने का उत्तरदायित्व उसीपर है, परन्तु जब उन्होने बाबाजी को उसी आसन मे कभी आख बन्द किए हुए और कभी खोले हुए बैठे पाया, तो वह निराश हो गई। यही सोच लिया कि आनन्दकुमार पुस्तकालय के बाहर आएगे, तो उनके साथ परामर्श किया जाएगा। एक आदमी

को इस तरह बिना खाए-पिए मरने तो दिया नही जा सकता।

अभी सूर्योदय अच्छी तरह नही हुआ था कि घर मे कबीर की चहचहाहट सुनाई पडी। बाबाजी बैठे-बैठे चौक पडे, यह तो जैसे बालक जगदीश की ही आवाज़ थी।

कबीर बाकायदा लड रहा था। वह अपनी मा से कह रहा था—जब तुम नही खाती तो मै भी नही खाऊगा।···

श्यामा ने उसे धीरे से समझाते हुए कहा—नही बेटा, ऐसा नही कहते। बाबाजी···—इसके बाद श्यामा ने क्या कहा, यह बाबाजी को सुनाई नही पडा।

श्यामा चाहती थी कि चुपके-चुपके मा-बेटे मे बातचीत हो जाए, किसीको कानोकान खबर न हो और कबीर रोज़ की तरह एक गिलास दूध पी ले। पर वह मा के इस षड्यन्त्र को व्यर्थ करते हुए चिल्लाकर बोला—बाबाजी कौन ?

श्यामा ने धीरे से कहा—वही जो लायब्रेरी मे बैठे है।

कबीर ने भी बाबाजी को देखा था, बोला—दाढी वाले ?

—हां-हा, वह बहुत बडे आदमी हैं, अब तू दूध पी ले।

कबीर ने अन्तिम बात सुनी-अनसुनी करके कहा—बाबाजी क्यो नही खाते ? वे बीमार है ?

इसके उत्तर मे श्यामा ने जो कुछ कहा, वह बाबाजी को फिर सुनाई नही पडा। पर वे हिलकर बैठ गए। उनका वह निश्चेष्ट जड भाव, जिसके कारण वे एक जीवित शव-से हो रहे थे, जाता रहा। वे कबीर की मीठी-मीठी बाते सुनने के लिए उत्कर्ण होकर प्रतीक्षा करने लगे।

कबीर बोला—मै भी नही खाऊगा।

उसके उत्तर मे अन्तिमता का पुट था। इसपर मा-बेटे मे तकरार होती रही, जिससे बाबाजी को न केवल बालक जगदीश की बल्कि उसकी मा की भी याद आ गई। अब तक जो आसू रुक-रुककर आ रहे थे वे धाराप्रवाह जारी हो गए। मन पर से जैसे पहाड उतर गया। वे उठ खडे हुए।

इतने मे आनन्दकुमार भी जग गए। वे हडबड़ाकर खडे हो गए, बोले—क्या बात है ? मैं शायद सो गया था। आप अभी तक शोक कर रहे है ?···

आगे वे कुछ बोल नही सके।

बाबाजी आसू पोछते हुए बोले—मै भी शायद सो गया था ।

इतने में कबीर कूदता हुआ आ पहुचा । बाबाजी को न जाने क्यो यह ख्याल हुआ कि यह लडका मेरे आसू न देख ले । बोले—आओ ।

पर कबीर दूर खडा उनकी लम्बी दाढी को ध्यान से देखता रहा, फिर एकाएक जैसे न्यायाधीश अपराधी से पूछता है, बोला—तुम खाना क्यो नही खाते ?—कहकर प्रश्न के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही कहा—तुम नही खाते तो मा नही खाती, मा नही खाती तो मै भी नही खाता ।

कबीर के पीछे-पीछे श्यामा भी आई थी । वह कबीर को रोकना चाहती थी, पर आनन्दकुमार ने शायद कुछ इशारा कर दिया, इसलिए वह बीच मे नही पडी । उसे पूर्ण विश्वास था कि जब आनन्दकुमार यह कौतुक देख रहे है तो इसमे कोई न कोई रहस्य होगा । शायद जहा बडे-बडे असफल रहे, वहा एक शिशु बाजी मार ले जाए । मातृत्व के गौरव से उसकी आखे दीप्त हो गईं ।

कबीर के उत्तर मे बूढे बाबाजी ने कहा—तुम बच्चे हो · · ।

शायद उन्होने यह इसलिए कहा कि उन्हे कोई तर्क नही सूझा । कबीर ने जैसे चोट पर चोट करते हुए कहा—तुम रोते क्यो हो ?

बाबाजी के मुह से यो ही निकल गया—भगवान ने रुलाया है इसलिए रो रहा हूं । रो भी कहा रहा हू ?—कहकर उन्होने हसने की व्यर्थ चेष्टा की । उनका चेहरा विकृत-सा होकर रह गया ।

श्यामा और आनन्दकुमार यही समझते थे कि कबीर को कल के हत्याकाण्ड का कुछ पता नही है, पर कबीर ने सबको आश्चर्य में डालते हुए कहा—मेरे बाप फासी पा गए थे, पर मै नही रोया था । क्यो अम्मा ! हम लोग रोए थे ?

श्यामा का चेहरा एक क्षण के लिए जाने कैसा हो गया, पर सम्हलकर बोली—तुम बहादुर बाप के बहादुर बेटे जो ठहरे !

कबीर बोला—हा मैं बहादुर बेटा हू—कहकर उसने बाबाजी की तरफ चुनौती भरी दृष्टि से देखते हुए कहा—देखोगे ? लाऊ अपनी तलवार ?

आनन्दकुमार ने पीछे से जाकर कबीर के कन्धे पर हाथ रखते हुए कहा—तलवार फिर देखेंगे, पहले दूध पी ले । बिना दूध पिए कोई बहादुर नही होता ।

कबीर ऐसे भूलने वाला नही था । बोला—बाबाजी दूध नही पिएगे तो मैं भी नही पिऊगा ।

आनन्दकुमार बोले—बेटा, ऐसी ज़िद नही किया करते। वे साधू आदमी हैं, कभी खाते हैं, कभी नही खाते । बडो के साथ बराबरी नही किया करते ।

पर कबीर ऐसी बातो मे आने वाला नही था । बोला—मैं भी दाढी लगाऊगा, मैं भी साधू बनूगा ।

आनन्दकुमार ने कहा—तेरे तो अभी दाढी ही नही निकली है ।

कबीर इस अकाट्य तर्क से भी परास्त होने वाला नही था, बोला—मैं बाबाजी से दाढी लूगा ।

तर्कशास्त्र के अनुसार यह कथन बिल्कुल ही मूर्खतापूर्ण था, पर बाबाजी के मन पर इसका असर जादू की तरह हुआ । वे उठ खडे हुए और कबीर को गोद मे लेते हुए बोले—मैं अपनी आधी दाढी तुझे ज़रूर दूगा ।

कबीर बाबाजी की और किसी बात से नही उनकी लम्बी और लच्छेदार दाढी से अत्यधिक प्रभावित था । अब जो उसने उसी दाढी को अपनी पहुच के अन्दर पाया तो डरते-डरते और कनखी से अम्मा की ओर देखते हुए दाढी छूकर देखी तो बड़ा निराश हुआ, बोला—अरे यह तो बिल्कुल बैठी हुई है । कैसे निकलेगी ?

कबीर के माथे पर इतने बल आ गए थे जैसे सारे ससार का भविष्य इसी दाढी के बटवारे पर निर्भर था ।

बाबाजी की जीवन-नौका अब तक बर्फ की चट्टान मे फसी हुई थी । वह अब जैसे पानी मे उतर गई । कबीर का स्पर्श वैसा ही था जैसा····। नही-नही-नही, यह तो विश्वासघात है, वह तो चिता पर चढ चुका है ।

बाबाजी ने एकाएक कबीर को गोद से उतार दिया, पर कबीर ने उनका हाथ नही छोडा । नौका जो फिर बर्फ मे फस रही थी, वह पानी की पतली धारा मे से गुज़रने लगी । फिर भी अभी तक उसका भविष्य अनिश्चित था।

कबीर ने सहजात बुद्धि से कुछ अनुभव किया । बोला—मेरे बाप भी मर गए थे, पर मैं नही रोया था । क्यो अम्मा, हम लोग रोए थे ?

अबकी बार श्यामा ने कुछ उत्तर नही दिया। उसने सिर नीचा कर लिया । बाबाजी ने उसके उत्तर मे अप्रत्याशित रूप से कहा—तुम मुझे बहादुर बनाओ । मुझे तो बेटो और पोतो से ही बहादुरी सीखनी है ।—कहकर उन्होने, जैसे एक सिसकी-सी भरी ।

कबीर बोला—तो अच्छा, मै अपनी तलवार लाता हू—कहकर वह जैसे खुद ही समझ गया कि वह ऐसी बात कह रहा है, जो परिस्थिति मे खपती नहीं है। बोला—पर बाबाजी, पहले तुम दूध पियो।

बाबाजी ने कहा—बेटा, पिया नही जाता, नही तो क्या इन्कार था ? दूध तो बड़ी अच्छी चीज है

—तो मैं भी नही पिऊगा।

उस समय बात यही तक रही। कबीर के हमले के सामने भी बाबाजी स्थिर रहे। उन्हे यह महसूस हुआ कि इस प्रकार अडे रहकर वे सबके सामने दोषी बन रहे हैं, फिर भी मजबूरी थी। आज बाप की प्रथम वफादारी शहीद बेटे के प्रति थी उसके सामने मृदुता और शिष्टाचार तो बहुत तुच्छ थे।

जब सब लोग यहा तक कि आनन्दकुमार भी मुह लटकाकर बल्कि निराश होकर चले गए तो बाबाजी मौका पाकर चुपके से उठे और मकान से बाहर निकल गए।

इन सबका यही एक उत्तर उनके पास था।

अब मुझसे किसीसे सम्बन्ध ही क्या है। माना कि ये लोग बडे अच्छे है, जगदीश और सर्वजया के अनन्त भक्त और मित्र रहे, पर मैं इनसे कुछ चाहता तो नही। मैं इनको धन्यवाद देता हू कि इन्होने उन दोनो के और मेरे साथ इतनी भलाइया की, फिर भी मै इसमे कुछ नही कर सकता। मै आत्महत्या तो नही कर रहा हू, मै तो बस धीरे-धीरे अपने शरीर को सुखा देना चाहता हू जैसे जैनी साधु सल्लेखन क्रिया करते है। मुझे किसीसे क्या लेना-देना है। अब बस मुझे उस लोक मे जाना है जहा जगदीश, सर्वजया और सर्वजया की सास है; न मुझे मोक्ष चाहिए न कैवल्य। इतने दिनो के जप-तप का भी यही अन्त रहा। रहे; परवाह नही।

बाबाजी ने घर से निकलने के बाद पीछे की ओर मुडकर एक बार भी नही देखा। वे काशी की गलियो से अच्छी तरह परिचित थे। इतने परिचित कि वे उनसे ऊबकर ही मुगलसराय के पास एकान्त स्थान मे जाकर रम गए थे। गलियो के बाद गलिया और सडको के बाद फिर गलिया पार करते हुए वे गगा की तरफ दौडते रहे। उन्हे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि अब शान्ति प्राप्त होगी तो गगा मैया से ही प्राप्त होगी।

# ३

कुणाल की शहादत के फलस्वरूप क्रान्तिकारियो मे बडा जोश फैला। ब्रिटिश सरकार तो दमन इस कारण करती थी कि आन्दोलन दबे और नवयुवक इस मार्ग से हट जाए, पर हमेशा इसका बिल्कुल उल्टा ही असर होता था। एक क्रान्तिकारी को वीरगति प्राप्त होती थी, तो बाकी उग्र विचार के युवक पतिगो की तरह उसी दिये की ओर लपकना चाहते थे।

कुणाल की दाह-क्रिया के समय बहुत-से बाहरी क्रातिकारी भी श्मशान मे छिपकर भेष बदलकर वहा मौजूद थे, पर अमिताभ वहा नही गए थे। वे जानते थे कि उनका जाना क्रान्तिकारी दल के लिए अच्छा नही होगा क्योकि काशी मे उन्हे पहचानने वाले सैकडो थे। और उस दिन पुलिस वाले विशेष रूप से दौड-धूप करेगे यह तो जानी हुई बात थी।

अमिताभ भेष बदलने मे विशेष चतुर थे, पर भेष बदलने की भी एक हद होती है। वे पकडे जाने से घबडाने वाले नही थे, पर कुणाल के उठ जाने से उनपर जो भार आ पडा था उससे वे भावुकता मे पडकर भागना नही चाहते थे। कम से कम उन्होने अपने क्रातिकारी मित्रो से यही कहा।

प्रेमचन्द नामक एक युवक क्रातिकारी ने आनन्दकुमार के घर से लौटकर उनसे कहा था—दादा, किसी समय आप एक झलक तो ले ही आइए। देखकर विश्वास नही होता कि वे मरे है। लगता है कि थककर सो गए हैं। पर थकावट के बावजूद चेहरे पर दृढता की छाप है। मै मनोविज्ञान का छात्र हूँ, इसलिए मैंने यह खोजने की चेष्टा की कि चेहरे पर असफलता के कारण किसी प्रकार के कडवेपन की छाप है या नही, पर मैंने तो देखा वहा एक मधुर चिर शाति विराजमान है।

अमिताभ ने अजीब ढंग से हसकर कहा—असफलता किसकी, कोई उनका निजी काम था जो वे चिन्तित होते? जगन्नाथ के रथ को जितना आगे बढाते बना, बढाया, यहा तक कि उसके पहियो के नीचे कुचलकर प्राण अर्पित कर दिए, इससे बढकर सफलता क्या है?

अमिताभ श्मशान में जाकर अन्तिम दर्शन करने की बात टाल गए मानो

यह प्रश्न उठा ही न हो। सचमुच जब तक चिता जलती रही, वे तब तक उधर गए ही नही। जब मालूम हो गया कि चिता जल गई और सब लोग लौट गए, तो वे श्मशान के रास्ते में जाकर खडे हो गए। जल्दी ही जो बात वे चाहते थे, वह हुई। बगालियो का एक मुर्दा कीर्तन और 'बोलो हरि, हरि बोल' के घोर निनाद के साथ आया और श्मशान की तरफ जाने लगा। इस समय तक सूर्यनारायण थकावट से आधी आख बन्द कर चुके थे; लगभग सन्ध्या हो चुकी थी। अमिताभ इधर-उधर देखकर उस भीड के साथ हो लिए। किसीने उनकी तरफ ध्यान नही दिया और वे मजे मे मणिकर्णिका पहुच गए।

कुछ देर तक वे देखते रहे कि यहा सदिग्ध प्रकार का कोई व्यक्ति तो नही है। कोई दिखाई नही पडा।

उन्होने कमर की पिस्तौल को टटोलकर देख लिया, फिर टहलते हुए जहा कुणाल और रुक्मिणी की युग्म चिता बनाई गई थी, वहा पहुचे। जो लोग चिता जलते समय मौजूद थे, उन लोगो से बात-बात मे उन्होने वह स्थान इतनी अच्छी तरह पूछ लिया था कि उसे ढूढने मे उन्हे कोई दिक्कत नही हुई। उस स्थान के ऐन बगल मे ही एक नई चिता तैयार हो रही थी क्योकि एक नई लाश आ गई थी। एक क्षण के लिए उनके मस्तिष्क मे यह विचार कौध गया कि यह नई चिता कुछ हटकर बनती तो अच्छा रहता। यह 'सैक्रिलेज' है। उनकी कनपटी गरम हो गई। क्या इस देश मे शहीदो के लिए इतना भी नही हो सकता कि उनकी चिता का स्थान सुरक्षित रहे, जब चिता के स्थान का ही पता नही लगेगा तब कवि का वह वचन सत्य कैसे होगा—

**शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले।**<br>**वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा।।**

एकाएक उनका मन बोझिल और शरीर शिथिल हो गया। यह क्या है, अगिया बेताल के पीछे दौडना। कही कोई सार या तत्व ही नही है।

नई चिता सज ही रही थी। आसन्न चिर विच्छेद की आशका से एक स्त्री ने भयकर चीख के साथ रोना शुरू कर दिया था और वह सामने रखी हुई लाश से बुरी तरह चिपट रही थी। पुरोहित मन्त्रोच्चार कर रहा था। गगा, सैकडो नहीं हजारो वर्षो से चली आने वाली उस गंगा की ओर से शीतल वायु

का एक झोका आया। उस स्त्री की चीख के साथ मिलकर जैसे उसने अमिताभ के कानो मे कुछ कहा। अमिताभ को ऐसा लगा कि वे जो कुछ सोच रहे थे, वह बिल्कुल लगो था। शहीदो को हाथीदात के मीनार पर प्रतिष्ठित करके पूजा करने की उन्हे जनता से अलग करने की कोई जरूरत नही। शहीद तो जनता से ही उठा है। वह उसीकी इच्छाओ का जगजू प्रतीक है, उसीमे जनता की आशाओ और आकाक्षाओ की सबसे सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। बर्छी की नोक को स्वय बर्छी से कैसे अलग किया जा सकता है ? शहीदो की चिताओं की विशेषता यही है कि वे जनता से आने वाले पतियो, पुत्रो, माताओ और बहनो से न तो अलग है और न होना चाहती हैं।

जब अमिताभ ने ऐसा सोचा तो उन्हे जैसे उस गुत्थी का हल मिल गया जो उनके दिमाग मे तब से फिर रही थी, जब से उन्होने सुना था कि फिर से जन-आन्दोलन होने वाला है और अबकी बार जन-आन्दोलन पहले से अधिक बडे पैमाने पर होने वाला ।

गाधीजी ने घोषणा की थी कि अबकी बार आन्दोलन नमक बनाने के रूप मे होगा। अमिताभ उन लोगो मे नही थे जो नमक शब्द पर ज़ोर देकर यह समझ नही पा रहे थे कि इस आन्दोलन का क्या अर्थ है। भला नमक बनाने का स्वराज्य से क्या सम्बन्ध है ! इसके विपरीत अमिताभ यह समझते थे कि किसी बिन्दु को लेकर चन्दन से भी अनल प्रकट किया जा सकता है, यदि रगड अतिशय, अनवरत और असाधारण हो।

प्रेमचन्द तथा अन्य कई क्रान्तिकारियो ने आज दिन भर मे कई बार यह कहा था कि जल्दी ही दल की ओर से प्रतिहिंसा का कोई कार्यक्रम होना चाहिए। प्रेमचन्द विशेष रूप से उत्तेजित इसलिए था कि आज कई बार उसने अर्चना को सिसकते हुए देख लिया था। वह किसीका विशेषकर नारी का क्रदन बिल्कुल सह नही पाता था। दिमाग से वह इस प्रभाव का प्रतिरोध कर रहा था, पर हृदय नहीं मानता था। अमिताभ ने प्रतिहिंसा की इस स्वत.स्फूर्त माग पर कुछ नही कहा था।

वे घटनाओं की प्रतीक्षा करना चाहते थे। साथ ही इस सम्बन्ध मे केन्द्रीय और प्रान्तीय समिति की क्या प्रतिक्रिया होती है, यह भी देखना था। ये युवक तो यह समझते हैं कि वे स्वतन्त्र हैं, पर दल के अनुशासन का भी तो ख्याल

रखना था। इसके अलावा कुणाल की आकस्मिक शहादत से वे इतने अभिभूत हो गए थे कि ऊपर से न दिखाने पर भी भीतर से वे बहुत कुछ किंकर्तव्य-विमूढ हो गए थे।

अब जैसे कोई रोशनी दिखाई पडी।

वह लाश चिता पर रखी जा रही थी। स्त्री एक बार फिर जोर से चीखी। अमिताभ ने मौका समझकर निर्दिष्ट स्थान की थोडी-सी राख चुपके से उठा ली (चुपके से इसलिए कि सब जुल्मी शासनो की तरह ब्रिटिश शासन मे भी अपने शहीदो की इज्जत करने की खुली छूट नही थी) फिर उसे माथे पर मल लिया। इस बीच उनके विचारो मे इतना उफान आ चुका था कि उन्होने इसकी पर-वाह नही की कि जो राख वे माथे पर मल रहे है, वाकई वह कुणाल और रुक्मिणी की ही भस्म है या नही। श्मशान मे खडे होकर किसीमे फर्क करना सम्भव नही था। जब वे शहीद की राख समझकर श्मशान की राख उठा रहे है तो वह शहीद की ही राख है। हर राख शहीद की ही राख है। भारत के चप्पे-चप्पे पर कोई न कोई शहीद, कोई न कोई ज्ञानी, कोई न कोई त्यागी पैदा हुआ है और मरा है।

अमिताभ को ऐसी अनुभूति हुई, जैसे इतने साल तक काम करने के बाद उन्हे पहली बार सम्बोधि प्राप्त हुई, सम्यक ज्ञान मिला।

क्या यह किसी प्रकार अद्भुत था कि यह ज्ञान उन्हे श्मशान मे प्राप्त हुआ? अब उनके मन मे न तो कोई शका रही थी न कोई दुविधा। वे कई सीढियां चढकर एक सीढी पर बैठ गए और चिताओ की चमक से जगमगाती जाह्नवी की ओर देखने लगे। स्त्री रो रही थी; रोए। चिताओ से चौंधा देने वाली चिटचिटाहट उठ रही थी, पुरोहित हृदयहीन तरीके से, क्या पता सहृदयता के साथ, मन्त्रपाठ कर रहा था, नाना प्रकार के अनुष्ठान जारी थे, वहा के सब लोगों के चेहरे पर थकावट थी; रहे, पर ज्वलन्त तथ्य यह था कि चिताए जल रही थी और जाह्नवी चल रही थी।

उस समय के बाद फिर अमिताभ ने यह ध्यान ही नही दिया कि जिन लोगों के साथ बल्कि जिन लोगो की आड लेकर वे श्मशान मे प्रविष्ट हुए थे, उन लोगो ने कब चिता जलाई, कब वह जल चुकी और कब वे लोग चले गए। एक के बाद एक चिता जलती रही, बुझती रही। वह स्त्री भी रो-रुलाकर अपने

परिजनो के साथ चली गई थी। गगा की लहरो मे उसकी चीख की प्रतिध्वनि भी मिट चुकी थी।

कुछ आकस्मिक बात यह हुई, हा, उसे आकस्मिक ही कहेगे कि जहा पर कुणाल और रुक्मिणी की चिता जली थी, वहा अब तक कोई चिता नही जली थी, पर जल ही जाती तो क्या होता ? शहीद की लाश को जैसे हजारो लोगो से अलग किया जा सकता है, वैसे ही उसकी चिता हमेशा अलग जलती है क्योकि वह न तो स्थल पर जलती है, न जल पर, न अन्तरिक्ष मे, बल्कि वह शहीद के लक्ष्य को अपना लक्ष्य मानने वाले प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे जलती रहती है। हा, अमिताभ यह अनुभव कर सकते थे कि यह चिता, नही-नही, केवल एक चिता नही, जिस दिन से मनहूस ब्रिटिश झडे ने भारत मे कदम रखा, उस दिन से जितने भी लोगो ने उसके विरुद्ध विद्रोह का झडा बुलन्द करके अपना बलिदान किया उन सबकी चिताए उनके हृदय मे जल रही है।

इसी प्रकार के विचारो मे सबेरा हो गया और जो चिताए जल रही थी, सूर्य की रोशनी मे उनकी लौ उत्तरोत्तर फीकी पडती गई। रात के समय वे कितनी निष्ठुर और लपलपाती हुई लोलुप लग रही थी और गगा मे उनका प्रतिबिम्ब स्पष्ट झिलमिला रहा था, पर इस समय जीवन के अभियान के सामने मृत्यु की यह जलती मशाले उतनी वास्तविक नही जान पडती थी। अमिताभ जैसे नीद से जगे और आख मलकर अपने चारो तरफ देखने लगे। अरे, यह तो बहुत देर हो गई। यहा बैठे ही बैठे रात कट गई। कितने लोग आए-गए, चीखे, रोए-चिल्लाए, पर वे अपने विचारो मे ही डूबते-उतराते रहे, बाहर का शब्द, दृश्य और गन्ध एक हद तक ही उनकी चेतना मे प्रवेश कर पाए। वे टकरा-टकराकर वापस जाते रहे ।

वे उठ खडे हुए और उन्होने एक बार फिर उस स्थान की ओर देखा जहा कुणाल की चिता जली थी। चलने का विचार आते ही उन्होने हृदय मे एक शून्यता का अनुभव किया—शून्य, महाशून्य। कही पर कुछ भी नही। न तो जीवन का कोई अर्थ जान पडा, न मृत्यु का। देश की स्वतन्त्रता जैसी बाते तो बहुत छोटी मालूम हुई और प्रेमचन्द की वह क्रोधावेश से भरी प्रतिहिसा की माग बिल्कुल हास्यास्पद लगी। कैसी हत्या और कैसा प्रतिशोध ? श्मशान की लडी मे सभी लोग पिरोए हुए है। इससे कहा छुट्टी है ? पर छुट्टी की जरूरत भी क्या

है ? शून्य  महाशून्य  ।

अमिताभ को एकाएक जान पडा जैसे उनके विचारो पर अब उनका नियन्त्रण नही रह गया है। वे जल्दी से गगा की तरफ बढे। रास्ते मे जो चिताए पडी, वे उन्हे बराकर पानी के पास पहुचे, पर वहा मुह धोने की इच्छा नही हुई क्योकि पानी मे यत्र-तत्र काले-काले कोयले और मुरझाए हुए बासे फूल तैर रहे थे।

इतने मे उनका हाथ कमर मे लगी हुई पिस्तौल से छू गया, जैसे वास्तविकता से टकराव हो गया। वे फरार है, उनपर दस हजार रुपये का इनाम है। कुणाल की मृत्यु के बाद उनपर बहुत अधिक जिम्मेदारी आ गई है। वे जल्दी से पीछे की ओर मुडे, पर ऐसा करते हुए भी वे उस स्थान की ओर जाना नही भूले जहा कुणाल और रुक्मिणी की अन्तिम और शायद पहली सम्मिलित सेज सजाई गई थी। मन ही मन उन्होने अपनी श्रद्धाजलि अर्पित की और वह तेज कदमो से श्मशान से चल पडे। सौभाग्य से उसी समय एक गिरोह मुर्दा जलाकर लौट रहा था, वे उसीके साथ हो गए।

एक गिरोह के साथ गए थे और दूसरे के साथ लौटे।

अभी वह गिरोह पहला मोड पार नही हुआ था कि अमिताभ ने एक अर्द्ध विक्षिप्त-से, कृश, पर सौम्यदर्शन लम्बी दाढी वाले वृद्ध को श्मशान की ओर जल्दी-जल्दी डग भरते हुए देखा। पहले तो उन्होने ख्याल नही किया, पर जब दस कदम चले गए, तब उन्हे याद आया कि वर्णन के अनुसार यह वृद्ध कुणाल के पिता लगते थे।

बस अमिताभ बिना कुछ सोचे-समझे लौट पडे और उनके पीछे-पीछे चलने लगे। उन्हे यह सन्देह हुआ कि बाबाजी कही निराशा मे कुछ कर न बैठें। यद्यपि दिन काफी चढ आया था, अब सूर्य की ओर खाली आखो से देखना सभव नही था। अब अमिताभ के लिए इस प्रकार घूमना उचित नही था, फिर भी वे इसकी परवाह न करके बाबाजी के पीछे-पीछे चलते रहे। कम से कम देख तो लिया जाए कि वे करते क्या है।

थोडी दूर चलकर अमिताभ एक पेड की आड मे रुक गए। यहा से सारा श्मशान अच्छी तरह देखा जा सकता था।

बाबाजी सीढिया उतरकर उस स्थान की ओर जाने लगे जहा कुणाल की

चिता जली थी, पर अरे यह क्या ? अमिताभ ने जिस स्थान की राख अपने माथे पर मली थी, यह स्थान तो उससे कुछ हटकर था ! अवश्य वहा भी रातभर कोई दूसरी चिता नही जली थी, पर अमिताभ ने किसकी राख अपने माथे पर लगाई ? अगले ही क्षण अमिताभ ने अपने से कहा—कोई हर्ज नही, यह भूल बहुत अर्थपूर्ण रही। अब शहादत व्यक्ति-विशेष की सम्पत्ति न रहकर भारतीय जनता की सम्पत्ति होगी, तभी फन्द कटेगा, तभी इस देश पर स्वतन्त्रता का सूर्य चमकेगा' पर क्या ऐसा होगा ?

—कब ऐसा होगा ?

बाबाजी ने अमिताभ की तरह चुपके से नही, बल्कि सारे श्मशान की दृष्टि बलपूर्वक आर्कषित-सा करते हुए थोडी-सी राख उठाई और अपने शुभ्र केशो और सिर पर अच्छी तरह मल ली। अन्तिम योगसूत्र के रूप मे यह राख ही तो रह गई थी। राख नही भभूत ।

अमिताभ ने देखा था कि बाबाजी के चेहरे पर एक क्षण के लिए रक्त का दौरा बन्द-सा हो गया, फिर वे भयानक रूप से 'ओ३म्, ओ३म्' उच्चारण करते हुए जल के पास पहुचे।

अमिताभ सजग हो गए ।

बाबाजी ने पानी मे पैर रखा ही था कि श्मशान का एक डोम उनसे बोला—अरे ओ बूढे ! क्या कर रहा है ? पानी गहरा है।

बाबाजी ने कुछ कहना चाहा, पर अन्त तक उनके मुह से कोई बात नही निकली। वे जल मे एक कदम और बढ गए।

इसपर वह दैत्य जैसा डोम उनकी तरफ लपका और एक ही झटके मे चील की तरह उन्हे पानी से बाहर खीचते हुए बोला—लगता है कि तेरा कोई मर गया है। अच्छा याद आया, कल तू यहा पर था ।

उसने जो झटका दिया था, उससे बाबाजी ऊपर तो आ ही गए थे, पर उतने से ही उस झटके की सारी शक्ति खतम नही हुई थी, इसलिए बाबाजी को सम्हलने के लिए लडखडाकर बैठ जाना पडा था। डोम बोला—जल्दी क्या है ? तेरा भी वक्त जल्दी ही आएगा। बस जरा आगे-पीछे हो गया, इसका इतना मलाल न कर।

बाबाजी ने अजीब दृष्टि से उस व्यक्ति को देखा। ठीक तो कह रहा है,

गलती सिर्फ आगे-पीछे की हुई। मरना तो सभी को है। डोम ने कहा—और साफ बात है, यह हम लोगो की रोटी का जरिया है। ऐसे धोखा देकर यहां मर जाएगा और हम लोगो को कुछ नही मिलेगा, उल्टे लकडी भी देनी पडेगी। यह नही होने का। जब तू खाट पर चढकर घाट मे आएगा तभी हम ठाट के साथ तेरी अगवानी करेगे। चल् ।

कहकर डोम शायद बिल्कुल निश्चिन्त होकर कि अब बूढा पानी मे नही उतरेगा, जल्दी से उस तरफ चला गया जहा अभी-अभी एक अर्थी लाकर जमीन पर रखी गई थी। अमिताभ ने देखा कि यद्यपि वह चला गया, पर उसकी दृष्टि सारे श्मशान पर थी। वह अपने व्यापार पर पूरी निगरानी रखता था और लाभ का उसे पूरा ख्याल था। मृत्यु उसके लिए कोई महत्व नही रखती थी, पर बिना खाट पर चढे कोई श्मशान की जागीर मे कदम रख दे, यह उसे पसन्द नही था।

अमिताभ को विश्वास हो गया कि अब कोई भय नही है। डोम अपने लाभ का पूरा-पूरा ख्याल रखेगा। भावुकता भले ही भूल करे, पर व्यापारी कभी नहीं चूकेगा। वे जल्दी-जल्दी फिर शहर की तरफ चले। अब वे किसी गिरोह के साथ नही थे, इसलिए वे अधिक सतर्क थे। उन्हे भी अपने छोटे-से परिवार की बात याद आ रही थी, पर वह याद बहुत धुधली थी। उनके जीवन मे कोई रुक्मिणी नही थी क्योकि विवाह के पहले ही उन्होने यह व्रत उठाया था। पिताजी को मरे हुए बहुत दिन हो चुके थे, पर माता जी अभी शायद जीवित थी। शायद इसलिए कि अन्तिम खबर दो साल पहले मिली थी। खबर यह थी कि वह बीमार है। ··

# ४

सन्ध्या समय अमिताभ जब दल के ज़िला सगठनकर्ता जीवानन्द से मिलने के लिए गए तो उन्हे मालूम हुआ कि इस बीच मे बहुत-सी घटनाए हुई थी। जीवानन्द ने खबर दी कि इस जिले मे दल के पास जितने हथियार थे प्रेमचन्द ने उनपर कब्ज़ा कर लिया है और कहता है कि अब वह स्वतन्त्र दल बनाएगा।

कुणाल की मृत्यु का यह अजीब परिणाम था। अमिताभ ने लम्बी सास लेकर कहा—पूरी बात बताइए।

जीवानन्द ने कहा—आप जब सन्ध्या समय पता नही कहा चले गए, तो प्रेमचन्द ने उन सब प्रमुख क्रान्तिकारियो की एक सभा बुलाई जो उस समय मिल सके।

अमिताभ ने पूछा—क्या उसे पता था कि मै रात भर नही आ सकूगा ?

—नही, उसे कुछ भी पता नही था। सच्ची बात तो यो है कि उसने आपको भी उस सभा मे बुलाने की चेष्टा की थी, पर आप कही नही मिले। मैं स्वय आनन्दकुमार जी के यहा भी गया था कि शायद आप उनसे या श्यामा दीदी से मिलने गए हो, पर वहा सन्नाटा था और पूछने पर मालूम हुआ कि आप उधर गए ही नही।

अमिताभ ने कहा—मै श्मशान मे था।

—क्या रात भर वही थे ?

—हां, जीवन का रहस्य ढूढने के लिए वह अच्छी जगह है, पर तुम हथियारो की बात बताओ।

जीवानन्द बोला—सभा बुलाने के पहले ही प्रेमचन्द ने जिस जगह हमारे हथियार छिपे थे, उन्हे शायद आपका नाम लेकर और यह कहकर कि सरकार पर हमला होने वाला है, अपने कब्जे मे कर लिया और अब वह कहता है कि वह इस दल मे नही रहेगा। कल उसने उपस्थित सभी भाइयो को इस नये दल का सदस्य होने के लिए कहा।

—कारण ?

जीवानन्द बोला—उसने नया दल बनाने का कारण यही बताया कि अब

पुराने नेताओ पर बुढमस सवार है। वे कोई साहसी कृत्य करना नही चाहते। वह कहता है कि कुणाल जी मारे गए, इसका फौरन जवाब यह होना चाहिए कि दो-चार बडे गोरे अफसर मौत के घाट उतार दिए जाए। वह यह भी कहता है कि कल आपने जो कुछ कहा, उससे उसे यह विश्वास हो गया है कि आप कुछ नही करेंगे। उसका कहना है कि ऐसी हालत मे प्रत्येक क्रान्तिकारी का कर्तव्य है कि वह पुराने नेताओ को निकाल बाहर करके दल की शुद्धि करे।

जीवानन्द समझता था कि अमिताभ इन बातो को सुनकर आगबबूला हो जाएगे और पिस्तौल लेकर प्रेमचन्द से जवाब-तलब करेंगे, या आदेश देंगे कि तुम जाकर प्रेमचन्द को सज़ा दो, पर अमिताभ ने इन बातो को बिल्कुल मखौल के ढग से लिया, बोले—तो सब लोगो ने नया दल बनाना स्वीकार किया ?

—नही, बाहर के किसी भी भाई ने उसकी बात नही मानी, यहा के भी अधिकाश लोग उसके प्रस्ताव के विरुद्ध रहे।

—क्या किसीने यह नही कहा कि उसे इस प्रकार केन्द्रीय दल के हथियारो पर जबर्दस्ती कब्जा कर लेने का अधिकार नही है ?

—मैने ही कहा था, और भी बहुतो ने कहा, पर वह नही माना। वह यही कहता रहा कि कुणाल जी की हत्या को सहन करना और प्रतिशोध का कोई कार्य न करना कायरता है। उसने यह भी कहा कि ऐसे निकम्मे लोगो को गांधीवादी बन जाना चाहिए।

अमिताभ कुछ देर तक सोचते रहे। एक बार उनके माथे पर बहुत गहरे बल आए, पर अगले ही क्षण कुछ सोचकर बोले—उस सभा में अर्चना थी ?

—हा।

—उसने किसका पक्ष लिया ?

जीवानन्द ने कहा—वही तो मुझे सब खुराफात की जड मालूम हुई। प्रेमचन्द तो बल्कि दब भी रहा था, पर वह उसे उकसाती रही।

अमिताभ के मु ह से निकला—यह नया सोपान शुरू हुआ।

ये शब्द बहुत कुछ अपने से कहे गए थे, पर जीवानन्द पूछ बैठा—काहे का नया सोपान दादा ?

पर अमिताभ ने कोई उत्तर नही दिया। स्त्रिया बहुत दिनो से क्रान्तिकारी आन्दोलन मे भाग ले रही है, पर उन्होने कभी अपने स्त्रीत्व का उपयोग

आन्दोलन को मोड देने के लिए या किसी दुर्बल चित्त व्यक्ति को अपने असर मे लाने के लिए नही किया था। अमिताभ को वह दिन याद आया, जब कुणाल और वे श्यामा को दल मे लेने के प्रश्न पर आपस मे विचार-विनिमय कर रहे थे।

अमिताभ ने उस अवसर पर कहा था—मै कहता हू, कोई व्यक्ति लिप्त होकर फासी पर चढ जाए तो हमे उसपर क्या आपत्ति हो सकती है ? यदि फासी चढते समय उसकी आखो के सामने भारतमाता की अशरीरी मूर्ति के पीछे कोई सशरीर रमणी की मूर्ति हो तो उसमे क्या हर्ज है ?

इसपर कुणाल ने कहा था—पर यह भी हो सकता है कि भारतमाता की मूर्ति बहुत ही मद्धिम पड जाए और उसकी जगह परनारी मूर्ति ही रह जाए।

तब अमिताभ ने कहा था—युग को देखते हुए हमे यह जोखिम उठाना पडेगा।

प्रश्न तो यह है कि प्रेमचन्द कहा तक सन्तुलन कायम रख सकेगा ? सारी बात सही सन्तुलन पर निर्भर है। महेन्द्र ने तो पूरी तरह सन्तुलन कायम रखा, बल्कि उसके सम्बन्ध मे तो यहा तक कहा जा सकता है कि वह श्यामा के प्रति प्रेम के कारण ही इतना सन्तुलित रहा और हसते हुए फासी पर चढ गया।

पर अर्चना कहा तक गम्भीर है ? क्या वह सचमुच दल को एक नया मोड देना चाहती है या प्रेमचन्द और उसके साथ आने वाले लोगो के साथ खेलना चाहती है। खेलने में भी कोई हर्ज नही बशर्ते कि जरूरत पडने पर वह उसका पूरा दाम चुकाने के लिए तैयार रहे। यदि वह प्रेमचन्द को वीर बना सके, तो बुराई क्या है ?

पर नही, यह केवल एक व्यक्ति का प्रश्न नही है, यह एक राष्ट्र का प्रश्न है, इसपर व्यक्ति की दृष्टि से नही, बल्कि राष्ट्रीय दृष्टि से विचार करना चाहिए। इतिहास किसीकी खामख्याली पर नही चल सकता। विशेषकर एक ऐसी तरुणी की, जो भले ही बहुत जोशीली हो, पर हो अनुभवहीन। केवल नारेबाजी मे बहकर दल का सचालन सम्भव नही है। दल को टुकडो मे बाटने से क्या मतलब ? बडी कठिनाई से बगाल से लेकर उत्तर भारत तक सारे क्रान्तिकारी उपदलो को किसी प्रकार एक सूत्र मे पिरोया गया था।

जीवानन्द अधीर होकर बोला—आप आज्ञा दे, तो मैं अभी प्रेमचन्द का

झगडा ही खतम कर दू ।

सुनकर अमिताभ को हसी आ गई, पर उन्होने हसी का दमन किया। बोले—उसका सफाया तुम किस चीज़ से करोगे ? उसने तो सब अस्त्रो पर कब्ज़ा कर लिया ।

जीवानन्द ने इस पहलू पर नही सोचा था, बोला—आप अपनी पिस्तौल थोडी देर के लिए दे दे ।·· नही तो ऊपर से ले आऊ'

अबकी बार अमिताभ खुलकर हसे, बोले—इसका अर्थ यह हुआ कि तुम मेरी पिस्तौल भी छीनना चाहते हो ।

जीवानन्द सहसा इसका कोई उत्तर नही दे सका ।

अमिताभ ने भी उत्तर की प्रतीक्षा नही की, बोले—मान लो, मैं भी मुख्य दल के विरुद्ध इस विद्रोह मे शामिल हो जाऊ तो कैसा रहे ?

—आप क्या सोचकर यह बात कह रहे है, यह मै नही जानता पर यह विद्रोह तो विशेषकर आपके ही नेतृत्व के विरुद्ध है । उत्तर भारत से केन्द्रीय समिति मे आप सबसे मुख्य व्यक्ति है ।

जीवानन्द यह समझ नही पाया कि अमिताभ परिहास कर रहे है या गम्भीरता के साथ बात कर रहे है । अमिताभ बोले—इसीलिए तो उस विद्रोह मे मेरे शामिल होने से सारी समस्या स्वय ही सुलझ जाती है ।

जीवानन्द को एकाएक जैसे इस कथन का गूढ रहस्य सूझ गया । बोला—यह तो अच्छा रहेगा, आप उससे मिल जाए और फिर उससे हथियार छीन लें ।

अमिताभ ने इस प्रकार से नही सोचा था । बोले—मेरा ऐसा कुछ करने का इरादा नही है । प्रेमचन्द पर मैं बल-प्रयोग नही करूगा तो छल-प्रयोग भी नही करूगा ।—स्वर मे अन्तिमता थी ।

—फिर ?

—घटनाए स्वयं ही दिशा बताएगी । मैं समझता हू कि कुछ ऐसा होने जा रहा है, जिससे हमारी सारी समस्याए स्वय सुलझ जाएगी । मैं सोचने के लिए समय चाहता हू··· ··

सही बात यही थी । अमिताभ सोचने का समय चाहते थे । बगाल के क्राति-कारी गुटो की राय वे जानते थे । वे नमक सत्याग्रह की सम्भावनाओ से

उतने प्रभावित नही थे और यह समझते थे कि दबावमूलक राजनीति का यह एक पैतरा मात्र है, जिससे जनता को प्रशिक्षण के अतिरिक्त अधिक लाभ शायद न हो। अमिताभ पूर्णत इससे सहमत नही थे, पर साथ ही क्या होना चाहिए, इस सम्बन्ध मे भी उनके विचार स्पष्ट नही थे यानी अभी उनके विचार चाशनी की हालत मे थे, दाने पडकर साफ होने मे कुछ देर थी।

त्याग के लिए त्याग अच्छा नही हो सकता। एक के बाद कई क्रातिकारियो को फासी लगी और अब कुणाल का यह महान बलिदान हुआ। इसके साथ ही अमिताभ को रुक्मिणी की याद आई।

इस महाबलिदान से उत्पन्न आलोडन को थिराने का समय देना चाहिए। प्रेमचन्द-ऐसे लोगो की तरह भावुकता के भवर मे भटकना ठीक नही। यह भूलना नही है कि उद्देश्य बदला लेना या जबरदस्ती का जवाब देना नही है, बल्कि उद्देश्य है स्वतन्त्रता की प्राप्ति।

जीवानन्द यह समझकर आया था कि अमिताभ कोई निर्दिष्ट दिशा देगे, निराशा के स्वर मे बोला—आप क्या आज्ञा देते है ? प्रेमचन्द की अनुशासन-हीनता को यदि सहन किया गया, तो दल का लौह अनुशासन शिथिल पड जाएगा।

अमिताभ ने कुछ झिझक के ही साथ कहा—पर जीवानन्द, लौह अनुशासन अपने मे कोई लक्ष्य नही है। मैं सोचता हू कि अभी आने वाले आन्दोलन को देखना चाहिए, पर प्रेमचन्द, अर्चना दूसरे ढग से सोचते हैं। उन्हे मैं गलत कैसे कहू, जब कि बगाल के सारे साथी अभी इसी दिशा मे यही सोच रहे है।

जीवानन्द बोला—पर केवल सोचना तो कोई बात नही थी, वह तो ज्यादती पर उतर आया। वह इस तरह हथियारो पर कब्ज़ा कर लेने वाला कौन होता है ?

—कोई नही। पर दल के पास केवल उतने ही हथियार तो नही हैं, एक जिला ही तो दल नही है। क्यो न यह परखा जाए कि प्रेमचन्द और उसके साथी इन हथियारों का क्या उपयोग करते हैं ? सम्भव है उनके कार्यों से कोई नया रास्ता फूटे और धुन्ध फट जाए।

कहते-कहते अमिताभ को कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि जीवानन्द कही यह तो नही सोच रहा है कि अमिताभ पीछे हट गए है, इसलिए बहुत कुछ चिल्लाकर

सोचने के ढग से बोले—भई देखो, जहा तक मेरा सम्बन्ध है, मैं दो हत्याए और कर लू, उससे कोई फर्क नही आता। क्योकि यदि मैं पकडा गया तो मुझे हर हालत मे फासी ही होगी। एक हत्या करने मे भी फांसी होती है और दस हत्याए करने मे भी, पर इस कारण मैं दूसरो को खा—म—ख्वाह एक खास दिशा मे घसीट तो नही सकता। वह अनुचित होगा।

जीवानन्द के बाद भी कई लोग आए। सबसे अमिताभ ने ये ही बाते कही, बल्कि उन्होने एक नई बात यह कही कि कुछ दिनो तक वे सोचना चाहते है। उन्होने यह अनुभव किया कि बहुत-से साथियों ने शायद उन्हे एकदम गलत समझा, पर परिस्थितियो का तकाज़ा यही था कि गलत समझे जाने का जोखिम उठाकर साहस की पराकाष्ठा दिखाई जाए। उन्होने खुले शब्दो मे यही कहा कि जो लोग उतावले है, आने वाले आन्दोलन को जरा भी तरह नही देना चाहते या उसकी धार नही देखना चाहते, वे प्रेमचन्द और अर्चना के साथ मिलकर काम करने के लिए स्वतन्त्र है। मै किसीको रोकता नही हू और न किसीको कहता हू कि तुम जाओ।

उनसे इससे अधिक कोई कुछ निकाल नही सका। जिन लोगो ने समझा था कि प्रेमचन्द को कोई सजा मिलेगी, वे मुह लटकाकर निराश होकर चले गए।

उन्हे ऐसा लगा कि कुणाल होते तो शायद यह बात न होती। इस प्रकार दल के श्रेष्ठ नेता के विरुद्ध मुख्य दल मे असन्तोष पैदा हो गया। उनसे कटकर जो उपदल बना था, उस सम्बन्ध मे कोई कडी कार्यवाही नही की गई। यहां तक कि उन्हे औपचारिक चेतावनी तक नही दी गई···

# ५

आनन्दकुमार को सबेरे ही मालूम हो चुका था कि बाबाजी किसीसे कुछ कहे बिना घर से निकल गए है, इसपर उन्हे बहुत दु ख हुआ, फिर भी उन्होने कुछ नही कहा। रूपवती से मागकर उन्होने नाश्ता किया, यानी नाश्ता करने का प्रयास किया। रूपवती को भी कुछ खाने को मजबूर किया और फिर पढने-लिखने मे ऐसे जुट गए मानो कुछ हुआ ही नही। उन्होने श्यामा को भी बुलवाया था, पर मालूम हुआ न श्यामा घर पर है न कबीर।

यो ऊपर से घर का कार्यक्रम सामान्य गति से चलता रहा, फिर भी घर पर मनहूसियत की एक परछाई बनी रही जो किसी भी तरह पीछा नही छोडती थी। घर-द्वार सब भाय-भाय कर रहा था। अति परिचित वस्तुए भी जैसे काटने को दौडती थी, मानो उनकी ठठरी ही रह गई हो, आत्मा निकल गई हो। कही कुछ कमी चुभ रही थी, फिर भी आनन्दकुमार ने वर्षो के प्रयास के फलस्वरूप सचित आत्मनियन्त्रण के द्वारा अपने को सन्तुलित करने का प्रयत्न किया क्योकि वे जानते थे कि इस क्षेत्र से उन्हे ही मार्गप्रदर्शन करना है। वे पढते जाते थे और बीच-बीच मे उद्ग्रीव होकर मानो किसी घटना की प्रतीक्षा कर रहे थे, फिर जब वह घटना आती दिखाई नही पडती थी तो निराश होकर अध्ययन मे जुट जाते थे।

इसी तरह दिन के चार बज गए, तब राजेन्द्र आया और उसने अपने स्वभाव के अनुसार तरह-तरह की चर्चाए चलाई। वह नमक सत्याग्रह की योजना से कतई खुश नही था। न जाने क्यो उसे उसमे कोई तत्व नही मालूम होता था। इन्ही दिनो गाधीजी ने साबरमती मे उपस्थित अपने कुछ साथियो से यह बताया था कि नमक सत्याग्रह के क्या-क्या रूप हो सकते है—एक रूप तो यह था कि नमक सम्बन्धी जितने कानून है सबका उल्लघन किया जाए। जहा जिस रूप मे बने, नमक बनाया जाए। जहा सरकार की ओर से खारा पानी सुखाकर नमक बनाने के लिए जमा किया गया हो, वहा से नमक उठा लिया जाए और नमक के सरकारी भडारो पर धावा बोला जाए। गाधीजी का विचार यह था कि नमक सत्याग्रह से शुरू करके आन्दोलन को सार्वजनिक सत्याग्रह की ओर

ले जाया जाए।

इसपर कुछ साथियो ने यह बताया था कि अभी देश ऐसे सार्वजनिक सत्याग्रह के लिए तैयार नही है। इसके उत्तर मे यह कहा गया था कि पानी मे उतरने से ही तैरना आता है, जो इस आशा से पानी से दूर रहता है कि तैरना सीखकर ही हम पानी मे उतरेंगे वह कभी तैरना नही सीख सकता।

राजेन्द्र के पास वही पुराना तर्क था कि इस प्रकार उपमा देकर गाधीजी ने जो बात समझानी चाही है, वह अर्थहीन है, फिर इसमे नमक को घसीटने की ज़रूरत क्या थी ? यह तो प्रमाणित हो चुका है कि नमक-सत्याग्रह अवैज्ञानिक है और वह किसी भी तरह जनता में जोश पैदा नही कर सकता।

आनन्दकुमार पुन उस पुरानी बहस पर जाने के लिए तैयार नही थे। उनका मन बहुत ही विपर्यस्त और अस्तव्यस्त था। वे किसी प्रकार मन पर अकुश डालकर उसे काबू मे नही कर पा रहे थे। उन्होने मौन रहकर राजेन्द्र को टरकाना चाहा, पर वह तो आज यह मसूबा बाधकर आया था कि आनन्दकुमार प्रान्त के बडे नेताओ से और जरूरत पडने पर गाधीजी से मिले और उन्हे समझाए कि इस रूप मे आन्दोलन सफल नही हो सकता, पर आनन्दकुमार ने जो कछुए की तरह अपना सिर भीतर कर लिया, फिर उसे बाहर निकालने का नाम ही नही लिया।

तब राजेन्द्र झुझलाकर बोला—देशबन्धु चित्तरजनदास जीवित होते तो वे अवश्य कुछ करते। बाकी नेताओ मे तो सत्साहस है ही नही। वे तो केवल महात्माजी की हा मे हा मिलाया करते है।

आनन्दकुमार ने इस खुली चुनौती के बावजूद कोई बात नही कही। यहां तक कि उन्होने इस मूढ भक्त से देशबन्धु की रक्षा नही की यद्यपि वह स्वयं देशबन्धु के बहुत बड़े प्रशसक थे। वे इस चिरन्तन सत्य से परिचित थे कि भक्त कई बार भक्ति के नाते अपने भगवान को काठ की भवानी मानकर मकई का अक्षत लाद देते हैं। वे राजेन्द्र की जली-कटी सुनकर मन्द-मन्द मुस्कराते रहे।

रूपवती से उन्हे मालूम हो चुका था कि उषादेवी ने राजेन्द्र की शादी किसी राजा उपाधिधारी ताल्लुकेदार की कन्या से तय कर ली थी और राजेन्द्र ने इस विवाह की स्वीकृति भी दे दी थी। विवाह की तैयारिया भी शुरू हो चुकी थी।

वे परिहास करते हुए, पर जिससे परिहास कर रहे है, उसपर यह बात न खुले, ऐसे भाव के साथ गम्भीरता से बोले—इन सारी बातो का एक ही नतीजा हो सकता है, यानी होना चाहिए, वह यह कि तुम स्वय इस सम्बन्ध मे एक वक्तव्य प्रकाशित करो और जब नमक सत्याग्रह शुरू हो तो तुम उससे अलग रहो।

राजेन्द्र ने मुंह बनाकर कहा—यह कैसे हो सकता है कि मैं ही नक्कू बनू ? इसका तो उल्टा ही असर होगा…

इसपर आनन्दकुमार ने खुलकर हसते हुए कहा—यानी तुम, नाक कटाने से भगवान का दर्शन होता है, इस प्रकार का दावा करने वाले लोगो का एक पूरा सम्प्रदाय चाहते हो, जिससे कि तुम अकेले नक्कू न बनो। 'न गणस्याग्रतो गच्छेत्' क्यो ?

राजेन्द्र को यह मन्तव्य बहुत अरुचिकर प्रतीत हुआ। वह तिलमिला गया, बोला—हम आपसे स्वतन्त्र चिन्तन की आशा करके मिलते हैं और आप तो पूरी भेडिया-धसान वाली बात कह रहे है।

इसपर आनन्दकुमार भी उत्तेजित हो गए। उनके मन की पृष्ठभूमि मे अत्यन्त शोकावह परिस्थिति मे बिना कुछ खाए-पिए घर से चले जाने वाले बाबाजी का जो चित्र था, वह पीछे चला गया और वे बोले—नमक तो प्रतीक-मात्र है। किसी एक बिन्दु से प्रारम्भ करना है, इसलिए नमक से ही प्रारम्भ किया जा रहा है, तुम जो तर्क आज नमक के विरुद्ध दे रहे हो, वही तर्क गाधी जी द्वारा चलाए हुए किसी भी आन्दोलन के विरुद्ध दे सकते थे, पर यह याद रखो, इतिहास की परिचालिका शक्ति तर्क नही, बल्कि क्रिया है। क्रिया से ही इतिहास के पहिये आगे की ओर सरकते हैं। क्रिया से ही सृष्टि होती है…

राजेन्द्र ने खिन्न होकर कहा—पहिये तो पीछे की ओर भी सरक सकते हैं।

—हा, पर इस क्षेत्र मे यह बात नही है। हमारी जनता सैकड़ो वर्षों से प्रसुप्त है। प्रश्न तो यह है, उसे कैसे नीद से जगाकर कर्मप्रवृत्त किया जाए, सग्राम मे ढकेला जाए ? कुणाल की तरह एक व्यक्ति की अति जागृति से क्या होता है ? यानी जहा तक जनता का सम्बन्ध है, विशेष लाभ नही होता। एक बार एक मुहूर्त के लिए एक आरे पर बडे जोर का धचका आता है, पर यदि इसके फलस्वरूप गति सारी जनता मे सचरित नही हो पाती यानी सारे आरे चलने नही लगते तो उससे नाममात्र की प्रगति होती है। सबको जगाने के लिए सब-

को क्रियाशील करना पडेगा, ऐसा कार्यक्रम देना पडेगा जिसमे जनसाधारण भाग ले सके। गाधी जी ने इसीलिए नमक जैसी साधारण वस्तु को चुना है, जो हवा, पानी, रोशनी के बाद ही सुलभ है। समुद्र लवणाम्बुराशि है, नमक के पहाड है, खारे कुए और तालाब है...

आनन्दकुमार ने यह भी बताया कि फिर भी इस आन्दोलन की नीव हवा मे नही है। भारत नमक मे आत्मभरित था। उसे बाहर से मगाने का ज़रूरत नही थी, पर १८३६ मे ब्रिटिश सरकार ने एक नमक आयोग नियुक्त किया, जिसका खुल्लमखुल्ला यह कहना था कि भारतीय नमक पर कर लगाया जाए ताकि यहा इग्लिस्तान का नमक आकर बिक सके। बाहर से नमक आने पर इग्लिस्तान के जहाज़ो को भी काम मिलता था। उस ज़माने मे मुसीबत यह थी कि उधर से जहाज़ खाली आते थे और इधर से लदकर जाते थे, पर जहाज़ो का खाली आना खतरनाक था, डूबने का भय रहता था, इसलिए जहाजो पर लदन के स्टैंड से मिट्टी लाई जाती थी और कहते हैं उसी मिट्टी से गंगा से कालीघाट के मन्दिर तक जो नहर थी उसे पाटकर चौरंगी का रास्ता बनाया गया था। मिट्टी की बजाय नमक लाने से लाभ था, इसी कारण चेशायर नामक स्थान से नमक ले आना ज़रूरी बताया गया। इटली आदि के जहाज़ तो सगमरमर और आलू ले आकर इस आवश्यकता की पूर्ति करते थे, पर ब्रिटिश जहाज़ो की समस्या नमक लाकर ही पूरी हो सकती थी। दूसरे शब्दो मे इग्लिस्तान ने जान-बूझकर केवल अपने लाभ के लिए भारतीय नमक-उद्योग का हनन किया था।

पर ऐसे तथ्यो और तर्को का राजेन्द्र पर कोई असर नही पडा और वह तर्क के लिए तर्क करता रहा। रूपवती इन तर्कों को पसन्द नही कर रही थी, पर वह पास नही आई क्योकि उसने देखा कि आनन्दकुमार के मन पर इस हुज्जत का भी स्वस्थ प्रभाव पड रहा है।

दोनो मे देर तक तर्क-वितर्क होता रहा। इतने मे उधर से भय और उद्वेग भरी बातचीत सुनाई पडी। यहा तक कि राजेन्द्र के कान भी खडे हो गए। उसने आनन्दकुमार से कहा—क्या बात है ?

दोनो उठकर वहा पहुचे जहा रूपवती और श्यामा उद्वेग भरे लहज़े मे बात-चीत कर रही थी। रूपवती कह रही थी—मैंने तो यह समझा कि कबीर तुम्हारे साथ गया, इसलिए मैंने कोई फिक्र नही की।

श्यामा बोली—आप तो बता रही है कि बाबाजी भी सबेरे के निकले है।

—हा तुम सब लोग साथ ही बाहर निकले।

तब श्यामा ने अजीब तरीके से चिल्लाकर कहा—पर कबीर तो मेरे साथ नही गया, तो क्या वह बाबाजी के साथ गया ?

सबने एक दूसरे का चेहरा शकित दृष्टि से देखा। आनन्दकुमार ने कहा—बाबाजी के साथ वह क्यो जाने लगा ? कोई परिचय नही, कुछ नही। आज सबेरे ही तो शायद दोनो मे पहले पहल बातचीत हुई थी।

श्यामा बोली—चाचा जी, आप नही जानते। कबीर आखिर अपने बाप का ही बेटा ठहरा। इन लोगो के ढब ही निराले है। इनमे घर छोडने की प्रवृत्ति अन्तर्निहित है।

आनन्दकुमार को यह बात जच तो गई, पर श्यामा की शका और एक हद तक अपनी आशका मिटाने के उद्देश्य से उन्होने कहा—अरे वह तो अभी बच्चा है।

पर राजेन्द्र ने कहा—यह सब बहस छोडिए। ये लोग दस घंटे से गायब है। इन्हे खोजना तो चाहिए।

तर्क ऐसी अधी गली मे पहुच चुका था कि आगे बढना सम्भव नही था। इस प्रकार उससे छुटकारा मिलने पर वह खुश ही हुआ। इसके अलावा इस परिवार के प्रति उसके मन मे निश्छल प्रेम को जो भावना थी, उसने भी उसे मजबूर किया और वह स्वय रवाना हो गया।

उसी समय नौकरो से जिरह करने पर निश्चित रूप से पता लगा कि जब बाबाजी गए, तो उनके साथ कबीर नही था। इससे एक तरफ जहा एक विशेष आशका की निवृत्ति हुई, दूसरी तरफ और शकाए पैदा हो गईं।

यदि वह बाबाजी के साथ नही गया तो कहा गया ? इससे पहले तो कभी उसने इस प्रकार का आचरण नही किया था और न कभी अकेले बाहर गया था।

श्यामा बहुत अधिक शकित हो गई थी। उसने पहले तो अपनी मां के यहा टेलीफोन किया कि कही किसी प्रकार वह वहा तो नही पहुच गया क्योंकि वह अपनी नानी को बहुत पसद करता था, पर वहा से उत्तर मिला कि कबीर वहां नही है।

जब श्यामा आदि ने इस विषय पर गहराई से सोचा तो उन्हे लगा कि नानी के यहा कबीर के जाने की सम्भावना नही के बराबर थी क्योकि एक नानी के अलावा उसे वहा कोई पसन्द नही करता था और कबीर भी वहा किसीको पसन्द नही करता था। फिर वह वहा कभी पैदल गया नही था। अनुमान यही था कि वह वहा का रास्ता भी नही पहचानता।

सब लोग अपने-अपने ढग से खोज मे लग गए।

छायाए लम्बी पडकर सन्ध्या हो गई, तो भी न तो बाबाजी की खबर मिली और न कबीर की। तब श्यामा और शायद उससे भी ज्यादा आनन्द-कुमार बेचैन हो गए। दोनो मे फर्क यह था कि एक बेचैनी का प्रदर्शन बराबर टेलीफोन आदि करके करती रही और दूसरा उसे प्रकट नही कर रहा था। दोनो के मन मे अलग-अलग शकाए हो रही थी।

आनन्दकुमार यह सोच रहे थे कि बाबाजी अर्द्ध विक्षिप्त हो चुके थे। कही वे फिर से गृहस्थी तो क्या अपने जीवन को बसाने के लिए बच्चे को साथ तो नही ले गए ? ऐसी अवस्था मे बुद्धि तो काम नही देती और मनुष्य केवल आवेशों के वशवर्ती होकर काम करता है।

बाबाजी से यह आशका तो खैर नही थी कि वे किसी भी प्रकार बच्चे का अनिष्ट करेंगे, पर साथ मे ले जाना ही अनिष्ट करना है। इस बात को वे कैसे समझ सकते हैं? अवश्य कभी उन्होने भी बच्चे का पालन किया होगा, पर अब वे इन बातो से दूर हो चुके है। उनकी मानसिक स्थिति भी इस लायक नही है कि वे किसीकी देखभाल कर सके। फिर उनके पास अब साधन ही कहा थे।

आनन्दकुमार यह सब सोच रहे थे, पर ऊपर से यही कह रहे थे—अभी आया, जाएगा कहा ?

उनका तर्क कुछ इस प्रकार का था कि जो कुछ प्रयत्न हो सकता है, वह तो हो ही रहा है, फिर श्यामा को घबडाने की जरूरत क्या है ? इसके अति-रिक्त बाबाजी के सम्बन्ध मे जो शका हो रही थी वे उसे खोलकर कैसे कह सकते थे। यह तो एक तरह से श्यामा को बाबाजी के विरुद्ध उकसाना होता। यो श्यामा के मन मे बाबाजी के प्रति बडी श्रद्धा थी, पर आनन्दकुमार यह जानते थे कि बच्चे के मामले मे कोई मा किसी भी व्यक्ति को किसी कारण

क्षमा नही करती ।

इसलिए वे चुप रहे और टेलीफोन पर जो बातचीत होती रही उसे सुनते रहे । राजेन्द्र का टेलीफोन आया कि पुलिस मे भी खबर कर दी गई है, पर पता नही लग रहा है । शायद घंटे दो घटे मे कुछ पता चले ।

श्यामा के मन मे जो शका उठ रही थी, वह कुछ निराली ही थी । जब से कबीर पैदा हुआ है तब से इस प्रकार की शका उसके मन मे न जाने क्यो बराबर बनी रही । यह ऐसी गुप्त व्यथा थी, जिसके सम्बन्ध मे वह किसी-से कुछ नही कह सकती थी । अब तक वह इस आशका से स्वय ही घुलती रही थी ।

जब काफी रात हो गई, तब उसने डरते-डरते आनन्दकुमार से कहा—चाचा जी, एक बात है ।

कहा तो उसने 'एक बात', पर आनन्दकुमार को ऐसा प्रतीत हुआ और सही प्रतीत हुआ कि कोई नया-नया गुल खिलने वाला है । उन्होने भीतर ही भीतर सिमटकर मानो अपने आपको चोट के लिए तैयार करते हुए पूछा—कबीर के सम्बन्ध मे कोई खबर मालूम हुई ?

श्यामा फिर एक बार झिझकी, पर अब उससे बिना कहे नही रहा जा रहा था । बोली—कही ऐसा तो नही हुआ कि इस गडबड का फायदा उठाकर मुश्ताक उसे ले गया हो । कल मैंने उसे श्मशान से लौटते समय देखा था । यद्यपि हम लोगो की आखे चार हो गई थी, फिर भी वह अजीब तरीके से कतराकर ऐसे निकल गया कि फिर दिखाई नही पडा ।

आनन्दकुमार मन ही मन शकित तो हुए, पर इस आशका को बलपूर्वक हटाते हुए उन्होने कहा—भला ऐसा कैसे हो सकता है ? इसमे उसका क्या लाभ है ? कुछ उद्देश्य भी तो हो ?

श्यामा ने इसके उत्तर मे कहा—कबीर के बाबा और चाचा आदि बराबर यह चाहते थे कि उनकी फासी के बाद मैं उनके परिवार मे जाकर रहू । मुश्ताक ने बल्कि एक दिन मुझसे यह भी कहा था कि कबीर के बाबा की यह इच्छा है कि कबीर को एक मुसलमान बच्चे की तरह तालीम और तरबियत दी जाए····

आनन्दकुमार ने यह बात पहली बार सुनी, पर उन्हे कोई आश्चर्य नही

हुआ। बोले—तुमने क्या कहा था ? ..

—मैंने कहा था उसकी शिक्षा-दीक्षा न तो एक मुसलमान की तरह हो रही है, न हिन्दू की तरह, बल्कि इस तरह हो रही है, जैसी उसके पिता की थी। मैंने यह भी कहा था कि यूसुफ न तो मुसलमान थे, न हिन्दू। वे एक भारतीय मात्र थे। मैंने यह भी कहा कि यहा आदर्श शिक्षा मिलेगी और तुम्हे किसी प्रकार की शका नही रहनी चाहिए। पर वह इससे सन्तुष्ट नही हुआ था, चुपचाप चला गया, पर मैं जानती थी वह नाराज़ हुआ...

यह समय अधिक ब्योरे मे जाने का नही था। मुश्ताक तथा यूसुफ के पिता के विचार सही है या नही ? वे कहा तक सकीर्ण और घातक है, इसपर भी इस अवसर पर विचार करने की गुजायश नही थी। इस समय तो प्रश्न केवल यही था कि किसी तरह कबीर का पता मालूम हो और उसका उद्धार किया जाए।

आनन्दकुमार इतना समझ गए थे कि जब उधर से इस प्रकार के विचार हैं और यदि वे लडके को ले गए है तो फिर वे उसे आसानी से वापस नही करेंगे।

यह अजीब दुनिया है कि लोग, विशेषकर निकट के लोग, किसी महापुरुष को गिराने की ओर यदि ऐसा न हो सका तो उसके बच्चो और शिष्यो पर अपने विचार लादने की चेष्टा करते हैं।

यह तो कुछ भी नही, लोग महापुरुषो से भी वही बात कहलवाना चाहते हैं जो उन्हे पसन्द है। सत्य के विरुद्ध सख्या की यह जबर्दस्ती निरन्तर जारी है। यह एक तरह से महापुरुषो और प्रतिभा के वरदपुत्रो से साधारण स्तर के लोगों का प्रतिशोध है।

बुद्ध के साथ ऐसा ही हुआ। उन्होने बुद्धिवाद की नीव रखी पर भक्तो ने कालक्रम मे उनके सैकडो पूर्वजन्मो की सृष्टि की। उन्हे तान्त्रिक आचारो के कीचड मे घसीटा और अन्त तक उनका जो रूप रहा, वह उन देवताओ से किसी प्रकार अच्छा नही रहा, जिनके विरुद्ध उन्होंने विद्रोह का शख फूका था।

नानक के साथ ऐसा ही हुआ। कबीर के साथ ऐसा ही हुआ। इन लोगो ने साम्प्रदायिकता के विरुद्ध नारा दिया, पर इन्हीके सम्प्रदाय बन गए। युग-युगान्तरों से जाहिल जनता की यह जिज्ञासा और ज़िद जारी है।

एक क्षण के अन्दर आनन्दकुमार यह सब सोच गए, पर उन्होने इतना ही कहा—यह अखिल मानवीय ट्रेजडी है, पर अब बच्चे का उद्धार कैसे किया जाए ? क्या मै चलू ? वे तो यही कही आसपास रहते है ।

श्यामा बोली—और थोडा देख लीजिए । सब लोग लौट आए, तो फिर कुछ सोचा जाएगा । मेरी आत्मा कहती है कि उसे प्राणभय तो है नही

## ६

जब देर तक बाबाजी या कबीर किसीकी खबर नही मिली तो आनन्द-कुमार मन ही मन इस निश्चय पर पहुचे कि बाबाजी मानसिक असन्तुलन की अवस्था मे कबीर को लेकर अपने मुगलसराय वाले आश्रम मे चले गए। उन्होने खुलकर किसीसे कुछ नही कहा । साथ ही दूसरी तरफ श्यामा के मुश्ताक संबधी सिद्धान्त की परीक्षा करने के लिए क्या करना चाहिए वे इसी ऊहापोह मे पड़े हुए थे । मुश्ताक ने यदि ऐसा किया है तो कुछ सोच-समझकर ही किया है । उस हालत मे उससे बातचीत करनी व्यर्थ थी । वह बच्चे को ले गया तो लौटाने के लिए तो नही ले गया ।

धार्मिक उन्माद के आवेश मे काम करने वाला व्यक्ति भला बुद्धि की पुकार क्यों सुनने लगा ? धर्म मे तो कम से कम, जिस धर्म के आवेश में लोग ऐसे कृत्य करते है, युक्ति और तर्क, स्नेह और ममता का कोई स्थान नही होता ।

मोटर तैयार ही थी । वह कई फेरे कर चुकी थी । श्यामा ने देखा कि खम्भे की आड मे एक छाया-मूर्ति खडी है । एक बार उसका हृदय धक् से हुआ, तो क्या मुश्ताक और भी कुछ करना चाहता है ? कही वह मेरे साथ तो कोई शरारत नही करना चाहता ?

वह चीखने ही वाली थी कि छाया-मूर्ति पास आई और आनन्दकुमार तथा श्यामा दोनो चकित रह गए । अरे, ये तो अमिताभ हैं ।

उन्हे देखते ही दोनो प्रफुल्लित हो गए । ऐसा लगा जैसे अब सारा अन्ध-

कार स्वय ही दूर हो जाएगा।

दोनो यह आशा करते थे कि अब, जब कि कुणाल शहीद हो गए तो अमिताभ हम लोगो से मिलकर तभी जाएगे। श्यामा को यह तो मालूम ही हो चुका था कि अमिताभ यहा आए हुए है और उन्हे प्रेमचन्द गुट के विद्रोह की सूचना भी मिल चुकी है। स्वय श्यामा भी इसी विषय पर अमिताभ से बातचीत करना चाहती थी, पर कल से घर के अन्दर घटना-चक्र कुछ इस प्रकार चल रहा था कि उसके लिए इस तरफ ध्यान देना सम्भव ही नही हुआ था।

उसने एक कर्तव्यपरायण सदस्या की तरह प्रेमचन्द को समझाना अधिक आवश्यक समझा था, और आज दिन भर वह उसी पचडे को सुलझाने मे लगी हुई थी, जब यह कबीर वाली घटना हुई। रूपवती यही समझती रही कि वह कबीर को साथ मे ले गई है, इसलिए बहुत मूल्यवान समय निकल गया।

थोडे मे श्यामा ने बता दिया कि हम कहा जा रहे है।

इसपर अमिताभ एक मुहूर्त के लिए भी नही झिझके, मानो वे इसीके लिए तैयार थे और स्वय जाकर सबसे पहले मोटर मे बैठ गए, फिर ड्राइवर से बोले—श्मशान की ओर चलो।

यो तो काशी मे दो श्मशान थे, पर ड्राइवर जानता था कि श्मशान से क्या मतलब है।

गाडी मणिकर्णिका घाट की ओर चलने लगी।

श्मशान का नाम सुनते ही श्यामा व्याकुल हो गई। उसने कहा—क्यो, क्यो? उधर क्यो?

अमिताभ ने आश्वासन देते हुए कहा—नही, नही बहन, कोई ऐसी बात नही है। मैने सबेरे बाबाजी को वहा देखा था। शायद वे वही हो और वहां से कुछ सुराग मिले।

श्यामा के कुछ पूछने के पहले ही अमिताभ ने यह भी बता दिया—बाबाजी के साथ कोई नही था।

आशा की जो बेल मानो जादू की छडी से इतने ही क्षणो के अन्दर लह-लहाने लगी थी, वह मुरझा गई। श्यामा के मुह से यही शब्द निकलने वाला था—तो फिर वहा जाकर क्या होगा?—पर उसने कुछ नही कहा और गाड़ी चुपचाप चलने लगी।

ग्रानन्दकुमार ने पूछा—क्या ग्राप सवेरे श्मशान गए थे ?

—जी हा, मैं कल शहीद के प्रति अपनी अन्तिम श्रद्धाजलि अर्पित करने नही पहुच सका, इसलिए रात को उनकी भस्मी माथे से छुग्राने पहुच गया था।

अमिताभ ने यह नही बताया कि जिस राख को उन्होने शहीद की राख समझकर माथे से छुआया था, वह बाद को किसी और की राख साबित हुई और न आनन्दकुमार ने ही बताया कि शहीद और उसकी सती पत्नी की सारी राख तो उसी समय लुट गई थी, यहा तक कि जनता ने उस जमीन की मिट्टी तक खुरच डाली थी।

आनन्दकुमार ने हसकर कहा—तो अनात्मवादी भी घोर मूर्तिपूजक होते हैं !

अमिताभ ने गम्भीरता के साथ कहा—मूर्ति तो पार्थिव प्रतीक है, इसलिए मूर्तिपूजा से अनात्मवाद पर आच नही आती। आश्चर्य तो तब होता है, जबकि अध्यात्मवादी मूर्ति की पूजा करते है। मूर्ति आत्मा नही, बल्कि मैटर ही है...... । कहिए कैसी रही ?·· ····

श्यामा का मन इतना उद्विग्न, मथित तथा क्लान्त था कि वह इस प्रश्नोत्तर तथा नोक-झोक मे रस नही ले पाई। अमिताभ और आनन्दकुमार दोनो इस बात को समझ गए, केवल समझे ही नही, उन्होने इसे हृदयगम किया, इसलिए वे चुप हो गए।

मोटर जहा तक जा सकती थी, वहा तक चलकर खडी हो गई, फिर तीनों व्यक्ति बातचीत करते हुए श्मशान की तरफ बढे। बातचीत करने की इच्छा नही हो रही थी, फिर भी बातचीत कर रहे थे क्योकि साथ मे अमिताभ थे और किसी भी तरह लोगो का ध्यान इधर आकर्षित करना उचित नही था।

मिनटो का रास्ता मुद्दतो मे समाप्त करके यह अद्भुत टोली श्मशान पहुची। वहां वही चिरन्तन दृश्य थे जो शायद हज़ारों वर्षों से अपरिवर्तित थे। वही रगमंच था, वही यवनिका, नाटक भी वही था, पर अभिनेता बदलते रहते थे। कभी कोई चिता पर चढता और दूसरे लोग उसका शोक करने वाले होते, वही शोक करने वाले बाद को चिता पर चढते और दूसरे उनके लिए शोक करते।

युग-युग से जो अलाव वहा जल रहे थे, वही जल रहे थे और बीच-बीच में वही चिट्चिटाहट का ताल था जो शोक करने वालो के शोक पर पता नही बोली

कस रहा था या उसकी हसी उडा रहा था।

अमिताभ ने एक ही दृष्टि से सारे श्मशान का सर्वेक्षण कर डाला। एक क्षण के लिए ऐसा लगा कि हृदय की धडकन रुक गई। अरे! यहा तो बाबाजी का कोई पता नही था। तो क्या प्रात काल डोम की जागरूकता के कारण वे जिस प्रयास मे असफल रहे, झुटपुटा पाकर वे उस प्रयास मे सफल हो गए? पर यह तो वह लोक है, जहा कभी झुटपुटा आता ही नही, यहा कभी एकान्त होता ही नहीं। चिताओ के कारण यहा सूर्य की आवश्यकता नही होती और हर समय दिन बना रहता है। या यो कहा जाए कि यहा रात ही रात रहती है, ऐसी रात, जिसका कभी अन्त नही हुआ। ऐसी रात जो सृष्टि के आदिकाल से कभी भिनसार में परिणत होने को नही आती। इसी रात का फायदा उठाकर तरह-तरह के सन्दिग्ध दर्शन शास्त्र, धर्म, ढोग, ढकोसले मनुष्य के चेतस् पर हमला करते रहते है और अपनी चोर-बाज़ारी का चकमा चालू रखते है।

आनन्दकुमार ने निराशा के साथ कहा—यहां तो कोई नही है।

—यही तो मै भी देख रहा हू।

श्यामा ने पूछा—आपने निश्चित रूप से बाबाजी के साथ कबीर को नहीं देखा था न?

—निश्चित रूप से।

—अब?

अमिताभ बोले—मैं कुछ नही कह सकता। मेरे कारण आप लोगो का समय नष्ट हुआ।

अब आनन्दकुमार ने डरते-डरते अपनी बात कही—जब हम इतनी दूर तक आए, तो पुल पार करके मुगलसराय भी चले चले और वहा देखें कि बाबाजी के आश्रम मे क्या हो रहा है।

श्यामा ने कहा—तो क्या आपको विश्वास है कि बाबाजी कबीर को लेकर आश्रम मे चले गए?

—मेरे विश्वास से कुछ नही होता। अमिताभ जी जो कुछ कह रहे हैं, उसके अनुसार दोनो दो रास्ते गए। पर हमे तो दोनो का पता लगाना है। एक का लग जाए तो शायद दूसरे का पता लगाना आसान हो जाए।

कहकर फिर कुछ सोचते हुए बोले—पर पहले कबीर का पता लगाना जरूरी है।

उन्होने अमिताभ को थोडे मे समझा दिया कि किस प्रकार श्यामा उस सम्बन्ध मे यूसुफ के भाई मुश्ताक पर सन्देह करती है।

अमिताभ गम्भीर होते हुए बोले—यह कोई आश्चर्य की बात नही है। धर्मान्धता के कारण सभी तरह के कुकृत्य होते रहते है। उन लोगो को यूसुफ के लक्ष्य से कोई मतलब नही, उनकी शहादत से वे किसी प्रकार की अनुप्रेरणा लेने के लिए तैयार नही। बस, उनकी एक ही चीज को वे महत्व देते हैं, वह यह कि यूसुफ एक मुसलमान परिवार मे पैदा हुए थे। पता नही यह मनोवृत्ति हमारे देश को कहा ले जाएगी। जब भी कोई प्रगतिशील कदम उठाया जाता है, उसके मार्ग मे यह प्रवृत्ति रोडा बनकर सामने आती है। वे कबीर को मुसलमान बनाना चाहते है, न कि इन्सान या यूसुफ के क्रान्तिकारी और त्यागमय जीवन का प्रतीक। किसी भी हालत मे उन लोगो के हाथ से कबीर का उद्धार करना ही पडेगा। यह केवल एक वैयक्तिक कर्तव्य नही, बल्कि मानवीय कर्तव्य है, दल का पूरा जोर इसमे लगना चाहिए। बहन तुम उद्विग्न न हो······।

अभी अमिताभ बोल ही रहे थे कि श्यामा स्वप्नचालित-सी बोल उठी—मुझे कबीर की आवाज सुनाई पडी। वह सोते समय अक्सर ऐसी आवाज करता है। मेरा मन कह रहा है कि वह यही है।

आनन्दकुमार और अमिताभ ने जलती हुई चिताओ की रोशनी मे एक दूसरे के साथ अर्थपूर्ण दृष्टि-विनियम किया। वे डर रहे थे कि कही शोकसन्तप्त माता को भ्रम तो नही हो रहा है।

आनन्दकुमार ने एकाएक मानो अमिताभ की राय से कहा—चलिए यहां से चले। बहुमूल्य समय नही खोना चाहिए।

इतने मे आनन्दकुमार को भी ऐसा मालूम हुआ कि उन्होने वही खुरखुराहट सुनी जो वे नित्यप्रति कबीर के बिस्तरे के पास खडे होकर सुना करते थे और कई बार जब कोई नही होता था तो वह खुर्र-खुर्र करते हुए कबीर से प्यार करके पितृस्नेह को तृप्त कर लेते थे।

आनन्दकुमार ने खुरखुराहट सुनी तो जरूर, पर इसे वे स्वीकार नही करना चाहते थे कि उनके मन पर भी श्मशान की अज्ञात शक्तियो का असर होना

शुरू हो गया। वे झटका-सा देकर बोल उठे—चलिए, चलिए, यहा कबीर क्या कोई भी नही है।

पर श्यामा की आखे अब बिल्कुल उद्भ्रान्त हो चुकी थी। वह जैसे इस ससार की रह ही नही गई थी। उसकी आखो मे एक अपार्थिव लपलपाहट आ गई थी जो उन्मादग्रस्तो की आखो मे होती है, फिर भी रूप कुछ भिन्न था। श्यामा बोली—मै कहती हू कि वह यही है, वह यही सो रहा है...।

अमिताभ और आनन्दकुमार ने लगभग डरकर फिर दृष्टि-विनिमय किया, पर अब की बार आनन्दकुमार की दृष्टि मे वह अन्तिमता नही थी, जो पहली बार दृष्टि-विनिमय करते समय थी।

उन्होने अमिताभ से एक बार आख मिलाकर ही नीची कर ली। उनकी आत्मा तो वही कह रही थी जो श्यामा की आत्मा कह रही थी, पर उनका स्वभाव बुद्धि-प्रधान था, इसलिए उन्होने अनुभूति पर तर्क का सिक्का जबर्दस्ती जमाते हुए कहा—यहा तो केवल मुर्दे सोते है श्यामा, यह भ्रम है, चलो। कबीर यहा नही है।

श्यामा झुझलाई क्योकि वह समझ नही सकी कि क्या करे। बुद्धि वही कह रही थी, जो आनन्दकुमार कह रहे थे, पर मन नही मान रहा था। वह ठिठकी।

—आ ऽ ऽ ऽ मा...!

श्यामा ने यह शब्द सुन लिया। वह बावली-सी होकर आनन्दकुमार से लिपट गई और चिल्लाकर बोली—चाचाजी, मुझे बचाइए, मैं पागल हो रही हूं। मुझे कबीर की आवाज स्पष्ट सुनाई पड रही है, पर मैं जानती हू कि यहा कबीर नही हो सकता!

पर फौरन ही स्पष्ट सुनाई पडा।

—मां, मैं यहा हू!

अमिताभ स्वभावसिद्ध क्षिप्रता के साथ एक छलाग मे उस स्थान पर पहुंचे जहा बाबाजी और कबीर थे। तीनो के हाथो मे तीन टार्च जल उठे और मा और बेटे मे श्मशान की विच्छेद की प्रतीक चिताओ के देखते-देखते वह अभूतपूर्व मिलन हुआ।

पता नही श्यामा रोई अधिक या बेटे से अधिक लिपटी या उसे अधिक

चूमा। यदि ऐसा कहा जाए कि एक शरीर से निकलकर जो टुकडा अलग हो गया था, वह फिर उसमे जज्ब होने की कोशिश कर रहा था और दूसरी ओर से भी उसे अपने अन्तर्गत करने का प्रबल आग्रह था तो शायद कुछ वर्णन हो।

जब मा और बेटा इस प्रकार मिल रहे थे, उस समय अमिताभ और आनन्दकुमार झुककर बाबाजी को देख रहे थे क्योकि इतना कोलाहल होने पर भी वह ज्यो के त्यो निस्पन्द पडे हुए थे। अमिताभ ने नाडी देखते ही उछलकर मानो कोई बडी भारी प्राप्ति हुई हो कहा—नाडी चल रही है।

आनन्दकुमार ने अपनी बारी मे नाडी देखते हुए कहा—पर बहुत क्षीण है।

दो दिनो मे बाबाजी पर जो कुछ गुजरी थी, उसमे नाडी का इस प्रकार दुर्बल हो जाना कोई आश्चर्य की बात नही थी। आनन्दकुमार ने बाबाजी को धीरे से हिलाया, कहा—चलिए, उठिए!

बाबाजी बडी शान्ति से सोए हुए थे। टार्चों की रोशनी और चीख-पुकार के बावजूद वे धीरे-धीरे मानो एक-एक रोमकूप करके और फिर एक-एक अग करके जाग रहे थे।

केवल शारीरिक कमज़ोरी ही नही, उनकी तरफ से जगने की प्रबल अनिच्छा भी थी। वे जैसे निद्रा को महानिद्रा मे परिणत कर देना चाहते थे।

यह कौन नीद मे खलल डाल रहा है?

बाबाजी को बडी उकताहट मालूम हुई। उन्हे कुछ भी स्मरण नही आया कि वे कहा थे और किस अवस्था मे थे। शरीर तो सोना चाहता था और मन भी······

पर आनन्दकुमार ने फिर कोचा—बाबाजी, उठिए!

तब जैसे अन्धकार मे एक चिनगी दिखाई पडी और वह बढती हुई चली गई, हा, अब याद पडने ··लगा था···

वे गगा किनारे ऐन पानी के पास बैठे यही सोच रहे थे कि डोम ने ठीक कहा है। श्मशान मे आने से ही कोई मुर्दा नही हो जाता। इसके अतिरिक्त उनके मन मे कई तात्विक सदेह उठ रहे थे, वे सदेह नये नही थे और वर्षों से वे उनपर दिमाग लडा रहे थे, पर किसी अन्तिम परिणाम पर पहुचने में असमर्थ रहे।

श्मशान मे अज्ञातनामा न जाने कितने मुर्दो की राख पर बैठकर वे सन्देह और मुखर हो रहे थे। मरने के बाद तो मनुष्य भस्मीभूत हो जाता है। आम तौर पर कहा भी जाता है कि मरकर मनुष्य पचतत्व प्राप्त होता है, अर्थात् क्षिति क्षिति मे अप् अप् मे, तेज तेज मे, मरुत् मरुत् मे और व्योम व्योम मे मिल जाता है। राख मे क्षिति का ही अधिक हिस्सा है। कुछ नमी आदि अन्य भूतो के तत्व भी है, जब ऐसा है तो मृत्यु के उस पार बिछुडे हुए प्रियजनो से मिलने का क्या अर्थ होता है ? मिलन उपादानो से उपादानो का हो सकता और होता है। उसमे कोई व्यक्तित्व तो नही होता…

वे इसी प्रकार बार-बार सोचते जाते थे ·····हा, एक-एक बात याद आ रही थी ··· सोचते जाते थे, पर शरीर और मन की कुछ ऐसी स्थिति थी कि कुछ देर सोचने के बाद विचार आगे बढने की बजाय गड़बड़ा जाते थे। उन्हें फिर नये सिरे से सोचना पडता था ······

यह प्रक्रिया कई दफे हो चुकी थी और वे उकता-से रहे थे कि उनकी पीठ पर एक नन्हा-सा हाथ आ पडा था और कबीर ने कहा था—मैं तुम्हारे पीछे-पीछे आ रहा था, तुम यहा छिपकर बैठे हो ?

इसपर उनको तो जैसे काठ मार गया था और उन्होने सोचा अरे, यह तो महा अनर्थ हो गया, बच्चो का यहा क्या काम ?

वे एकाएक उठकर खडे होते हुए बोले थे—तू यहा कैसे आ गया ? यह कोई तेरे लायक जगह है ? देखता नही ?

उस समय श्मशान मे चार चिताए जल रही थी, एक और चिता तैयार हो रही थी। कबीर कुछ देर उधर ताकता रहा, फिर उसने उनका हाथ पकडकर कहा था—कल कुणाल चाचा और रुक्मिणी चाची यही लाए गए थे, क्यो न ?

कुणाल का नाम सुनकर उन्हे कबीर का अस्तित्व भूल-सा गया था, पर वह तो अकुश जैसा सिर पर खडा था। वे कब तक उसे भूले रहते। उन्होंने सम्हलकर कहा था—बच्चो को इन बातो मे नही पडना चाहिए।

पर कबीर अपने विचारो मे डूबा था। उसने कहा था—मा ने बताया था कि चाचा-चाची स्वर्ग गए, पर मै सब जानता हू। यहा तो कोयला और राख है ! स्वर्ग कहा है ? · ·

सब कुछ याद आ रहा है ···

बाबाजी को प्रतीत हुआ था कि कबीर के विचारो मे और थोडी देर पहले उनके दिमाग मे जो विचार लहरा रहे थे उनमें एक योगसूत्र है और दोनो कही मिल जाते है।

उन्होने कबीर का हाथ पकडकर लौटने के लिए कदम बढ़ाते हुए कहा था—सब झूठ है! शास्त्र झूठे है, ऋषि झूठे है, वेद-पुराण, कुरान-अजील, स्वर्ग-नरक, सब झूठे है!

—मा झूठी है।—कबीर ने भी कहा था।

जैसे कबीर ने 'झूठे है' कहकर किए जाने वाले उस यज्ञ मे अपनी आहुति डाली थी—मा झूठी है!

बाबाजी को सब याद आ रहा है। उन्हे वेदो, पुराणो, शास्त्रो और ऋषियों को झूठा करार देते हुए उस समय कुछ आभास स्वीकार नही करना पडा था और न उन्हे अपना कथन किसी प्रकार अस्वाभाविक मालूम पडा था। पर जब कबीर ने कहा 'मा झूठी है' तो वे एकाएक जैसे सचेत हो गए थे। उन्होने प्रतिवाद करते हुए फुफकारकर कहा था—बेटे, मा झूठी नही है!

कबीर की आखे चिताओ पर लगी हुई थी। उनकी चिटचिटाहट सुनाई पड़ रही थी, मानो वह भी कोई आतिशबाज़ी थी पर कुछ ऐसी बात थी, जिससे अप्रिय दृश्य देखने तथा अप्रिय शब्द सुनने की अनुभूति होती थी। कबीर के चेहरे से स्पष्ट था कि जो कुछ हो रहा था, वह उसे खटक रहा था और बुरा लग रहा था। शायद उसके नन्हे-से हृदय के अन्दर भी कोई चिरन्तन कटु सत्य अपने काटेदार शरीर के साथ बाहर निकलने को हाथ-पाव मार रहा था। वह कुछ भयभीत दिखाई पड रहा था।

उसने पूछा था—बाबाजी, ये लोग अग्रेज़ो से लडे थे?

—कौन लोग?

कबीर ने उनका हाथ कसकर पकड रखा था और दूसरे हाथ से चिताओ की तरफ दिखाकर कहा था—ये लोग!

कबीर यह समझ रहा था कि जो लोग अग्रेजो से लडते हैं, वे ही यहा जलाए जाते है। वह अबोध शिशु नही जानता था 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः', जो जन्मा है उसकी अन्तिम गति यही है।

उन्होने कबीर की बचकाना धारणा को सुधारकर असलियत बतानी नही चाही थी।

कबीर अचानक बोल उठा था—पर अब्बा को तो दफन किया गया था। मैं वहा कभी-कभी जाता हू।

उन्होने फिर कोई उत्तर नही दिया था और कबीर का हाथ पकड़कर अपनी जान मे जहा तक हो सका जल्दी-जल्दी चिताओ से दूर सीढी की तरफ बढ गए थे।

पर कबीर ने फिर पूछा था—बाबाजी, कुणाल चाचा और रुक्मिणी चाची को जलाया क्यो गया और अब्बा को दफन क्यो किया गया ?

इस प्रश्न का उत्तर बाबाजी स्वय ही नही जानते थे। नाहक मनुष्यो ने अपने को गुटो मे बाट लिया और इन गुटो ने एक दूसरे से कहा कि हम अपने मुर्दो को गाडेगे और तुम अपने मुर्दो को जलाना; हम दाढी रखाएगे, तुम जनेऊ पहनना। हम बकरे को जिबह करेगे और तुम काली माई के सामने उसे चढाना। इस प्रकार हम और तुम बिल्कुल अलग होगे ताकि हम मिल न पाए और यह जान न पाए कि हम लोग एक ही इन्सान की औलाद है।

कबीर के प्रश्न का कुछ उत्तर तो देना ही था, पर बाबाजी के पास कोई उचित उत्तर तो था नही, इसलिए वे झुझलाहट मे कह गए थे—बेवकूफी है !

वे कबीर के प्रभाव के कारण या उसके दबाव मे आकर आवेश मे श्मशान के बाहर इस बडे-से पेड के नीचे तक तो चले आए थे, फिर भी आगे बढने की प्रवृत्ति नही हुई। पैरो ने भी जवाब दे दिया था। यही बैठ गए थे। कबीर भी बैठ गया था।

बाबाजी सोच रहे थे कि सारी बाते ही अजीब हो रही है।

यह अजीब जोडी थी। एक जीवन के इस छोर पर था और दूसरा उस छोर पर। एक की यात्रा अभी अच्छी तरह शुरू नही हुई थी, इसलिए पैर लड-खडा रहे थे क्योकि पैरो को अभी चलना सीखना था और दूसरा यात्रा से थक चुका था, इसलिए उसके पैर डगमगा रहे थे। क्या दोनो के मन मे अपने-अपने ढग से जीवन और मृत्यु के रहस्य सम्बन्धी प्रश्न कुलबुला रहे थे ?

वही डोम जिसने गगा मे पैर रखने नही दिया था, टहलता हुआ आया था। उसने अपने अक्खड-रूखे ढग से कहा था—अच्छा, तो बाबा और पोता !

पर बीच की कडी राख मे मिल गई। इसीलिए यहा आए हो ?

कबीर सटकर लगभग बाबाजी की गोद मे बैठ गया था। शायद वह डोम का चेहरा देखकर और उसकी बाते सुनकर डर गया था। बाबाजी ने कबीर को प्यार से अपने पखो के आश्रय मे लेकर डोम से कहा था—तुमने ठीक समझा, बीच की कडी गायब· ·।

इसपर डोम बिल्कुल ही निश्चिन्त रहकर बोला, जैसे वह मौत की नही, बल्कि सौ-पचास मील के अन्दर किसी यात्रा की बाते कर रहा था—जाना तो तुझे चाहिए था, पर वह चला गया, इसीका नाम ससार है। मेरा भी एक लडका यही पर राख बन चुका है। (उसने इशारे से स्थान दिखाया था।) जब डोमनी ने बहुत दिनो तक शोक किया तो मैंने उससे कहा, तुझे अगर ज्यादा शोक करना है तो चल लेट जा, तुझे भी बाधकर वही पहुचा आता हू। शोक से कुछ नही होता। इसीलिए मैं गाजा, चरस, भाग, शराब सब पीता हूं क्योकि इनसे गम-गलत होता है।

रुककर जैसे गीत का अन्तरा गाते हुए उसने बाबाजी से कहा था—जा तुझे इतना बडा गुरुमन्त्र दे दिया, तू भी कुछ न कुछ नशा कर, कोई गम नही रहेगा। मरा नही, इसका क्या गम है ! डर मत, मौत तुझे भूलेगी नही ··

इतने मे एक नई अर्थी आ गई थी और डोम बातचीत को उसी प्रकार बीच मे ही समाप्त कर जैसे मृत्यु करती है, उस तरफ चला गया था।

कबीर ने पूछा था—यह कौन था ? मुझे बडा डर लग रहा है ! बाबा घर चलो·· !

वह भी यही सोच रहे थे, पर उठते नही बना। एक तो मानसिक शिथिलता, फिर शारीरिक कमजोरी। चिताओ की चिरायध से एक अजीब-सा भारीपन छाने लगा था।

प्राण जैसे एक महीन धागे से लटक रहा था। सत्तर साल की यात्रा के बाद, जो अधिकांश रूप में एकाकी यात्रा थी, रोम-रोम पस्त हो चुका था, हड्डी-हड्डी फोकी पड़ चुकी थी, अग-अग थक चुका था। पत्नी की मृत्यु के बाद यह आशा थी कि बेटा जीवन-यात्रा मे साथ देगा। जब उसमे कुछ विरागात्मक वृत्ति देखी, तो उसे बाधने के लिए सारा इलाका ढूढकर चाद-सी बहू ले आए, पर सब व्यर्थ हुआ। भाग्य के विरुद्ध सारा पुरुषार्थ बेकार गया। होनी के सामने कुछ नही

चला । हाथ कुछ नही लगा ।

लडका ऐसा ज़ालिम निकला कि जब गया तो साथ बहू को भी लेता गया। अब जीने मे क्या तत्व था। अब तो शान्ति चाहिए, चिरशान्ति जिसमे से फिर कभी प्रत्यावर्तन न हो ।

ये ही बाते सोचते-सोचते पेड से ढोक लगाकर वे सो गए थे । जीवन के प्रति कोई आकर्षण नही था, न मृत्यु के प्रति कोई विकर्षण।

कबीर के आ जाने के कारण वे अपनी शान्ति-कामना मे पूरी तरह निश्चिन्त नही हो सके थे ।

एक बार मन ने कहा था, इस लडके को घर पहुंचाकर अपनी स्वतन्त्रता मोल ली जाए, जिससे फिर अपनी इच्छानुसार जब चाहे तब शान्ति को चिर-शान्ति मे बदल लिया जाए, पर शरीर ने कहा, कोई इसे बुलाने थोडे ही गया था, यह तो खुद आया है । माना कि यह शहीद का लडका है, पर इससे क्या ? मुह ढक के सोइए ...।

मन ने कहा था—जो यह कुणाल का लडका होता तब ?

शरीर इसका कोई उत्तर नही दे सका था। दोनो मे भीतर-भीतर द्वन्द्व चलता रहा । थकावट की ही विजय हुई थी और वे सो गए थे । यहा तक कि वे कबीर के पुकारने पर भी नही जागे थे। शरीर सो रहा था, पर मन की कोई कोर तीसरी आख खोलकर जाग रही थी।

## ७

आनन्दकुमार और अमिताभ द्वारा बाकायदा कुरेदे जाने पर बाबाजी सम्हल-कर बैठ गए । उनका पहला ही प्रश्न हुआ—वह लडका कहा गया ? मैं तो उसके कारण यमपुरी के दरवाज़े पर जाकर भी लौट आया ।

इतने मे श्यामा और कबीर भी बाबाजी के पास आ गए । कबीर को देखते ही बाबाजी की आखे चमक उठी । बोले—नीद मे मेरी आत्मा मुझे कोस रही

थी, पर शरीर काम नही दे रहा था···

यह तो स्पष्ट ही था। आनन्दकुमार और अमिताभ उन्हे पकडकर मोटर तक ले गए। बाबाजी ने चू तक नही की और घर वालो के द्वारा पकडे हुए दोषी बालक की तरह चुपचाप मोटर मे बैठ गए।

हा, उन्होने श्मशान से अलग होते समय एक बार जलती हुई चिताओ की तरफ गलती हुई निगाह से देखा। अब उनकी मानसिक स्थिति ऐसी थी कि उन्हे प्रत्येक चिता ही कुणाल और रुक्मिणी की चिता लगती थी।

अमिताभ ने बाबाजी को गाडी पर बैठाकर उनकी पद-धूलि माथे से लगाई और सबको हाथ जोडा। श्यामा ने आश्चर्य के साथ कहा—आप नही आ रहे है ?

अमिताभ ने मोटर की खिडकी पर हाथ रखते हुए कहा—नही।

श्यामा ने कुछ सहमते हुए पूछा—आप अभी रहेगे ?

—चल देगे।

अत्यन्त सक्षिप्त पर लहजे मे इतना लोहा था जैसे बहुत सोच-विचार के बाद कोई युगान्तकारी निर्णय किया गया हो।

श्यामा बोली—आपकी बातो से मुझे कुछ अजीब-सा लग रहा है। प्रेमचन्द ने विद्रोह करके नया गुट खडा कर दिया, मैं दिनभर आज इसी पचडे को सुलझाती रही, पर कुछ नही बना। अर्चना ने मेरा हर पेच काट दिया।

अमिताभ ने जैसे कोई बात सुनी ही नही। शायद उनका मन अन्तिम निर्णय करने के बाद भी डगमगा रहा था। बोले—तभी तो मेरा जाना और भी ज़रूरी हो गया।

—पर आपके बिना कैसे चलेगा ? मैं तो बिल्कुल अन्धकार देख रही हू।

अमिताभ कुछ देर जैसे सोचते रहे, बोले—बहन, मैं उस अन्तिम अहकार से भी मुक्त हो चुका हू कि मेरे बिना ससार नही चल सकता और रथ के पहिये रुक जाएगे। जब अरविन्द, वारीन्द्र, रास बिहारी, करतारसिह, काकोरी के शहीद, कुणाल आदि सब चले गए, फिर भी काम जारी है तो मेरे अकेले के जाने से क्या होगा ? फिर मैं जा कहा रहा हू, मैं तो रहूंगा।

—इस टेढी समस्या को तो सुलझाते जाइए।

—बहन, कई समस्याए ऐसी होती हैं, जिन्हे सुलझाने का प्रयत्न न करता

ही उन्हे सुलझने मे हाथ बटाना होता है। यह सारा उफान इसलिए आया है कि कुणाल-ऐसे दिग्गज हममे से उठ गए। कुछ लोग इससे इतने विचलित और दिग्भ्रमित हो गए है कि वे एक विशेष मार्ग मे तेजी लाने की जरूरत समझते है। एक तरह से कुणाल की भक्ति के कारण ही प्रेमचन्द जो कुछ कर रहा है, सो कर रहा है।

श्यामा बोली—दादा, यही बात तो नही है। यह होती, तो क्या गम था ? वह तो अर्चना के पीछे ही यह उत्पात खडा कर रहा है।

अमिताभ हसे, बोले—बहन, क्राति का मार्ग बडा ही विचित्र है। समुद्र की तरह। उसमे तरह-तरह के नदी-नाले विभिन्न रूप, रस, गन्ध, स्पर्श वाले तरल लेकर आते है, पर वहा पहुचकर सब खारा ही बन जाता है। लोग जाने किन-किन कारणो से क्रातिकारी बनते हैं। बुरा ही क्या है यदि अर्चना के सौन्दर्य से प्रलुब्ध होकर प्रेमचन्द क्राति की लपट मे कूद पडे। अन्त क्या होगा, यह तो बाद को ही मालूम होगा। दस साल पहले हम लोग 'डागमाटिक' थे, पर अब हम इतिहास की परिचालिका शक्तियो को पहले से अच्छा समझते हैं।

कहकर उन्हे जैसे कुछ याद आया। एक लम्बे क्षण तक दुविधा मे पडे रहे, फिर कमर से भरी हुई पिस्तौल निकालकर श्यामा के हाथ मे देते हुए कहा—बहन, इसे रख लो।

श्यामा को इसपर बहुत आश्चर्य हुआ। बोली—पर आप पर तो बहुत भारी इनाम है।

—होने दो

श्यामा बोली—तो क्या आप अस्त्र-सन्यास ले रहे हैं ?

—शायद, पर सग्राम-सन्यास नही ले रहा हू

अमिताभ चलने को हुए तब श्यामा ने कहा—दादा, एक प्रश्न का उत्तर देते जाइए। तो क्या अस्त्रो का युग गया ?

—नही, जब आगे चलकर जन-आदोलन ही क्राति-आदोलन हो जाएगा तो अस्त्रो की फिर ज़रूरत पड सकती है। वन्देमातरम्

कहकर अमिताभ रात्रि के अन्धकार मे विलीन हो गए।

कार चलने लगी। थोडी देर बाद आनन्दकुमार ने कहा—कबीर बेटा, आओ, मेरी गोद मे आओ। एक युग का अन्त हो गया।

श्यामा ने कहा—हां, एक महान युग का अन्त हुआ। आपने सुना, उन्होने कहा, अस्त्र-सन्यास ले रहा हू। सग्राम-सन्यास नही।

—तभी तो मैने कहा, एक युग का अन्त हो गया।

बाबाजी अनायास ही गीता के एक श्लोक की आवृत्ति करने लगे——

**परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।**
**धर्मं संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥**

आनन्दकुमार ने केवल इतना ही कहा—पर प्रत्येक युग मे उनका रूप अलग होता है।

श्यामा अमिताभ की बातो की ही जुगाली कर रही थी। वह क्रातिकारी आदोलन के जिन दिग्गजो महेन्द्र, कुणाल और अमिताभ के घनिष्ठ सम्पर्क मे आई थी उनमे से आज अन्तिम महारथी से भी उसका सम्बन्ध समाप्त हो गया। अमिताभ की भरी हुई पिस्तौल उसके हाथो मे थी। यूसुफ से बिछुडने का घाव जैसे आज फिर से टीसने लगा। साथ ही यह अनुभूति होने लगी कि यह घाव कभी भरने का नही, अब तो दूरी बढती ही जा रही है। केवल वर्षों की दूरी नही बल्कि युग की दूरी हो गई। कुणाल भी गए और अमिताभ भी····

## ८

श्यामा का यह कहना आशिक रूप से सही था कि अर्चना ने ही प्रेमचन्द को मुख्य दल से अलग होने के लिए उकसाया था। यदि अमिताभ इसका विरोध करते या प्रेमचन्द को समझाने आते, तो प्रेमचन्द शायद और अकड जाता, पर जब उसने सुना कि अमिताभ सारी बातो को सुनकर भी उससे बिना मिले चले गए तो उसे पश्चात्ताप-सा होने लगा।

एक तो यो ही वह अकेले अपने को केवल कुछ नये अधकचरे साथियो के साथ ब्रिटिश साम्राज्य से लोहा लेने मे असमर्थ पा रहा था, दूसरे इधर उसने समाजवाद सम्बन्धी जो पुस्तके पढी थी उनसे उसके मन मे सैद्धान्तिक सन्देह उठने लगे थे।

उसने इन पुस्तको मे यह पढा था कि क्राति करने के लिए यह आवश्यक है कि मजदूर-किसान वर्ग मे वर्ग-बुद्धि जागृत की जाए और उनके दिमाग मे यह अच्छी तरह बैठा दिया जाए कि राज्य माने एक वर्ग का राज्य। दूसरे शब्दो मे वर्ग-युद्ध का प्रचार करना ही कर्तव्य था और शोषित वर्ग का दल बनाना था।

ऐसे कार्यक्रम मे वैयक्तिक आतकवाद का कोई स्थान नही था। इसमे सदेह नही कि पुराने क्रातिकारियो ने बार-बार फासी चढकर, गोलिया खाकर, काले पानी जाकर यह स्पष्ट किया था कि वैयक्तिक वीरता किस उत्तुगता तक पहुच सकती है। अब जन-आदोलन की जरूरत थी न कि कुछ खास चुने हुए लोगो की वीरता की। जन-आदोलन माने गाधीवादी सत्याग्रह नही, बल्कि तीव्र वर्ग-सग्राम।

इन सब पुस्तको को उस युग मे सभी क्रातिकारी पढने लगे थे, पर उनके सामने कोई ऐसा ज्वलन्त उदाहरण नही था कि वे इसके पूरे अर्थ को समझ सके।

अर्चना भी इन पुस्तको को पढती थी, पर वह या तो इन विवेचनो को अच्छी तरह समझ नही पाती थी या उसका रोमाटिक मन इन बातो को सही परिप्रेक्ष्य मे देखना नही चाहता था।

जब यह अच्छी तरह पता लग गया कि अमिताभ चले गए और अभी जल्दी लौटेंगे नही, सम्भव है कभी न लौटे तो इस सम्बन्ध मे प्रेमचन्द का मन तरह-तरह के अटकल लगाने लगा। केवल वही क्यो, सभी ऐसी अटकल लगा रहे थे।

प्रेमचन्द ने अर्चना से कहा—मेरा मन कहता है कि अमिताभ जी आतक-वाद पर विश्वास खो चुके है, इस कारण वे मेरे अलग हो जाने को बहाना बनाकर खिसक गए। बहुत सम्भव है कि वे रूस चले गए हो।

अर्चना बोली—यदि मैं कहू कि कुणाल का अन्त देखकर उन्हे चाक्षुप रूप से एहसास हुआ कि उनकी स्थिति कितनी भयकर है और किस प्रकार वह भी गोली के शिकार हो सकते है, तो तुम मानोगे नही, क्योकि तुममे अब भी अध-भक्ति प्रचुर मात्रा मे है। पर इतना तो मैं कह ही सकती हू कि इस समय उन-का इस प्रकार सब कुछ छोड-छाडकर अज्ञातवास के लिए चला जाना विशेष साहस का परिचायक नही है। उन्हे तो हम लोगो का साथ देना चाहिए था

और देश में गोरे अधिकारियों की हत्या का एक तांता जारी कर देना चाहिए था, जिससे ब्रिटिश सरकार को आटे-दाल का भाव मालूम हो जाता।—कहते-कहते उत्तेजना में अर्चना की बड़ी-बड़ी आंखें चमक उठीं और उसके शुभ्र कपोलों पर सुर्खी की रेखाएं दौड़ गईं।

प्रेमचन्द ने उसके उद्भासित सुन्दर चेहरे को देखा तो उसके संदेह जो स्फुट होने के लिए उद्यत थे, फिर अस्फुट हो गए। उसने कहा—अर्चना, तुम यह भूल जाती हो कि अमिताभ जी आगे ब्रिटिश सरकार से संग्राम करें या न करें, उन्होंने भूतकाल में जो कुछ किया है, वही उन्हें फांसी के तख्ते पर ले जाने के लिए काफी है, इसलिए उनके क्षेत्र में पीछे रहने की बात तो कोई अर्थ ही नहीं रखती। उन्होंने भी इस बीच में समाजवाद सम्बन्धी ग्रन्थ पढ़े होंगे और उसका असर उनके मन पर पड़ा होगा। कुणाल जी की शहादत एक प्रबल धचका था, जिसके कारण वे जल्दी-जल्दी सोचने के लिए बाध्य हुए। सम्भव है हम लोगों के अलग हो जाने से भी उनपर असर पड़ा हो।

—हां, पड़ा है। मैंने सुना है कि वे कहते हैं कि जो लोग कुणाल जी की हत्या से उत्तेजित होकर मुख्य दल से अलग हो गए हैं और यह चाहते हैं कि उग्र कार्यक्रम के रूप में हत्याओं का सिलसिला जारी कर दिया जाए, उन्हें मैं अपना शत्रु नहीं मान सकता। उन्होंने यह भी कहा कि समय ही यह निर्णय करेगा कि कौन लोग सही मार्ग पर हैं।

इस प्रकार दोनों में विचार-विनिमय होता रहा, पर प्रेमचन्द भीतर से संतुष्ट नहीं हुआ। वह बोला—हम लोग उग्र कार्यक्रम अपनाने के लिए मुख्य दल से अलग हुए हैं। कुणाल जी के शहीद हुए एक सप्ताह होने जा रहा है, पर अब तक हमने उस ओर कोई कदम नहीं बढ़ाया है। नतीजा यह है कि लोग हमपर हंस रहे हैं और यदि एक हफ्ता और गुज़र गया तो भूतपूर्व साथियों में मुंह दिखाना मुश्किल रहेगा।

अर्चना को प्रेमचन्द पर गुस्सा आया। उसे प्रेमचन्द इसलिए पसन्द था कि वह बराबर उसकी बात मानकर चलता था और कई बार बीच-बीच में बिदक जाने पर भी अन्त तक उसका साथ दे ही देता था।

अर्चना दूसरों के सामने स्वयं पीछे रहती थी, पर वह जानती थी कि प्रेमचन्द उसीकी प्रतिध्वनि है। अब तो प्रेमचन्द केवल प्रेमचन्द नहीं था, बल्कि

वह हिन्दुस्तान समाजवादी सेना का कमान्डर-इन-चीफ था। उसीके जरिए अर्चना अपना स्वप्न सफल करना चाहती थी।

पर जब से प्रेमचन्द मुख्य दल से अलग हुआ था, तब से वह कई बार अजीब ढुलमुल यकीनी, सदेहवाद और शका प्रदर्शित कर रहा था।

तो क्या प्रेमचन्द को हटाकर नये दल के किसी और व्यक्ति को उसकी जगह पर बैठाने की जरूरत है ?

नही, ऐसा नही। कोई ऐसा है भी तो नही जो प्रेमचन्द का स्थान ले सके। वह कुशाग्र बुद्धि है, अच्छा वक्ता है और जिस कालेज मे वह लेक्चरर है, उसमें वह बहुत लोकप्रिय है। अर्चना की आखो मे वह बौद्धिक रूप से बहुत-से स्वनामधन्य क्रान्तिकारियो से श्रेष्ठ है।

पर ?

पर उसने जो प्रश्न उठाया था, वह तो सही था। कुछ ठोस काम फौरन करना ज़रूरी था। अर्चना स्वय किसी तरह पीछे हटने वाली नही थी। उसका स्वप्न ही था कि या तो वह फासी चढने वाली इस युग की प्रथम क्रान्तिकारिणी होगी या वह स्वतन्त्र भारत की एक महान् नेत्री बनेगी। बोली—यह तो मैं भी चाहती हू कि कुछ हो। अभी कुछ होगा तो उसे लोग कुणाल की हत्या के बदले के रूप मे लेगे। इसके अलावा सभव है कि हमारी वीरता से प्रभावित होकर दूसरे जिलो मे भी मुख्य दल के लोग हमसे आ मिले और इस प्रकार हमारे दल का सगठन अखिल भारतीय पैमाने पर हो। मैं अभी दो घटे मे अपनी कार्य-समिति की सभा बुलाती हू और इस प्रकार प्रथम कार्य क्या हो, इस सम्बन्ध मे लोगो के विचारो का पता लग जाएगा।

कहकर वह सचमुच ही साइकल सम्हालकर तैयार हो गई। प्रेमचन्द को वह आगे-पीछे सरकती हुई अग्निशिखा-सी लगी और उसके मन के सारे संदेह उस चलती-फिरती लपलपाती लौ के सामने पिघलकर बह गए, बोला—अर्चना तुम क्यो जाती हो, लो मैं किसी लडके को भेज देता हू। कम उम्र होने के नाते उसपर सदेह भी कम होगा।

अर्चना बाया पैर पैडिल पर रखती हुई बोली—नारी होने के नाते मेरे सम्बन्ध मे भी वही बात कही जा सकती है।

कहकर वह दृढ और मधुर हंसी के साथ साइकल पर निकल गई। रणचडी

का यह अति आधुनिक रूप था ।

एक घण्टे के अन्दर वह सबको खबर देकर लौट आई और बोली—जिससे भी मिली सब यही कह रहे थे कि ऐक्शन जल्दी होना चाहिए ।

अर्चना के जाते ही प्रेमचन्द के मन के सदेह फिर मन के अघेरे कोनो मे रेंगने लगे थे । बोला—बडी अजीब परिस्थिति है । हम ऐक्शन की ओर धक्का देकर भेजे जा रहे हैं । देखना तो यह है कि सचमुच यह ऐक्शन देश की इस स्थिति मे उचित होगा या नही । पर लोग तो अब उस असली बात को भुलाकर इस पर ज़ोर दे रहे है कि चूकि हम मुख्य दल से एक सैद्धान्तिक प्रश्न को लेकर अलग हो गए, इसलिए हमे ऐक्शन करना चाहिए । मुझे तो यह स्थिति असगत लगती है ।

अर्चना इसके पहले भी कई बार इस प्रकार की बातें सुन चुकी थी । इस सम्बन्ध मे प्रेमचन्द कई तरह के प्रश्न उठाकर अपने सन्देह सामने रख चुका था, पर अब की बार उग्र क्रान्तिकारियो की सभा के ऐन पहले प्रेमचन्द ने ऐसी बात कही तो अर्चना फनफनाती हुई नागिन की तरह बिगड खडी हुई । उसके हाथ-पैर कापने लगे । घायल उत्तेजना से उसके गले की नसे नीली पडकर फूल गई थी । उसकी बडी-बडी आखे और बडी हो गई थी और दातों के अन्दर से जैसे झाग निकल रहा था । बोली—प्रेमचद, तुम एक बात बताओ, क्या तुम्हे डर लग रहा है ?

प्रेमचद ने इसके पहले अर्चना को कई बार बहुत उत्तेजित अवस्था में देखा था, पर यह इस तरह उत्तेजित हो सकती है और ऐसा डस सकती है कि वह तिलमिला जाए, इसकी उसे कल्पना भी नही थी । उसे ऐसा लगा जैसे उसके जीवन के बाल्ब को बिजली पहुचाने वाला तार ही कट गया । वह छिन्नमूल वृक्ष की तरह धम से पास की कुर्सी पर बैठ गया ।

अर्चना को इसपर दया नही आई । बोली—मैं तुम्हे क्या समझती थी और तुम क्या साबित हो रहे हो ! मैं तो तुम्हे समूचे भारत के क्रान्तिकारी नेता के रूप मे देखना चाहती हू और तुम ऐसी बाते कर रहे हो जैसे अर्जुन ने कुरुक्षेत्र की रणभूमि पर रथ रोक कर की थी । कभी तुम यह कहते हो कि ऐसे समय में एका सबसे मूल्यवान उपादान है और कभी तुम मार्क्सवाद और समाजवाद का नाम लेते हो । मुझे असली बात तो यह लगती है कि तुम जीवन को अत्यधिक

महत्व देकर उससे चिपटे रहना चाहते हो ; तुम्हे अपने कालेज का वही वातावरण पसद है जिसमे तरह-तरह के कारणो से तुम्हारे इर्द-गिर्द जीवन से अनभिज्ञ, अपरिपक्व, अधकचरे नवयुवको और नवयुवतियो की भीड मडराती रहती है। बोलो, है न यही बात ? उस हालत मे तुम लौट जाओ अपनी प्रोफेसरी मे। किसी धनी-पुत्री से शादी कर लो। दहेज मे मोटी रकम लो और आराम से विश्वविद्यालय के सीखचो के अन्दर सोफासेट पर सुरक्षित रहकर क्रान्तिकारी विचारो की फुहारे फैलाओ। जाओ तुम चले जाओ। तुम्हारे गुरु अमिताभ ने तो मार्ग भी दिखला दिया है।

ऐसे ही वह अनर्गल जाने क्या-क्या कह गई। कुछ देर तक तो प्रेमचद अकस्मात् बाढ के अन्दर आई हुई झोपडी की तरह उसके तीखे और तिलमिलाने वाले थपेडे सहता रहा, फिर जैसे वह टूटकर तार-तार हो गया और उसकी आखो से एकाएक आसू जारी हो गए। उसने दोनो हाथो से अपना चेहरा ढक लिया।

अब अर्चना के आश्चर्यचकित और अभिभूत होने की बारी थी।

वह एक क्षण तो विह्वल की तरह देखती रही जैसे आवेश मे प्रियजन की हत्या करने वाला व्यक्ति प्रियजन की देह को सामने तडपती हुई देखकर स्तभित रह जाता है।

प्रेमचन्द और उसकी मित्रता कम से कम छ-सात साल पुरानी थी। कालेज मे वे काफी दिनो तक एक साथ पढे। न मालूम कितने मौको पर कितने कामो मे साथ रहे। कभी विरोध रहा तो कभी दोनो एक पक्ष मे रहे, पर रहे सबसे आगे। किसी भी हालत मे वे उन लोगो मे नही रहे जो दर्शक या श्रोता मात्र रहते है और समय की माग के अनुसार तालिया पीटते है या आवाज़कशी करते है।

अर्चना अगले ही क्षण प्रेमचन्द की तरफ बढी और उसने प्रेमचन्द को आलिगन मे बाध लिया। बोली—छि, यदि मैंने कुछ अनुचित कह दिया, तो तुम्हे मुझे डाटना चाहिए था, उसकी बजाय तुम स्कूली लडकी की तरह सीन कर रहे हो। मैं जानती हू कि तुम बडे साहसी हो और तुमसे बहुत बडे-बडे कार्य होगे। कुणाल और अमिताभ और पहले के सारे क्रान्तिकारी तुम्हारे सामने फीके पड़ जाएगे।...

इतना कहना था कि प्रेमचन्द अपने को रोक नही सका। अब तक उसके केवल आसू ही जारी थे, अब वह हिचकिया भरकर रोने को हुआ। वह अपने को अर्चना के आलिगन से छुडाकर दूसरे कमरे की तरफ भागा। उसने बाथ-रूम मे जाकर मुह धोया। पीछे-पीछे अर्चना भी गई थी। उसने कहा—यह क्या बचपना कर रहे हो? अभी लोग आते ही होगे और तुम इधर रो रहे हो।...

प्रमचन्द कुछ नही बोला और उसने बलपूर्वक अपने को सयत कर लिया। थोडी देर बाद बोला—अर्चना, तुम मुझे इतने सालो से जानती हो, फिर भी तुमने ..

आगे प्रेमचन्द कुछ कह नही पाया क्योकि अर्चना ने एक हाथ से उसका मुंह बन्द कर दिया। बोली—जाने दो मै आवेश मे आ गई, इसलिए मैंने कहा था। मै तुमसे बिल्कुल पर्दा करने की आदी नही हू। हम जीवन-मृत्यु के साथी है। .

अर्चना ने उसके मुह पर से हाथ हटा लिया, फिर भी उसका हाथ प्रेमचन्द की पीठ पर रह गया। इसके पहले दोनो ने एक दूसरे का स्पर्श नही किया था। आज बहुत ही अद्भुत परिस्थिति मे वे इतने पास आ गए थे, जिसकी उन्हे कल्पना भी नही थी। सबसे बडी बात थी कि उन दोनो ने एक ही साथ इस बात को महसूस किया।

उन्होने एक दूसरे की तरफ पहले अजीब दृष्टि से फिर न जाने क्यो लजाकर कनखी से देखा और अलग-अलग जाकर बैठ गए।

फिर इस प्रकार बाते करने लगे जैसे इस बीच मे कुछ हुआ ही नही। उनकी बाते दल तथा उसके आगामी ऐक्शन के सम्बन्ध मे थी।

दोनो सम्पूर्ण रूप से एकमत होकर सभा के सामने गए। पर जाने के ऐन पहले प्रेमचन्द ने एकाएक कहा—अर्चना, आज के सान्निध्य के लिए तुम मन मे किसी प्रकार का अफसोस न रखो। नीट्शे की वह बात तुमने पढी होगी—यदि सयम ही काम्य है, तब तो आदर्श व्यक्ति नपुसक ही होगा...

अर्चना ने कुछ नही कहा। उसने केवल सिर नीचा कर लिया।

## ९

अभी महात्मा गाधी ने डाडी यात्रा शुरू नही की थी। नमक सत्याग्रह वातावरण मे व्याप्त था।

गांधी जी स्वय उसका आरम्भ करने वाले थे, उसके बाद वह एक जन-आन्दोलन मे परिणत होने वाला था।

आनन्दकुमार के घर पर भी इस आन्दोलन की तैयारी शुरू हो चुकी थी, पर अभी यह तय नही हुआ था कि कौन-कौन आन्दोलन मे सक्रिय भाग ले।

बाबाजी अब स्थायी रूप से वही रहने लगे थे। वे जब-तब गायब हो जाते थे, पर अधिक से अधिक आठ-दस घटे बाद या हद से हद सन्ध्या तक प्रगट हो जाते थे।

श्यामा ने उनका पीछा करवाकर देखा था कि वे जब-तब श्मशान मे उसी पेड के नीचे जाकर बैठते है, पर इस सम्बन्ध मे किसीने उनसे न तो कुछ कहा, न पूछा। जब वे घर पर रहते थे तो उनका सारा समय कबीर के साथ बीतता था। कबीर को इन दिनो यही धुन सवार थी कि किसी तरह उसकी दाढी निकल आए ताकि वह उसपर हाथ फेर सके।

बाबाजी ने उससे कहा था कि दूध पीने पर दाढी निकलती है। यह उपाय कबीर के लिए बहुत ही कष्टकर था क्योकि वह किसी न किसी बहाने से दूध नही पीता था। कई बार वह थोडा दूध पीकर बाकी दूध चुपके से नाली मे डालते हुए पकडा गया था।

वह अपने समर्थन मे तर्क देता था कि अब मैं बच्चा नही हू, मैं अब चाय पीऊंगा। पर बाबाजी ने जब उसे दाढी बढाने के उपाय के रूप मे दूध पीने के लिए कहा तो वह नियमित रूप से दूध पीने लगा।

वह चाहता था कि परिणाम तुरन्त हो। ऐसी कोई बात होती दिखाई नही देती थी, तब वह झुझलाकर बाबाजी से दूध पीते समय कहता—दाढी नही निकल रही है, अब मैं दूध नही पीऊगा।

बाबाजी उसे गोद मे बैठाकर उसके गालो को बडी देर तक विधिपूर्वक दबाने के बाद जैसे ज्योतिषी हाथ देखते है, यह तसल्ली देते थे—कुछ-कुछ कडी

पड रही है, घबराओ मत, बीज से पेड जमने मे कुछ देर लगती है यह तो तुम बाग मे देख चुके हो

इसके बाद वे कहते थे—जब तक तुम्हारी अपनी दाढी नही निकलती, तब तक तुम मेरी दाढी से खेल सकते हो।

यह तो होता ही रहता था, यहा तक कि कभी-कभी श्यामा को ऐसा मालूम होता था कि इसकी अति हो रही है और बाबाजी के साथ अत्याचार हो रहा है।

इसलिए वह कबीर को डाट भी देती थी, पर बाबाजी हंसकर कह देते थे—दाढी के नाते ही सही, कोई मुझे उपयोगी मानता है, यही क्या कम है ?

श्यामा ने इस सम्बन्ध मे एक दिन आनन्दकुमार से शिकायत भी की—इस लडके को बाबाजी की दाढी मे अस्वाभाविक दिलचस्पी है।

आनन्दकुमार ने कहा—लडका किसका है ?

—पर वे तो दाढी नही रखते थे।

—वे नही रखते थे, पर उनके चौदह पुरखे तो रखते थे, यह बिल्कुल जीव-विज्ञान के अनुसार है।

इसपर बाबा जी ने कहा—मैंने जो दाढी रखी, सो किस विज्ञान के अनुसार है ?

आनन्दकुमार ने हसकर कहा—आपका मन भी एक पठान की तरह सादा है और आपने दाढी इसलिए रखी है कि उसके नीचे जो बच्चो जैसा मन छिपा हुआ हुआ है, उसे कोई देख न ले।

इसपर बाबाजी बहुत हसे और बोले—श्यामा, बेटी तुमने देखा ? किस खूबसूरती से उन्होने यह कह दिया कि अन्ततोगत्वा दाढी असलियत को छिपाने का ही एक जरिया है।

इसी प्रकार कभी हल्की-फुल्की बातो मे और कभी-कभी गम्भीर शास्त्र-चर्चा तथा साख्य, वैशेषिकी, वेदान्त, सन्त साहित्य के अनुशीलन मे बाबाजी के दिन कट रहे थे। यो घर मे दिन-रात राजनीति की चर्चा होती थी, पर ऐसे मौको पर बाबाजी बिलकुल चुप रहते थे मानो बिलकुल बहरे-गूगे हो। कोई इनसे राजनीतिक चर्चा भी नही करता था।

गाधी जी ने एक अग्रेज युवक रेजिनल्ड रेनाल्ड्स के जरिए से २ मार्च, १९३०

को वायसराय लार्ड इरविन को अन्तिम चेतावनी के रूप मे जो पत्र भेजा था उसका उत्तर गाधी जी को मिल चुका था। वायसराय ने यह लिखा था कि आपने ऐसी कार्यवाही अपनाने की बात लिखी है जिससे कानून भग होगा और सार्वजनिक शान्ति के लिए खतरा पैदा होगा।

इसपर गाधी जी ने लिखा था—मैंने घुटनो के बले खडे होकर रोटी मांगी, पर रोटी की बजाय मुझे पत्थर मिला। अग्रेज जाति केवल शक्ति (फोर्स) की ही परवा करती है। मुझे वायसराय के उत्तर से कोई आश्चर्य नही है। हमारी जाति को जो एकमात्र सार्वजनिक शान्ति प्राप्त है, वह है जेल की शान्ति। भारत एक बहुत बडा जेलखाना है, मैं इस ब्रिटिश कानून का विरोध करता हू और इस वाध्यामूतालक शान्ति को, जो जाति के हृदय की गति को रोक रही है, भग करना अपना पवित्र कर्तव्य मानता हू।

इस प्रकार सग्राम का शंखनाद हो चुका था। कबीर जैसे दुधमुहे बच्चों तक भी नमक बनाने की योजना पहुच चुकी थी।

करोडो आखे महान नेता की ओर लगी हुई थी।

आनन्दकुमार लगभग प्रतिदिन कही न कही व्याख्यान देने जाते थे। श्यामा भी कुछ न कुछ करने मे लगी रहती थी।

एक दिन सब लोग घर ही मे थे कि एक बगाली युवती आई। उसकी उम्र बीस के लगभग लगती थी। रग गोरा था और अग-अग में जीवन का रस लहरा था। उसने आकर सामने बाबाजी को देखा तो कुछ निराश हुई कि शायद गलत जगह आ गई। बोली—यह आनन्दकुमार जी का घर है न?

उसे देखकर ही बाबाजी के मन मे कुछ सन्देह हुआ था। अब जो उसने यह पूछा तो वे बोले—तुम किसको चाहती हो?

उसने कुछ अजीब झिझक के साथ कहा—मैं श्यामादेवी से मिलना चाहती हू।

अभी वह ऐसा कह ही रही थी कि श्यामा आ गई। रूपवती झाककर चली गई। आनन्दकुमार वहा थे, पर युवती ने उन्हे नही देखा था।

श्यामा को ऐसा मालूम पडा जैसे कभी इसे देखा है, पर पहचान नही सकी। बोली—तुम कौन हो? मेरा ही नाम श्यामा है।

उस युवती ने चारो तरफ देखकर कुछ झेपते हुए कहा—मै आपसे अकेले

मे मिलना चाहती हू ।

श्यामा बोली—तुम अपने को यहा अकेली ही समझो, ये कुणाल जी के पिता हैं और आनन्दकुमार जी मेरे गुरु हैं ।

वह युवती फिर कुछ झिझकी, बोली—मै बडे धर्म-सकट मे पडकर आपके पास आई हू ।

श्यामा ने उसे खोलकर सारी बात कहने के लिए कहा तो उसने धीरे-धीरे ये बाते कही । वह क्रातिकारियो के हाथो मारे गए रतनबनर्जी की पुत्री तारा बनर्जी है और यहा पहले भी आ चुकी है । आनन्दकुमार ने दूर बैठे ही कहा—मैंने इसे पहले ही पहचान लिया था ।

तारा ने बतलाया कि कुणाल की मृत्यु के बाद पुलिस अधिकारी बडे उत्सुक है कि क्रातिकारी दल के बचे-खुचे लोगो को समेट ले । या तो उन्हे गोली मार दी जाए या जेलखाने मे पहुचा दिया जाए । सरकार डरती है कि कही दोनो आन्दोलन एक साथ उग्र रूप धारण न कर ले ।

श्यामा ने गम्भीर होकर पूछा—यह तो सरकार के लिए स्वाभाविक है, पर तुम इसमे क्या कहना चाहती हो ?

—मुझे मेरी मा के ज़रिए से मजबूर किया जा रहा है कि मैं आपसे जान-पहचान बढाऊ और मैं आपसे कहू कि मै हमेशा से अपने पिता की विरोधी थी, इस प्रकार आप लोगो की गुप्त बातो का पता लगाऊ ।

—तो तुम क्या चाहती हो ?

—मैं इस झझट मे नही पड़ना चाहती, पर मेरे पीछे पुलिस है, इसलिए मुझे मजबूर होकर यहा आना पडा । मै अब यह चाहती हू कि आप मुझे कोई गुप्त बात न बताए, बल्कि मुझसे जो चाहे सो काम ले । जैसा आप कहेगी, मैं वैसा करूगी । मैं अब घर मे भी रहना नही चाहती ।

श्यामा आनन्दकुमार की तरफ देखकर बोली—मैं सोचकर तुम्हे उत्तर दूगी । अभी तुम वापस चली जाओ । काम बहुत है, चिन्ता मत करो ।

पर तारा बोली—मैं उनसे क्या कहूंगी ?

—अच्छा ? यह समस्या है ?

श्यामा ने सोचकर कहा—पहली बात तो यह है कि मैं तुम्हारा एतबार तभी करूगी, जबकि तुम प्रायश्चित्त करो । उस प्रायश्चित्त का भी रूप बताती

हू। तुम्हे नमक सत्याग्रह मे जेल जाना पड़ेगा। क्यो चाचा जी, मैं ठीक कह रही हूं न ?

आनन्दकुमार उत्तर दे नही पाए और बाबाजी ने अप्रत्याशित रूप से बीच मे बोलते हुए कहा—बिल्कुल ठीक ! ऐसा करने से एक फायदा यह भी होगा कि अब तक जो पुलिस वाले तुम्हारा पीछा कर रहे है और यह समझकर चल रहे है कि गुलाम की बेटी गुलाम ही होनी चाहिए उससे तुम्हारा पिंड छूट जाएगा।

तारा ने इस निर्णय का समर्थन करते हुए कहा—मुझे भी यह कदम बहुत सुन्दर मालूम होता है। मैं भी कुछ ऐसा ही सोच रही थी। इस तरह मैं घर के बन्धन से भी छूट जाऊगी।

श्यामा ने फिर भी प्रश्न किया—उसके बाद ?

वह अपने तजर्बे से जानती थी कि एक भारतीय युवती के लिए स्वतन्त्र होना टेढी खीर है।

इसका उत्तर भी बाबाजी ने दिया—इतने दूर की सोचने की कोई ज़रूरत नही। तुम सत्कार्य करोगी तो तुम्हारे बहुत-से मित्र भी पैदा हो जाएंगे। इस सम्बन्ध मे सर्वजया (रुक्मिणी) के जीवन से ही सीख लो।

इस निर्णय पर ठप्पा लगाने के अनुष्ठान के रूप मे कुछ जलपान मगाया गया और सबने मिलकर जलपान किया। बाबाजी ने मानो आज बिल्कुल ही चोला बदल दिया था। बोले—बेटी, आज तुम्हारे जीवन का बहुत शुभ दिन है, यदि तुम बेटी न होकर बेटा होती तो यह कहता कि तुम्हारा आज उपनयन सस्कार होने जा रहा है। उपनयन नही बल्कि तुमको पहली बार नयन मिल रहा है और तुम अखियारी बन रही हो। तुम आज से उस महान् बिरादरी की सदस्या हो गईं जिसमे इसके पहले सैकडो शहीद हो गए और बाद को भी सैकडों का बलिदान होगा।

तारा की विदाई के समय यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ कि तारा जाकर पुलिस वालो से क्या कहे क्योकि यह तो स्पष्ट ही था कि वे फौरन ही उससे पूछेंगे कि क्या सफलता रही ?

इसपर श्यामा ने कहा—कोई बात तो कहनी ही चाहिए, जाकर कह दो कि अमिताभ जी ने मार्क्सवाद के प्रभाव मे आकर क्रान्तिकारी दल को तोड़ दिया और वह चले गए।

किसीने भी पहले से कुछ सोचकर नही रखा था, पर सारी बाते एक के बाद एक ऐसे होती गई जैसे पहले से योजना बनाकर सब कुछ किया गया हो। इसमे सन्देह नही कि कोई भी ऐसी बात कही या की नही गई थी, जिससे पुलिस को कुछ लाभ रहे। अमिताभ के जाने की बात तो देर-सबेर मे पुलिस वालो को मालूम होने ही वाली थी, यदि वह पहले ही मालूम हो गई तो उससे कुछ आता-जाता नही था।

अमिताभ ने मार्क्सवाद के प्रभाव मे आकर क्रान्तिकारी दल तोड दिया, यह बहुत ही चतुराई से भरी हुई खबर थी जिससे पुलिस वालो का ध्यान असलियत से दूर जा सकता था, पर यह ऐसी खबर थी जिसके सम्बन्ध मे सभी का भीतर-भीतर यह ख्याल था कि पुलिस वाले शायद उसपर विश्वास न करे।[1]

पता नही प्रेमचन्द, अर्चना आदि क्या खिचडी पका रहे हैं। उनके अनुसार तो वे शीघ्र ही कोई भयंकर काण्ड करने वाले थे। जो भी करें, पर समय के पहले उनकी बात न खुले, यह देखना एक देशभक्त के नाते श्यामा का कर्तव्य था। यदि पुलिस वाले इस मौके पर यह समझकर हाथ पर हाथ धरकर बैठ जाएं कि अब तो क्रान्तिकारी दल कुछ करने वाला नही, क्योकि उसका एक नेता मर चुका और दूसरा रणक्षेत्र छोडकर जा चुका तो यह कोई बुरी बात न होगी। मार्क्सवाद वाली बात भी खूब रही। स्वय श्यामा को ही पता नही था कि अमिताभ क्या करने वाले है, उनका भविष्य का कार्यक्रम क्या है, पर मैदान छोडकर चले जाने की यह व्याख्या शायद अमिताभ के स्वार्थ के लिए भी सबसे अच्छी है।

यह जल्पना एक हद तक विश्वास योग्य भी जचती थी क्योकि उन दिनो केवल बाहर के क्रान्तिकारियो मे नही, जेल मे बैठे हुए यहा तक कि अन्दमन में भेजे हुए क्रान्तिकारियो मे भी मार्क्सवाद का अध्ययन बड़े जोर से चल रहा था। श्यामा को तो यहा तक खबर मिली थी कि ब्रिटिश सरकार स्वय मार्क्सवाद की पुस्तके खरीदवाकर स्वय अन्दमन भेजवा रही थी।

इस सम्बन्ध मे स्वय श्यामा की परिस्थिति कुछ अद्भुत थी, वह मार्क्सवाद

---

१ रामप्रसाद बिस्मिल ने १९२७ में अपनी आत्मकथा लिखी थी, उसीमें एक तरह से क्रांतिकारी दल तोडकर काम करने का इशारा आ गया है।

के सिद्धान्त से प्रभावित थी, पर उसे यह समझ मे नही आ रहा था कि मजदूरो के सगठन करने मे क्रान्तिकारीत्व क्या है ? हा, उसके साथ लेनिन की बाल्शेविक पार्टी की तरह कोई सशस्त्र गुप्त दल हो तो वह दूसरी बात है, पर यहा तो ऐसी कोई बात नही थी । हा, चोरी से कुछ पर्चे अवश्य साम्यवादियों की ओर से निकलने लगे थे, पर बाल्शेविक दल कहा था ? साम्यवादी दल का नाम तो था, वह गुप्त भी था, पर वह क्रान्तिकारी किस तरह था । केवल पर्चेबाजी से ही कोई दल क्रान्तिकारी नही हो जाता ।

जब तारा चली गई तो श्यामा ने आनन्दकुमार से कहा—चाचा जी, मैने कोई गलती तो नही की ?

आनन्दकुमार ने अपनी शिशु-सुलभ हंसी हसते हुए कहा—गलत और सही मे केवल सोपानो का ही फर्क होता है । यदि तुम यह पूछती हो कि उसे तुमने कोई ऐसी बात तो नही बताई जिससे वह तुम्हारे दल को नुकसान पहुचा सके, तो यह कहना पडेगा कि तुमने कोई गलती नही की ।

श्यामा को इससे तृप्ति नही हुई । बोली—फिर भी कुछ छोटी-मोटी भूल हो गई क्या ?

आनन्दकुमार ने कहा—भूल कोई नही, पर एक शब्द का प्रयोग न होता तो शायद अच्छा रहता । तुमने उससे कहा न कि प्रायश्चित्त, प्रायश्चित्त किस बात का ? वह जिस व्यक्ति की कन्या होकर पैदा हुई, उसपर उसका कोई हाथ नही था। फिर वह प्रायश्चित्त किस बात का करे ?

श्यामा कुछ बोल नही पाई, पर बाबाजी ने बीच मे बोलते हुए कहा—यदि कोई अपनी अनजान मे विष्ठा पर पैर रख दे तो भी उसे पैर धोना ही पडता है । इसी रूप मे श्यामा ने प्रायश्चित्त की बात कही होगी ।

आनन्दकुमार को आश्चर्य हुआ कि बाबाजी ने एक बहुत बडी उलझन को किस प्रकार सुलझा दिया । बोले—ठीक है, मैं भी मानता हू कि तारा को कुछ न कुछ करना चाहिए तभी वह पगत मे आ सकती है । फिर इन पुलिस वालो का कोई पता नही । कौन जाने इस लडकी के मन मे क्या है ! यदि वह नमक सत्याग्रह मे जेल जाएगी तो किसीको कोई हानि नही पहुंचेगी और उसे बरबस अपने पुराने मण्डल से कटकर अलग होना पड़ेगा ।

बाबाजी ने निर्णय-सा देते हुए कहा—जहां तक मैं समझ पाया यह लडकी

अच्छी होना चाहती है । पर कुछ कहा नही जा सकता ……।

तीनो मे से सभी यह आशा करते थे कि तारा ईमानदार है और उसका जो रूप यहा देखा गया, वही उसका असली रूप है, पर क्रान्तिकारी दल की कसौटी बडी भयकर होती है, इसलिए कोई भी इस अस्पष्ट मत के आगे जाना नही चाहता था।

## १०

गाधी जी और वायसराय के बीच मे जो पत्र-व्यवहार हुआ था, उसके फलस्वरूप आन्दोलन और भी अनिवार्य होता जा रहा था। गाधी जी ने यह पहले ही घोषणा कर दी थी कि वही पैहले नमक कानून तोडेगे। यों तो नमक कानून साबरमती के आश्रम मे ही रहकर तोडा जा सकता था, पर जनता के मनोविज्ञान मे गहरी अन्तर्द्दष्टि रखने के नाते उन्होने यह घोषणा की कि समुद्र-किनारे डाडी नामक गाव मे यह कानून तोडा जाएगा।

आश्रम से उन्हे दो सौ मील की यात्रा करनी थी और यह यात्रा प्राय. एक महीने तक पैदल होने वाली थी। उसके साथ ७५* अनुयायी थे, जिनमे से अधिकाश सत्याग्रह आश्रम के सदस्य थे। आश्रमवासी होने के कारण ये लोग गाधी जी के विचारो में यथा उनके विशेष अनुशासन मे पगे हुए थे।

काफी तैयारी के साथ यह यात्रा आरम्भ हुई। समाचारपत्रो मे पहले से ही इसके दीर्घ वर्णन छप रहे थे। यह एक साधारण यात्रा मात्र नही थी, बल्कि एक ओर तो इसका रूप धार्मिक हो गया था और दूसरी तरफ यह राजनीतिक थी। जिन गावों मे से होकर यह यात्री गुजरने वाले थे, उनमे बडा जोश फैल रहा था। गाधी जी ने पहले ही से यह खबर भेज दी थी कि पदचारियो का स्वागत बहुत मामूली ढग से किया जाए।

सरदार वल्लभभाई अग्रदूत के रूप मे आगे-आगे यात्रा कर रहे थे और

---

* राजेन्द्र बाबू के अनुसार ८० या ८१। देखिए आत्मकथा—पृ० ३७५

गाव वालो को यात्रियो के स्वागत के लिए तैयार कर रहे थे। अभी यात्रा शुरू होने मे कुछ देर थी कि मार्च के प्रथम सप्ताह मे सरदार वल्लभभाई गाव वालो को तैयार करते हुए रास मे गिरफ्तार कर लिए गए और उन्हे तीन महीने की सादी कैद की सज़ा दी गई।

इस प्रकार दमनचक्र का प्रारम्भ हो गया पर उससे उत्साह मे चार चांद लग गए। जो लोग अब तक यह समझ रहे थे, नमक सत्याग्रह टाय-टांय फिस्स हो जाएगा, उनमे कुछ सम्हलकर बैठ गए और आशान्वित हो गए।

साबरमती नदी के किनारे ७५ हजार लोगो की एक सभा हुई जिसमे राष्ट्र के दृढ निश्चय की घोषणा की गई। इसी प्रकार देश के अन्य स्थानो मे भी सभाए हुई।

काशी मे इस सम्बन्ध मे जो सभा हुई, उसमे आनन्दकुमार तथा अन्य नेताओ ने ज़ोरदार शब्दो मे यह बताया कि देश का एक-एक आदमी गाधी जी के पीछे है। अभी महात्मा जी ने आज्ञा नही दी। हजारो लोग नमक सत्याग्रह के लिए तैयार है।

बाबाजी अब भूलकर भी श्मशान की तरफ नही जाते थे और राजनीतिक घटनाओ में पूरी दिलचस्पी लेने लगे थे। इस अवसर पर भी वे सभा मे मौजूद थे।

किसी स्थानीय नेता का भाषण हो रहा था तो जनता में से एक ने उठकर कहा—हम कुणाल जी के पिता का दर्शन करना चाहते हैं।

साथ ही चारों ओर से यह आवाज उठी। तब बाबाजी को खडे होकर दर्शन देना पडा। लोगो ने इसपर यह हल्ला मचाया कि बाबाजी कुछ कहे।

आनन्दकुमार आदि नेताओ ने बाबाजी से कहा कि आप कुछ कहे। तब उन्होने टूटे-फूटे शब्दों मे जो कुछ कहा, उसका आशय इस प्रकार था—मै एक तुच्छ जीव हू, पर इतना समझता हू कि आज सबसे बडा धर्म स्वतन्त्रता-सग्राम मे बलिदान होना है। क्रान्तिकारी भी यही कहते है और गांधी जी भी यही कहते है। हो सकता है, उनमे कुछ मतभेद हो, पर बलिदान के विषय मे कोई मतभेद नही है। कृष्ण ने भी अर्जुन से यही कहा था—

**अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं सग्रामं न करिष्यसि।**
**ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥**

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् ।
सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥
भयाद्रणादुपरत मंस्यन्ते त्वां महारथाः ।
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् ॥
अवाच्यवादांश्च बहून् वदिष्यन्ति तवाहिता ।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतर नु किम् ॥
हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥
सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥

यद्यपि वक्तृत्व कला की दृष्टि से बाबाजी का व्याख्यान बहुत सुन्दर नहीं रहा, पर जनता के मन पर उसका जो परिणाम हुआ वह अन्य वक्ताओ के व्याख्यानों से कही अधिक था। जब उनका व्याख्यान समाप्त हुआ तो महात्मा गांधी की जय के साथ-साथ नाम ले-लेकर विभिन्न क्रान्तिकारी शहीदो, विशेषकर कुणाल की जय भी बोली गई।

यह सुनकर कुछ कट्टर गाधीवादी विशेष प्रसन्न नही हुए, पर वे यह समझकर कि क्रान्तिकारियो के प्रति जनता की जो श्रद्धा है, उसका उपयोग नमक सत्याग्रह को तगडा बनाने मे हो रहा है, इस समय चुप रहे। आनन्दकुमार बहुत ही खुश हुए और श्यामा से बोले—देखा, जनता की लहर मे आकर किस प्रकार दोनो धाराएं हिलमिलकर एक दूसरे को पुष्ट करती हुई, बल्कि अभिन्न होकर बह रही हैं। इससे भविष्य का सकेत भी मिलता है।

बाबाजी के बाद जनता के सामने कट्टर कांग्रेसी मतवाद पेश करने की चेष्टा की, पर लोग पहले धीरे-धीरे और बाद को ज़ोर-जोर से आपस मे इस तरह बातें करने लगे कि राजेन्द्र को झेंपकर अपना व्याख्यान जल्दी समाप्त करना पडा।

सब लोग उत्साह के साथ उस सभा से लौटे। पर आनन्दकुमार के मन मे कुछ दिनो से जो काटा खटक रहा था, वह आज बुरी तरह चुभने लगा। वह सोच रहे थे कि यहा तो सब लोग जेल जाने को तैयार हैं, पर कबीर का क्या होगा? यदि वह बहुत छोटा होता तब तो नियमानुसार मा के साथ जेल में जा

सकता था। यो भी वह छोटा ही है। पर दूध पीता न होने के कारण अधिकारी उसे श्यामा के साथ शायद न रहने दे। इतनी अभद्रता वे करेगे ही, इसमे कोई ऐसी बात नही थी।

फिर क्या हो ?

अत्यन्त उत्साह के साथ इस वातावरण पर मानो कुछ ठडा पानी डालते हुए आनन्दकुमार ने श्यामा को अकेले पाते ही कहा—सब लोग तो जेल जाने की सोच रहे है, पर कबीर का क्या होगा ?

श्यामा बिना किसी हिचकिचाहट के बोली, मानो उसका जवाब तैयार ही था—क्यो ? वह भी मेरे साथ जाएगा।

आनन्दकुमार ने कहा—पर वह अब दूध पीता बच्चा नही है, इसलिए सम्भव है कि बाल की खाल निकालकर उसे तुम्हारे साथ न रहने दिया जाए।

इस सम्भावना की बात श्यामा के मन मे न आई हो, ऐसी बात नही, पर उसने हमेशा इस अप्रिय सम्भावना को शुतुर्मुर्गी वृत्ति से टाल दिया था। कही वह अनाथ हालत मे मुश्ताक के हाथो मे फस गया और कट्टर मुसलमानी ढग से उसकी शिक्षा-दीक्षा शुरू हुई तो ? यहा तो वह हवा की तरह स्वतन्त्र है, कोई यह चेष्टा नही करता कि अमुक कट्टर विचारो मे वह पले। पर ''

यदि वह मुश्ताक के हाथ पडा तो यह तो बहुत ही दु खद बात रहेगी। तो क्या वह जेल न जाए, क्या वह नमक-सत्यग्रह मे भाग न ले ? यो क्रान्तिकारी दल की सदस्या के नाते वह कुछ करने के लिए बाध्य नही है, पर दल में मत-भेद पैदा हो जाने के कारण उसकी जो हालत उत्तर भारत मे हुई है, उसमे कोई निर्णय करना बहुत कठिन है। इसकी बजाय दो-चार महीने जेल हो आकर फिर नये परिप्रेक्ष्य मे अपने कर्तव्य पर विचार किया जाए। बाबाजी ने जो कुछ कहा वह ठीक ही था, युद्ध से हटना कायरता है, पर किसी प्रकार युद्ध करते जाना सही है। कम से कम गलत कदमो, साथ ही अकर्मण्यता से तो बचना ही चाहिए।

आनन्दकुमार जब बडी बात सोचते थे, बड़ी बात ही सोचते रह जाते थे, पर इस समय वे केवल कबीर की बात सोच रहे थे। मानो चिल्लाकर सोचते हुए बोले—यदि कबीर तुम्हारी चाची से अच्छी तरह हिला हुआ होता तो कोई बात नही थी, पर दोनो मे जैसे किसी प्रकार का गुप्त विरोध है ·

—हां, चाचा जी ऐसा क्यो है ? मुझे भी बार-बार ऐसा लगा, पर बहुत नाजुक प्रश्न होने के कारण मैंने इसपर कुछ कहा नही। चाची जी मे तो बच्चे की भूख बहुत है, फिर वे कबीर से क्यो अन्तरग नही हो सकी ?

आनन्दकुमार ने हसकर कहा—बेटी, मनुष्य का मन बडा विचित्र है। हमारे अनजान मे हमारे मन मे कई तरह के विरोधी सस्कार रहते है। मेरा तो यह ख्याल है कि मुस्लिम बाप का बेटा होने के ही कारण कबीर रूपवती के हृदय मे स्थान नही बना सका।

श्यामा ने आश्चर्य के साथ कहा—पर वे तो एक क्रान्तिकारी होने के नाते धर्मो के सकुचित दायरो से बहुत ऊपर उठ गए थे।

—वह तो ठीक है। वे एक आदर्श मनुष्य थे, ऐसा मनुष्य जो इतिहास के लिए गौरव की वस्तु बन चुका है। यह सब है, पर मान लो एक हिन्दू-मुस्लिम दगा हो तो उसमे हिन्दू यूसुफ को मुसलमान समझकर ही मारेंगे, जैसे कि मैं कितना भी उदार विचार रखू, मुसलमान मुझे ऐसे मौके पर हिन्दू मानकर ही मारेंगे।

दोनो इस भयकर ट्रेजडी की बात सोचकर चुप हो गए, पर कबीर की समस्या ज्यो की त्यो बनी रही। उसपर कोई निर्णय नही हो सका, इसलिए नही हो सका कि जितने भी उदारचेता लोगो के नाम याद आए उनमे से सब के सब ऐसे थे जो इस समय जेल जाने के लिए तैयार थे। जब श्यामा ने देखा कि आनन्दकुमार इस विषय मे अधिक चिन्तित हो रहे है तो उसने कहा—आप चिन्ता न करे, कोई न कोई समाधान निकल ही आएगा।

आनन्दकुमार हहराकर हस पडे। बोले—श्यामा, तुम तो रहस्यवादी हो रही हो। हमे कबीर की समस्या एक साधारण बच्चे की समस्या से कही अधिक महत्वपूर्ण मालूम हो रही है क्योकि मेरी मान्यता है कि वह सच्ची भारतीयता बल्कि मनुष्यता का प्रतीक है। कही वह किसी अवाछनीय व्यक्ति के हाथ मे न पड़ जाए। यह तो मुझे विश्वास है कि अन्ततोगत्वा वह उस वातावरण को चीर-कर निकल आएगा, उसी प्रकार जैसे बच्चा अडे को फाडकर निकल आता है, पर उसे कष्ट तो होगा ही।

फिर भी इस समय कोई निर्णय नही हो सका। अन्त मे ऊबकर श्यामा बोली—न हो वह चाची के पास ही रहेगा। चाची के मन के अन्दर भले ही

कोई संस्कार की दीवार खडी हो, पर वे कबीर पर कुछ लादने के लिए लालायित है यह मैं नही मानती ।

कहते-कहते श्यामा को एक बात सूझ गई, बोली—बाबाजी तो रहेगे ही, फिर क्या चिता ।

आनन्दकुमार बोले—बाबाजी पर किसी बात का बोझ डालना उचित न होगा । मुझे तो ऐसा लग रहा है कि वे किसी छत्ते मे अधिक दिन तक फसे रहने वाले जीव नही है ।

—पर छत्ते मे उन्हे फसा देने मे ही उनका कल्याण है ।

—यह कोई नही कह सकता कि क्या ठीक है। केवल जीते रहना अपने मे कोई उद्देश्य नही हो सकता ।

श्यामा ने एक बार सोचा कि शायद आनन्दकुमार यह समझते हैं कि अब भी बाबाजी मे आत्मघात की प्रवृत्ति बाकी है । उसने यही बात कही, पर आनन्दकुमार बोले—आत्मघात शब्द बहुत बुरा है, पर उसके सूक्ष्मीकृत और उदात्तीकृत कई रूप हो सकते है। मैंने जब जापानियो मे प्रचलित हाराकीरी का अध्ययन किया तो मुझे पहले पहल वह बडा वन्य और अशालीन ज्ञात हुआ । उससे किसी असभ्य कबीले की जीवनचर्या की बू आती थी, पर जब मैं और गहराई मे गया तो मालूम हुआ कि आत्मदान के बिना सृष्टि तो होती ही नही। आदिम अमीबा विखण्डित हो जाता था, तभी दूसरे अमीबा की सृष्टि होती थी । बाद को चलकर भी सृष्टि का यही रहस्य रहा। इसी आत्मदान से नये प्राणी और नये ससार की रचना होती है । बाबाजी मे यह भावना कब ज़ोर मारेगी, हम नही कह सकते । तुमने तो उनका व्याख्यान सुना, उससे भी यही नतीजा निकलता है ।

यह दिन ही ऐसे थे जब बहुत-सी बाते अनिर्णीत रह जाती थी । जब ब्रिटिश साम्राज्य जैसी खूख्वार शक्ति से सग्राम ठन रहा था तो और क्या आशा की जा सकती थी ।

## ११

तारा ने घर जाकर अपनी मा को जितना जो कुछ बताया उससे उसको यह सदेह हो गया कि यह लडकी दुरगी चाल चल रही है और सम्भव है कि इसने बहुत कुछ बनाकर कहा हो।

श्रीमती बनर्जी ने सोचा कि जब मै ही इस बात को ताड़ गई हू तो तसद्दुक अहमद तो इस बात को बहुत ही आसानी से समझ जाएगा। यह सोचते ही उसे बहुत क्रोध आया और उसने आपे से बाहर होकर लड़की से कहा—तू मुझे सारी बात नही बता रही है…

तारा ने सारी बात बताई थी, सिवा इस बात के कि उसने श्यामा के साथ एक समझौता-सा कर लिया था जिसकी एक शर्त यह थी कि वह नमक-सत्याग्रह में जेल जाएगी। वह बोल उठी—मैने तो पहले ही कहा था कि तुम मुझे इस पचड़े मे न डालो, पर तुम ज़िद कर गईं।…

श्रीमती बनर्जी ने व्यग्य के साथ कहा—शरम नही आती। अब यह मौका हाथ आया है तो तू पीछे हट रही है, नही तो आज कौन किसे पूछता है। तसद्दुक पर तेरे बाप के बहुत-से एहसान है, पर यह तो एहसानफरामोशी का युग है। न जाने क्या सोचकर उसने तुझे यह मौका दिया जिससे घर की समस्या सुलझ सकती है, पर तू है कि बेकार मे बाते बना रही है।

तारा इसके उत्तर मे बोली—मुझे यह काम पसन्द नही है।

अब की बार श्रीमती बनर्जी का पारा एकदम चढ गया। बोली—तू सोच रही होगी कि तेरी शादी कर दी जाएगी ताकि तुझे छुट्टी मिल जाए, पर देख लेना मेरा भी नाम एलोकेशी है। मै तेरी शादी होने न दूगी, न दूगी। तेरे बाप के जो रुपये सरकार से मिले है वे केवल हमारी गृहस्थी के लिए भी पूरे नही है।

—मुझे शादी की कोई चिन्ता नही है, मुझे शादी नही करनी है।

अब की बार एलोकेशी ने मुह बना लिया। बोली—अच्छा तो जो बात मैं सोच रही थी, वही है। अब तू एक बात साफ-साफ मुझे बता कि तू तसद्दुक के

बताए हुए रास्ते पर चलेगी या नही ?

तारा को और कुछ नही तो अपने यौवन का भरोसा था। इठलाकर बोली—मैं नही चलूगी और प्रदीप को भी पुलिस मे नही जाने दूगी।

एलोकेशी ने चुनौती के स्वर मे कहा—तो यह बात! तुझे शायद अपने बाप पर भी शरम आती होगी।

तारा एक क्षण तक हिचकिचाई, फिर बोली—उन्होने जो कुछ किया, अपनी बुद्धि से किया, पर युग बदल गया है, मै भी अपनी बुद्धि से चलूगी।

एलोकेशी का धैर्य समाप्त हो चुका था, वह अपनी जवान लडकी पर एक बाघिन की तरह टूट पडी। उसके सारे कपडे फाड दिए। यहा तक कि वह बेचारी नगी हो गई। फिर अपनी कन्या को नगी देखकर शायद पहली बार यह महसूस किया कि वह पूरी जवान हो चुकी है और उसके मुकाबले मे वह स्वयं एक झगडालू अधेड स्त्री मात्र है, जिसके जीवन मे कही आशा की कोई रजत-रेखा नही है।

उसने प्रदीप का रैकेट उठा लिया और उससे तारा के नगे शरीर पर प्रहार पर प्रहार करती चली गई।

पहले तो तारा चुपचाप सहती रही, पर एकाएक उसे सदेह हुआ कि कही मा पागल तो नही हो गई है, तब उसने प्रतिरोध करने की चेष्टा की।

इससे एलोकेशी का आक्रोश दुगुना हो गया और आक्रमण का जोर चौगुना हो गया। यद्यपि तारा शरीर से किसी प्रकार अपनी मा से कमजोर नही थी, पर मा पर वह निर्बाध होकर अपने बल का प्रयोग नही कर सकती थी, जब कि एलोकेशी अपने जीवन की सारी व्यर्थता, बारह वर्ष तक पतिपरित्यक्ता रहने और बाद को विधवा होकर दर-दर की ठोकरे खाने मे अन्तर्निहित सारी हीनता उडेलकर उसपर अन्धाधुन्ध चोट कर रही थी। फिर वह थी तो रतन बनर्जी की ही पत्नी, रतन बनर्जी द्वारा किए गए निर्यातन की सैकडो कहानिया वह सुन चुकी थी। ऐसे अवसरो पर वह हमेशा पति का समर्थन करती थी।

एक बार रैकेट तारा के सिर पर इस तरह लगा कि वह नगी तो हो ही चुकी थी, अब चक्कर खाकर गिर पडी, कई जगह से खून आ रहा था।

एलोकेशी ने कालीन पर पसरी हुई लडकी को देखा, वह बाई करवट से गिरी थी और उसका सिर एक कुर्सी से लगकर कुछ ऊचा हो रहा था। इस

अवस्था मे भी उसके उभरे हुए उरोजो पर ही पहले आंख जाती थी। एलोकेशी ने उस तरफ देखा और मानो कोई अप्रिय वस्तु देखी हो, एक बार 'थू' से थूक-कर फिर रैंकेट को जोर से ज़मीन पर पटक दिया।

क्रोध तब तक प्रबल रहता है, जब तक उसके सामने कुछ होता है, पर जब सामने कुछ नही रह जाता तो थिराने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। खैरियत यह थी कि घर मे न प्रदीप था न नौकर। खैरियत क्या, इसी कारण यह झगडा पराकाष्ठा तक पहुच सका, नही तो दोनो कुछ दबती, कुछ बीच-बिचौवल होता और इस प्रकार झगडा पराकाष्ठा तक नही पहुच पाता।

एलोकेशी ने एक गिलास पानी पिया, फिर वह इस योग्य हुई कि सारी परि-स्थिति को दूसरे की आखो से देख सके यानी उस दृष्टि से देख सके, जिस दृष्टि से दूसरे इसे देखेंगे।

अपनी जवान लडकी के निर्यातन और अपमान से जो आनन्द और तृप्ति उसे मिली थी, वह वास्तविकता के सामने कपूर की तरह उडने लगी। अभी वह कुछ तय नही कर पाई थी कि आगे क्या हो। अकड यही कह रही थी कि मरने दो, पर अकल यह कह रही थी कि इसके मुह पर पानी का छीटा देकर इसे होश मे लाओ और इसे कपडे पहनाओ।

इतने मे आहट हुई और 'भाभी जी! भामी जी!' करते हुए तसद्दुक अहमद एकदम भीतर चला आया। वह इस घर मे बेरोक-टोक आता-जाता था। पर इस समय उसका इस प्रकार आना एलोकेशी को बहुत अखरा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि किसी रूप मे किसी भी दाम पर उसे रोकना चाहिए। पर कोई रास्ता नही सूझा।

इसी एक क्षण मे एलोकेशी को ऐसा लगा कि वह गश खाकर लडकी की बगल मे गिर पडेगी, पर ऐसा कुछ भी नही हुआ और तसद्दुक अहमद सामने आ गया।

जब तसद्दुक बिल्कुल सामने आ गया तब एलोकेशी को पहली बार यह ज्ञान हुआ कि उसकी जवान लडकी तो मादरजाद नगी है ही, वह स्वयं भी कमर से ऊपर तक विवसना है। वह तूफान से ताडित तृण-खण्ड की तरह दूसरे कमरे मे दौड गई और तसद्दुक अहमद नगी, बेहोश, लहूलुहान तारा के सामने खड़ा रहा।

तारा का सिर अब कुर्सी से हटकर जमीन पर टिक गया था। दाहिना उरोज सद्योपभुक्ता नारी की तरह उभर कर फिर कुम्हलाया हुआ दिखाई पड़-रहा था। बेहोश होकर भी मानो अपनी लज्जा की रक्षा के लिए तारा ने जाघो को सटा रखा था। इस प्रकार रक्त, स्वेद, और असहाय अनावृत्त यौवन को एक साथ देखकर तसद्दुक अहमद के मन मे जो अनुभूतिया आ टकराईं उनसे वह स्तब्ध रह गया। सकोच, भय, करुणा, आतक, वासना, लालसा, सब एक साथ एक ही क्षण मे एक ही बिन्दु पर आ लडी।

विकर्षण कम था और आकर्षण अधिक। एक पुलिस कर्मचारी के नाते उसके मन मे ऐसे दृश्य के प्रति जो प्रतिक्रिया होनी चाहिए थी, इस समय उसका सर्वथा अभाव था। बस उसे तो वह उभरा हुआ उरोज और कैची की तरह सटी हुई जाघे ही कचोट रही थी।

किसी भी क्षण तारा की मा कपडे पहनकर घटनास्थल पर आ सकती थी, पर तसद्दुक अहमद के अन्दर के आदिम मानव ने, जो बर्बर पशु का ही वशधर था, इन दुर्लभ क्षणो से अधिक से अधिक निचोड लिया। वह तारा के नग्न शरीर को लगभग अपलक दृष्टि से घूरता रहा।

पहले भी वह अनुमान तो करता था कि तारा रूपसी है, पर उसका अग-अग इतना पूर्ण, मोहक और पाशविक आवेदन से लबालब है, यह उसे पता नही था। सच तो यह है कि कोई स्त्री इतनी लोभनीय हो सकती है, यह तो अभी पता लगा।

जैसे आखो पर से एक पर्दा हट गया—सैकडो बल्कि हजारो वर्षो की सभ्यता का पर्दा, जिसमे लपेटकर यही सिखाया जाता कि प्रेय श्रेय नही और श्रेय प्रेय नही।

इस समय तो तसद्दुक को यही लगा मानो इस विश्व ब्रह्माण्ड मे केवल वह है और पीडित मानवता का प्रतीक यह तारा है। वह उद्धारक है और तारा इसलिए छटपटा रही है कि कोई उसका उद्धार करे। तारा का शरीर जैसे उसे हाथ के इशारे से यह मूक निमन्त्रण दे रहा था कि पीड़ा के अतिरिक्त भी तो तत्त्व हैं, फिर तुम क्यो चूकते हो? तुम्हे डर, सकोच है तो क्यों?

पता नही क्या हो जाता और वह क्या करता, पर उधर से एकाएक तारा की मा साफ साडी पहनकर और घूघट काढकर (जैसा कि वह कभी नही करती

थी) आई और मोहग्रस्त तसद्दुक अहमद से आज्ञामूलक ढग से बोली—तसद्दुक, यहा से जाओ।

तसद्दुक का चेहरा उतर गया, जैसे चोरी पकडी जाने पर चोर का होता है, पर वह जानता था कि श्रीमती बनर्जी एक असहाय विधवा मात्र है। वह उसका कुछ नही बिगाड सकती। इसके अलावा उसने अपने मन को इस नैतिक तर्क से भी सबल बना लिया था कि इस स्त्री ने अपनी बेटी के साथ बडी ज़्यादती की है। यद्यपि वह स्वय उससे कही बडी ज़्यादती करने पर तैयार ही था। बोला—जाऊ कैसे ? लाइए पानी लाइए। इसे होश मे लाना है। आपने तो हद कर डाली।

कहकर उसने तारा की तरफ लालसाभरी पर अज्ञात सम्भावनाओ से बलपूर्वक वचित दृष्टि से देखकर कहा—यह तो बडा भारी जुर्म है।

श्रीमती बनर्जी अब सिहनी की तरह गरजकर बोली—आप यहा से जाते है कि मैं चिल्लाऊ

'चिल्लाऊ' शब्द से तसद्दुक की लालसा का गुब्बारा फिस्स हो गया और वह भीगी बिल्ली की तरह जाने लगा।

थोडी दूर जाकर उसके पुरुषत्व और शायद अफसरत्व ने जोर मारा और वह बोला—मैं बैठक मे बैठता हू, मुझे तारा से बात करके और रिपोर्ट लेकर जाना है।

श्रीमती बनर्जी ने तारा पर कपडा डालते हुए चिल्लाकर कहा—आज से तुम तारा का मुह नही देख सकते और आगे से यहा भी तुम्हारे आने की कोई जरूरत नही है।

इसके उत्तर मे तसद्दुक कुछ बडबडाता हुआ चला गया। वह बाहर निकला ही था कि जीवानन्द से उसकी आखे चार हुईं। विवसना रूपसी को देखने से उसके दिमाग मे सरूर का जो फाहा भीनी-भीनी खुशबू दे रहा था उसका बाकी हिस्सा भी जीवानन्द को देखते ही काफूर हो गया। उसे अब तक मालूम हो चुका था कि जीवानन्द प्रेमचन्द के उग्रदल मे शामिल नही हुआ था, पर था वह प्रेमचन्द से कही अधिक उजड्ड और खतरनाक। बोला—कहिए, क्या हाल हैं ?

जैसे तसद्दुक जीवानन्द को देखकर सकपका गया था, उसी प्रकार जीवानन्द भी उसे देखकर अकचका गया था। उसने ऐसे मुह बनाया जैसे उसका पैर गीली

विष्ठा पर पड गया हो। बोला—कोई खास बात नही, बस अब डाडीयात्रा की तरफ मेरी आखे लगी हुई है।

तसद्दुक इस बीच सम्हल चुका था। उसने अकड के साथ पूछा—आप तो बारूद-सत्याग्रह मे विश्वास करते है, आपके मुह से नमक-सत्याग्रह की बात कैसी ?

जीवानन्द का चेहरा क्षणभर के लिए ऐंठ गया। बोला—समय पडने पर नमक बारूद से भयकर हो सकता है, फिर आप तो नमकहलाल हैं। आपको नमक से क्या डर ?

कहकर वह वहा से चल दिया। वह ताड़ने लगा कि तसद्दुक किस घर से निकला और क्यो। वह नही जानता था कि यह घर किसका है ? पर उसने मन ही मन यह निश्चय कर लिया कि उस घर के रहस्य का भी पता लगाना है, उसमे कोई न कोई रहस्य जरूर होगा। पर घटनाए इस तेज़ी से होती गई कि यह बात उसके दिमाग से बिल्कुल निकल गई।

## १२

जिस दिन एलोकेशी के घर मे यह घटना हो रही थी, उसी दिन लगभग उसी समय उग्र क्रान्तिकारियो की वह जल्दी से बुलाई हुई सभा हो रही थी। कुल एक दर्जन के लगभग व्यक्ति थे, जिनमे से दो महिलाए थी, एक अर्चना और दूसरी प्रतिभा।

प्रतिभा एक तरह से अर्चना की ही शिष्या या प्रतिबिम्बत छाया थी। उसे अभी ज़िन्दगी का कोई भी तजर्बा नही था, पर वह जोश से भरी हुई थी। अपने कालेज मे वह एक उग्र विचारो की तरुणी करके मशहूर थी। वह केवल विचारो से ही उग्र नही थी, कहते है अब तक वह दो प्रेम-निवेदन करने वाले युवको की चप्पलो से खबर भी ले चुकी थी। उसके पास कोई फटकता नही था, यद्यपि उसे साधारण रूप से सुन्दरी कहा जा सकता था, पर अर्चना की

तुलना मे उसकी रूप-ज्योति काफी मद्धिम थी।

सब लोग गम्भीर थे और यह स्पष्ट था कि कोई भयकर निर्णय होने वाला है। प्रारम्भ मे ही अर्चना ने सारी परिस्थिति समझाई, जिसमे उसने विशेषकर इस बात का उल्लेख किया कि सब पुराने क्रातिकारी वीर और योद्धा पस्त हो चुके है और अपनी पस्ती को छिपाने के लिए उन्हे मार्क्सवाद के रूप मे अच्छी आड मिल गई है।

उसने अमिताभ का नाम लेकर कहा—यों उन्होने जो कुछ सेवा की है उसी-से वह हमारे लिए वन्दनीय है, पर आगे उनसे कुछ आशा करना व्यर्थ है और मुझे विश्वास है कि उनसे अब कुछ नही होगा। जो कारतूस चल चुका है वह उसीकी तरह खाली हो गए है। इसी कारण हमने समय देखकर वास्तविक क्रातिकारी तत्वो को दल से अलग कर लिया। अब हमारे सामने प्रश्न है कि हम अपने कृत्यो से साबित करे कि हम सहज नेतृत्व हथियाने के लिए अलग नही हुए है, बल्कि हमारे सामने एक ठोस और सुचिन्तित कार्यक्रम है। हमारा असली लक्ष्य तो क्रान्ति है। ऐसी क्राति जिसके द्वारा इस प्रकार के समाज की स्थापना होगी, जिसमे मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण असम्भव हो, पर साथ ही ब्रिटिश नौकरशाही ने हमपर बार-बार जो हमले किए है, उसका हमे तुर्की-बतुर्की जवाब देते चलना है। कुणाल जी की हत्या एक चुनौती है, हम उसे स्वीकार करने के लिए बाध्य है। इसीलिए आज हम लोग किसी ऐसे कार्यक्रम का निश्चय करने के लिए एकत्रित हुए है, जिससे इतिहास एक बार खिल उठे। अत्याचारियो का दिल दहल उठे और हमने मुख्य दल से अलग होकर सही कदम उठाया, यह प्रमाणित हो जाए।

सबने इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

प्रेमचन्द ने अपने व्याख्यान मे उन्ही बातो को दुहराया जिन्हे अर्चना कह चुकी थी, पर साथ ही उसने बडी सावधानी से कुछ नई बाते भी कही।

उसका कहना यह था कि अच्छा हुआ कि दल के दो स्पष्ट हिस्से हो गए, पर केवल दो हिस्से हो गए इसी कारण क्या उग्र और सक्रिय हिस्सा इस बात के लिए बाध्य है कि वह फौरन ही किसी प्रकार के नाटकीय कार्यक्रम को लेकर मैदान मे उतर पड़े? बड़ी-बड़ी घटनाए घटित हो रही है। योरप मे हिटलर का उदय हो चुका है, वह चोट खाए हुए नव जाग्रत जर्मनी का प्रतीक है। ऐसा

मालूम होता है किसी न किसी सोपान पर चलकर ब्रिटिश साम्राज्य के साथ उसकी टक्कर होकर रहेगी। हमे इसके लिए तैयार होना है। इधर देश मे भी एक नया आदोलन छिड रहा है, जिसकी सम्भावनाए बहुत अधिक है। कुणाल जी कहा करते थे कि सत्याग्रह से कभी क्राति नही हो सकती, जब होगा तो समझौते मे सत्याग्रह का अवसान होगा। हमे इन सारी बातो को स्मरण रखकर कोई निर्णय करना चाहिए।

अर्चना को प्रेमचद की इस प्रकार की बाते पसद नही आई। उसे मन ही मन प्रेमचंद से कुछ निराशा हो रही थी कि वह इस मिट्टी के लौदे से देवता की मूर्ति बनाना चाहती थी और यह लौदा किस प्रकार हर पग पर उसकी उगलियो को दुखा रहा है।

अभी थोड़ी देर पहले वह उसका तिरस्कार कर चुकी थी और उसके फलस्वरूप प्रेमचद पछता भी चुका था। लगता था इस पर्व की हमेशा के लिए समाप्ति हो गई थी, पर यह अजीब बात है कि मौका पाते ही प्रेमचद हैमलेट की तरह अगर-मगर, प्रधान राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियो की दुहाई देने लगा।

भला एडाल्फ हिटलर से हमारा क्या सम्बध ? माना कि वर्साई का पत्थर गले मे बाध कर डुबाए हुए पराजित-पददलित जर्मनी के पुनरुत्थान का हिटलर प्रतीक है, पर उससे हमे क्या ? क्या अब क्रान्तिकारी विचारधारा का यही सार रह गया कि हम दूसरो का मुह ताककर बैठे रहे।

और यह जो नमक-सत्याग्रह की बात कही गई, यदि इसीपर भरोसा करना है तो फिर क्रातिकारी दल की जरूरत क्या है ? हमे वास्तविक स्वतत्रता चाहिए या एक पैबद लगा हुआ लयादा जिसपर बडे-बडे हरफो मे स्वराज्य लिखा हो, जिसकी आड मे असल मे बहुत हुआ तो अग्रेजो के साथ-साथ भारतीयो को भी शासक वर्ग में शामिल कर लिया जाएगा।

अर्चना के मन मे ये सारी बाते आईं और बहुत जोरदार ढग से आईं, पर इसने उन्हे इस रूप मे कहना उचित नही समझा। दूसरो की बात भी तो सुननी चाहिए।

प्रणवकुमार कुछ दिनो तक कुणाल के बाडीगार्ड के रूप मे रह चुका था। जब कुणाल कही जाते थे तो उनके साथ वह पिस्तौल लेकर एक साधारण

मुसाफिर बनकर चलता था।

उसने कहा—मै वक्ता नही हू, एक सैनिक मात्र हू। यहा पर कुणाल जी का नाम लिया गया है, इसलिए मै दो शब्द कहना चाहता हू। पहली बात तो यह है कि यदि हमे हिटलर और गाधी का मुह ताकना है, तो हम मुख्य दल से अलग क्यो हुए ? और अलग हुए तो हमे काग्रेस मे शरीक होकर नमक बनाना चाहिए। रहा मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण असम्भव हो जाए, ऐसे समाज की स्थापना, सो इसके लिए न तो हिटलर हमे अनुप्रेरणा दे सकता है क्योकि वह तो जर्मन पूजीपति थाइसेन का एजेट है, गाधी भी हमारा सहायक नही हो सकता क्योकि वह टाटा-बिड़ला का एजेट नही तो इनका साथी-सगाती ज़रूर है।

इस प्रकार तर्क बहुत पसर गया और तीन घटे कब निकल गए, कुछ पता नही लगा। अर्चना ने देखा कि सभी सदस्य प्रेमचन्द की अपेक्षा उग्र है, कम से कम यही दिखा रहे है।

यहा तक कि प्रतिभा ने भी प्रेमचन्द की खिल्ली उडाई और उसने तो बचकाना जोश मे हैमलेट की वह पक्ति 'टु बी आर नाट टु बी, इज़ दि क्वेश्चन' उद्धृत की और यह कहा कि और कुछ भी हो, इस प्रकार का मतवाद क्रातिकारी नही है। इस प्रकार सोचने वाले लोग क्रान्तिकारी दल से जितनी जल्दी अलग हो जाए, उतना ही अच्छा है।

यो तो अर्चना प्रेमचन्द पर मन ही मन नाराज थी, पर जब उसने देखा कि सबने खुलकर नही तो घुमा-फिराकर प्रेमचन्द को आडे हाथो लिया है, तो उसने बीच मे बोलते हुए कहा कि इस पुराने ज़माने के क्रान्तिकारियो की तरह केवल जोश सर्वस्व होकर आगे नही बढ सकते। हमे अवश्य ही राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियो को देखकर अपने कर्तव्य का निर्णय करना है, पर इसका मतलब यह नही है कि इसकी आड लेकर हमे कायर, बुज़दिल या घरघुस बनना है। इस प्रकार कुछ देर तक बोलने के बाद अर्चना ने कहा—अब मैं व्यावहारिक बातो पर आती हू और यह प्रस्ताव करती हू कि एक साथ एक ही दिन जिला मजिस्ट्रेट एलबर्ट टेगर्ट, जेल सुपरिण्टेन्डेन्ट कर्नल सिम्पसन और पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट तसद्दुक अहमद की हत्या कर दी जाए। इसे कार्यान्वित करने के लिए मैं श्री प्रेमचन्द, प्रणवकुमार और अपना नाम प्रस्तावित करती हू।

प्रेमचन्द को यह तो मालूम था कि इस प्रकार की कोई न कोई बात आ

रही है, पर वह इतनी व्यापक होगी, इसका उसे अनुमान नही था। फिर भी वह बोला—प्रस्ताव बहुत अच्छा है, पर एक साथ इतना जोखिम उठाने की जरूरत नही है। हमारा असली काम क्रान्ति के लिए तैयारी करना है न कि आतकवाद करना, इसलिए प्रतीक के रूप मे केवल टेगर्ट की हत्या की जाए। व्यर्थ मे शक्ति बिखरा देने की जरूरत नही है।

अर्चना को इस प्रस्ताव मे भी वे ही तत्व दिखाई पड़े जो उसे प्रेमचन्द के पहले व्याख्यान मे दिखाई पडे थे। बाकी सदस्यो के चेहरे पर भी प्रस्ताव के प्रति शायद उतना नही जितना कि प्रेमचन्द के प्रति असन्तोष की भावना व्यक्त हो रही थी।

प्रणवकुमार होठ बिचका रहा था।

अर्चना समझ गई कि उसका यह व्यग्यात्मक चेहरा केवल मतभेद के कारण नही, बल्कि इस टुकडी का नेतृत्व न पाने पर जो निराशा हुई थी, उसीका एक तरह से प्रकाश है।

यो कई दृष्टियो से प्रणवकुमार ही इस टुकडी के नेतृत्व का हकदार था। अवश्य उसका हक सिर्फ इतना ही था कि वह कई रूपो मे कुणाल के साथ कुछ दिन रहा। और कहते है, एक बार उसीकी उपस्थित बुद्धि के कारण कुणाल निश्चित मृत्यु से बाल-बाल बच गए थे।

अर्चना ने देखा कि दूसरे भी प्रेमचन्द से खुश नही हैं, इसलिए उसने कहा —अच्छी बात है, श्री प्रेमचन्द के प्रस्ताव को ही माना जाए, पर मैं इसे कार्यान्वित करने के लिए उन्हीका नाम प्रस्तावित करती हू, जिससे यह साबित हो जाए कि प्रेमचन्द जो कुछ कह रहे है, केवल गम्भीर राजनीतिक कारण से कह रहे है।

उस प्रस्ताव से सबको आश्चर्य हुआ और सबसे ज्यादा आश्चर्य स्वयं प्रेमचन्द को हुआ। अन्य लोगो को भी यह आशा नही थी कि अर्चना इस प्रकार का प्रस्ताव रखेगी। जिसका स्पष्ट अर्थ प्रेमचन्द को फासी के तख्ते की ओर ढकेलना था। यदि वह फांसी से बच भी गया तो काले पानी से तो कोई उसे बचा ही नही सकता था। शायद इस कारण से भी सबने इस प्रस्ताव का दिल खोलकर समर्थन किया। वे चाहते थे कि अर्चना और प्रेमचन्द का गठजोड टूटे। इस-

पर सबकी दृष्टि जा चुकी थी।" यह जैसे एक घाव था जिसपर सब मक्खिया बैठ रही थी।

अब इस विषय पर बातचीत चलने लगी कि यह कार्य कब किया जाए। कुछ तो चाहते थे कि फौरन ही यह कार्य हो ताकि उसे कुणाल की हत्या के साथ सयुक्त किया जाता। यद्यपि उनके शहीद हुए काफी समय जा चुका था, पर किसी भी काम मे इतने दिन तो लग ही जाते है। जनता समझ लेगी और नही तो एक गुप्त परचा निकाल दिया जाएगा।

पर अर्चना ने वहा उपस्थित सब लोगो की आशा के विरुद्ध यह प्रस्ताव रखा कि गाधी जी की गिरफ्तारी के बाद ही यह हत्याकाण्ड हो ताकि उसे किसी दल विशेष का रोष नही बल्कि राष्ट्रीय रोष के रूप मे लिया जाए।

इसके समर्थन मे अर्चना ने सरदार भगतसिंह तथा चन्द्रशेखर आज़ाद द्वारा की हुई सैन्डर्स की हत्या का जिक्र किया, जिसका देश की जनता पर बहुत ज़बर्दस्त प्रभाव पडा था।

कुछ अनिच्छा होते हुए भी लोगो ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया, इसके बाद बैठक खत्म हो गई।

जब बैठक के बाद अर्चना और प्रेमचन्द फिर एकत्र हो सके तो अर्चना ने देखा कि प्रेमचन्द उसकी तरफ से बिल्कुल उदासीन होकर सिगरेट पीता जा रहा है। वह तो जैसे उससे बात ही नही करना चाहता था, पर जब अर्चना ने बहुत ज़ोर दिया कि हम लोग क्रान्तिकारी होने के अतिरिक्त मित्र भी है, तब प्रेमचन्द ने साफ-साफ कहा—तुमने मेरा नाम प्रस्तावित किया, बहुत अच्छा किया, पर तुमने जिस कारण मेरा नाम प्रस्तावित किया वह मुझे कतई पसन्द नही है। समय पर तुमको प्रमाण मिल जाएगा कि तुम बिल्कुल गलत थी। इसमे सन्देह नही कि तुमने मेरे साथ अन्याय किया है।

अर्चना ने इसपर सफाई दी कि लोगो के रुख को देखकर उसके लिए प्रेमचद का नाम रखना बिल्कुल ज़रूरी हो गया था।

प्रेमचद ने इसपर झुझलाकर पूछा—वह कौन-सा काल्पनिक रुख है जिसके कारण तुमने मेरा अपमान किया। असली बात तो यह है कि मैं कुछ अक्ल की बाते कह रहा था, इसलिए तुमको यह भ्रम हो गया कि मैं पीछे हट रहा हू और तुमने सज़ा के तौर पर मेरा नाम रखा। क्यो ? है न यही बात ?

इसपर अर्चना को बडा दु ख हुआ। बोली—तुम्हारा-मेरा इतने दिन का साथ है, तुम मुझे इस तरह गलत समझ सकते हो, इसकी मुझे आशा नही थी। मैंने तो तुम्हारा नाम इस कारण रखा कि तुमको काम करने का मौका मिले और तुम्हारे सामने दूसरे लोग अस्त हो जाए। प्रणवकुमार बहुत डीग मारता है, पर तुम जब यह काम कर लोगे, तो वह तुम्हारे मुकाबले मे बौना लगेगा'''।

प्रेमचद ने बीच मे ही बात काटकर कहा—मुझे फासी लग जाए तो तुम नये दल की नेत्री बन जाओगी, और इस तरह से तुम्हारी उच्चाकाक्षा पूरी होगी।

अर्चना यह कल्पना भी नही कर सकती थी कि प्रेमचद इतना सख्त हो सकता है। उसकी आखो मे आसू आ गए। बोली—प्रेमचद, तुम यह क्या कह रहे हो? लो तुम कहलाते हो तो अब मै कहती हू कि तुम्हारे बाद मेरा जीवन सूना हो जाएगा। अवश्य देश-सेवा मै अतिम दम तक करूगी पर वह एक साधिका की निस्पृह सेवा होगी, उसमे आज की तरह स्वत स्फूर्तता नही रहेगी। मै तुमसे सच कहती हू कि वर्षो से मेरी यही उच्चाकाक्षा रही है कि तुम्हे प्रेमिक और पति के रूप मे पाऊ पर अपनी इस निजी उच्चाकाक्षा को मैंने सार्वजनिक देशभक्ति की बलिवेदी पर चढा दिया है और तुम्ही यह कहते हो कि मै तुम्हे फासी पर चढवाकर नये दल की नेत्री बनना चाहती हू।

कहकर वह बिल्कुल एक बच्ची की तरह फफक-फफककर रोने लगी।

पहले तो प्रेमचद यह समझ नही पाया कि उसकी बातो का क्या अर्थ लगाए, पर आसू देखते-देखते एकाएक अपने ऊपर से उसका निमत्रण जाता रहा और दोनो एक दूसरे के आलिंगन मे बध गए। अर्चना को नीट्शे का वह वचन याद आया, वह प्रेमचद से और लिपट गई।

प्रेमचद को अब ऐसा अनुभव हुआ जैसे वह भी वर्षों से अर्चना के लिए भीतर ही भीतर तडप रहा था। उसके आलिंगन मे बधकर गीले कपोल पर कपोल रखकर उसे ऐसा लगा जैसे यही वह मजिल है, जिसके लिए वह आतुर था। उसे एक ऐसी शाति साथ ही मधुरता का अनुभव हुआ जो अनास्वादित-पूर्व थी। जैसे सारी इद्रियो को विश्राम मिल गया हो और स्नायु शात हो गए हो। साथ ही यह शांति किसी भी प्रकार नकारात्मक नही थी, बल्कि भीतर ही भीतर फल्गु की तरह एक पतली-सी धारा चल रही थी जो निरतर एक से दूसरे मे

प्रवाहित हो रही थी। न तो वहां देश था न दल, न पराधीनता की ज्वाला थी और न स्वाधीनता की उद्दाम लालसा, न हिंसा थी न अहिंसा, फासी और कालेपानी का कोई भय नही था। न हिटलर था, न गाधी, परस्पर के लिए परम प्यासे दो प्राणियो का यह पुनीत मिलन था।

पता नही वे दोनो इस हालत मे कितनी देर रहे।

काफी देर बाद अर्चना ने पूछा—क्या हम लोगो ने क्रातिकारी दल मे आकर गलती की है?

यह वही प्रश्न था जो ठीक उसी समय प्रेमचद अपने से पूछ रहा था, पर अर्चना के मुह से यह प्रश्न सुनकर वह सावधान हो गया जैसे कोई उसकी परीक्षा ले रहा था, बोला—क्रातिकारी दल प्रेम का विरोधी नही है, बल्कि उसीमे प्रेम को पूर्णता प्राप्त हो सकती है।

—नर और नारी के प्रेम की?

—हा। जैसे कुणाल और रुक्मिणी का प्रेम था।

—ओह—अर्चना ने कहा जैसे एकाएक कोई काटा उसके शरीर के सबसे कोमल मर्मस्थल मे चुभ गया हो। वह प्रेमचद के आलिंगन से छूटकर अलग खडी हो गई।

दोनो कुछ देर तक अपने-अपने विचारो मे खो गए।

एक लहर ने लाकर उन्हे एकत्र कर दिया था, पर अब वे दो लहरो मे दो दिशाओ मे ऐसे चले गए जैसे कभी मिले ही न हो। भला कुणाल और रुक्मिणी का मिलन भी कोई मिलन था!

**मिले थे आज मुद्दत में बहुत रोए बहुत तड़पे,**
**वो दर्दे इश्क सुन-सुनकर हम अपना दर्द कह-कहकर।**
**ठिकाना क्या है जब जोशे-मुहब्बत जोश पर आए,**
**जनाबे खिज्र की भी नाव डूबे इसमें बह-बहकर।**

अब दोनो एक दूसरे से हटकर बैठ गए थे। अभी थोडी देर पहले ऐसा मालूम होता था कि दोनो को एक दूसरे से बहुत कुछ कहना है, शायद इतना कुछ कहना है कि कहते-कहते उसका कभी अन्त ही न हो और कहने की भी

ज़रूरत क्या थी ? जब आत्मा सीधे-सीधे आत्मा से बाते कर रही थी तो भाषा के अक्षय माध्यम की जरूरत नही थी। एक ऊचे माध्यम को छोडकर निम्नतर माध्यम को अपनाने मे क्या तुक है यह प्रश्न ही नही उठता था।

पर अब ऐसा मालूम होता था जैसे महाशून्य मे दो ग्रह करोडो मील की दूरी पर हो, यहा तक कि उनका गुरुत्वाकर्षण भी एक दूसरे से बिल्कुल अलग हो।

दोनो के बीच नये दल का वह प्रस्ताव था जिसके अनुसार प्रेमचद को आज नही तो पद्रह दिन बाद एलबर्ट टेगर्ट की हत्या करनी थी।

फिर उसके बाद ···?

कुछ पता नही।

उसके बाद क्या होगा, यह किसीको मालूम नही। हो सकता है कि प्रेमचद घटनास्थल पर पकडा जाए, और उसे स्वाभाविक रूप से फासी हो। फिर ? फिर अर्चना क्या करेगी ? क्या वह रुक्मिणी की तरह आत्मबलिदान करके उसी चिता पर चढेगी जिसपर प्रेमचद चढेगा या वह चलती जाएगी· ?

पर उस स्थिति मे अर्चना किसकी प्रेमिका होगी ? राह की या राहगीर की ? स्पष्ट ही राह की, यानी राह राहगीर से महत्वपूर्ण हुई और राहगीर का महत्व इतना ही रहा कि वह राह पर चला।

एकाएक जैसे महाशून्य के उस पार से अर्चना बोली—माफ करना, रुक्मिणी का प्रेम एक क्रातिकारी के उपयुक्त प्रेम नही कहला सकता।

प्रेमचद के चेहरे पर व्यग्य के साथ ही करुणा की एक रेखा लपलपा गई। बोला—प्रेम के साथ तुम क्रातिकारी शब्द को लाती ही क्यो हो ? क्या प्रेम से भी बढकर किसी क्रातिकारी तत्व की कल्पना की जा सकती है ? क्राति तो सृष्टि के अवरुद्ध मार्ग को खोलती है, पर प्रेम तो स्वय सृष्टि करता है, उसके बिना सृष्टि एक क्षण भी सम्भव नही है। क्राति तो कभी-कभार कूडा-करकट हटाकर मार्ग बनाने के लिए आती है, पर प्रेम का प्रयोजन प्रतिक्षण है। प्रेम माता है और क्राति उसकी मिडवाइफ—परिचारिका जो थोड़ी देर ही काम आती है।

अर्चना ने प्रेमचद की बातो को सुना और महाशून्य के उस पार से उसके मन मे एक गुदगुदी उत्पन्न हुई, बोली—हा, तुम ठीक कहते हो। मेरा मतलब यह था कि रुक्मिणी क्रांतिकारिणी नही थी। यदि वह क्रातिकारिणी होती तो

चिता पर चढने के लिए चचल न होती ; कार्नवाल की गोली लगने पर कुणाल के हाथ से जो अस्त्र गिर पडा था, उसे वह उठा लेती और जिस कार्य को अपूर्ण छोडकर वे सिधार गए, उसे पूर्ण करने के लिए पथ पर प्रयाण करती। तब कुणाल का काटे का मुकुट रुक्मिणी के सिर पर होता और वह चल पडती। चिता पर तो कभी न कभी चढना ही है, फिर उसमे उतलावपन की क्या ज़रूरत है ? सबसे बडा साथ विचारो का साथ है न कि चिता पर चढने का साथ।

फिर दोनो चुप रहे, मानो पढने की चेष्टा कर रहे हो कि भविष्य के गर्भ मे क्या निहित है।

अर्चना बोली—मै ठीक कह रही हू या नही ?

प्रेमचद ने कुछ सोचकर कहा—तुम ठीक तो कह रही हो, शायद बहुत अधिक ठीक कह रही हो। इसमे कोई सदेह नही कि विचारो मे साथ, सग्राम मे साथ, सबसे बडा साथ है, पर विचार तो एक सार्वजनिक वस्तु है। न तो एक उसे बनाता है न एक उसका भागीदार है। अतएव इसमे साथ माने उन सब लोगो का साथ जो उस विचार के है या जो उस सग्राम को जारी रख रहे है। यदि रुक्मिणी दीदी मृत्यु से शिथिल कुणाल के हाथो से गिरे हुए अस्त्र को उठाकर उनके सग्राम को जारी रखती, तो क्या यह कहा जा सकता है कि वे केवल कुणाल की ही होती ? वे तो विश्व ब्रह्माण्ड के जितने शहीद और योद्धा है उन सबकी सहयोगिनी होती, पर रुक्मिणी दीदी ने जिस प्रकार अपने को अर्पित किया उसमे किसी 'दुई' की गुजाइश नही है, वे तो केवल कुणाल की ही हुई और किसीकी नही। एक कण भी किसी और का नही है। पूर्ण आत्मसमर्पण।

अर्चना बोली—तुमने ठीक कहा, तुम तो पुरुष के दृष्टिकोण से चीज़ो को देख रहे हो, पर मै तो एक नारी की दृष्टि से भी यह नही समझ पा रही हू कि दोनो मार्गो मे से कौन अधिक आकर्षक है। शायद कभी समझ भी नही पाऊगी। दोनो मार्ग मुझे हाथ के इशारे से बुलाते है। अच्छा तुम बताओ, तुम मुझसे क्या चाहते हो ?

प्रेमचद समझ नही पाया कि अर्चना क्या पूछ रही है। क्या वह महज तर्क कर रही है और दो पृथक मार्गों का आनुपातिक गुणावगुण कूतना चाहती है,

था कि वह पूछती है कि हृदय की भूख क्या है ? बोला—मैं नही जानता कि मै क्या चाहता हू। जब मै फासी के तख्ते पर खडा होऊगा, तब मुझसे पूछना, शायद तब मैं कुछ बता सकू। अभी तो मै कुछ कह नही सकता—कहकर उसने रखी हुई अधजली सिगरेट उठा ली और फिर उसे पीने लगा।

—मै भी कुछ कह नही सकती ··

बाते करते-करते रात अधिक हो चली थी। आकाश मे सप्तर्षि का स्थान बदल चुका था। अर्चना विदा हुई, पर वह जैसे रोज तुरत चली जाती थी, आज वैसे फौरन नही गई, बल्कि खडी होकर जैसे किसी बात की प्रतीक्षा करती रही।

एक बार उसने नक्षत्र-खचित नैश आकाश की ओर देखा। कुछ तारे ऐसे जलते हुए लगे मानो वे हिज्जे करके कोई शब्द बनाना चाहते हो। अगले क्षण उसने प्रेमचद को देखा। उसे उस प्रस्ताव की बात स्मरण हो आई। लगा जैसे प्रेमचद उससे उतना ही दूर है जितने आकाश के ये नक्षत्र। पर कोई चारा नही था। नियति से कोई छुटकारा नही था, विकल्प भी तो पसद नही था। इसलिए जो होना था, वही होगा, फिर भी वर्तमान का कुछ उपयोग तो हो ही सकता था, इसमे कौन रोकता था ?

प्रेमचद ने उसे देखा, फिर दोनो की आखे टकराकर स्वत. झुक गई और अर्चना दरवाज़ा खोलकर रात के गात मे समा गई।

## १३

राजेन्द्र की मां उषादेवी अपने ढग से राजनीतिक वातावरण पर निगाह रख रही थी और शकित हो रही थी। कहा तो राजेन्द्र की शादी नौ-दस वर्ष पहले हो रही थी और कहा अब तक लटकी पडी है। वह अच्छी तरह समझ रही थी कि राजेन्द्र अब जल्दी ही जेल जाएगा, उससे उसे कोई नही बचा सकता। किसी व्यक्ति की ज़िदगी एक ढर्रे पर चल निकलती है तो कुछ समय बाद वह ढर्रा उस व्यक्ति पर हावी हो जाता है। और फिर ढर्रा ही ज़िदगी को

चलाने लगता है, फिर उसका अपनी ज़िंदगी पर कम नियत्रण रह जाता है।

उषादेवी कुछ दिनो से अवध के एक ताल्लुकेदार राजा बसावनसिह की सातवी पुत्री सुमित्रा से शादी की बात चला रही थी। दहेज मे एक लाख से ऊपर नकद और माल मिलने वाला था। सुमित्रा भी सुदरी और सुशील थी।

कई बार उषादेवी इस सम्बध मे राजेन्द्र से कह चुकी थी, पर राजेन्द्र इधर-उधर की बाते बनाकर टाल जाता था। माता के मन मे पुत्र की शादी कराकर गुड्डा-गुडिया खेलने की जो स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है, उसके अलावा उषादेवी के मन के किसी एकात कोने मे यह भय भी छिपा था कि अब तो श्यामा विधवा हो चुकी है, ऐसा हुए भी कई साल हो गए। आना-जाना तो है ही, कही पुराना प्रेम ज़ोर न मारे।

उषादेवी अपने को काफी आधुनिक विचार की स्त्री मानती थी। यदि उनसे सहसा कोई पूछ बैठता कि आप विधवा-विवाह के पक्ष मे है कि नही तो वे बिना हिचके कह देती मैं विधवा-विवाह उचित समझती हू। हा, इसमे कई किंतु-परतु अवश्य लगे थे। पर उन्हीका लडका विधवा से विवाह करे और सो भी ऐसी विधवा, जिसका लडका मौजूद हो और उससे भी आपत्तिजनक यह बात कि वह मुसलमान की विधवा हो, इतनी दूर तक जाने के लिए वे कतई तैयार नही थी।

राजेन्द्र का आनदकुमार के यहा अधिक आना-जाना उन्हे पसद नही था। वहां श्यामा से भेंट तो होती ही होगी।

इन सब बातो के अतिरिक्त राजेन्द्र घर मे करीब-करीब रुकता ही नही था, यह भी एक कारण था, जिससे वे चाहती थीं कि शादी जल्दी हो जाए। पुत्रो पर जान देनेवाली माताओ के मतानुसार शादी वह रामबाण है जिससे पुत्र के सब रोगो का शमन हो जाता है।

राजेन्द्र के पिता राजकिशोर बाबू तो राजेन्द्र को किसी विषय पर कुछ कहते नही थे। उन्होने देख लिया था कि उनके कहने-सुनने का उसपर कोई असर नही पडता, पर राजा बसावनसिह का पत्र उन्हींके नाम आया था, जिसमे विवाह के सम्बध मे कोई साफ बात तो नही लिखी थी, पर यह लिखा था कि हम आपसे सम्बध करने को उत्सुक हैं। यदि आपसे हो सके तो आप कभी हमारे यहा पधारें। यहा की जलवायु भी अच्छी है। साथ ही अयोध्या

पास होने के कारण तीर्थयात्रा भी हो जाएगी। यो तो हम किस लायक हैं, दहकानी है, पर आपकी आवभगत मे कोई कसर न रह जाए, इसकी कोशिश करेंगे।

इसपर राजकिशोर बाबू उषादेवी से कुछ नाराजी से बोले—तुमसे मैंने कहा कि अन्नपूर्णा-विश्वनाथ का दर्शन करो और गगा स्नान करो, सो तुम व्यर्थ मे इन सासारिक झझटो मे पडी रहती हो। जब जानती हो कि राजेन्द्र हम लोगो की बात नही सुनने वाला है, तो फिर मुझे बीच मे क्यो डालती हो ? अब मैं उस भले आदमी को क्या उत्तर दू ? अब यही हो सकता है कि मैं ही शादी कर लू।

अतिम वाक्य परिहास मे नही बल्कि अत्यत झुझलाहट मे कहा था, पर उषादेवी जानती थी कि यह झुझलाहट उनके प्रति नही बल्कि पुत्र के प्रति है। इस क्षेत्र मे उनकी अपनी झुझलाहट भी कुछ कम नही थी। बोली—पत्र तो आपके नाम से आना ही था, पर उनका मकसद यह है कि राजेन्द्र एक बार शिकार या और किसी बहाने उधर चला जाए।

राजकिशोर उसी प्रकार झुझलाहट मे बोले—जिसकी सात लडकिया हैं, उसे इस तरह लडका देखने की ज़रूरत क्या है। राजा साहब को समझ ही लेना चाहिए था कि जब मेरे खानदान का लडका है तो कैसा लडका होगा।

—राजा साहब तो देख चुके हैं, रानी साहिबा का मन भी तो पूरा करना है।

—तो रानी साहिबा इधर आ जाए।

उषादेवी ने समझाया—बात यह नही है, आखिर जब दामाद बनाना चाहते है तो कुछ तो अधिकार उनका भी है।

शायद यह शब्द कुछ अधिक तेज़ी मे कहे गए थे। राजकिशोर बाबू ने कहा—फिर मुझे क्यो बीच मे डालती हो ? तुम्ही लोग कर लेते।

तब उषादेवी को अपना सारा प्रभाव डालकर यह समझाना पड़ा कि वह एक बार राजेन्द्र को फैजाबाद भेजवा दें, इसके बाद उन्हे कुछ नही करना है।

जब राजेन्द्र से यह बात कही गई तो वह बहाने बनाकर साफ निकल गया।

पर उषादेवी भी अपने सारे अस्त्रो पर पहले ही से धार चढाकर तैयार थीं, बोली—मैंने यह शादी बिल्कुल ही साधारण दृष्टि से नही बल्कि राजनीतिक दृष्टि से भी तय की है। मैं तुम लोगो की सारी बाते सुना करती हू और मैं इस

नतीजे पर पहुची हूं कि नमक सत्याग्रह छः महीने-सालभर चलने के बाद लोग जेलों से छूटेगे और फिर कौसिलो और असेम्बलियो मे जाऐगे···

राजेन्द्र को अपनी मा के द्वारा किए हुए इस विश्लेषण पर बडा आश्चर्य हुआ। वह यह नही समझता था कि मा इस प्रकार घटनाओ का गम्भीर निरीक्षण करती रही है और निरीक्षण ही नही इस सम्बध मे ऐसी भविष्यवाणी कर रही हैं जो बहुत सम्भव है, सच हो। उसने अपनी मा को आश्चर्य तथा प्रशसाभरी दृष्टि से देखते हुए कहा—मा, मै यह नही जानता था कि तुम इतने ध्यान से अखबारो को पढती हो।

उषादेवी का गोरा मुखमण्डल पुत्र के द्वारा की हुई इस प्रशसा से उद्भासित हो गया। बोली—बेटा, मेरे लिए यह कोई नई बात नही है। जिन दिनो हमारे घर मे राजभक्ति का सिक्का चलता था, उन दिनो मैं अखबारो मे यह देखा करती थी कि कौन-से गवर्नर, कमिश्नर और कौन-से मजिस्ट्रेट कहा तबदील हो रहे है, अब मै दूसरी ही बाते पढती हू। मैं यह कह रही हू कि मैंने यह शादी राजनीतिक दृष्टि से तय की है।

राजनीतिक वातावरण का जो विश्लेषण उषादेवी ने किया था, उससे राजेन्द्र के मन मे मा के प्रति श्रद्धा बढ गई थी, पर शादी किस प्रकार राजनीतिक दृष्टि से तय की गई, यह समझ मे नही आया। मन पर फिर एक छोटा-सा मेघ दिखाई पडा। बोला—यह कैसे ?

तब उषादेवी ने बताया—आगे भी तुम्हे चुनाव लडना है। मुझे विश्वस्त सूत्र से मालूम हुआ कि राजा साहब भी काग्रेस मे आना चाहते हैं, पर जेल जाने से डरते है। शायद उनके मन मे भी चुनाव लडने की इच्छा हो। यदि तुम यहा से चुने जाते हो और वह वहा से तो यह स्वयसिद्ध है कि वह तुम्हारे साथ रहेगे क्योकि वह स्वय तो राजनीति समझते नही है।

कहकर वह कुछ रुकी, जैसे यह सोच रही हो कि आगे वाली बात कहनी चाहिए या नही।

पर वह तो आज सब मोहरो का ज़ोर लगाकर मात देने पर तुली हुई थी। बोली—ऐसा हो सकता है कि तुम्हे बनारस से कोई सीट न मिले, इस हालत मे तुम अवध से खडे हो सकते हो। राजा साहब चाहे काग्रेस मे हों या न हो, अपने इलाके पर उनका पूरा दबदबा है।

अततक शायद इन्ही सम्भावनाओ से प्रभावित होकर राजेन्द्र राजा साहब की कोठी पर जाने के लिए तैयार हो गया। बोला—पर किसीको कानो कान खबर न हो कि मैं इस उद्देश्य से जा रहा हू। लोग कहेगे कि अच्छा तमाशा है कि अन्य लोग तो जेलखाने जाने की तैयारी कर रहे है और यहा शादी हो रही है।

उषादेवी बोली—हर एक के लिए जेलखाना ज़रूरी थोडे ही है, तुम एक बार जेल जा चुके हो, दिखा चुके हो कि तुम कष्ट झेल सकते हो, अब दूसरे लोग जाए। क्या तुम्हारा कोई ठेका है ?

राजेन्द्र ने इस ब्योरे मे अधिक जाना उचित नही समझा। बोला—अच्छी बात है, मै जाकर देखता हू कि राजा साहब कहा तक काग्रेस मे आना चाहते है।

असल मे उसके मन मे एक नया लोभ आ गया। वह यह कि राजा साहब को काग्रेस मे लाने का श्रेय भी उसीको मिले। वह बचपन से बसावनसिंह का नाम सुन रहा था। वे प्रचण्ड प्रतापी समझे जाते थे। शायद कई बार सपरिवार ससार की यात्रा कर चुके थे। यदि उन्हे काग्रेस मे लाया जा सका तो यह एक बडी बात होगी। और यह तो सम्भव ही मालूम होता है क्योकि जब वे उससे सम्बध करना चाहते है तो रुझान तो स्पष्ट है।

वह अगले ही दिन रवाना हो गया क्योकि इधर कुछ करने को नही था। दूसरे नेता रघुवशनाथ, अध्यापक प्रसाद, बन्देअली, आनदकुमार आदि दिन-रात दौड रहे थे। उसने जाते समय एक ओर रघुवशनाथ तथा दूसरी ओर आनदकुमार से कहा—पिता जी बुड्ढे हो गए है, जमीदारी का कुछ काम है, बहुत दिनो से कह रहे है, जेल जाने के पहले करता आऊ।

लोगो ने इसे उचित ही समझा। भला किसे मालूम हो सकता था कि राजेन्द्र शादी के लिए जा रहा है। इस बीच राजेन्द्र ने यह भी सोच लिया था कि जब इस यात्रा के फलस्वरूप शादी होगी तो वह लोगो से क्या कहेगा। वह कहेगा—मैने देखा कि इतने बडे प्रतापी राजा साहब को काग्रेस मे पुख्ता तौर पर लाने के लिए पारिवारिक सम्बध स्थापित करना ज़रूरी है। तो मैंने कहा यह बलिदान भी सही।

दहेज और अन्य सुविधाओ की बात देर-सबेर मे फैलती, पर इनका भी पेटेण्ट जवाब तो था ही कि माता-पिता ने क्या किया, कौन जाने।

इससे पहले राजेन्द्र एक कैदी के रूप मे फैजाबाद जा चुका था। पर अबकी बार उसकी यात्रा दूसरे प्रकार के बधन के लिए थी।

वह बहुत कम सामान लेकर यानी आधुनिक भले आदमियो की तरह एक सूटकेस और बिस्तरा लेकर यात्रा करना चाहता था, पर स्टेशन पर पहुचकर उसे मालूम हुआ कि उसके साथ तो बहुत अधिक सामान है। जो सूटकेस थे वे हिरन और शेर के चमडो के थे। बिस्तरा खोला तो उसमे भी चुन-चुनकर कीमती सामग्री रखी गई थी। मखमल और रेशम की बहुतायत थी। मा ने स्टेशन पर आकर हाथ मे एक अगूठी भी डाल दी थी जिसका हीरा, वह बचपन से सुनता आ रहा था कि पद्रह या बीस हजार का है।

रेल पर चढकर अब उसे इस सम्बध मे भी कौतूहल होने लगा कि पता नही सुमित्रा कैसी है। फोटो आदि तो देखा था और यह भी सुना था कि वह इग्लैण्ड मे दो साल रही है। उसने मन ही मन यह उपसहार निकाल लिया कि श्यामा से वह अच्छी ही होगी। तुरत ही यह ख्याल आया कि यदि शादी करने के तुरत बाद वह सुमित्रा को जेल ले जा सका तब तो वहवाही का कोई अत नही होगा। फिर ऐसा ही क्यो न किया जाए ? पर वह तो पढी-लिखी विलायत पलट लडकी है, क्या उसपर इस तरह अपनी इच्छा लादी जा सकती है ? फिर राजा साहब के लिए यह कही अति तो नही हो जाएगी ?

इन्ही बातो को सोचते हुए वह गाडी पर सो गया।

## १४

साधारण रूप से लेखको और कवियो के सम्बध मे यह कहा जाता है कि वे अनुप्रेरित होकर लिखते हैं। धार्मिक नेता भी अनुप्रेरणा का दावा करते हैं, पर कई बार राजनीतिक कार्य भी अनुप्रेरणा की मर्यादा प्राप्त कर सकते है।

जब गाधी जी ने १२ मार्च, १९३० को डाडी-यात्रा आरम्भ की तब बहुत-से लोग यह समझते थे कि यह तो महज़ खम्भा नोचना है। इसमे कुछ नही धरा

है। पर गाधी जी को विश्वास था और वे अपने पदचारियो के साथ डाडी चल पडे।

ज्यो-ज्यो गाधी जी आगे बढते गए त्यो-त्यो जनता मे उत्साह उमडता गया। यो गाधी जी केवल आतरिक प्रेरणा या अनुप्रेरणा के भरोसे नही रहते थे, बल्कि किसी कार्य को सफल करने के लिए सासारिक रूप से जिन बातो का होना, जैसे प्रचार कार्य का होना, बहुत आवश्यक है, उसकी पूरी व्यवस्था कर लेते थे। वे एक गवैये की तरह आलाप भरा सुर का इस प्रकार देर तक आवाहन करते रहे और उसकी ऐसी भूमिका बाधी कि उनके साथ-साथ देशी तथा विदेशी सम्वाददाताओ का एक बहुत बडा जत्था कैमरा आदि से लैस होकर चला।

नमक बनाने मे क्या उत्तेजना हो सकती है, इसकी लोगो को कोई कल्पना नही थी पर गाधी जी इस प्रकार चुनौती देकर कानून भग कर रहे है और जिस किसी समय वे गिरफ्तार हो सकते है, यह वातावरण बहुत ही उत्तेजमा पैदा करने वाला था। वह किस परिस्थिति मे गिरफ्तार होते है, उनके पदचारी साथ मे पकडे जाते है या नही, ये सारी बाते ऐसी थी जिनका सम्वाद-मूल्य बहुत अधिक था।

सर्वोपरि गाधी जी विद्रोही भारत बल्कि विद्रोही प्राची के प्रतीक थे। इस नाते उनकी तरफ लोगो का ध्यान केन्द्रित हो जाना स्वाभाविक था।

गाधी जी अपनी यात्रा मे कुछ ही दूर बढे थे कि तीन सौ ग्राम-कर्मचारियों ने सरकारी नौकरी से इस्तीफा दे दिया। वह जिन गावो से होते हुए गए, उनमे बडी उत्तेजना रही। पत्रो के सम्वाददाता इस उत्तेजना का चित्र अपने पत्रों मे खीचते रहे।

ग्रामीण जनता का जोश देखकर अविश्वासी शहरी मध्यमवर्ग भी जोश मे आने लगा। व्यग्य करने वाले चेहरो पर पहले आश्चर्य, फिर श्रद्धा की रेखाए खिचने लगी जैसे कवि नही जानता कि वह क्या लिखेगा, उसी तरह शायद गाधी जी भी पूरी तरह नही जानते थे कि वह क्या करने वाले है।

नमक बनाना तो एक बहाना मात्र था, असली बात जनता के अदर ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति चुनौती की जो भावना थी, उसे उभारकर केवल सतह पर लाना नही, बल्कि एक सृजनकारी धारा मे बहाना था। ऐसा करने से लिए कोई भी साधन उतना ही महत्वपूर्ण हो सकता था, बशर्ते कि उसके पीछे

उचित तैयारी होती, जिससे उसके अदर से जनता की विद्रोह-भावना मूर्त हो जाए। जनता अजगर की तरह रस-रसकर जगती है, उसके सिर से पूछ तक चेतना की लहर दौडने मे काफी समय लगता है। इसीलिए शायद गाधी जी ने डाडी-यात्रा को एक लम्बी प्रक्रिया बनाई थी।

पहले तो हफ्तो ब्रिटिश सरकार के साथ पत्र-व्यवहार चलता रहा, फिर गाधी जी ने अपने कार्यकर्ताओ से लम्बी वार्ताएं की। यात्रा आरम्भ करने के काफी दिन पहले २७ फरवरी को उन्होने एक लेख लिखा था, जिसका शीर्षक था 'जब मैं गिरफ्तार हो जाऊ'। इसमे उन्होने विशेष रूप से लिखा था कि अब सत्याग्रह के प्रतिपादक के लिए यह उचित है कि वह अपने को इन तीन परिस्थितियो मे से एक मे पाए। वह या तो जेल या इस प्रकार की किसी अवस्था मे हो, वह सत्याग्रह कर रहा हो, या वह चरखा कात रहा हो, या ऐसा कोई रचनात्मक कार्य कर रहा हो, जिससे स्वराज्य का कार्य आगे बढे।

गाधी जी ज्यो-ज्यो आगे बढ रहे थे त्यो-त्यो सब जगह नमक सत्याग्रह की तैयारिया बढ रही थी। पहले गिने-चुने लोग ही अपने को सत्याग्रही के रूप मे भरती करा रहे थे। पर ज्यो-ज्यो लोहा लाल होता गया त्यो-त्यो स्वेच्छा-सैनिको की सख्या समृद्ध होती गई।

आनन्दकुमार यह खबर सुनते थे और उनकी आखो मे एक नई चमक आती जाती थी मानो जो भविष्यवाणी उन्होने की थी वह सही उतर रही थी। उन्होने अपने काग्रेसी साथियो मे बैठकर एक दिन पूछा—राजेन्द्र कहा है? बहुत दिनो से मैंने उसे नही देखा।

इस प्रश्न मे कोई व्यग्य नही था कि राजेन्द्र ऐन मौके पर मैदान छोडकर भाग गया, पर केवल एक सद्भावनामूलक प्रश्नमात्र था जिसका आशय यह था कि उसे विश्वास नही था, पर अब वह आकर देख ले कि कैसे क्या हो रहा है।

बाबू रघुवशनाथ ने कहा—आपको नही मालूम ?

—क्या ?

आनन्दकुमार को यह डर हुआ कि शायद कोई अप्रिय सम्वाद सुनना पड़े, पर रघुवशनाथ ने कहा—उसकी शादी हो गई। बहुत बड़ी जगह शादी हुई है।

फिर रघुवशनाथ ने सारा ब्योरा बताया। बोले—कहता था कि मैने यह शादी सरकार के एक बहुत बडे पिट्ठू को काग्रेस मे लाने के लिए की। धूम-धडाका इसीलिए नही किया कि उसका मौका नही था और देश का सितार जिस आग्नेय सुर मे बधा है, उसके विरुद्ध गाता।

आनन्दकुमार खुश होकर बोले—यह तो बहुत अच्छी बात हुई कि राजा बसावनसिह को काग्रेस मे शरीक कर लिया गया।—कहकर वह कुछ चिन्तित होकर बोले—पर दूसरी तरफ जनता के हक मे शायद बात उतनी अच्छी नही हुई। यदि राजा-महाराजा, पूजीपति काग्रेस मे आते जाएगे तो काग्रेस का क्रातिकारी रूप समाप्त होता जाएगा। यह भविष्य की दृष्टि से कुछ अच्छा नही कहा जा सकता।

—पर काग्रेस तो सब वर्गो की सस्था है।

—है तो कुछ ऐसी ही बात, स्वतन्त्रता-प्राप्ति तक उसका यह रूप जरूरी भी है, पर मैं बाद की बात सोचता हू।

आनन्दकुमार कह तो रहे थे ऐसी बाते, पर उनके मन पर एक ठेस-सी लगी थी। राजेन्द्र की शादी हो गई और उन्हे कानोकान खबर तक नही हुई। वे राजेन्द्र को कोई देवता नही समझते थे, वह औसत दर्जे का गुण-दोषयुक्त व्यक्ति है, पर पहले उनसे बराबर देर-सबेर मे सारी बात बता दिया करता था और कभी-कभी सलाह भी लेता था।

इतने बडे मामले मे उसने गलती कैसे कर दी और विशेषकर जब कि रघुवशनाथ और सम्भव है अन्य सब लोगो को यह बात बताई हो। तब उन्हे एकाएक स्मरण आया कि श्यामा के साथ राजेन्द्र का जो पुराना इतिहास है, उसके कारण उसने उनके घर मे यह खबर नही पहुचाई।

रघुवशनाथ बोले—वह तो कहता है कि अपनी पत्नी को भी जेल ले जाएगा।

आनन्दकुमार बच्चो की तरह खुश होकर बोले—यह तो बहुत ही अच्छी बात हुई!

रघुवंशनाथ बोले—उसमे नाटकीय दृष्टि बहुत अधिक है।

आनन्दकुमार समझ गए कि यह मन्तव्य केवल प्रशसा मे नही किया गया है, पर उन्होंने उस तरफ कोई ध्यान नही दिया।

उसी दिन सन्ध्या समय राजेन्द्र अपनी पत्नी के साथ आनन्दकुमार के घर पहुचा। उसन जान-बूझकर ऐसा समय चुना था, जब श्यामा काग्रेस के काम से कही व्याख्यान देने गई हुई थी।

आनन्दकुमार सुमित्रा को देखकर बहुत खुश हुए और बोले—यह बहुत अच्छा हुआ कि हमे सत्याग्रह के लिए एक और स्वयसेविका मिली।

रूपवती ने सुमित्रा को केवल औपचारिक ढग से ही ग्रहण किया। अभ्यागत के स्वागत मे कोई त्रुटि नही हुई, पर उससे ज्यादा कुछ भी नही। जो बाते पूछनी थी, वे तो सुमित्रा के हीरा-मोती ही बता रहे थे। कहा गाधी जी द्वारा प्रचारित छ पैसे की खुराक और घुटनो तक धोती, टूटी खाट और कहा यह सोना, प्लैटिनम और हीरा-मोती का ठाट।

राजेन्द्र भी शायद यह अनुभव कर रहा था कि उसे कुछ सफाई देनी चाहिए, इसलिए वह बार-बार अपने ससुर साहब के काग्रेस मे आने की सम्भावना तथा सुमित्रा की भविष्य जेल-यात्रा पर बाते कर रहा था।

उसने तो यह भी कहा कि अब सब धनी और ताल्लुकेदार यह समझ चुके है कि अन्ततोगत्वा काग्रेस के ही सिर पर विजय का सेहरा बधेगा, इसलिए काग्रेस मे शामिल होना चाहिए। उसने इस बात को इस रूप मे कहा मानो यह कोई युगान्तरकारी परिणति हो।

आनन्दकुमार इसे बिल्कुल इसी रूप मे नही ले सके पर सुमित्रा की उपस्थिति के कारण उन्होने इस विषय पर कुछ कहना उचित नही समझा। वे तो दिल खोलकर सुमित्रा बहु की प्रशसा करते रहे।

रूपवती को यह बात अखर रही थी कि राजेन्द्र सुमित्रा के जेल जाने के सम्बन्ध मे इतनी बाते कर रहा था, पर सुमित्रा इस सम्बन्ध मे कुछ नही बोली थी। रूपवती ने सुमित्रा से पूछा—राष्ट्रीय आन्दोलन मे तुम्हारी रुचि कबसे पैदा हुई ?

सुमित्रा ने राजेन्द्र की ओर देखा और बोली—जब हम लोग अन्तिम बार विलायत मे थे तो राजासाहब (घर मे भी सब लोग बसावनसिंह को राजा साहब कहते थे) को और सबको महसूस हुआ कि महात्मा जी मे कोई बात है तभी न इग्लिस्तान के अखबारो मे उनके विषय मे जब-तब कुछ निकल जाता है। अक्सर लोग राजासाहब से महात्मा जी के विषय मे पूछते थे, इसपर एक दिन उन्होने

कहा—अब तक भारत के बाहर या तो आगाखा का नाम सुनाई पडता था या कुछ-कुछ टैगोर का, पर अब तो गाधी जी सबसे आगे निकल गए है। इसपर कुछ सोचना चाहिए।

सुमित्रा बोलती गई—उस दिन से हम लोग मौका देखकर जब-तब गाधी जी की प्रशसा करने लगे।

यह ब्यौरा सुनकर रूपवती का चेहरा पहले से अधिक अप्रसन्न दिखाई पडा पर आनन्दकुमार को इसमे अपने विचारो का समर्थन ही मिला। वह मानो रूपवती के असतोष का निराकरण करते हुए बोले—जो लक्ष्य जितना ही बडा होता है, उसे लोग उतने ही विभिन्न कारणो से अपनाते है। इसमे कुछ फर्क नहीं आता बल्कि उस लक्ष्य की महत्ता और बढती है। राजासाहब के मन मे इस कारण गुदगुदी पैदा हुई कि गाधी जी विलायती अखबारो मे आगाखा और टैगोर से अधिक छपने लगे, इसीका नतीजा है कि अन्त तक राजेन्द्र की तरह जेल-पलट व्यक्ति उनका दामाद बना।—कहकर आनन्दकुमार ऐसी तृप्ति के साथ हसे मानो उन्हीको कुछ प्राप्त हुआ हो।

पर रूपवती ने 'किंतु' लगाते हुए कहा—राजेन्द्र जेल-पलट होने के अतिरिक्त एक बडे बाप का बेटा भी है। इसके अलावा विधान-सभा का सदस्य रह चुका है और सम्भव है आगे भी सदस्य हो।

रूपवती के वाक्यो से स्पष्ट भनक, आ रही थी कि राजासाहब ने कोई त्याग नही किया, इसलिए इसे दूसरा मोड देते हुए आनन्दकुमार पहले की तरह दिल खोलकर हसते हुए बोले—इसमे क्या शक है, राजेन्द्र एक बहुत ही योग्य और होनहार व्यक्ति है। सब लोग उसका लोहा मानते है।

राजेन्द्र के मन मे एक प्रश्न कुलबुला रहा था, बोला—मैं एक बात बहुत निजी तौर पर आपसे पूछ रहा हू, वह यह कि यदि मैं यहा से जेल न जाकर अयोध्या या फैंजाबाद से जेल जाऊ तो कैसा रहेगा? यदि मैं उधर से जेल जाऊ तो वहा के लोगो पर सम्भव है अधिक प्रभाव पडे।

आनन्दकुमार ने प्रस्ताव का स्वागत करते हुए कहा—यह तो बहुत अच्छी बात है। यहा हम लोग तो है ही। तुम उधर से ही जाओ तो अच्छा रहेगा। भारत एक बडा देश है, कही से भी कोई जेल जाए और इस प्रकार विद्रोह की अग्नि मे समिधा पहुचाए तो वह अच्छा ही है।

राजेन्द्र को इस उत्तर से सन्तोष नही हुआ। असल मे वह जो पूछ रहा था, कुछ और ही था, उसका असली प्रश्न यह था कि उस इलाके से जेल जाने पर कही इस इलाके से विधान-सभा आदि मे चुने जाने का हक मारा तो नही जाएगा। कही लोग यह तो नही कहेगे कि तुमने इधर तो काम नही किया इसलिए उधर ही से चुनाव भी लडो। पर वह स्पष्ट रूप से इस प्रश्न को आनन्दकुमार के सामने रख नही सका, इसलिए उसे उत्तर भी नही मिला।

पर रूपवती सहजात बुद्धि से समझ गई कि राजेन्द्र को क्या शका हो रही है, वह बोली—तुम इधर से विधान-सभा मे चुने गए थे, उधर से जेल जाओगे तो कही लोग इसपर बुरा तो नही मानेगे ?

राजेन्द्र बहुत खुश हुआ कि उसका प्रश्न इस प्रकार सामने आ गया, पर वह शरमाते हुए बोला—हमे इन छोटी-छोटी बातो से कोई मतलब नही, हमे तो हर हालत मे सेवा करनी है।

आनन्दकुमार न तो राजेन्द्र की बात समझे और न रूपवती की। बोले—अबकी बार तो स्वराज्य लेकर ही दम लेना है, चाहे यह सग्राम कितने ही साल चले।

राजेन्द्र ने सुमित्रा को यह समझाया था कि चार-छः महीना आन्दोलन चलाने के बाद कही न कही जनता आवेश मे आकर दो-चार अग्रेजो या पुलिसवालो को मार डालेगी, बस गाधी जी इस बात पर सत्याग्रह स्थगित कर देगे, फिर कोई न कोई स्वराज्य दल-सा दल बन जाएगा, जिसकी ओर से मै विधानसभा मे जाऊगा।

अब आनन्दकुमार के मंतव्यो से वह चित्र बिल्कुल पुछ गया और उसके स्थान पर बहुत ही गम्भीर और काली सम्भावनाओ से युक्त रेखाए दौड गईं।

राजेन्द्र ने सुमित्रा की तरफ देखते हुए कहा—आनन्दकुमार जी, आप ही ने तो कहा था कि गांधी जी हर पकड मे जनता का दम बढा रहे है। इस दृष्टि से तो अभी कई पकड़ होनी चाहिए। यह तो केवल दूसरी पकड है।

आनन्दकुमार गम्भीर होकर बोले—चौरीचौरा तो एक बहाना था। असली बात तो यह थी कि गाधी जी ने देखा था कि सरकार के साथ पकड मे आंदोलन कमज़ोर पड़ रहा है। इसलिए उन्होने बहाना ढूढकर हार बचा दी। पर आगे भी चौरीचौरा की तरह घटना होने पर गाधी जी आदोलन स्थगित

करेंगे, ऐसा कहना मुश्किल है। कम से कम मैं तो अपनी क्षुद्र बुद्धि से यही समझता हू।

जलपान आदि से नवदम्पति का उचित सत्कार हो चुका था। राजेन्द्र यह नही चाहता था कि श्यामा के सामने पडे। यों एक दिन तो पडना ही था, फिर भी वह दिन आज ही क्यो हो, इसलिए उसने जल्दी से विदाई ले ली।

आनन्दकुमार अतिथियो को दहेज मे मिली हुई नई मोटर तक छोडने गए। बोल ही पडे—मै तो मोटर बेचने की सोच रहा हू और तुमने यह मोटर पाल ली। अब की बार सम्भव है जुर्माने बहुत ज्यादा हो।

राजेन्द्र समझ गया, हसकर बोला—कानूनी रूप से यह मोटर मेरी नही है।—कहकर उसने कनखी से सुमित्रा की तरफ देखा।

गाडी चल पडी।

अर्चना को अब कुछ-कुछ सन्देह हो चला था कि प्रेमचन्द क्रातिकारी रूप मे कहा तक सफल रहेगा। अब तक उसका हिस्सा इतना ही था कि वह अर्चना के विचारो की एक प्रतिध्वनि था। उसी रूप मे उसने मुख्य दल के विरुद्ध विद्रोह किया था और उससे अलग हो गया था। उसके बाद उसने जब-जब स्वतत्र विचार व्यक्त किए तब-तब उसके विचार कुछ नरम ही पाए गए। यदि किसी हालत मे उग्र भी थे तो उनके साथ यह बखेडा लगा हुआ था कि कही दूर भविष्य मे उन विचारो को कार्यान्वित किया जाएगा।

अर्चना को सबसे अधिक दु:ख कल हुआ जब प्रेमचन्द ने कहा था—अर्चना, मैं समझता हूं कि मैं निश्चित रूप से प्रतिशोधमूलक कार्यों के लिए पैदा नही हुआ था।

अर्चना इसपर चुप मार गई थी क्योकि उसे डर था कही अब प्रेमचन्द कोई बहाना बनाकर एकदम पीछे न हट जाए और हेठी हो। मुख्य दल के सामने

हेठी और नये दल के सामने सिर नीचा। इसके अलावा प्रेमचन्द अब अर्चना के प्रति प्रेम-निवेदन मे अधिकाधिक अग्रसर हो रहा था। उसे देखते ही प्रेमचन्द की आखो मे एक अजीब अलसाई हुई एकाग्र मस्ती छा जाती थी।

यह अफलातूनी प्रेम तो नही था। उस दृष्टि का अभिप्राय बिल्कुल स्पष्ट होता था। खेद तो इस बात का था कि उसने स्वय ही प्रेमचन्द को इस तरफ प्रेरित किया था।

उस दिन जब उसने आवेश मे प्रेमचन्द से कह डाला—वर्षों से मेरी यही उच्चाकाक्षा रही है कि तुम्हे प्रेमिक और पति के रूप मे पाऊ।—तभी से प्रेमचन्द के संयम का बाध टूटता-सा जा रहा था। तब से वह न तो राजनीति पर बात करता था और न दल पर। देश मे इतना बडा आदोलन चल रहा था, पर उसने कल रात उस सम्बन्ध मे एक भी शब्द नहीं कहा। वह तो कवित्वपूर्ण ढग से विचित्र बाते कह रहा था, जिन्हे मोरनी को दिखाकर मोर का नृत्य करना तथा कोकिला को सुनाने के लिए कोकिल के कूजन के अधिक निकट कहा जा सकता था। यह तो सरासर प्रणय-निवेदन था, इसके अतिरिक्त कुछ भी नही।

अर्चना अपनी बुद्धि के अनुसार समझती थी कि इसमे कोई ऐसी बुराई नही है, पर अब तो अति हो रही थी। इसके अलावा किसी भी हालत मे एक क्रातिकारी को यह भूलने का अधिकार नही है कि क्राति ही उसका मूल अभीष्ट है। और सब सासारिक व्यापार चले, पर यदि वह उस असली लक्ष्य को ही भूल गया तो फिर वह क्रांतिकारी ही क्या रहा? अब तो प्रेमचन्द से मिलना ही नही चाहिए।

क्यो न वह बीमारी का बहाना करे और इस बीच मे प्रेमचन्द से न मिले। पर केवल एक ही समस्या होती तब तो वह निबट लेती, यहा तो यह भी डर है कि यदि वह बराबर उसे जोश न दिलाती रही तो कही वह केवल अपनी मनोवैज्ञानिक पुस्तको और प्रशसको मे खो न जाए।

उससे मिलना भी है, पर अकेली नही। हा, यह समाधान अच्छा है कि वह जब मिले तो प्रणवकुमार को साथ लेकर मिले, पर कही प्रेमचन्द ने प्रणवकुमार के सामने किसी प्रकार की कमज़ोरी दिखाई या प्रेम-निवेदन के ढग किए तब तो सारा भविष्य ही नष्ट हो जाएगा। प्रणवकुमार कुणाल जी की तरह पति

के ढग का क्रातिकारी है। (असल मे कहा तक है यह तो देखना है) उसके सामने किसी प्रकार की अवाछनीय बात नही होनी चाहिए।

प्रणवकुमार न सही और कोई सही। प्रतिभा कैसी रहेगी ? वह तो और भी बुरी रहेगी। क्योकि प्रणवकुमार अपने अक्खडपन के मारे शायद प्रेम-निवेदन के किसी इगित या वाक्य को सहसा समझ न पाए, पर प्रतिभा एक तरुणी होने के कारण सहजात बुद्धि से सारी बाते समझ जाएगी, पर सच तो यह है कि उसे पहले से ही जैसे कुछ-कुछ सन्देह है।

इसके अलावा प्रेमचन्द की इस मनोदशा मे उससे प्रतिभा को ज्यादा मिलाना कहा तक ठीक रहेगा ? कही उसके प्रेम-निवेदन की धारा मुड न जाए, वह भी ठीक नही रहेगा। वह तो एक सशक्त क्रातिकारिणी के नाते उसका प्रतिशोध कर रही है, पर प्रतिभा कहा तक इस यौवन जल-तरग के सामने ठहर सकेगी ?

अर्चना प्रेमचन्द को बिल्कुल छोड भी नही पा रही थी। अन्त मे उसने यही तय किया कि नये दल की एक सभा बुलाई जाए और उसमे प्रेमचन्द को प्रोत्साहन दिया जाए जिससे उसका ध्यान वैयक्तिक प्रश्नो से हटकर राजनीतिक प्रश्नो की ओर जाए।

जब अर्चना ने टेलीफोन से प्रेमचन्द को इस बात की सूचना दी तो प्रेमचन्द टेलीफोन पर ही उससे बिगड खडा हुआ, बोला—मैं जानता हू तुमने यह सभा क्यो बुलाई है। तुम यह समझती होगी कि मैं बहक रहा हू इसलिए मुझे सबके सामने ज़लील करना चाहती हो।

अर्चना ने बहुतेरा समझाया कि यह बात नही है, पर प्रेमचन्द तिनका ही रहा। बोला—तुम एक तरफ तो आधुनिका बनती हो और दूसरी तरफ बिलकुल दकियानूसी हो। तुम यह समझती होगी कि मैं तुमसे कुछ वैयक्तिक ढग की बाते करता हू इसलिए मेरी क्रातिकारी ज्योति मद्धिम पड रही है, पर यह बात गलत है।

अर्चना ने देखा कि टेलीफोन पर इस प्रकार की बाते करना उचित नही है, इसलिए उसने कहा कि फौरन विक्टोरिया पार्क मे मिलो, वहा सारी बाते होगी।

कहकर उसने रिसीवर रख दिया। जिस एकान्त मे मिलने से वह बचना

चाहती थी, वह इस प्रकार उसपर बरबस आ पडा और बुरी तरह आ पडा फिर भी अर्चना को विशेष दु ख नही हुआ। आन्तरिक रूप से वह यही चाहती थी कि प्रेमचन्द ने अपने सम्बन्ध मे जो बाते कही है, वे सच साबित हो और वह स्वय प्रेमचन्द के सम्बन्ध मे जिस निष्कर्ष पर पहुची थी वह गलत प्रमाणित हो।

अर्चना पार्क मे पहुची ही थी कि उसने देखा प्रेमचन्द लम्बी डगे भरता हुआ आ रहा है और सदा की तरह उसके हाथ मे सिगरेट और पुस्तक है। वह लगभग एक किशोर जचता था, यद्यपि किशोरो का वह शिक्षक था।

प्रेमचन्द ने भी उसको दूर ही से देख लिया। पहले उसकी डगो से यह मालूम होता था कि वह नाराज़ है और जितनी जल्दी हो सके उस नाराज़गी को वह प्रकट करना चाहता है, पर ज्यो ही उसने अर्चना को देखा उसकी गति मन्थर हो गई, मानो उसने इस अन्दाज़ से अपनी गति घटाई कि लक्ष्य-स्थल पर आकर वह स्वय ही रुक जाए। उसके चेहरे पर रोष की जो रेखाए थी वे भी मिट गई।

उसने आते ही प्रश्न किया—अर्चना, तुमने यह सभा क्यो बुलाई ?

—मैंने कहा कि सबमे जोश कायम रखा जाए।

प्रेमचन्द बिल्कुल ही अर्चना के पास आ गया। उसका कंधा पकडकर धीरे से झझकोरते हुए बोला—आत्मान विद्धि। अपने को जानो।

—क्या मतलब ?

—मतलब यह कि तुम अपने को नही पहचानती, इसलिए दूसरो को भी नही पहचान पाती।

इसपर अर्चना यह भूल गई कि उसका उद्देश्य प्रेमचन्द मे गाम्भीर्य लाना था। खिलखिलाकर हंसती हुई बोली—उपनिषद के वचनो का इतरीकरण करने मे तुम एक ही हो।

प्रेमचन्द एकाएक बोल पडा, मानो इस बीच मे वह दूसरा ही आदमी हो गया—अर्चना तुम थोड़ी देर के लिए भूल जाओ कि तुम एक क्रातिकारिणी हो। बिल्कुल सच-सच बताओ कि तुम मुझे क्या समझ रही हो ?

अर्चना झेप गई, फिर भी उसे असली बात बतानी नही थी, बोली—मैं तुम्हे वही समझती हूं जो हमेशा समझती थी।

—यानी एक अल्हड, वाचाल आदर्शवादी, जिसकी आदर्शपरता सन्दिग्ध है यानी कसौटी पर कहा तक टिकेगी, यह भी मालूम नही है। तुम एक

ज़िम्मेदार क्रातिकारिणी की तरह मुझे कच्चे लोहे से फौलाद बनाना चाहती हो, यही है न ? और सुनो तुम्हे अपने ऊपर सन्देह है कि तुम अकेले मुझे फौलाद बना भी सकोगी या नही, इसलिए तुमने यह सभा बुलाई है ताकि वहा सब तरफ से मेरे सिर पर हथौडो की चोट पडे और मैं सख्त पड जाऊ।

अर्चना प्रतिवाद करती हुई बोली—नही, ऐसी कोई बात नही.। दूसरो का जोश भी कायम रखना है। वे भी तो समझें कि कुछ हो रहा है या होने जा रहा है।

प्रेमचन्द अकारण ही हस पडा, फिर बोला—और तुम यह चाहती हो कि जब मैं अपने कार्य मे असफल हो जाऊं या उससे पीछे हट जाऊ तो अकेले तुम पर दोष न आए बल्कि सब लोगो पर आए। ··

अबकी बार अर्चना ने बहुत ज़ोर से प्रतिवाद किया, बोली—मैं कितनी बार कह चुकी हू कि तुम्हारी सफलता और असफलता मेरी भी सफलता या असफलता है।

प्रेमचन्द ने एक कश खीचते हुए कहा—बिल्कुल सही कहती हो। स्पेन या चीन मे यदि क्राति का रथ आगे बढता है या पीछे हटता है तो उससे जिस प्रकार सारे संसार के क्रान्तिकारियो को सुख या दुःख पहुचता है, उसी प्रकार न ?

प्रेमचन्द जितना ही प्रखर या प्रतिभाशाली था उसी हद तक झक्की भी था। वह हमेशा अप्रत्याशित बाते कहता था और करता था, पर इन दिनो उसका झक्कीपन पराकाष्ठा को पहुच चुका था।

इस समय तो वह अर्चना पर बिल्कुल आक्रमण कर रहा था। उसके शब्दो मे यह आक्रमण शायद उतना स्पष्ट नही था, पर उन शब्दो के साथ जो भाव-भगिमा करता जाता था, जिस प्रकार हसता, हाथ पटकता, और धुआ छोडता था, उससे आक्रमणात्मकता स्पष्ट और पैनी हो जाती थी।

अर्चना को जिस कारण सबसे अधिक आश्चर्य, बल्कि भय हो रहा था, वह यह था कि ज्यो-ज्यो यह आक्रमण प्रबल हो रहा था त्यो-त्यो वह झुकती जा रही थी और उसे ऐसा लग रहा था कि प्रेमचन्द धीरे-धीरे उसकी सारी सत्ता पर इस प्रकार से छाता जा रहा है कि वह जो चाहे वह कर सकता है और अर्चना मे प्रतिरोध करने की शक्ति भी नही रहेगी। उसे सबसे अधिक दुःख इस

बात का था कि उसीने एक हद तक यह परिस्थिति बुलाई। यदि वह उस दिन अपने मन का गुह्यतम रहस्य प्रकट न कर देती तो यह नौबत ही न आती। प्रेमचन्द ने जो प्रश्न सहसा पूछा था, अर्चना उसके सामने तिलमिला गई। वह कुछ रुककर बोली—तुम ठीक कह रहे हो। हिटलर के नात्सीवाद से सारी दुनिया के क्रान्तिकारियो को भय है क्योकि उसे समाजवादी रूस के विरुद्ध पश्चिमी शक्तियो के द्वारा एक पहलवान के रूप मे पाला और पोसा जा रहा है। ससार के क्रान्तिकारियो का आपस मे एक सम्बन्ध है और वह बहुत बडा सम्बन्ध है, पर मेरा-तुम्हारा सम्बन्ध इससे भी कही गहरा और दूर तक पहुचा हुआ है।

प्रेमचन्द का व्यग्य से विकृत चेहरा कुछ सहज पड गया और वह विजयगर्व से बोला—यही तो मैं तुमसे कहलाना चाहता था। इसी कारण तुम मुझसे भय खा रही थी।

यह वाक्य अर्चना की ओर देखते हुए कहा गया था, पर अब प्रेमचन्द ने चारो ओर देखा मानो उसने कुछ स्मरण करने की कोशिश की, फिर बोला—तुम लोगो मे और मुझमे आधारभूत मतभेद यह है कि तुम एक क्रान्तिकारी को केवल चिन्मय या विचारमय मानती हो। अवश्य ही उसमे भावुकता होती है, पर वह भावुकता विचार के साथ कदम रखकर चलती है। पर मैं यह मानता हू कि क्रान्तिकारी चिन्मय भी है और मृण्मय भी, विचार भी है, भावुकता भी; मस्तिष्क भी है, हाड-मास भी, और हाड-मास का होने के नाते उसके कुछ तकाज़े है। सच तो यह है कि हाड-मास ही उसके मस्तिष्क को नियन्त्रित करता है। मस्तिष्क हाड-मास ही है।

अर्चना अच्छी तरह समझ रही थी कि प्रेमचन्द किस तरफ इगित कर रहा है, पर उसने जान-बूझकर उस दिशा की अवज्ञा करते हुए कहा—तुम तो क्लासरूम मे बैठकर लेक्चर-सा देने लगे। मैं कब कहती हू कि क्रान्तिकारी यह है और वह नही है। मेरा तो सिर्फ एक ही कहना है कि क्रान्तिकारी सर्वोपरि और सर्वप्रथम क्रान्तिकारी है। इसके अलावा भी उसका अस्तित्व है, पर वह अस्तित्व किसी भी हालत में उसके मार्ग मे रोडा बनकर न आए।

दोनो मे इसी तरह बातचीत होते-होते काफी समय बीत गया। अर्चना बातचीत को बराबर सूक्ष्म सतह पर ले जाने की कोशिश करती रही जबकि

प्रेमचन्द उसे बराबर स्थूल पीठिका पर स्थापित करने की चेष्टा करता रहा।

एक की बातचीत निर्व्यैक्तिक होती थी तो दूसरे की सम्पूर्ण वैयक्तिक। इसी कशमकश मे काफी देर हो गई और एक समय अर्चना यह अनुभव करने लगी कि अब आगे वह अधिक नही टिक सकती।

प्रेमचन्द ने भी शायद यह समझ लिया, इसलिए उसने अपने आक्रमण को एक विशेष दिशा मे परिचालित करते हुए कहा—तुम मुझे चाहे जितना कायर समझो, यह तो निश्चित है कि दल ने जो भार मुझपर डाला है मैं उससे मुंह नही मोडूंगा, बहुत सम्भव है कि इस काम मे मैं पकडा जाऊ तथा बाद को मुझे फासी हो या वारदात की जगह पर ही गोली से उड़ा दिया जाऊ। उस हालत मे तो कोई प्रश्न नही उठता क्योंकि न रहेगा बास न बजेगी बासुरी, पर मैं यह पूछ रहा हू कि मान लो, मै उस कार्य को सफलतापूर्वक करके लौट आया, यह कोई असम्भव बात नही है क्योकि मेरे पहले सैकडो क्रान्तिकारी इस प्रकार मौत के मुंह से लौट आए है, तो उस हालत मे तुम्हारा-मेरा क्या सम्बन्ध होगा ?

यह प्रश्न बहुत विकट था। यह सच था कि अलबर्ट टेगर्ट को मारकर सकुशल लौटने की सम्भावना कम से कम पचास प्रतिशत तो थी ही, पर अर्चना को सोचने का यह तरीका रुचा नही। उसे कुछ ऐसा मालूम हुआ कि जो इतने बडे बलिदान के लिए तैयार है, उसे शायद ऐसे ढग से नही सोचना चाहिए।

प्रेमचन्द शायद उसके विचार ताड गया। बोला—तुम मेरी इतरता पर खीज रही होगी। सोच रही होगी कि जो शहीद के आसन पर बैठा है, उसे छोटी-छोटी बातो की चिन्ता करने की जरूरत क्या है ; उसे तो एकाग्र होकर केवल लक्ष्य की बात सोचनी चाहिए, पर मैं इस मत का नही हूं, अब यह तुम पर है कि तुम मेरे प्रश्न का उत्तर दो या न दो।

अर्चना ने यह सोचा कि उसने जो घटना-परम्परा या विचार-परम्परा चालू कर दी है, अब उससे भागने से काम नही बनेगा। फिर इस समय यह सोचने का मौका भी नही है कि इस प्रश्न का उत्तर देना उचित है कि नहीं, बल्कि इस समय तो केवल एक ही दृष्टिकोण से सारी बात देखनी है, वह यह कि प्रेमचन्द जो कार्य करने जा रहा है उसपर मेरे उत्तर का क्या असर पडेगा।

किसी भी हालत मे ऐसी कोई बात नही करनी चाहिए जिससे उसे निराशा हो।

अर्चना ने दृष्टि नीची कर ली और कहा—मैं तो अपने मुह से अपने मन की गूढतम अभिलाषा तुमपर व्यक्त ही कर चुकी हू, फिर तुम मुझसे ऐसी बातें क्यो पूछते हो ? तुम विश्वास करो कि मै इस प्रकार की बातो से इसलिए बचना और तुम्हे बचाना जरूरी समझती हू, जिससे तुम्हारा ध्यान बट न जाए।...

कहकर उसने अपने वचन को ज़ोर पहुचाने के लिए नही बल्कि स्वाभाविक रूप से हाथ बढा दिया, जिसे प्रेमचन्द ने इस प्रकार से ग्रहण किया जैसे डूबता हुआ व्यक्ति तिनके को पकड लेता है।

थोडी देर वे इसी रूप मे रहे, पर अर्चना एकाएक बोली—अब हम लोगो को चल देना चाहिए। बहुत से जान-पहचान के लोग यहा आते-जाते रहते हैं। इसके अतिरिक्त खुफिए भी यहा घूमते रहते हैं।

प्रेमचन्द ने इसपर झटके से अर्चना को अपने पास खीचकर बगल मे बैठाते हुए कहा—तब तो हमे हाथ मे हाथ डालकर नही, बल्कि इस प्रकार बैठना चाहिए।..

पर अर्चना के लिए यह मानो एक सिगनल साबित हुआ और वह उठ खड़ी हुई।

प्रेमचन्द पहले तो बैठे-बैठे हहराकर हस पडा, फिर उठा, बोला—तुमने जो प्रश्न रखा, मैंने उसका जब उत्तर दिया तो तुम उठ खडी हुई। खुफिए यदि यह जानकर पीछा छोड दे कि हम लोग इश्क के मर्ज़ मे मुब्तिला हैं तो यह अच्छा ही होगा।

**इश्क ने गालिब निकम्मा कर दिया**
**वर्ना हम भी आदमी थे काम के।**

इसके बाद दोनो चल दिए।

यथासमय सभा हुई, पर वह कुछ जमी नही। गाधी जी की डाडी-यात्रा पर ही कुछ मामूली-सी बातचीत चलती रही।

उसमे लोग यही शंका प्रकट करते रहे कि सरकार शायद १९२१ की तरह गाधी जी को पकडे ही नही। उस हालत मे जोश पैदा नही होगा और आन्दोलन गति नही पकड़ पाएगा, मझधार मे रह जाएगा।

प्रणवकुमार ने विशेष रूप से इसी दृष्टिकोण को सामने रखा। उसका कहना यह था कि हमे दूसरे आन्दोलनो से बंधा नही रहना चाहिए। हमे टेगर्ट को इसलिए मार डालना चाहिए कि वह तथा उसके साथी कुणाल जी की हत्या के लिए जिम्मेदार है और यह हत्या उन्होने आतक फैलाने के उद्देश्य से की।

अर्चना ने इसका डटकर विरोध किया। वह बोली—हम किसी भी तरह अपने को देश मे चलने वाले दूसरे आन्दोलनो से अलग नही कर सकते और न ऐसा करना चाहिए। कुणाल जी कहा करते थे कि प्रथम महायुद्ध के दौरान मे जो क्रान्तिकारी आन्दोलन चला, जिसके आक्रमण के सामने ब्रिटिश साम्राज्य बाल-बाल बचा उसीको दबाने के लिए रौलट कमेटी बैठी और उसने जो रिपोर्ट पेश की उसीका विरोध करने के लिए असहयोग आन्दोलन चला। सैडर्स हत्या-काण्ड का लाला लाजपतराय की शहादत से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहा। हम एक और अविच्छेद्य है।

पर प्रणवकुमार ने कहा—गाधी जी तो यह नही मानते। वह तो हिंसा और अहिंसा के कैदियो मे भी फर्क करना चाहते है और उनकी देखादेखी अब ब्रिटिश सरकार, जो इतिहास की सबसे बडी हिसावादी सस्था है, क्रान्तिकारियों को न छोडने के लिए हिंसा का बहाना करती है।

अर्चना ने सक्षेप मे कहा—गाधी जी चाहे जो कुछ कहे, इतिहास इस मामले मे उनकी बात नही मानेगा। भविष्य के लोग तो कल्पना भी नही कर सकेगे कि इस प्रकार का कोई वाद-विवाद इस जमाने मे चला होगा। हमे कार्य इस रूप मे करना है, जिससे उसका अधिक से अधिक नतीजा निकले। हम इतिहास के सामने उत्तरदायी हैं न कि किसी और के सामने। गाधी जी इस समय राज-नीतिक कैदियो का मामला लेकर बहुत बारीक बात कर रहे है, पर कही उनका दल सफल हो गया और उनके हाथ मे शासन-सूत्र आ गया तो क्या वह अहिंसा से शासन कायम रख सकेगे? महात्मा बनने के लिए ऐसी बाते शायद अच्छी हों, पर इस प्रकार अव्यावहारिक मत का प्रतिपादन कर वह स्वतः इस बात की गुजाइश पैदा कर रहे है कि उनके चेले पहला मौका आते ही उनसे कतरा जाएं। गुरु की बहुत प्रशसा होगी, पर गुरुमन्त्र को तिलाजलि दे दी जाएगी।

इसीपर बात खत्म हो गई।

तब प्रेमचन्द ने कहा—गाधी जी अपने ढग के एक ही चतुर राजनीतिक हैं। जब वह देखेंगे कि सरकार उन्हे गिरफ्तार नही करना चाहती और उनकी यात्रा मे अखबार वालो की दिलचस्पी घट रही है, तब वे भी कुछ न कुछ और बात सोचेंगे।

इसपर प्रणवकुमार ने कहा—हा, उनकी आन्तरिक रोशनी कुछ मार्ग दिखाएगी।

प्रेमचन्द बोला—यह सब अपने-अपने कहने का ढग है। कोई विवेक कहता है, कोई अन्दरूनी आवाज़ कहता है, कोई कुछ कहता है, मतलब वही है। अलग-अलग वर्ग तथा यूथ का अलग-अलग विवेक होता है। विवेक व्यक्ति से स्वतत्र नही बल्कि उससे और उसकी परिस्थितियो से बधा हुआ होता है।

इसपर कोई तर्क नही चला। यही तय रहा कि पहले जो प्रस्ताव पास हुआ था उसीको कार्यान्वित करने मे सारी शक्ति लगा दी जाए। जब तक यह प्रस्ताव कार्यान्वित नही होता, तब तक अगला कदम उठाने की ज़रूरत नही। हा, सगठन, अस्त्र-शस्त्र-सग्रह, प्रचार-कार्य यह तो चलते ही रहेंगे।

## १६

प्रान्तीय दल को जब यह पता लगा कि इसपर स्वय काशी में, जो बहुत दिनो तक उत्तर भारत मे क्रान्तिकारी आन्दोलन का केन्द्र रहा, दल का एक प्रमुख हिस्सा मुख्य दल से अलग हो गया है और ऐसा इस कारण हुआ है कि वह उग्रतम कार्यक्रम अपनाना चाहता है, तब बडी खलबली मची। काशी के बाद कानपुर मे ही दल के उत्तर भारतीय अश का केन्द्र पहुच गया था या यो कहना चाहिए, कानपुर और लाहौर मे।

जल्दी मे केन्द्रीय समिति की एक सभा कानपुर मे बुलाई गई, जिसमे बगाल तक के प्रतिनिधि आए। यो श्यामा केन्द्रीय समिति की सदस्या थी, पर वह नही आ सकी और उसके स्थान पर जीवानन्द सारी रिपोर्ट लेकर पहुचा।

केन्द्रीय समिति का सदस्य न होने के कारण उससे रिपोर्ट तो ले ली गई, पर उसे समिति की बैठक मे शामिल नही किया गया।

अमिताभ केन्द्रीय समिति के बडे महत्वपूर्ण सदस्य थे, पर बहुत चेष्टा करने पर भी यह पता नही लगा था कि वे कहा और किस अवस्था मे है। पहले पहल केन्द्रीय समिति के सदस्यो को यह पता लगा कि अमिताभ कुणाल की शहादत के बाद ही अज्ञातवास मे चले गए हैं। यह भी पता लगा कि अज्ञातवास मे जाते समय वे अपनी पिस्तौल श्यामा को देते गए।

इस खबर से केन्द्रीय समिति के सदस्यो मे आश्चर्य छा गया। बगाल के एकमात्र प्रतिनिधि अजितकुमार उर्फ दादा बोले—वह तो बडा बहादुर था, उसे क्या हो गया ?

कहकर वे हसे और इस हसी मे ही बहुत कुछ कह गए। वे लगभग बीस साल से क्रान्तिकारी आन्दोलन मे थे। प्रथम महायुद्ध के समय रेगुलेशन-तीन मे तीन साल नजरबन्द भी रहे। वे बहुत ही भयकर व्यक्ति समझे जाते थे। वे उन लोगो मे थे जो दूसरे ढग के राजनैतिक कार्यकर्ताओ को किसी भी प्रकार बर्दाश्त करने को तैयार नही थे और उन्हे गुमराह और बहुत हुआ तो कौतुक का विषय समझते थे। वे इस समय फरार थे और उनपर पता नही दस हजार इनाम था या उससे कुछ अधिक। बोले—हाम जानता है कि वह किधर गया है। वह रूश मे गया होगा।

कानपुर का क्रान्तिकारी नेता विनायक बोला—मेरा भी ऐसा ख्याल है। आजकल जो काम नही करना चाहता, वह 'आइडियोलाजी' का बहाना करके सटक जाता है।

दादा स्वय तो बहुत कुछ कह गए थे, पर उन्हे एक पुराने क्रातिकारी पर दूसरो के द्वारा ऐसी छीटाकशी नही रुची। बोले—तुम कैसा माफिक बात करता है जी। हाम उशको बारह शाल से जानता है। जब अशहजोग आदोलन चला था तब भी उशका पैर कुछ फटफटाया था, पर वह फिर लौटकर आ गया। हाम बोलता है वह रूश नही, रूश के बाप मे जाए, फिर लौटेगा। आच्छा ही है वह रूश देख आए।

केन्द्रीय समिति के अधिकाश सदस्यो के मन मे अमिताभ के प्रति बडी श्रद्धा थी, इसलिए इस विषय पर अधिक चर्चा नही हुई। सब लोग दादा के इस

मन्तव्य से सहमत थे कि वे लौटेंगे।

प्रेमचन्द, अर्चना आदि के विद्रोह पर बातचीत हुई। विनायक ने कहा—इन लोगो को अनुशासन-भग के लिए कठोर सज़ा देनी चाहिए। वे दल छोडकर चले जाए, इसकी हम परवाह नही करते पर उन्हे दल के अस्त्रो पर कब्ज़ा करने का कोई अधिकार नही था।

राजस्थान से आए हुए कचनसिह ने कहा—अस्त्र लेकर दल छोडने का यह पहला ही उदाहरण है।

इसी तरह सब लोग विद्रोही टुकडी के विरुद्ध विभिन्न दृष्टिकोणो से विचार करते रहे। विनायक ने कहा—मुझे तो काशी से आए हुए दूत ने यह भी बताया कि असल मे विद्रोह की नेत्री अर्चना नाम की एक एम० ए० पास लडकी है। उसीने प्रेमचन्द, प्रणवकुमार आदि को भडकाया है।

कहकर उसने खासा, फिर सबके चेहरो की ओर ताककर जैसे टटोलते हुए कि पता नही कथन की क्या प्रतिक्रिया हो, कहा—दिखाने के लिए तो प्रेमचन्द नेता है, पर असली नेता अर्चना है। मुझे तो यह भी मालूम हुआ है कि प्रेमचन्द और अर्चना मे कुछ गर्हित सम्बन्ध भी है, और यदि अभी नही है तो जल्दी ही होगा।

दादा चुपचाप यह सब सुनते रहे। फिर एकाएक उनका धैर्य टूट गया और वे चिल्लाकर बोले—कौन शाला कौन शाली से प्रेम करता है, इशशे हमको क्या? फण्डामेन्टल पर जाता नही और फिजूल की बात बोलता है। अशली शवाल तो यह है कि वह लोग दल के खिलाफ जो चार्ज लगाया कि वह तो 'हरीशभा' या आर्य-शमाज हो गया है, इश पर तो विचार नही करता। मान लो हाम लोग यह तै करता है कि जो पालिशी प्रेमचन्द ने अपना पार्टी के इश-तहार मे बोला है यानी खूब आतंकवाद करो, हाम उशी पालिशी का शमर्थन करता है, तब तो वह लोग हीरो हो जाता है, उश हालत मे हाम जाकर बोलेगा, प्रेमचन्द तुम ठीक है, हाम गलती करता था, तुम हाम को ठीक किया। फिर शजा देने का बात कब उठता है? शजा तो हाम को होना चाहिए....

सब लोगो ने यह स्वीकार किया कि असली प्रश्न तो यही है। विनायक को यह बात पूरी तरह पसन्द नही आई क्योकि वह उसके वैधानिक पहलू पर

ज़्यादा ज़ोर देना चाहता था। वह बोला—माना कि दल निष्क्रिय हो गया था, पर उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने के लिए प्रातीय समिति है, फिर केन्द्रीय समिति है, अपने हाथ मे कानून लेने का किसीको क्या अधिकार है ? सैकडो बाधाओ तथा विपत्तियो मे भी हमारा दल टिक सका है, इसका कारण यह है कि इसमे लौह-अनुशासन चलता है।

दादा फिर बिगड गए, बोले—फिर वही बात बोलता है। अनूशाशन, लौह-अनूशाशन, पर किशके लिए ?

इसके बाद उन्होने जो कुछ कहा, उसका मतलब यह था कि लौह अनु-शासन तभी तक पवित्रातिपवित्र है जब तक कि उससे किसी उदात्त लक्ष्य की प्राप्ति और सिद्धि होती है। जब लक्ष्य ही छूट गया तो उसमे अनुशासन कैसा ? उस समय जो अनुशासन भग करके लक्ष्य को अपनाता है वही असली क्रातिकारी है।

विनायक ने कहा—दादा, आप समझ-बूझकर बात कीजिए। आपके कथन को यदि तार्किक उपसहार तक ले जाएं तो उसका अर्थ यह होता है कि विद्रोही दल के अन्दर फिर विद्रोही दल पैदा हो सकता है।

दादा कुछ कहने ही जा रहे थे, पर कचनसिह ने कहा—दादा बिल्कुल ठीक कह रहे है। यदि निरन्तर नवीनीकरण न होता रहे तो दल क्रांतिकारी न रह जाए। कई लोग जो पहले क्रातिकारी थे बाद मे बुज़दिल हो जाते हैं, उनके हाथ मे नेतृत्व आ गया तो बस दल का सत्यानाश हो गया। वे कायरता से जिस कदम को नही उठाना चाहते, उसके समर्थन मे सैकडो तर्क निकाल लेते हैं।

उसके बाद फिर यही निश्चय हुआ कि दल की नीति पर पुनर्विचार किया जाए। कोई मौलिक मतभेद तो था नही ; केवल यह था कि ऐक्शन करने मे विलम्ब की नीति इस समय ठीक है या उग्रनीति ?

दादा ने इसपर एक लम्बा भाषण दिया। उन्होने जो कुछ कहा उसका सार यह था कि उत्तर भारत चाहे जो कुछ करे, पर बगाल मे उग्रनीति के पक्ष मे अधिक मत है और सम्भव है कि उसीकी अधिक चले। उग्र दल यह चाहता है कि फौरन शासक जाति या शासक वर्ग के लोग अधिक से अधिक मारे जाएं। दूसरा दल है, जो यह कहता है कि हमारा उद्देश्य सगठन करके क्राति करना है न कि आतंकवाद करना, हा हम बीच-बीच मे आतकवादी कार्य भी करेंगे, पर वह

गौण होगा मुख्य नही।

दादा ने यह भी बताया कि प्रेमचन्द पर यदि इस दृष्टिकोण से विचार किया जाए तो उसे गुमराह नही कहा जा सकता। सबको यह आशा थी कि दादा प्रेमचन्द के लिए कोई सजा तजवीज करेंगे, पर वे तो उसे हीरो बनाने पर तुले हुए थे।

विनायक ने एक सीधा सवाल पूछा—हम कानपुर मे दो-एक आतकवादी कार्य करने का निश्चय कर चुके है। लखनऊ-षड्यन्त्र का मुखबिर भद्रसेन कानपुर मे खुलेआम नेता बना फिरता है, इसे हम बर्दाश्त नही करेगे। इससे क्रान्तिकारियो की हसी होती है। यह सब तो हुआ, पर क्या प्रेमचन्द को हम उपहार के रूप मे वे अस्त्र दे चुके या उससे लेंगे ? लेंगे तो कैसे लेगे ?

दादा इस तीखे प्रश्न से बिल्कुल विचलित नही हुए। बोले—हाम शाला कौन होता है ? अश्त्र तो देश का है और देश का रहेगा। जो देश का काम करेगा, जो अश्त्र से काम लेगा, अश्त्र उशका है।

विनायक को इससे बडी निराशा हुई। उसने स्पष्ट उत्तर पाने के उद्देश्य से पूछा—इसका अर्थ यह हुआ कि काशी के मुख्य दल ने प्रेमचन्द को कोई सज़ा नही दी; अब केन्द्रीय दल भी उस सम्बन्ध मे चुप रहना चाहता है ?

जब दादा ने देखा कि ये लोग स्पष्ट उत्तर चाहते है या प्रेमचन्द के विरुद्ध ऐक्शन चाहते है तो उन्होने स्पष्ट रूप से ही कहा—अब तुम लोग पूरा बात शुनना मागता है तो शुनो। जब किशी को अभियुक्त बनाकर कटघरे मे खडा किया जाता है तो तुरन्त ही शज़ा नही हो जाता। मोकदमा जैसा माफिक होता है, वैसा माफिक उसे महीना दो महीना, शाल दो शाल हवालात मे रहना पड़ता है। तुम लोग शमझो कि प्रेमचन्द और उशका गुट हवालात मे है। यदि इश बीच मे वह और उशका गुट ऐशा कोई काम करेगा जिशशे क्रान्तिकारियो का शिर ऊचा होता है तो हाम ही उशके शामने दोशी हो जाएगा। अगर वह लोग ऐशा नही कर पाता तो वह लोग हमारे सामने दोषी हो जाएगा। तब उश हालत मे फिर हम उशे शजा भी देगा और अश्त्र भी छीन लेगा। हम तो जानता है कि उशने अश्त्र कहा रखा है। हाम पाच मिनट मे उशे छीन सकता है।

सब लोगो ने इस मत को पसन्द किया। कचनसिंह ने मानो इसीका भाष्य करते हुए कहा—इसके अलावा हमे इस समय अपनी एक-एक तोला शक्ति शत्रु

के विरुद्ध लगानी है। ऐसे समय मे आपसी मार-काट अच्छी नही हो सकती।

दादा ने कहा--हा, यही तो हाम भी बोलता है, बगाल मे बहुत छोटा-छोटा उपदल है, पर हाम इशशे खुश है। पुलिश एक को पकडता है तो बाकी सेफ रहता है। काम करो और आगे बढो।

विनायक को अब थोडा-सा मौका मिला। उसने कहा--बडी मुश्किलो से उत्तर भारत के क्रान्तिकारी नेताओ ने छोटे-छोटे दलो का एकीकरण किया था पर यह मालूम हो रहा है कि दादा को यह व्यवस्था पसन्द नही।

इसपर दादा बिल्कुल नही झेपे बोले--हाम काम चाहता है, कैशा भी हो।

इसके बाद देश की तथा दल की अन्य समस्याओ पर विचार हुआ। दादा ने चलते समय लोगो से अस्पष्ट रूप से कहा कि बगाल मे कुछ भयकर होने वाला है। पर वह क्या है, इस सम्बन्ध मे उन्होने कुछ भी नही कहा।

जीवानन्द यह खबर लेकर काशी पहुचा कि अभी केन्द्रीय समिति का मत यह है कि प्रेमचन्द और उसके गुट की गतिविधि पर निगरानी रखी जाए, उनसे अभी किसी प्रकार छेड-छाड नही की जाएगी।

## १७

गाधी जी पाच अप्रैल को अपने अनुयायियो के साथ डाडी पहुचे।

अब तक उन्होने कोई कानून नही तोडा था, इससे यह कहा जा सकता था कि ब्रिटिश सरकार उन्हे इसलिए नही पकड रही थी कि उन्होने कोई कानून नही तोडा था, पर कानून तोडने का इरादा सार्वजनिक रूप से व्यक्त किया था और उसके लिए ब्रिटिश कानून की भाषा मे षड्यन्त्र भी किया था, इसलिए उन्हे सरकार चाहती तो साधारण कानून के अनुसार भी गिरफ्तार कर सकती थी।

असल मे सरकार इस मौके पर कानूनी नुक्ते से नही सोच रही थी, बल्कि

वह यही देख रही थी कि राजनैतिक लाभ किस बात मे है। १९२१ मे भी ब्रिटिश सरकार ने यही किया था। हजारो लोग गाधी जी द्वारा चलाए हुए आन्दोलन के कारण गिरफ्तार हो गए, यहा तक कि वे अपनी सजा काट-काटकर छूटने भी लगे, पर गाधी जी गिरफ्तार नही किए गए। उन्हे तो तब गिरफ्तार किया गया, जबकि उन्होने आन्दोलन वापस ले लिया।

इन्ही कारणो से कोई यह नही जानता था कि कब क्या होगा। पर गाधी जी अपने कार्यक्रम के अनुसार चल रहे थे।

डाडी पहुचते ही उन्होंने समुद्र के खारे पानी से नमक बनाया। यह विचार था कि ५ अप्रैल को तो वे नमक कानून तोडे और ६ अप्रैल मे सारा देश कानून तोडना शुरू करे।

यहा यह बता दिया जाए कि ६ अप्रैल सालो से बहुत महत्वपूर्ण दिन था क्योकि ६ अप्रैल से १३ अप्रैल तक जलियावाला बाग के हत्याकाड की स्मृति मे राष्ट्रीय सप्ताह मनाया जाता था।

गाधी जी को कुछ ऐसा अनुमान था कि नमक बनाते ही वे गिरफ्तार कर लिए जाएगे और तब देश मे आन्दोलन जोर पकड जाएगा। पर ब्रिटिश सरकार ने उन्हे गिरफ्तार नही किया, तब गाधी जी ऐसा उपाय सोचने लगे जिससे कि सरकार को मजबूर होकर उन्हे गिरफ्तार करना पडे।

जब अमिताभ ने एक तरफ तो यह देखा कि जन-आन्दोलन तेजी पर है और दूसरी तरफ यह देखा कि काशी के क्रान्तिकारी दल के दो टुकडे हो गए, अन्य स्थानो के बहुत-से क्रान्तिकारी गिरफ्तार हो गए और उनपर मुकदमे चलने लगे, जितने क्रान्तिकारी पकडे जाते थे, उनमे से एक अच्छी-खासी सख्या मुखबिर बन जाती है, तो उनके मन मे एक अद्भुत विचार आया और उससे वे बहुत हर्षित हुए और उनका रोम-रोम खिल उठा कि अब शायद जन-क्रान्ति का युग आ गया और आतकवाद तथा इस प्रकार के वैयक्तिक साहस के कार्यों का युग जाता रहा।

इन्ही सब बातो के कारण उन्होने सोचा कि कुछ दिनो के लिए छुट्टी ली जाए, तभी श्यामा को अस्त्र सौपकर वे गाधी जी की डाडी-यात्रा देखने चले आए थे। गाधी जी और उनकी टुकडी के पीछे-पीछे जो जनता चलती थी, उसमे सिर मुडा हुआ, बिल्कुल देहाती लगने वाला, सिलबिल्ले कपड़े पहने

हुए एक व्यक्ति था जो हमारे पूर्व परिचित अमिताभ ही थे ।

अमिताभ ने यह निश्चय किया था कि यदि गाधी जी उस दिन गिरफ्तार होते है तो वे भी नमक कानून तोडेगे। इस बीच मे उन्होने थोडी-थोडी गुजराती सीख ली थी और वे यही आशा करते थे कि सत्याग्रह मे गिरफ्तार होने पर उन्हे कोई पहचानेगा नही और सब यही समझेगे कि यह अहमदाबाद मे बसा हुआ कोई सयुक्त प्रान्त (अब उत्तर प्रदेश) निवासी है ।

पर गाधी जी गिरफ्तार नही हुए और १८ अप्रैल को सुदूर चटगाव में एक घटना हुई, जिससे अमिताभ का मन जो लगभग थिराकर शान्त हो गया था, फिर बुरी तरह उद्वेलित हो गया ।

चटगाव के करीब ७४ नौजवानो ने मिलकर एक साथ शहर की पुलिस-लाइन और टेलीफोन-एक्सचेज पर आक्रमण कर दिया। क्रान्तिकारी चार टुकडियो मे बटे थे। सबसे पहले ढाका और कलकत्ते को जोडने वाले टेलीफोन और तार काट दिए गए और उनमे आग लगा दी गई। जब एक टुकडी यह काम कर रही थी तो दूसरी टुकडी ने रेल की कुछ लाइने काट दी ।

जो टुकडी एफ० आर० हेडक्वार्टर्स मे गई थी उसने सर्जन मेजर, एक सन्तरी तथा एक सिपाही को वही गोली से मार दिया। वहा जितनी भी राइफले, पिस्तौले आदि मिली, क्रान्तिकारियो ने उनपर कब्जा कर लिया। एक लिविज़गन भी छीन ली गई ।

जो टुकडी पुलिस-लाइन भेजी गई थी, वह सबसे बडी थी। उसने पुलिस-लाइन के सन्तरी को मार डाला। शस्त्रागार पर कब्ज़ा कर लिया और वहां आग लगा दी। रात बारह बजे जिला मजिस्ट्रेट आए, पर क्रान्तिकारियो ने उनका बुरा हाल किया और उनके सन्तरी तथा मोटर-ड्राइवर को खत्म कर दिया ।

• जब अधिकारियो ने यह हालत देखी तो तोप से काम लिया जाने लगा। तब क्रान्तिकारियो को भागना पडा और वे जलालाबाद पहाडी पर पहुचे। अन्त तक लडाई मे क्रान्तिकारी हार गए और इनमे से १९ व्यक्ति जलालाबाद की पहाडी पर शहीद हो गए ।

ये खबरे धीरे-धीरे कई दिनो मे अमिताभ को मिली। पर इनसे वे बहुत उत्तेजित हुए। उन्हे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे वे शायद कही कुछ उतावलेपन से

सोच रहे है । यह बात सही है कि गाधी जी के पीछे भारत की अधिक से अधिक जनता थी, पर आज के युग मे केवल जनता का पीछे होना और सो भी अर्ध-रोमाटिक, अर्ध धार्मिक तरीके से पीछे होना क्या कोई विशेष अर्थ रखता है ? २० हजार सशस्त्र तथा दृढ प्रतिज्ञ व्यक्ति इस प्रकार की दो करोड जनता से कही अधिक कारगर हो सकते है । केवल जयकारा लगाने से क्रान्ति नही हो जाती । चटगाव के क्रान्तिकारियो ने इस समय को विशेष रूप से चुना, इससे क्या यह स्पष्ट नही हो जाता कि वे अपने उदाहरण के द्वारा देश के सामने एक मार्ग को ज़ोरदार तरीके से रखना चाहते है ? सत्याग्रह चाहे जितना भी सफल हो उसका अन्तिम परिणाम समझौता है, जब कि हमे चाहिए क्रान्ति, महा क्रान्ति !

अमिताभ अब तक गाधी जी के साथ चलने वाली भीड के साथ रहते थे, अब वे भीड से हटकर समुद्र की तरफ चले गए और बहुत ज़बर्दस्त तरीके से आत्मपरीक्षा मे लग गए । दो दिनो तक तो खाना भी नही खाया और निरतर चिन्ता मे डूबे रहे ।

एक बार तो वे इतने उतावले हुए कि उन्होने सोचा कि क्यो न चलकर इस सम्बन्ध मे स्वय गाधी जी से बातचीत की जाए । वे चल भी पडे, पर बीच मे ही समझ गए कि यह भेट व्यर्थ होगी । न तो हमारे सन्देह का निरसन होगा, न गाधी जी को अपने मत पर ला सकेंगे, हा सम्भव है कि अखबार वालो को कोई सनसनीखेज खबर छापने का मौका मिल जाए और शायद नाहक मे हम गिरफ्तार हो जाए ।

इसलिए उन्होने वह योजना छोड दी ।

गहरे आत्मचिन्तन मे लगे होने पर भी अमिताभ किसी परिणाम पर नही पहुच सके । कभी उन्हे प्रतीत होता कि चटगाव के क्रान्तिकारियो ने रक्त से अल्पना देकर जिस मार्ग का निर्देश किया है, वही सही है और कभी ऐसा लगता कि यह अर्धनग्न, निरस्त्र, ठिगना व्यक्ति जो मार्ग दिखला रहा है वही सही है । कभी जंचता, इन मार्गों मे विरोध है, पर कभी ज्ञात होता, इतिहास के किसी निभृत कोने में जाकर ये समान्तराल रेखाए मिल गई हैं ।

प्रेमचन्द ने जो विद्रोह किया था इसके कारण उनके मन पर पहली चोट लगी थी । केवल विद्रोह से वे न तो दुःखी थे न सन्तुष्ट, पर दु.ख यह था कि क्रान्ति-

कारी दल के अन्दर भी दो पन्थ हो रहे हैं, इनमे से किसी एक पन्थ के सिर पर सहीपन का सेहरा बाधना सम्भव नही था। यह प्रभेद केवल युग की दिशा-सूचक प्रवृत्तियों का प्रतीक था।

इसके अतिरिक्त क्रान्तिकारियो तथा अन्य वामपथियो मे मार्क्सवादी विचारधारा का भी जोरो से प्रचार हो रहा था, जिसके अनुसार वैयक्तिक आतकवाद का मार्ग एक विशेष अवस्था का सूचक होने पर भी क्रान्ति का साधन नही था। जब जनता प्रबुद्ध होकर स्वय अत्याचारियो से बदला लेने लग जाए तो वह बात और है। चटगाव वालो ने जो कुछ किया था वह विशुद्ध वैयक्तिक आतकवाद से अलग था, पर अभी इसमे जनता का योगदान होना था। नौजवानो ने एक उदाहरण प्रस्तुत किया, पर कहा, जनता ने तो अपने सामने इतना बडा उदाहरण होते हुए भी उसमे योगदान नही किया था। इस सम्बन्ध मे जनता का आचरण तो बहुत ही अद्भुत रहा है। अब तक जनता के लोगो ने दौडकर क्रान्तिकारियो को पकडा ही है कभी पुलिस के चगुल से छुडाया नही। अवश्य उसका कारण जनता की अज्ञता तथा गुलाम मनोवृत्ति है। असली रोग तो वही पर है, यदि जनता प्रबुद्ध होती तो फिर क्या था ?

इन्ही चिन्ताओ मे अमिताभ कभी गाधी जी की टुकडी के साथ और कभी उससे दूर चलने लगे। जब उनके मन का पलडा इधर झुका होता था तब साथ चलते थे, और जब उनके मन का पलडा उधर झुका होता था तो वे टुकड़ी से दूर हट जाते थे।

उनकी इस प्रकार ढुलढुल-यकीन प्रवृत्ति देखकर मेघाणी, जो इस बीच उनका घनिष्ठ रूप से परिचित हो चुका था, बोला—रामदास (अमिताभ ने अपना यही नाम बताया था) क्या आप गिरफ्तार होने से घबरा रहे हैं ?

अमिताभ ने कहा—हा, कुछ घबडाहट तो है, नई-नई शादी हुई थी, उसी-की चिन्ता है।

मेघाणी ने आत्मप्रसाद से मुस्कराकर कहा—यह तो मै समझ गया था।

अमिताभ बोले—मैंने लज्जा के कारण नही बताया। अच्छा, अब यह बताओ कि सरकार ने तो गाधी जी को गिरफ्तार नही किया। यदि वह अन्त तक गिरफ्तार न करे तो आन्दोलन कैसे चलेगा ?

मेघाणी बोला—मै भी यही सोच रहा हू। सच तो यह है कि गाधी जी

भी इस सम्बन्ध मे चिन्तित है। वे बराबर प्रार्थना कर रहे है और ईश्वर से मार्ग का निर्देश माग रहे है।

—तो अब यह आन्दोलन कुछ और रूप धारण करेगा।

मेघाणी पुराना आश्रमवासी था। बोला—करेगा जरूर, पर आप तो उस फ्रेंच कहावत को नही जानते होगे कि तुम जितना ही बदलते हो उतना ही तुम वही रह जाते हो। रणनीति कुछ बदलेगी जरूर पर मूलभूत नीति वही रहेगी।

अमिताभ ने कहा—यानी जो कुछ भी होगा, अहिसा के दायरे मे ही होगा ?

मेघाणी को इस प्रश्न से बडा आश्चर्य हुआ। बोला—अरे, यह आप क्या कह रहे है ? अहिंसा के दायरे मे तो रणनीति हर हालत मे रहेगी, पर आप यह प्रश्न कैसे पूछ रहे है ?

अमिताभ की इच्छा हुई कि चटगाव-काण्ड की बाते छेडे पर उन्होने इस प्रलोभन का दमन किया। यदि वे चटगाव के विषय मे कुछ कहते तो वह बिल्कुल स्वाभाविक होता क्योकि सारा भारत उस समय या तो डाडी की बात कर रहा था या चटगाव की बात, पर अमिताभ के मन मे चोर था, उन्होने वह प्रसग उठाया ही नही। बोले—हा ··

मेघाणी बोला—गाधी जी से किसीने चटगाव-शस्त्रागार-काण्ड की बात चलाई थी तो उन्होने कहा . मेरे पास तो बस एक यही अस्त्र है, अहिंसा। गाधी जी उससे बाहर नही जा सकते और जाने की जरूरत ही क्या है ? जो जागृति इस मार्ग से हुई है, वह और किसी मार्ग से क्या होती।

अमिताभ कहने को बहुत कुछ कह सकते थे, पर मेघाणी से पूरी तरह खुलना नही चाहते थे। असली तर्क-वितर्क तो अपने अन्दर चालू था।

उस दिन के बाद तीन दिनो तक मेघाणी से भेट नही हुई क्योकि अमिताभ समुद्र की तरफ चले गए थे। जब मेघाणी से फिर भेट हुई तो वह बोला—गाधी जी ने तय कर लिया। तुम डार-डार हम पात-पात। उन्होने यह तय किया है कि सरकार ने उनका आन्दोलन व्यर्थ करने के लिए यह जो गिरफ्तार न करने की नीति अपना रखी है, उसके जवाब मे अब ऐसा कदम उठाया जाए, जिससे सरकार उन्हे गिरफ्तार करने पर मजबूर हो।

अमिताभ ने उद्ग्रीव होकर पूछा—कौन-सा कदम ?

मेघाणी बोला—धरसना मे सरकार का नमक गोदाम है। गाधी जी ने यह तय किया है कि धावा बोलकर इस गोदाम के नमक पर कब्ज़ा कर लिया जाए।

अमिताभ के मुह से निकल पडा—अरे !

फिर उन्होने सम्हलकर कहा—यह तो सरासर हिंसा है, यह अहिसा मे कैसे आता है ?

मेघाणी गाधी जी का परम भक्त था। उसे इस प्रश्न से ठेस लगी। बोला—पहले सुन तो लीजिए कि गाधी जी का क्या कहना है। उनका कहना है कि जैसे हवा और पानी पर सबका अधिकार है, उसी तरह नमक पर सबका अधिकार है। यदि सरकार ने इस नियम को भग कर नमक इकट्ठा करके उसे गोदाम मे बन्द कर रखा है तो इससे जनता का अधिकार नष्ट नही हो जाता है। वह गोदाम को अस्वीकार कर उसमे एकत्र नमक पर कब्जा करने के लिए स्वतन्त्र है।

अमिताभ को यह सुनकर इतना आश्चर्य हुआ कि वह स्थान, काल, पात्र सब भूलकर यानी यह भूलकर कि वह एक फरार क्रान्तिकारी है, बोल पडे—यदि इस तर्कशास्त्र का अनुसरण किया जाए तब तो बहुत कुछ किया जा सकता है। आदिकाल मे जमीन कम्यून की या एक कबीले की होती थी। बीच मे एक वर्ग ने अन्यायपूर्वक उसपर कब्ज़ा कर लिया। कोई ज़मीदार बन बैठा, कोई ताल्लुकेदार। उनकी जमीन जबर्दस्ती ले लेना, उसे जोतना और यदि ऐसा न कर पाए तो जब फसल तैयार हो तो उसे काट लेना यह प्रत्येक का जन्मसिद्ध अधिकार है। इसी तरह सारा धन जनता का है, सारी मिले उसीकी है, सारी इमारते उसीकी है। इस तर्क के साथ धावा बोलकर कब्जा करना कोई बुरी बात नही है।

मेघाणी यह सुनकर आपे से बाहर हो गया। बोला—आप तो हर बात को इतना फेटते है कि वह कडवी हो जाती है, भला नमक मे और जमीन मे और मिल मे क्या समता है ? आप वकील तो नही है ?

अमिताभ ने इस तर्क को और आगे बढाना उचित नही समझा। उन्होने बिल्कुल गीसुर बदलते हुए कहा—मै एक सिपाही हू, इस नाते गाधी जी की

बात मानता हू, पर यह एक मानवीय दुर्बलता है कि मनुष्य जिस काम को करता है, उसे बुद्धि के द्वारा समझना भी चाहता है।

मेघाणी अपने तूण से पैने शस्त्र निकालने के लिए उद्यत था। इस प्रकार विरोधी के अप्रत्याशित आत्मसमर्पण से उसे सन्तोष नही हुआ। शिकार को मार गिराने मे न्यारा ही आनन्द मिलता है, पर वही शिकार जब पैरो के पास आकर सीग डाल दे और कहे कि तुम मुझे मार लो और मेरा मास खा लो तो उसमे कुछ आनन्द नही आता।

इसके अलावा गाडी जब एक बार गति पकड चुकी तो उसे रोकने मे भी कुछ समय लगता है। मेघाणी बोला—आप लोग बडे ख़तरनाक है। तर्क कुछ देते है, कार्य कुछ करते हैं। आप काहे के सिपाही है? अहमदाबाद मे किसी उत्तर भारतीय फर्म मे बही लिखते थे। नई शादी हुई; आप सिपाही कैसे हे? यदि आपके तर्क मे दम है तो मुझसे तर्क कीजिए। कोई आपका गला घोटकर आपको सास न लेने दे तो आप हाथ हटाकर सास लें, वह कृत्य और किसीकी छाती पर चढ बैठना, उसकी ज़मीन पर कब्ज़ा कर लेना, मिल छीन लेना, यह सारे कृत्य एक है?

अमिताभ तर्क के लिए तैयार नही थे, फिर भी जब उन्होने देखा कि यह तो चुनौती-सी दे रहा है तो उनका भी पारा चढ गया। बोले—जाने दीजिए ज़मीन और मिल की बात, पर आप मानेगे कि नमक पर कब्ज़ा करना और अनाज पर कब्ज़ा करना एक ही बात है। फिर हम नमक-गोदामो के बाद सरकारी अनाज-गोदामो, भूसा-गोदामो, बीजघरो पर कब्ज़ा क्यो न कर ले? आप जानते हैं कि ऐसा करना क्रान्ति करना होगा?

मेघाणी पुराना आश्रमवासी था। वह ऐसे तर्कों से परास्त होने वाला नही था। बोला—रामदास जी, आप तो क्रान्तिकारी मालूम देते हैं—कहकर उसने अमिताभ को ऐसे घूरा जैसे कि उसने आज तक कभी नही घूरा था।

उसकी दृष्टि मे स्पष्ट धमकी थी। यहा तक कि अमिताभ ने भी वह धमकी महसूस कर ली। वे बोले—मैं क्रान्तिकारी नही हू, पर क्या क्रान्तिकारी होने मे कोई बुराई है?

यह धमकी के बदले चुनौती थी। पर मेघाणी इसकी परवाह किए बिना बोला—नही, बुराई क्रान्तिकारी होने मे नही है, पर क्रान्तिकारी होते हुए भी

ऐसे पवित्र कार्य मे शामिल होने मे है।

कहकर उसने चारो तरफ देखा, जैसे वह किसीको आवाज़ देना ही चाहता हो कि कोई है ? यह देखो, कितना अन्धेर हो रहा है ?

अब तो अमिताभ भी ताव पर आ गए थे। बोले—मेघाणी जी, क्या यह जन-आदोलन नही है ? क्या इसमे हर कोई शामिल नही हो सकता ?

मेघाणी इसपर भी विचलित नही हुआ। बोला—इसमे हर व्यक्ति शामिल हो सकता है, पर उसका भी स्थान-काल-पात्र है। इस अवसर पर तो केवल चुने हुए लोग चाहिए।

अमिताभ ने कहा—मैं तो केवल भीड मे हू। मुख्य टुकडी मे मै शामिल नहीं हू।

मेघाणी फिर भी बोला—आप जैसे लोगो का इस स्थान पर रहना ही हमारे लिए खतरनाक हो सकता है। आपने ठीक ही कहा है कि धरसना के नमक गोदाम पर हमला क्राति मे परिणत हो सकता है, ऐसा तभी हो सकता है जब आप-ऐसे लोग जनता मे हो। गिरफ्तार होने के उद्देश्य से नमक-गोदाम पर हमला बोलना और बात है तथा इस कार्य को क्राति मे परिणत कर देने के उद्देश्य से भाग लेना और बात है।

अमिताभ कहना चाहते थे कि मैं क्रातिकारी नही हू, पर जहा पर इस तरह सैद्धातिक बहस हो रही हो और क्रातिकारियो को नीचा दिखाने का प्रयत्न हो रहा हो, वहां इस प्रकार केवल आत्मरक्षा की बात सोचना उन्हे रुचा नही। वे बोले—आप यह चाहते है कि सब लोग सोलहो आने एक ही मत के हो। यदि कोई यह सोचता है कि क्रातिकारी भी अपने ढग से देश की सेवा कर रहे है तो उसके लिए आपकी राय मे यहा कोई स्थान नही है।

मेघाणी ने पहले से अधिक तैश मे आते हुए कहा—नही, और सौ बार नही !

अमिताभ ने यह सोचा कि अब आगे बहस करना व्यर्थ है, वे नमस्ते करके अलग हो गए।

वे जाने कितने वर्षो से क्रातिकारी आदोलन से सम्बद्ध रहे, केवल सम्बद्ध ही नही, उसके प्रमुख सचालको मे थे। पर कभी वे कट्टर नही हो पाए। यह शायद पिता का प्रभाव था जो धार्मिक होते हुए भी सब धर्मो को सचमुच एक

दृष्टि से देखते थे। वे बार-बार यह कहा करते थे, मै अपने हिन्दू होने को कोई महत्व नही देता। यदि मै किसी मुसलमान के घर मे पैदा होता तो मुसलमान होता, हिन्दू के घर मे पैदा हुआ तो हिन्दू हो गया। इसपर एक आकस्मिक घटना को अभ्रान्त बनाकर यह क्यो समझ लू कि हिन्दू ही सर्व-श्रेष्ठ हैं।

पर अमिताभ ने मेधाणी की बाते सुनी तो उनके मन मे प्रश्न उठते रहे कि क्रान्तिकारियो मे जो लोग गाधी जी को और गाधीवादियो को गाली देते थे वे भी मेधाणी की तरह अपनी जगह पर ठीक है, या बेठीक ?

इस प्रकार सोचते हुए वे समुद्र की तरफ निकल गए।

## १८

भद्रसेन बहुत ही तीक्ष्ण बुद्धि व्यक्ति था, उसे बचपन से ही अपनी बुद्धि पर बहुत अधिक भरोसा था। कारण यह था कि वह सफेद को स्याह और स्याह को सफेद कर सकता था और तिसपर तुर्रा यह कि कोई भाप ही नही पाता था कि उसे उल्लू बनाया जा रहा है।

विनायक ने उसे विशेषकर उसकी नव-नव-उन्मेषशालिनी बुद्धि के लिए ही दल मे लिया था। पर बाद को उसे इसके लिए बुरी तरह पछताना पडा था और इस सम्बन्ध मे उसके विचार इतने कडवे हो गए थे कि कई बार वह कह जाता था कि शायद बहुत बुद्धिमान व्यक्ति ईमानदार नही हो सकता।

लखनऊ-षड्यन्त्र मे विनायक तो फरार रहा, पर भद्रसेन गिरफ्तार हो गया था।

भद्रसेन ने पता नही कैसे जेल से ही पुलिस-अधिकारियो को खबर भेजी कि मेरे विरुद्ध अब तक कोई खास प्रमाण नही मिला है, न मिलने की आशा है, यदि मुझे छोड दिया जाए तो सरकार को ज्यादा लाभ हो सकता है। मै इस मुकदमे के सब फरारो को यानी कुणाल, अमिताभ, महेन्द्र, विनायक आदि

सबको पकडवा सकता हू।

पुलिस-अधिकारियो ने भी यह देखा कि बात तो सच है कि भद्रसेन के विरुद्ध प्रमाण देखकर उसके सम्बन्ध मे वकील पहले ही कह चुके थे कि उसे सज़ा कराना मुश्किल है। कुछ और प्रमाण लाइए।

इसपर पुलिस के प्रधान ने कहा—प्रमाण तो नही है।

तब इस्तगासे के खुर्राट वकील ने कहा था—तो पैदा कीजिए।

पर प्रमाण पैदा भी नही किया जा सका और मुकदमे की सुनवाई के दिन आ गए थे।

इसी मौके पर भद्रसेन का सदेश मिला।

पुलिस-अधिकारियो ने जल्दी-जल्दी विचार-विमर्श किया और वे इस नतीजे पर पहुचे कि भद्रसेन को छोड दिया जाए।

यह कई साल पहले की बात है। यो वह केवल पुलिस को चकमा देकर रिहा हो जाता तो कोई खास बात नही थी। ऐसे कितने ही क्रातिकारी होते है जो जेल की चहारदीवारी के अन्दर पहुचते ही कच्चे पड जाते है।

पर उसने तो एक तरफ पुलिस को पट्टी पढाई और दूसरी तरफ जेल मे बन्द अपने साथी षड्यन्त्रकारियो से यह कहा कि मेरे विरुद्ध कोई प्रमाण तो है ही नही। मै छूट जाऊगा तो मै आप लोगो को जेल से भगाऊगा। मेरे पास जेल का सारा नक्शा मौजूद है। वार्डरो की बिरादरी से भी अच्छी जान-पहचान हो गई है। मै सबको छुडाकर देश के सामने एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करूगा जो भारतीय क्रातिकारी इतिहास मे अनोखा होगा।

इसपर षड्यन्त्र मे पकडे गए लोगो मे सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति इन्द्रनाथ ने यह कहा था—प्रमाण तो खैर नही है, पर सरकार तुम्हे छोडेगी नही। यह तो वह राक्षसी है जो निगलना तो जानती है पर उगलना नही। कुछ नही तो तुम्हे बगाल आर्डिनेंस मे नजरबन्द कर लिया जाएगा।

इसपर भद्रसेन ने कहा था—यदि यह सरकार राक्षसी है तो मैं भी रक्त-बीज हू। मै अवश्य छूटूगा, नही तो सरकार का सारा मुकदमा ही कच्चा पड जाएगा। जजीर की ताकत उसकी कडियो की ताकत होती है। एक कडी कमजोर रह जाए तो जजीर खट से टूट जाए। यदि सरकार मुझे रखने का मोह करेगी तो उसे सबसे हाथ धोना पडेगा।

इन्द्रनाथ दादा ने इसपर कहा था (वह बहुत जल्दी आवेश मे आ जाते थे) —लाओ हाथ मारो, तुम छूट नही सकते ।

इसपर भद्रसेन ने हाथ पर हाथ मारकर चुनौती स्वीकार कर ली थी। कहा था—या तो सब नजरबन्द होगे, या मै छूटूगा । मुकदमा नही चल सकता ।

इसके ४८ घटे के अन्दर ही भद्रसेन छूट गया था और इन्द्रनाथ दादा ने अपने साथियो से कहा था—दूसरे किसी देश मे पैदा होता तो भद्रसेन बहुत बडा आदमी होता । मैं तो उसे मामूली बुद्धिमान समझता था, पर यह प्रमाणित हो गया कि वह भविष्यद्रष्टा है । अच्छा हुआ कि वह छूट गया । उससे दल को बडी आशाए है ।

इन्द्रनाथ दादा ने न केवल अपने जेल के साथियों से ही ऐसा कहा, बल्कि वार्डर के हाथ भेजे हुए एक गुप्त पत्र मे बाहर उससे भी बढकर प्रशसात्मक बाते लिख भेजी । जिनमे एक बात यह भी थी कि भद्रसेन को प्रान्तीय समिति का सदस्य बना लिया जाए ।

पत्र विनायक के हाथ लग गया । वह तो इसीसे परेशान था कि जब किसीपर कोई अभियोग नही होता तो उसपर १०९ यहा तक कि ११० भी चलाया जाता है । भद्रसेन कैसे छूट गया ? फिर भी पत्र का असर तो यह हुआ कि भद्रसेन सन्देह-मुक्त हो गया और फिर स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करने लगा ।

उसने विनायक के सामने षड्यन्त्र के लोगो के भगाने की बहुत सुन्दर और हर ब्यौरे मे पूर्ण योजना रखी । इस बहाने वह बार-बार लखनऊ, कानपुर, बनारस, लाहौर घूमता रहा । वह कलकत्ता भी पहुचा, पर वहा के क्रान्तिकारियो ने उसे देखते ही कहा—हमे ऐसे लोगो की जरूरत नही है । हम बाबा ऐशा आदमी नही मागता ।

नतीजा यह हुआ कि उसे कलकत्ता से दुम दबाकर भागना पड़ा, पर उत्तर भारत मे उसका सिक्का चलता रहा ।

थोडे दिन बाद पुलिस वालो ने उसे घेरा कि तुमने कोई करतब नही दिखाया, न किसीको पकडाया । तब उसने कानपुर के एक भागे हुए युवक का पता दे दिया । पुलिस उसे पकडने गई तो गोली चली और वह युवक गोली से

मारा गया ।

पुलिस वाले कुछ शान्त हुए तो उधर विनायक ने कहा कि जेल से लोगो को भगाने के मामले मे क्या प्रगति है ?

भद्रसेन जानता था कि यदि षड्यन्त्र के सब लोग भाग पाए तो उसकी खैरियत नही है क्योकि पुलिस उसीपर दोष डालती । इसलिए उसने पुलिस वालो से कुछ कहा, जिससे अब तक तो मुकदमा खुली अदालत मे होता था, एकाएक वह जेल मे होने लगा ।

तब भद्रसेन ने विनायक से कहा—अब मै क्या करू ? मेरा तो कार्यक्रम था कि खुली अदालत से लोगो को ज़बर्दस्ती भगा लिया जाए । पर वह तो अब होने से रहा ।

विनायक ने उस दिन से उससे मिलना-जुलना बन्द कर दिया ।

जब भद्रसेन ने यह बात देखी तो उसने सोचा, एक विनायक ही ऐसा है जो मुझपर विश्वास नही कर रहा है, इसलिए इसीको क्यो न पकडवा दिया जाए ।

उसने कुछ कार्रवाई की, जिससे विनायक उन दिनो जहा सोता था, वहा पुलिस ने धावा मारा, पर वहा विनायक नही मिला । पिकरिक एसिड की एक शीशी और बम बनाने के अनेक पदार्थ मिले ।

इस प्रकार भद्रसेन पर बहुत ज़ोर का सन्देह हुआ, पर उसने अपने एक साथी के साथ मिलकर सप्ताह भर के अन्दर एक छोटे बैंक मे डाका डाला और दल को नकद पन्द्रह हजार रुपये दिलाए ।

विनायक इससे भी सन्तुष्ट नही हुआ, पर दल के लोगो को रुपये की बहुत ज़रूरत थी, वे बहुत खुश हुए थे । बोले—विनायक सनकी है ।

ऐसी कितनी ही घटनाए हुई, जिनसे भद्रसेन पर कभी बहुत ज़ोर का सन्देह होता था और कभी ऐसी घटना होती थी कि वह सन्देह बिल्कुल मिट जाता था ।

वह इसी तरह कई साल कौतुक करता रहा । पता तो यह लगा था कि जिस दिन कुणाल मारे गए थे, उस दिन वह बनारस मे ही था । जो युवक कुणाल के साथ था, उससे जब पूछा गया कि कुणाल गोली से मारे गए और तुम भाग आए, यह कैसे हुआ, तो उसने अपनी सफाई देते हुए कहा था कि

भद्रसेन ने ही कुणाल को सडक पर एकाएक देखकर पुलिस मे खबर कर दी थी।

पूछा गया था—तुमने कुणाल को यह सूचना दी थी ?

इसपर उसने कहा था —हा ।

तब से भद्रसेन खुल्लम-खुल्ला पुलिस वालो के साथ हो गया था ।

यह अजीब बात है कि उसने अब क्रान्तिकारी होने का दावा करना तो छोड दिया था, पर अब तक वह एक काग्रेसी नेता बन गया था । अवश्य कोई पुराना काग्रेसी उसे महत्व नही देता था, पर वह नये लोगो का नेता बनता जा रहा था । अब वह स्पष्ट शब्दो मे क्रान्तिकारियो को गुमराह भी बताता था ।

बहुत दिनो से दल उसकी इहलीला समाप्त करना चाहता था, पर मौका नही लगता था । अन्त मे चटगाव शस्त्रागार काण्ड के दो दिन बाद उसपर हमला हुआ । इसके पहले एक अवसर पर उसपर एक हमला तो बिल्कुल व्यर्थ गया था । उसके कई महीने बाद जब यह हमला हुआ तो ज्यो ही पहली गोली चली, त्यो ही वह लेट गया । जिस क्रान्तिकारी ने गोली चलाई थी, उसने समझा कि अब की बार काम तमाम हो गया । उसने एक गोली और चलाई और भाग निकला ।

बाद को भद्रसेन ने उस क्रान्तिकारी को भी पकडवाया और उसे आठ साल की सजा हुई । भद्रसेन तब से पता नही कहा समा गया । पर यह उस समय के आगे की बात है, जहा का इस समय हम वर्णन कर रहे है ।

अमिताभ को अखबार के एक छोटे-से पैरा से इस दूसरे हमले की खबर लगी थी । उन्हे तो इसपर क्रोध ही आया था कि जब हमला हुआ तो सफल क्यो नही हुआ ? यह बार-बार असफलता कैसी ? व्यर्थ मे रासपुटिन की तरह एक दन्तकथा की सृष्टि हो रही थी ।

उन्होने आवेश मे कहा था—यह सब क्या हो रहा है ?

# १९

जब गाधी जी ने अपने नियम के अनुसार वायसराय को यह लिख दिया कि वह धरसना पर धावा बोलने वाले है, तब ब्रिटिश सरकार के कान खडे हो गए। उसे मजबूरन अपनी नीति बदलनी पडी। ५ मई को १ बजकर दस मिनट पर गाधी जी गिरफ्तार कर लिए गए। आन्दोलन का पहला मोर्चा सर हो गया।

अगले दिन से देश भर मे आन्दोलन चालू हो गया। एक तरफ से आन्दोलन चलने लगा और दूसरी तरफ से दमन-चक्र। कई जगह बडी-बडी कैम्प-जेले खोली गईं, पर नई जेलो के खुलने पर भी यह सम्भव नही हुआ कि सब आदोलनकारी वन्दी उसमे रखे जाए, इसलिए सरकार ने मार-पीट की नीति अपनाई, जिसे उन दिनो लाठी चार्ज का नाम दिया गया। पुलिस के जवान बेरहमी से नमक वनाने के लिए एकत्र लोगो पर पिल पडते और कई आदमी बुरी तरह घायल हो जाते।

इस नई नीति से पार पाने के लिए जनता ने भी बिना किसीके सिखाए हुए एक नीति अपना ली, ज्यो ही पुलिस वाले आते त्यो ही सब लोग भाग खडे होते; पुलिस के जाते ही लोग अपनी-अपनी मादो से निकलकर पहले का कार्यक्रम जारी रखते थे, पर यह बाद की बात है।

गाधी जी का गिरफ्तार होना मानो काशी के काग्रेसियो के लिए एक सिगनल था। लोग पहले से तैयार थे। राजेन्द्र के अलावा (जो फैजावाद चला गया था) बाकी सब पुराने लोग आन्दोलन मे कूद पडे।

१९२१ मे जो लोग जेल जाने के कारण अपने पेशो और कार्यो से उखड गए थे, वे इस बीच मे पुनस्सस्थापित हो चुके थे। दुबारा फिर अपना काम छोडना बहुत मुश्किल था। उन लोगो मे न तो अब जवानी का वह जोश था और न वे भ्रान्तियां ही थी, फिर भी अधिकाश पुराने लोग इस आन्दोलन मे खुशी से कूद पडे। बहुतो ने तो इस डर मे पीछे की ओर मुडकर देखा ही नही कि कही कमजोरी न आ जाए, कही धन्धे का मोह पाव पकडकर पीछे न घसीट ले।

जो थोडे-से लोग किसी न किसी बहाने कन्नी काट गए, उनकी जगह नये

लोगो ने ले ली। कुल मिलाकर इस हिसाब-किताब मे आन्दोलन को फायदा ही रहा।

१६२१ मे लोग यह भ्रान्ति लेकर आन्दोलन मे कूद पडे थे कि ३१ दिसम्बर को आधी रात तक स्वराज्य हो जाएगा। गाधी जी ने स्वय लोगो को भ्रान्ति की यह बोतल पिलाई थी। यह नही कहा जा सकता कि उन्होने जान-बूझकर उस सत्येतर धारणा को बढावा दिया था, वह स्वय ही शायद इस धारणा को प्रत्यक्ष होते देख रहे थे जैसा कि पैगम्बर लोग देखा करते है।

पर इस बार किसीको इस प्रकार की किसी भ्रान्ति की आवश्यकता नहीं थी। आन्दोलन प्रौढ हो चुका था, उसके साथ उसमे भाग लेने वाली जनता भी प्रौढ हो चुकी थी। वह यह समझ चुकी थी कि लडाई तो लडनी ही है, चाहे उसमे कितने ही साल लगे, चाहे युग निकल जाए। यदि अन्याय और परा-धीनता को हृदय से चिपकाकर नही रखना है, तो लडना है, अन्त तक लडना है।

काशी मे पहले दिन नमक की जो कडाही चढी तो हजारो की भीड जमा थी। पुलिस के दस्ते भी मोर्चे पर डटे हुए थे। दोनो पक्ष झिझकते रहे, इसलिए पकड मामूली हुई। न जनता का मन भरा न पुलिस की ही तमन्ना मिटी।

अगले दिन कैसे क्या हो, इसपर रात को विचार-विमर्श हुआ। यह तय हुआ कि एक जगह सारे आन्दोलन को केन्द्रित करने की जरूरत नही, हर मुहल्ले मे कडाही चढे और हर गाव मे नमक बने, तब पुलिस वालो को आटे-दाल का भाव मालूम होगा और यह पता लगेगा कि आन्दोलन किसे कहते है।

बाबा जी भी नमक बनाने का कार्यक्रम देखने के लिए गए थे। मणि-कर्णिका घाट न गए, वहा गए। जब कडाही चढी तो बाबा जी पास ही मौजूद थे। उस समय एकाएक पुलिस की सीटी बजी और घुडसवार पुलिस कडाही की तरफ झपटी। घुडसवार पुलिस अभी उस निष्ठुरता के लिए तैयार नही थी जो अनिवार्य थी। अभी दोनो पक्ष दौड मे पैर खोलकर दौड नही रहे थे। कुछ अटपटापन बाकी था। रघुवशनाथ, कुमारानन्द, छबलानी, इकरामउल्ला गिरफ्तार कर लिए गए, पर पता नही क्यो, आनन्दकुमार, अध्यापक प्रसाद और बन्देअली वहा मौजूद होने पर भी गिरफ्तार नही किए गए।

अगले दिन सबेरे बाबा जी ने एकाएक आनन्दकुमार से कहा—मैं भी

सत्याग्रह करूगा ।

आनन्दकुमार को इससे अधिक आश्चर्य नही हुआ । बोले—मै तो यह सोच रहा था कि हम लोग सब जेल चले जाएगे । आप रूपवती के साथ कबीर की और घर की देखरेख करेगे ।

इस समय बाबाजी की आखो मे एक न्यारी ही चमक थी । एकाएक जैसे उनकी सफेद दाढी कही-कही से खिचडी लग रही थी । ढीला पडा हुआ जबडा तना था । बोले—मै क्या अपने से कुछ कर रहा हूं । यतो नियुक्तोऽस्मि ततो करोमि । कल मैंने भीड मे एकाएक कडाही के इर्द-गिर्द जगदीश को देखा था ।

आनन्दकुमार ने आखे फाडकर देखा, बोले—आपने क्या कहा ? कुणाल जी को देखा ?

—हा उसीको देखा । जानता हू यह भ्रम था, पर हम पुराने लोगो के भ्रम मे भी एक पद्धति होती है । आपने वह सुना होगा कि जहा-जहा रामकथा होती है, वहा-वहा हनुमान जी पहुचते है । मेरा भ्रम इसी परम्परा का था ।

आनन्दकुमार की आखे, जो पहले आश्चर्य और एक हद तक अविश्वास के कारण विस्फारित हो गई थी, अब प्रशसा और श्रद्धा की भावना से नत हो गई । बोले—अच्छी तरह जीने के लिए कुछ भ्रमो का होना भी जरूरी है ।

बाबाजी ने तुरन्त ही कहा—केवल अच्छी तरह जीने के लिए नही, बल्कि अच्छी तरह मरने के लिए भी कुछ भ्रमो का होना आवश्यक है । दूसरो की आखो मे वे भले ही भ्रम हो, पर मैं उन्हे आस्था कहता हू । आपने खून से लथपथ जगदीश का चेहरा देखा था । उसके चेहरे पर ऐसी आभा थी मानो जब वह अन्तिम सास ले रहा था, तो वह स्वर्ग से अपने लिए रथ उतरता देख रहा हो ।

आनन्दकुमार के मन के तार अब उसी उदात्त सुर मे बध गए थे, जिसमे बाबाजी का मन बधा हुआ था । बोले—जी हा, वही आभा नवयुग के प्रभात की आभा है । मैने ही नही, निहायत कूडमगज लोगो ने भी शहीद के चेहरे पर वह दिव्य ज्योति देखी थी, पर उसे छोडिए, आप क्या कह रहे थे ?

—मैंने प्रत्यक्ष देख लिया कि जगदीश का मन इस तरफ है । इसलिए अब मै उसी राह पर चलूगा । शरीर तो बूढा हो चुका है, अब इसका कोई मोह नही रह गया । मैं तैयार हू ।

फिर भी आनन्दकुमार ने यह जानते हुए भी कि नदी का बहाव उलटना सम्भव नही है, कहा—पर कबीर ?

बाबाजी हस पडे, बोले—अरे कबीर क्या कोई मामूली सन्तान है । वह हमारे युग-युग की थाती है । जब उसे अपने देवतुल्य पिता के सरक्षरण की जरूरत नही रही तो उसे मेरे सरक्षरण की जरूरत है ? वह उस महान वृक्ष की तरह बढेगा जो जगल मे आधी-पानी सब झेलकर आसमान मे सिर उठाता जाता है । जितना ही वह ऊपर उठता है, उतना ही वह निकट दृष्टि छोडकर दूर दृष्टि अपनाता है । हा, जाते समय उसे एक बार गोद मे अवश्य लूगा, जिससे कि मै अपने उस बूढे दीए को स्निग्ध कर लू । यो तो भारत की सारी भूमि ही पवित्र है, उसकी मिट्टी ही माथे पर लगाना काफी होता है ।

अब आनन्दकुमार क्या कहते । बोले—कल जिस रूप मे सत्याग्रह हुआ, आज उस रूप मे नही होगा । आज लोग टुकडियो मे बटकर सत्याग्रह करेगे । मैं अलग जाऊगा, श्यामा अलग जाएगी, प्रसाद, बन्देअली सब अलग-अलग जाएगे ।·······

यह सुनकर बाबाजी का चेहरा पहले से अधिक उद्दीप्त हो गया और वे बिल्कुल अप्रत्याशित रूप से भराई हुई आवाज मे गा उठे..

**पेट पकरि कै माता रोवै बांह पकरि कै भाई ।**
**लपटि झपटि कै तिरिया रोवै हस अकेला जाई ।।**

और कोई होता तो पता नही क्या सोचता, पर आनन्दकुमार ने उनके इस गीत को बहुत सराहा, अवश्य केवल दृष्टि से ।

घर के अन्य लोग यह गीत सुनकर दौडे आए, सब लोगो ने बाबाजी को श्लोको की सुरीली आवृत्ति करते हुए सुना था, पर इस प्रकार भजन गाते हुए नही सुना था । इस भजन मे जैसे आज के लिए कोई सन्देश था । एक अनूठी मादकता थी जो अग-अग मे समाती जा रही थी, शायद इसीसे प्रोत्साहन पाकर या पता नही भीतर कौन-सा अज्ञात सोता फूट पडा था, बाबा जी ने कबीर का पूरा भजन गा सुनाया ।

फूला फूला फिरै जगत में कैसा नाता रे।
माता कहै यह पुत्र हमारा बहिन कहै बिर मेरा।
कहै भाइ यह भुजा हमारी नारि कहै नर मेरा।
पेट पकरि कै माता रोवै बांह पकरि कै भाई।
लपटि झपटि के तिरिया रोवै हस अकेला जाई।

बाबाजी जब भजन गा चुके, तब आनन्दकुमार मानो इस बात की व्याख्या करते हुए कि एकाएक यह भजन क्यो गाया गया, बोले—बाबाजी सत्याग्रह करने जा रहे है। मैंने कहा, आज अलग-अलग टुकडियो मे बटकर सत्याग्रह होगा। तो वे यह भजन गा उठे।

श्यामा कबीर को स्कूल भेजकर आई थी, बोली—पर यह तो मृत्यु का भजन है और अभियान है जीवन का, फिर भी अजीब बात है, अच्छा लगा।....

बाबाजी ने कहा—बेटी, मृत्यु के जरिए से ही पुनर्जन्म की प्राप्ति होती है। यही हमारा विश्वास है, कम से कम यही हम कहते आए है।

श्यामा कुछ नही बोली। वह भीतर ही भीतर उधेड-बुन मे लग गई थी। कबीर का मोह यह कहता था कि 'न जाओ', पर अन्तरात्मा कहती थी 'चलो'। यदि बाबाजी न जाते तो अन्तरात्मा की पुकार सुनना आसान होता।

शायद बाबाजी उसके मन के इस द्वन्द्व को ताड गए। बोले—बेटी, एक घर से एक ही का जाना बहुत है, फिर हम तो दो जा रहे है, तुम्हारे चाचाजी और मैं ..

आनन्दकुमार ने भी कहा—एक दिन मे क्या फर्क पडता है, यदि मन न माने तो कल चली जाना। अब तो यह चलेगा, पता नही कब तक चले।

श्यामा किसी निश्चय पर नही पहुच सकी। बोली—मैं तो सारी तैयारी कर चुकी थी..

आनन्दकुमार बोले—जैसी तुम्हारी इच्छा।

रूपवती अब तक चुप थी। वह इन दिनो बराबर चुप रहती थी, पर प्रत्येक की हर गतिविधि को देखती थी और उसपर अपने ढग से सोचती थी। वह एकाएक बाबाजी से बोली—महाराज मेरे लिए क्या आज्ञा है?

सबने उसे विस्फारित नेत्रो से देखा। शायद इसी कारण वह अपने प्रश्न

की व्याख्या करती हुई बोली—ये लोग हमेशा मुझे आंधी-पानी से दूर रखते है, पर आप सिद्ध पुरुष है, आप बतलाइए मेरा क्या कर्तव्य है ? ....

बाबाजी कुछ भी न झेपकर बोले—बहन, स्त्री का कर्तव्य पुरुष का अनुगमन करना है।

—तो ?

—तुम्हारा कर्तव्य स्पष्ट है।

—तो क्या मै सत्याग्रह करूं ?

बाबाजी बोले—यदि आनन्दकुमार जी इस समय फासी पर चढते तो तुम्हारा कर्तव्य उनका साथ देना होता, पर अभी तो सत्याग्रह हो रहा है, इसलिए तुम्हारा कर्तव्य ऐसी परिस्थितिया पैदा करना है, जिनमें वे शान्तिपूर्वक सत्याग्रह कर सके।........ इसके अतिरिक्त श्यामा बेटी अभी पता नही क्या करे, कबीर का भार भी तुम्हीपर है।

बाबाजी की बाते रूपवती को पूरी तरह नही रुची। उसने उनसे निष्पक्ष मत की आशा की थी, पर यहा तो घुमा-फिराकर वही बात आ गई।

थोडी ही देर मे सब लोग निकल पडे। बाबाजी श्यामा के साथ गए। आनन्दकुमार कुछ पहले गए क्योकि उन्हे दूर देहात मे जाना था। श्यामा और बाबाजी बाद को गए। रूपवती ने सुना कि बाबाजी अपने स्वभाव के अनुसार मस्त होकर गाते जा रहे थे :

सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षुर्न लिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषै।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा न लिप्यते लोक दु खेन बाह्य ॥
यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्त गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नाम रूपाद् विमुक्त परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥

# २०

काशी के एक मुहल्ले मे नमक बनाने की तैयारिया हो रही थी। अभी कुछ कार्य बाकी था, इतने मे श्यामा ने देखा कि तारा भी खद्दर की साडी पहने हुए वहा मौजूद है। श्यामा यह देखकर खिच गई। उसने सुन रखा था कि जिस काम मे कोई भी गोपनीय पता नही है, उसका भी गुप्त पता लेने के लिए गुप्त-चर तथा गुप्तचरियां नियुक्त हुई है। ये लोग जेल भी जाएगी और वहा भी अपना काम करेगी।

श्यामा ने पहले तो ऐसा दिखावा किया, मानो उसने तारा को देखा ही नही, पर तारा ने स्वय सामने आकर मुस्कराते हुए उसे तथा बाबाजी को नमस्ते किया। बोली—आज मैं भी सत्याग्रह करूगी।

उसका चेहरा उल्लास से दमक रहा था। पर श्यामा को यह और भी अखरा। बाबाजी उसे उस दिन से जानते थे, जिस दिन वह आनन्दकुमार के घर आई थी। वे गद्गद हो गए और उसके सिरपर हाथ रखते हुए बोले—बेटी, तुम सर्वजया की तरह होओ।

इस आशीर्वाद से तारा फूल तो गई, पर वह नही जानती थी कि सर्वजया कौन है। बोली—सर्वजया कौन ?

तब श्यामा ने बताया—सर्वजया रुक्मिणी देवी का घर का नाम था।

इसपर तारा का चेहरा लाल पड गया। बोली—बाबाजी क्या आप समझते है कि मैं विवाहिता हू ?

बाबाजी ने कहा—इससे कुछ फर्क नहो आता। तुम्हारी आत्मा बिना कुणाल-ऐसे पति के भी वैसी ही शुभ्र हो सकती है, जैसी उसकी थी।

श्यामा ने समझा कि बाबाजी इस लडकी को नाहक सिर पर चढा रहे है। सरलता के कारण वे यह नही समझ पा रहे है कि तारा क्या है ? वे यह नही समझते कि वह सत्याग्रह करके जेल जाकर लोगो का विश्वासपात्र बनना चाहती है, इसके बाद‥ ‥

श्यामा ने बाबाजी का एक हाथ पकड लिया और बोली—चलिए उधर काम शुरू हो रहा है।

बाबाजी ने दूसरी तरफ देखा तो सचमुच अब कडाही के नीचे आग प्रफुल्ल ोकर जल रही थी और उसी अनुपात से सबके चेहरो पर जोश दिखाई पड हा था । यहा बडे-बूढो मे से कोई नही था, इसलिए श्यामा और बाबाजी को गागे आते देखकर सब लोगो ने जगह छोड दी । बडे जोर से 'भारत माता की जय' और 'महात्मा गाधी की जय' के नारे बुलन्द किए गए ।

लोग इस जयकारे मे पूरी प्राणशक्ति लगा रहे थे, मानो इसीके द्वारा विजय प्राप्त करनी है । एकाएक किसीने बाबाजी को पहचान लिया और लोग नाम ले-लेकर क्रान्तिकारी शहीदो की जय बोलने लगे । यहा कोई ऐसा कट्टर असहयोगी नही था जो इन नामो से चिढता, इसलिए थोडी देर मे यह परिस्थिति हो गई कि कुल मिलाकर क्रान्तिकारी शहीदो की जय अधिक बोली जाने लगी । खुदीराम ही नही मगल पाण्डे से लेकर यूसुफ और कुणाल की जय भी बोली गई ।

बाबाजी खिलते जा रहे थे, ऐसे खुश हो रहे थे जैसे कि वे आज तक कभी देखे नही गए थे ।

वे अभी खारे पानी (जिसे उबालकर नमक बनाया जाने वाला था) की कडाही से दस गज की दूरी पर थे ।

एकाएक वे ठिठककर रुक गए और श्यामा का हाथ जोर से दबाकर, इतने जोर से दबाकर कि वह करीब-करीब सिसिया उठी, बोल पडे—वह देखो

श्यामा ने उनके हाथ के स्पन्दन से अनुभव किया कि उनका दिल बहुत जोर से धडक रहा है, मानो धडधडाकर विस्फोटित होने को तैयार हो । उसने सामने देखा तो तारा विराट कडाही के बिल्कुल पास पहुची हुई थी । उसके माथे पर बल आए. बोली—तारा इतनी जल्दी वहा कैसे पहुच गई, वह तो हमारे पीछे थी ।

बाबाजी अत्यन्त अप्रसन्न होकर, मानो किसी पवित्र वस्तु को अपवित्र किया गया हो या बहुत भारी गलती हुई हो, बोले—अरे वह नही, मै तो जगदीश को देख रहा हू और कबीर के पिता का जो फोटो देखा है, उसके अनुसार उसे और कितने ही दूसरे शहीदो को देख रहा हू । मै इन्हे शहीद करके इसलिए जान रहा हू कि उनके चेहरे के चारो ओर एक आभा है । तुम नही देख रही हो बेटी ? तुम तो पवित्रात्मा हो, फिर मुझसे अधिक उनके नजदीक हो ।

रही हू और कुछ नही। आप जो कह रहे है, मैं उनके अधिक निकट हू यह केवल कहने की बात है। और आपसे भला किसकी आत्मा अधिक पवित्र हो सकती है ? ....

बाबाजी कुछ बोले नही और आगे बढ गए। आठ-दस कलछुल थे और जिसे कलछुल नही मिल सका, वह बास की खपच्ची लेकर उस खारे पानी को चला रहा था। बाबाजी ने जाकर एक कलछुल ले ली। किसीने अपना कलछुल उनके हाथ मे दे दिया। फिर बाबाजी उससे कडाही को घोटने लगे।

पर अभी तो पानी अच्छी तरह उबलना भी शुरू नही हुआ था।

श्यामा के हाथ मे भी एक कलछुल आ गया और वह भी उस खारे पानी को चलाने लगी। उसने देखा कि बाबाजी का ध्यान पानी की तरफ नही है, और न भीड़ की तरफ है, वे कुछ और ही देख रहे है और बहुत खुश हो रहे है। एकाएक उन्होने श्यामा से धीरे से कहा—देखो, मैं उनको अच्छी तरह पहचान सकता हू। जो लोग फासी पर चढकर शहीद हुए, उनके गले मे एक सुन्दर काठी-सी है, बडी अच्छी मालूम होती है, जिनको फासी नही हुई, उनके गले मे वह काठी नही है। जगदीश के गले मे काठी नही है, पर यूसुफ के गले मे काठी है। खसखसी काली दाढी के साथ वह बहुत ही मोहक लग रहा है। बहुत ही सुन्दर है। समझ मे आता है कि मेरी बेटी उसपर क्यो रीझी थी।—कहकर वह कौतुक से हस पडे।

श्यामा उनकी बाते सुनकर यह समझ गई कि अत्यधिक कल्पनाशीलता के कारण बाबाजी को यह मूर्तिया दिखाई दे रही है, पर बुद्धिगत रूप से यह बात समझने पर भी उसके अनजान मे उसकी आखो से अश्रुधारा जारी हो गई और दो बूद खारा आसू उस खारे पानी की कडाही मे गिर पडा। उसने जल्दी से आखे पोछ ली और कहा—बाबा जी, आप धन्य है ·

बाबाजी उसकी बाते नही सुन रहे थे। वे इस ससार मे रहते हुए भी इस ससार के नही रह गए थे। उनके हाथ मे कलछुल यान्त्रिक रूप से चल रहा था, पर दृष्टि दूर अन्तरिक्ष मे पता नही कहा निबद्ध थी। जो कुछ हो रहा था, वह सारा उन्हे अवास्तविक लग रहा था, या यो कहा जाए कि उनके लिए उन घटनाओ का कोई अस्तित्व नही रह गया था।

जिन लोगो को न कलछुल मिल पाया था और न खपच्ची, वे झुककर

।कडी की आग को तेज़ करने मे लगे हुए थे। सब लोग इस महायज्ञ मे किसी किसी रूप मे प्रत्यक्ष भाग लेना चाहते थे। वे यह चाहते थे कि और कुछ ।ही तो इस यज्ञभूमि मे खडे ही रहे। इस अग्नि की ज्वाला से अपने हृदय की ज्वाला को शान्त करे जैसे विष से विष नष्ट होता है। इस पवित्र खारे पानी की भाप को सूघे, फेफडा भरकर सूघे और कुछ नही तो जयकारा लगाए।

इस समय वहा दो हजार के करीब भीड थी, जिसमे स्त्रियो की सख्या काफी थी। अभी पुलिस वाले निस्पन्द खडे थे। उन्हे कोई आदेश नही मिला था।

पुलिस के सिपाही सारी कार्रवाई को बहुत ही हास्यास्पद समझ रहे थे। लोग खारे पानी से जो नमक बना रहे थे, वह खाने लायक तो कभी नही होता, फिर यह परेशानी क्यो? इस नमक बनाने से क्या बिगडता है? वे स्वय कुछ करना नही चाहते थे, पर वे हुक्म के बन्दे थे। उन्हे सारा प्रशिक्षण यही दिया गया था कि हुक्म मानो और कभी यह न पूछो कि क्यो ऐसा हुक्म दिया गया और इसका उद्देश्य क्या है? जितनी भी गुलामीमूलक पद्धतिया होती है, उनमे इस प्रकार अन्ध आज्ञा-पालन को ही सबसे बडा पुण्यकार्य करके चित्रित किया जाता है।

बाबाजी कलछुल चलाते जा रहे थे। अब उन्होने बोलना भी बन्द कर दिया था। शायद अब उनके लिए श्यामा का अस्तित्व भी नही रह गया था। वे सम्पूर्ण रूप से तद्गत और तल्लीन होकर उन चित्रो को देख रहे थे।

एकाएक दूर से घोडो की टापो की आवाज मालूम हुई।

सब चौकन्ने हो गए। लोगो ने बहुत चिल्लाकर जय बोलना शुरू कर दिया। कलछुल तेजी से चलने लगे मानो ये कलछुल यह चाह रहे हो कि प्रकृति के नियमो को तोडकर पानी जल्दी-जल्दी भाप बनकर उड जाए और नमक ही नमक रह जाए। आच वालों ने आच और तेज़ की। जो लोग ऐन कडाही को घेरकर खडे थे वे और जमकर मानो किसी भी हमले को झेलने के लिए तैयार होकर खडे हो गए। यह तो स्पष्ट हो चुका था कि हमला होने वाला है। पहले से पुलिस के जो दस्ते मौजूद थे, उसके सिपाही बन्दूक और लाठी सम्हालकर तनकर खडे हो गए।

अब देवासुर-सग्राम शुरू होने वाला था। वह सग्राम जो शायद सृष्टि के आदि से चला आया है और शायद हमेशा चलता रहे, कम से कम उस दिन

तक तो चलता ही रहेगा, जबतक मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण किसी न किसी रूप मे है ।

बाबाजी भी सातवे आसमान से उतर आए । बोले—श्यामा, शहीद लोग आपस मे बडे जोश मे आकर कुछ कह रहे हैं, कोई बात होने वाली है । अरे जगदीश ! और देखो सर्वजया ! पहली बार मैंने इसे देखा । मेरी तरफ देखकर अजीब तरीके से वे मुस्करा रहे है । अरे लडको, मुस्करा रहे हो तो रोनी सूरत क्यो बनाए हो ? श्यामा, सुनो तो, ये लोग क्या कह रहे हैं ? मेरे तो कान काम नही देते ।

श्यामा ने एक हाथ से कलछुल चलाते हुए दूसरा हाथ बाबाजी के हाथ पर रखा तो ऐसा मालूम हुआ कि वे प्रतिक्षण सिहर रहे हैं । उनके शरीर के तार-तार टूट-से रहे थे । शायद उनमे से होकर जितना वोल्टेज इस वक्त चालू था, इतना बर्दाश्त करने के लिए वे बने नही थे ।

वह डरते-डरते बोली—बाबा, आप ही कान लगाकर सुनो । मेरे कान तो इस कार्य के लिए और भी बेकार है ।

पर न बाबाजी को कुछ सुनना पडा, न श्यामा को । घुडसवार पुलिस के जवान घोडो समेत, लोगो को कुचलते, गिराते, मारते हुए, कडाही की तरफ बढे और पता नही क्या हुआ कि श्यामा ने देखा कि कडाही इस ढग से उलट दी गई है कि आग लगभग बुझ गई । सैकडो आदमियो पर गरम पानी के छीटे पडे । कलछुल और खपच्चिया जाने कहा गई । वह जब कुछ सोचने लायक हुई तो उसने देखा कि वह कडाही के स्थान से, जहा अब भी कुछ लकडिया धुआ दे रही थी, पचास गज दूर हट चुकी है, पर उसने देखा कि उसके हाथ मे बाबाजी का हाथ है और वह लडकी तारा बाबाजी की दूसरी तरफ है ।

अब बाबाजी को वे मूर्तिया दिखाई नही दे रही थी, वे बोले—मेरा हाथ छोड दो, तुम लोगो ने मेरा हाथ क्यो पकड़ रखा है ? मुझे जाने दो ··

श्यामा बोली—बाबा, हमने तो आपका हाथ नही पकड रखा है । चलिए कहा चलना है ?

भीड बिल्कुल तितर-बितर हो चुकी थी । अवश्य पचास के लगभग आदमी वही मैदान मे लेटे हुए थे और विभिन्न प्रकार की चोटो के कारण कराह रहे थे । कुछ लोग कराहते-कराहते भी जयकारा लगाने का प्रयत्न कर रहे थे ।

बाजी ने कहा—मैं तो उसी तरफ जाऊगा।—कहकर उन्होने कडाही की फ इशारा किया।

श्यामा बोली—हम भी चलेगे।

तारा बोली—मै भी चलूगी।

श्यामा ने तारा के इस होड की गन्ध से भरे कथन को पसन्द नही किया। र अब न प्रेम जताने का समय था न घृणा दिखाने का। इतिहास का लोहा रम होकर लाल पड चुका था, अब उसपर जोरो से घन की चोट पड रही थी क भविष्य उसमे से रूप ग्रहण करे। सोचना अब अवान्तर और अप्रासगिक ा। इस समय तो वास्तविक कार्य हो रहा था।

बाबाजी लडखडाते हुए (लडखडाते हुए इसलिए कि इस बीच उनपर तीन-वार लाठिया पड चुकी थी, जिसका उन्हे पता नही था) आगे बढने लगे और उन्होने गिरे हुए गरम पानी पर पैर रखकर उसे पार करते हुए कडाही का छल्ला पकड लिया। उसके अन्दर झाका तो देखा कि थोडा पानी अब भी है। उन्होने उसे सीधा करना चाहा और जोर से नारा लगाया—महात्मा गाधी की जय !

साथ मे श्यामा और तारा ने भी जय बोली। सुनकर कराहने वाले चुप हो गए और एक सनसनी-सी फैल गई।

रामनारायणसिह सब-इसपेक्टर के नेतृत्व मे पुलिस वाले आज का तमाशा खतम हुआ समझकर जाने की तैयारी कर रहे थे कि उन्होने बाबाजी तथा उन दोनो स्त्रियो के द्वारा बोला हुआ जयकारा सुना। उन्होने उधर देखा तो केवल एक बूढा और दो स्त्रिया दिखाई पडी।

रामनारायणसिह के मन ने कहा कि इनकी अवज्ञा करनी चाहिए। ये भला क्या कर लेगे ?

इतने मे फिर से वही जयकारा हुआ। घायलो मे से एक व्यक्ति उठकर उस तरफ जाने लगा, जिधर बाबाजी कडाही का छल्ला पकडे मूर्तिमान चुनौती की तरह ज़मीन पर नही बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य के वक्षस्थल पर खडे थे। पर वह जा नही सका क्योकि उसके एक पैर मे बुरी तरह चोट आई थी। वह बीच रास्ते मे ही रुक गया और चिल्लाकर बोला—महात्मा गाधी की जय !

बाबाजी ने फिर से कडाही को चूल्हे पर रखने की चेष्टा की, इसमे उन दोनो तरुणियो ने भी हाथ बटाया, पर उनकी सम्मिलित शक्ति उस स्थानच्युत

कडाही को उठाने मे समर्थ नही हुई। इसपर तीनो मिलकर गला फाडकर चिल्लाए—महात्मा गाधी की जय !

अबकी बार कुछ लोग जो पुलिस की लाठियो के आगे भाग गए थे, वे इक्के-दुक्के बाबाजी की तरफ आने लगे। रामनारायणसिंह ने यह बात देखी तो उसने समझ लिया कि अब या तो बिल्कुल खिसक ही जाना चाहिए, नही तो इस नये अभियान के विरुद्ध लोहा लेना ज़रूरी होगा।

वह सोच ही रहा था कि उसे दूर से तसद्दुक अहमद की मोटर का हार्न सुनाई पडा। जैसे गोपियो के विषय मे कहा जाता है कि वे अन्य सकडो बासुरियो मे से कृष्ण की बासुरी की ध्वनि पहचान लेती थी, उसी प्रकार रामनारायणसिंह तसद्दुक अहमद की कार का हार्न पहचानता था।

उसके शरीर मे एकदम बिजली-सी दौड गई और वह बात की बात मे कडाही के पास जा पहुचा। उसने बाबाजी की लम्बी और सफेद दाढी देखी तो उसे बहुत गुस्सा आया। जैसे भीष्म पितामह इच्छामृत्यु की सामर्थ्य रखते थे वैसे ही अपनी किस्म के तमाम अमलो की तरह रामनारायणसिंह को इच्छाक्रोध की सामर्थ्य प्राप्त थी, यानी गुस्से का कोई भी मौका न हो, फिर भी जरूरत के अनुसार उसे गुस्सा आ जाता था और उसके शरीर मे क्रोध के सारे लक्षण दृष्टिगोचर होने लगते थे यानी चेहरा तमतमा जाता, आखे लाल हो जाती, नथुने फडकने लगते, होठ फरफराने लगते और हाथ मे जो कुछ भी होता, उसकी गति उस अभागे के सिर या शरीर की ओर होने लगती, जिस-पर क्रोध करने की जरूरत थी।

उसने हटर ऊचा करके बाबाजी से कहा—बुड्ढे, तू नही मानता, अभी चला जा, नही तो यही पर ढेर हुआ दिखाई देगा।

अब तक तारा बाबाजी के एक प्रकार से पीछे थी, पर यह सुनकर वह आगे आकर खडी हो गई और मानो मुह चिढाती हुई बोली—महात्मा गाधी की जय !

इतना कहना था कि बघेल क्षत्रिय वश के कुलप्रदीप, अपने को साक्षात् सूर्य का वशधर मानने वाले ठाकुर रामनारायणसिह ने अपना हटर बाबाजी पर चलाया, पर वह तारा को लगा। तारा ने और भी जोर से चिल्लाकर कहा—भारतमाता की जय ! महात्मा गाधी की जय !

जब साक्षात् सूर्य के वंशधर ने रास्ता दिखा दिया तो भला चन्द्र तथा वभिन्न ऋषि-मुनियो से अपने को उतरे हुए मानने वाले सिपाही कैसे चुप .हते ? इस बीच मे इधर-उधर से बीस-पच्चीस व्यक्तियो ने आकर बाबाजी और कडाही को चारो तरफ से घेर लिया । श्यामा पर भी हटर पडे । जब चन्द्र और सूर्य तथा ऋषि-मुनियो के वशधर आगे बढ गए, तो पुलिस वालो मे जो मुसलमान थे और अपने को अरब के कुरैशी या और किसी अन्य प्रसिद्ध वश के प्रदीप मानते थे, वे भी पिल पडे और इस प्रकार फिर एक बार छोटे पैमाने पर ही सही वह दृश्य उपस्थित हुआ जो थोडी देर पहले इसी मैदान मे उपस्थित हुआ था ।

रामनारायण को पता नही क्या सूझा, वह हटर लेकर श्यामा पर पिल पडा । बाबाजी ने कडाही छोड दी और श्यामा की आड करके खडा होना चाहा ।

इतने मे तसद्दुक अहमद वहा आ गया । उसे थोडी देर पहले रिपोर्ट मिली थी कि यहा सत्याग्रही तितर-बितर कर दिए गए हैं, पर वह श्यामा और बाबाजी को देखकर समझ गया कि परिस्थिति क्या है । इतने मे उसकी आख तारा पर पडी । उसके चेहरे पर हटर का एक दाग दिखाई दे रहा था जो कान पर से होकर गले तक पहुच गया था ।

उसने भीड चीरते हुए प्रवेश किया और रामनारायण से कहा—अरे, यह तो बनर्जी साहब की लडकी है । इसे क्यो मार रहे हो ?

उसने बाबाजी के सामने खडी तारा का हाथ पकडकर खीचा और एक क्षण मे ही वह भीड के बाहर थी । पता नही तसद्दुक अहमद को देखकर या कि जो अन्तिम लाठी पडी थी उसके कारण तारा के पैर लडखडाए और वह गिरने वाली ही थी कि तसद्दुक अहमद ने उसे अपनी कार मे डाल लिया और मोटर चलने लगी ।

बाबाजी और श्यामा ने शायद यह बात देखी । बाबाजी ने चिल्लाकर कहा—देखो लडकी को वह बदमाश लिए जाता है ।—कहकर वह शायद कडाही छोडकर उस तरफ लपकने ही वाले थे कि उन्होने देखा कि रामनारायण श्यामा पर अपना हमला जारी रखे है ।

वे इस उधेड़बुन मे पडे कि किसकी रक्षा करे । सहजबुद्धि के कारण

उन्होने श्यामा को अपनी गोद मे दबा लिया। इतने मे एक लाठी उनकी कनपटी पर पडी और श्यामा को लिए हुए वे गिर पडे।

बाकी लोग या तो तितर-बितर हो गए या वही गिर पडे।

जब घटे भर बाद आनन्दकुमार, रूपवती और कबीर अन्य लोगो के साथ घायलो की तलाश करते हुए वहा पहुचे तो उन्होने देखा कि श्यामा पडी हुई है। उसे कई जगह चोट आई थी और श्यामा से लिपटकर करीब-करीब उसके ऊपर बाबाजी पडे हुए है। उनका प्राण-पखेरू उड चुका है, पर इस समय भी वे ऐसे पडे हुए थे मानो श्यामा की रक्षा कर रहे हो।

कबीर यह दृश्य देखकर रो पडा। रूपवती ने उसे अपनी गोद मे ले लिया और आनन्दकुमार का इशारा पाकर अलग चली गई।

साथ मे आए हुए डाक्टरो ने श्यामा का प्रथम उपचार किया। इसके बाद उसे उठाकर घर ले जाया गया। बाबाजी तो उस लोक मे पहुच गए थे जहा न तो साम्राज्यवाद का अत्याचार उन्हे छू सकता न मित्रो का उपचार

## २१

जिस दिन मेघाणी से अमिताभ की बहस हुई थी, उसी दिन से उन्होने निश्चय कर लिया कि अब उससे बचकर चलना है, फिर भी उन्होने उसी दिन शाम को देखा कि मेघाणी को वे भले ही भूल चुके हो, पर मेघाणी उन्हे नही भूला है।

सन्ध्या समय मेघाणी एक छोटी-मोटी भीड जमा करके व्याख्यान-सा दे रहा था, कह रहा था—जो देखो सो महात्मा जी के पीछे चल देता है। यह नही सोचते कि यह कोई शिवजी की बरात नही है। इसमे तो वही लोग आएं जो सम्पूर्ण रूप से महात्मा जी के सिद्धान्तो मे आस्था रखते हो। मै एक-एक आदमी को जानता हू, जो अपने को अहमदाबाद का रहने वाला उत्तर भारतीय बताता है, पर मै कह सकता हू कि वह क्रातिकारी है, वह सत्याग्रह को क्राति

। परिणत करने की दुराशा लेकर आया है'

अमिताभ ने और सुनना आवश्यक नही समझा। सच तो यह है कि आगे मेघाणी की बाते सुनने का अवसर ही नही आया।

इसके अगले दिन गाधी जी गिरफ्तार कर लिए गए थे और उनके साथ-साथ देर-सबेर मे कुछ और लोग भी गिरफ्तार हुए थे। अमिताभ भी पास ही सीना तानकर खडे रहे, इधर-उधर घूमते-फिरते रहे, फिर भी जब उन्हे गिरफ्तार नही किया गया तो वे समुद्र की ओर चले गए। वे गम्भीर चिन्तन करते रहे, पर किसी परिणाम पर नही पहुच सके। एक-दो दिन और निकल गए।

चटगाव या डाडी ?

डाडी या चटगाव ?

डाडी और चटगाव ?

इस उधेड-बुन मे यह क्या हो रहा है कि न चटगाव है, न डाडी है। नही, डाडी तो है, पर पुलिस वाले गिरफ्तार न करे तो उसमे अपना क्या कसूर ?

वे सोचते हुए पास वाले कस्बे मे चले गए जहा २४ घटे पुराना अखबार पहुंच जाता था। किसी तरह एक अखबार प्राप्त किया और उसमे आंदोलन की खबरे देखी। एक-एक खबर ली जाए तो कुछ भी नही थी, पर सामूहिक रूप से उसका अर्थ स्पष्ट था। देश—आसमुद्रहिमाचल देश अगडाई लेकर जाग रहा था और नमक बनाने के मिस से ही सही ब्रिटिश साम्राज्य का सिहासन डगमगाए दे रहा था।

खबरे पढते-पढते एकाएक उनका ध्यान काशी की खबरो पर गया। बाबाजी मारते-मारते मार डाले गए थे।

उस शुभ्रकेश निरीह वृद्ध का यह अन्त !

श्यामा मारते-मारते बेहोश कर दी गई थी। उसे शायद छ महीने तक बिस्तरे से उठने की नौबत न आए।

और यह क्या ? जिसपर आनन्दकुमार ने इतना बडा बयान दिया, स्वय पुलिस कप्तान सत्याग्रहियो मे से एक जवान लडकी को उठाकर ले गया !

वह लडकी भी कौन थी, भूतपूर्व पुलिस-कप्तान रतन बनर्जी की पुत्री, जो सत्याग्रह मे भाग ले रही थी ! ··

उसकी मा का भी बयान था कि लडकी तब से घर लौटी ही नही।

सारी खबरे पढकर अमिताभ बहुत उत्तेजित हो गए। अत्याचार और मारपीट तो समझ मे आती है, पर एक अत्यन्त सम्मानित वयोवृद्ध व्यक्ति को इस तरह मारते-मारते मार डालना, श्यामा-ऐसी सुप्रसिद्ध महिला-नेत्री को मृत समझकर ही मारपीट मे निवृत्त होना और तिसपर, ·

तारा की बात तो वे सोच ही नही सके। यह राष्ट्रीय आन्दोलन की चरम विजय थी कि बनर्जी जैसे कुख्यात पुलिस-कप्तान की लडकी भी आदोलन मे कूद पडी थी। (अवश्य अमिताभ के मन मे कही पर एक खटका भी था) उसे इस प्रकार गायब कर देना बहुत ही लज्जाजनक बात थी। यह लज्जाजनकता उन सब लोगो के लिए थी जो इस समय राष्ट्रीय आदोलन मे भाग लेने का दम भरते थे ···

क्या नारी के अपमान और घर्षण को भी उसी प्रकार से इस आदोलन का एक अपरिहार्य अग मान लिया जाए जैसे जेल और लाठीचार्ज को मान लिया गया ? जेल और लाठीचार्ज तो दो पद्धतियो के बीच सघर्ष के सूचक है, पर नारी के अपमान को (अमिताभ जान-बूझकर इससे आगे सोच नही रहे थे) तो एक व्यक्ति का अपराध ही मानना पडेगा और वैयक्तिक ढग से ही उसका जवाब भी देना पडेगा। मुहतोड, जबडातोड, हड्डीतोड जवाब !

यद्यपि वहा से समुद्र बहुत दूर था, फिर भी अमिताभ टहलते हुए वहा पहुचे और अपने को शात करने के लिए समुद्र के खारे पानी मे अपना खारापन धोने की चेष्टा करने लगे। बहुत देर तक वे समुद्र-स्नान करते रहे। इसमे उन्हे इतना आनन्द आता रहा कि एक बार वह एक लहर के साथ दूर पहुच गए। यद्यपि वे तैरना जानते थे, पर नदी के तैरने और समुद्र के तैरने मे काफी फर्क होता है और उन्हे ऐसा प्रतीत हुआ कि शायद वे न लौट सके, पर अगले ही क्षण एक बृहत्तर लहर ने आकर उन्हे उस लहर के चगुल से छुडा दिया और उन्हे तेजी से लाकर समुद्र-तट पर पटक दिया। पटखन इसलिए लगी कि वे बहुत थक चुके थे और अपने को तत्काल सम्भाल नही सके।

जब वे उठे तो उन्हे कुछ ऐसा लगा जैसे अब वे अकेले नही है। तो क्या कोई उनका पीछा कर रहा है या · ?

एक क्षण के लिए उन्हे लगा कि कोई अशरीरी आत्मा है, पर वे अगले

क्षण लहरो के साथ सुर मिलाकर हस पडे और कपडे पहनने लगे। सारा रीर खारा हो रहा था। उन्होने कई बार थूका और लोकालय की तरफ चलने ो तैयार हो गए।

थोडी दूर चले थे कि उन्हे फिर लगा कि वे अकेले नही है। केवल समुद्र ी लहरो का गर्जन नही, कोई और आहट भी सुनाई पड रही थी जैसे कोई ास ले रहा था। वे रुक गए।

क्या हो सकता है ?

अरे कोई जानवर होगा। वे निश्चिन्त होकर चलने लगे। अक्सर यहा जानवर घूमा करते है। ये जानवर समुद्र के बहुत पास नही जाते, पर समुद्र से विशेष डरते भी नही।

वे चलने लगे। धीरे-धीरे फिर उनके दिमाग पर आज के अखबार मे पढी हुई खबरे छाने लगी। अखबारो से किस प्रकार आन्दोलन की समग्रता का अनुभव होता है! निस्संदेह भारत मे राष्ट्रीय भावना बढाने मे इन अखबारो का बहुत बडा भाग है।

अभी रेत वाला भाग पार ही हुए थे और पहला बडा पेड आया था कि उन्होने देखा, उसके नीचे एक छायामूर्ति खडी है।

उसे देखकर वे फौरन ही पहचान गए कि यह तो मेघाणी है।

तो ?

एक साथ सैकडो प्रश्न उनके मन मे आए। एक बार उनका हाथ कमर मे उस जगह पर गया जहा हमेशा सालो से आग्नेयास्त्र रहा करता था। मेघाणी पीछा क्यो कर रहा है? जरूर ही इधर-उधर और लोग होगे! सम्भव है पुलिस की कोई टुकडी आसपास छिपी हो। तो आश्रमवासी मेघाणी पुलिस का एक खुफियामात्र है? इतने सालो से वह आश्रम मे रहता आया है, पर इसलिए‥ ‥

अमिताभ मेघाणी के पास गए और कडककर बोले—मेघाणी, तुम मेरा पीछा कर रहे हो ?

मेघाणी बोला—हां।

—तुम्हे शरम नही आती कि तुम सालो उस महान् विभूति के साथ रहे, फिर भी तुमपर उनका कोई असर नही पडा ? कोरे के कोरे रह गए ?

मेघाणी बोला—यही तो मुझे भी ताज्जुब है।

पृष्ठ-सगीत के रूप में समुद्र-गर्जन सुनाई पड रहा था। अमिताभ ने सोचा, क्यो न मैं इस दुष्ट को उचित सजा दू और यही मार कर डाल दू। सबेरे तक इसे जानवर खा ही जाएगे और किसीको कानोकान कुछ पता नही होगा कि इसका क्या हुआ। हा, यदि साथ मे पुलिस की टुकडी है, तब तो सिर पर एक हत्या और डाली जाएगी, पर उससे कुछ फर्क नहीं आता क्योकि जैसे तीन हत्याएं लगी हुई हैं, वैसे ही एक और सही। दो बार तो फासी होने की नही।

अमिताभ आगे बढ गए और उन्होने मेघाणी का गला पकड लिया। पर मेघाणी ने किसी प्रकार प्रतिरोध नही किया और जोर से हस पडा।

अमिताभ समझे यह हसना कोई सिगनल है और उनपर चारो तरफ से दस-बीस सिपाही टूट पडेगे। उनकी आख एक क्षण के लिए बन्द भी हो गई।

मेघाणी ने गला छुडाने की कोशिश न करते हुए कहा—रामदास, अब आपने मेरी शका का समाधान कर दिया ·····

अमिताभ ने उसका गला छोड दिया। उसे तो वह किसी भी हालत मे जब चाहे तब मार गिरा सकते थे। बोले—शका कैसी ? यही न कि मैं क्रान्तिकारी हू ?

—जी।

—इसीलिए तुम मेरे पीछे पड़े और अब मुझे गिरफ्तार कराना चाहते थे।

अबकी बार फिर मेघाणी हसा और बोला—आप मुझे बहुत तुच्छ समझ रहे है। मैं गिरफ्तार कराना नही गिरफ्तार होना चाहता हू।

अमिताभ ने पूछा—क्या मतलब है ?

तब मेघाणी ने धीरे-धीरे जो कहानी सुनाई वह इस प्रकार है:

वह अपने कालेज का बहुत अच्छा छात्र था। मा-बाप उसे एम० ए० करने के बाद उस युग की उच्च शिक्षा सम्बन्धी धारणा के अनुसार विलायत भेजकर पढाना चाहते थे। वह भी मा-बाप की इच्छा पूर्ण करना चाहता था। इतने मे महात्मा गाधी की पुकार आई जिसके फलस्वरूप उसने पढने-लिखने, भविष्य, उच्चाकाक्षा सबको तिलांजलि दे दी और वह उनके पीछे हो लिया। तब से वह आश्रमवासी है।

मा-बाप बार-बार समझाते रहे, पर वह नही लौटा। १९२२ मे भी वह जेल गया और तब से महात्मा गांधी के साथ छाया की तरह लगा रहा। डांडी-

ा के अवसर पर जो आश्रमवासी गाधी जी के विशिष्ट साथियो के रूप मे गए थे उनमे वह हो सकता था। पर उन्ही दिनो वह बीमार पड गया और न दिन बाद यात्रा कर सका। तब से वह चल रहा है।

मेघाणी बोला—जब महात्मा जी ने डाडी मे नमक बनाया फिर भी रफ्तार नही हुए, तब मैंने देखा कि किस प्रकार महात्मा गाधी भी अन्धकार टटोल रहे है। वही से आस्था कम हुई, फिर आपसे बातचीत हुई, यद्यपि ापने अपने को नही खोला, पर आपके तर्कों ने चोट की और मैंने सोचा, आपसे ल खोलकर बातचीत करनी चाहिए। पर खोल तो पुरानी थी, भीतर ही ोतर विस्फोट जितना करीब आ रहा था, ऊपर से मै उतना ही कड़ा पड रहा ा, यहा तक कि मैंने महात्मा जी से भी कहा कि आपके साथ कुछ क्रान्तिकारी ग के लोग हैं जो आपके सिद्धान्त मे विश्वास नही करते है, उनका पर्दाफाश करना चाहिए। वे हमारे आन्दोलन को गदला कर रहे है, उसके नैतिक स्तर को नीचे ले जा रहे हैं। महात्मा जी ने इसपर कोई ध्यान नही दिया। बोले : तुम सत्य पर डटे रहो। शायद उन्होने मेरी कमज़ोरी पहचान ली थी।

—आज भी मैंने आपके विरुद्ध व्याख्यान दिया, पर व्याख्यान देते-देते आपकी पीठ मुझे दीख गई और मै आपके पीछे-पीछे भागा। मैने सोचा, देखना चाहिए यह कौन है। मेरा मन कहता था कि या तो आप क्रान्तिकारी है या गुप्तचर ····

इसपर अमिताभ हसे। बोले—मैं पछता रहा था कि मैंने आपको गुप्तचर समझा। यह अच्छा हुआ कि आपने भी मुझे ऐसा समझा, इस प्रकार बदला हो गया। अजीब बात है कि मै लगभग तीन घटे समुद्र-स्नान करता रहा और आप अंधेरे मे मेरी प्रतीक्षा करते रहे।

मेघाणी बोला—मैंने सोचा या तो आप गुप्तचर है और पश्चात्ताप के कारण आप समुद्र मे डूबने गए है, और नही तो आप अवश्य लौटेगे। मै आज रात भर आपकी प्रतीक्षा करता।

अमिताभ और मेघाणी साथ-साथ पास की बस्ती मे गए। रात अधिक हो चुकी थी, फिर भी मेघाणी के कारण कुछ खाने को मिल गया, फिर दोनो मे बातचीत शुरू हुई।

अमिताभ ने यह तो बता दिया कि हा मैं क्रातिकारी हू, पर यह नही बताया कि मैं अमुक हू। घटो यह बातचीत चलती रही।

अन्त मे अमिताभ ने कहा—मैं कट्टर हू पर कट्टरपथी नही हू। मैं यह समझता हू कि स्वतन्त्रता-आन्दोलन मे जो भी जिस दृष्टि से भाग ले रहा है, वह सही काम कर रहा है। चटगाव श्रेष्ठ है या डाडी, यह तो इतिहास ही बतलाएगा।

फिर उन्होने वक्तव्य को संशोधित करते हुए कहा—यदि किसी विशेष मार्ग को सफलता मिली तो केवल उसीसे किसी विशेष मार्ग की श्रेष्ठता प्रमाणित नही होगी। इतिहास मे सफलता तो अन्त मे आने वाले को मिलती है, पर जिन असफलताओ ने उस सफलता का निर्माण किया, वे भी उतनी ही महत्वपूर्ण है।

मेघाणी का मन शान्त हो चुका था और यह निश्चित हुआ था कि वह जैसे कार्य कर रहा था वैसा ही करेगा।

अगले दिन दस बजे वह अमिताभ को रेल पर चढाकर जब लौटा तो उसका मन बहुत शान्त था। वह एक बदला हुआ आदमी था। उसने इस महासत्य को हृदयगम कर लिया था कि लक्ष्य भले ही न प्राप्त हो, पर मार्ग उसी तरफ का होना चाहिए। यह ज़रूरी नही है कि एक लक्ष्य का एक ही मार्ग हो।

## २२

अर्चना ने प्रेमचन्द को चुनौती-सी देते हुए कहा—अपने-पराए सब थू-थू कर रहे है, यदि अब भी तुम चुपचाप रहते हो, तो मैं स्वय ही उस कार्य को करने के लिए विवश होऊगी।

प्रेमचन्द्र ने कहा—अर्चना यह न भूलो कि हर काम की एक साइत होती है, उसके पहले उसे करना गलत होता है।

अर्चना ने सोचा कि प्रेमचन्द फिर एक बार मकडी की तरह अन्तहीन तर्क-जाल फैलाने वाला है, जिसका कोई ओर-छोर नही है। यदि इस वाग्जाल से कुछ निकलता तो बात और थी, पर यहा तो केवल तर्क के लिए तर्क किया जाता है।

अब उसकी पक्की धारणा हो गई थी कि प्रेमचन्द कुछ करना नही चाहता। ह झुझलाकर बोली—छोडो इन व्यर्थ की बातो को। मै तुम्हारे साथ कोई म्बन्ध नही रखना चाहती। बस, कृपा करके वह पिस्तौल लौटा दो, जिसे खने का अब तुम्हे कोई अधिकार नही है। महात्मा गाधी गिरफ्तार हो गए, ब्रिटिश साम्राज्यवाद भारत के वक्षस्थल पर ताण्डव नृत्य कर रहा है, यहा बनारस मे ही कितनी घटनाए हुईं। बाबाजी शहीद हुए और भी कई आदमी मारे गए, दो सौ आदमी अस्पतालो मे पडे हुए है। अजीब बात है कि ऐसी हालत मे भी तुम तर्क से आगे नही जा सके।

प्रेमचन्द ने जेब से सिगरेट निकालकर बड़े इतमीनान से कश लेना शुरू किया और धुए की तरफ आत्मश्लाघा के साथ देखते हुए कहा—दु.ख की बात है कि मनुष्य बुद्धिवादी प्राणी है। अर्चना तुम उतावलेपन में यह न भूलो कि तर्क ही क्रिया का जनक है। तर्क के बाद निश्चय होता है और निश्चय से क्रिया होती है। जो क्रिया तर्क के जनकत्व के अलावा होती है, वह दोगली होती है, वह कभी सफल नही हो सकती ' ....

अब की बार तो अर्चना बिल्कुल आपे से बाहर हो गई। बोली—तुम अपनी इन बातो को क्लास-रूम के लिए रख छोडो, जहा सब लोग तुम्हे फिलासफर कहेगे। यद्यपि मै जानती हू कि तुम्हारे क्षेत्र मे फिलासफी केवल निष्क्रियता और कायरता को ढकने का एक व्यर्थ प्रयासमात्र है। तुमने मुझे कही का नही रखा। तुम्हारे सहारे मैने मुख्यदल के विरुद्ध विद्रोह किया, उससे अलग हुई, पर तुमने मेरी सारी इज्जत धूल मे मिला दी। अब कृपया पिस्तौल मुझे वापस कर दो, मै किसीको बिना बताए टेगर्ट को स्वय मारूगी। फिर तुम मुख्यदल से और नये दल से निबटते रहना।

प्रेमचन्द पैर फैलाकर कश लेना जारी रखते हुए बोला—तुम्हारा प्रस्ताव काफी रोमाटिक है, पर जीवन आश्चर्यो का आकर है। जिस बात की लोग कल्पना भी नही करते, वह कभी-कभी हो जाती है, फिर भी केवल रोमाटिक उडानों से इतिहास का सृजन नही होता। कोई भी सृजन नही होता। प्रकृति सबसे बडी सर्जक है, पर वहा क्या है, शुरू से आखिर तक गणित है। तुम्हे तो दर्शन शास्त्र से चिढ है, पर प्रकृति तो निरे गणित से परिचालित होती है जो दर्शन-

शास्त्र से कही नीरस और गूढ है। कम से कम कुछ नही तो प्रकृति से ही सबक लो।

कहकर प्रेमचन्द ने सिगरेट का एक कश बहुत ज़ोर से खीचा और अर्चना की तरफ वह धुआ तेजी से फेका। इसका वाछित परिणाम हुआ। अर्चना क्रोधावेश मे उठ खडी हुई, थर-थर कापती हुई बोली—तुम्हे शरम नही आती कि तुम मेरे साथ ऐसा व्यवहार कर रहे हो। तुम्हारे पीछे मैं बदनाम हुई, पहले यह बदनाम हुई कि मेरा तुमसे अवैध सम्बन्ध है, और अब यह बदनाम हुई कि मैं एक कायर की प्रेमिका हू और बनती क्रान्तिकारिणी हू।

इसपर भी प्रेमचन्द के रुख मे कोई परिवर्तन नही हुआ। वह तिनकी हुई अर्चना की गालियो मे वैसा ही रस ले रहा था जैसे एक सपेरा अभी-अभी पकडे हुए साप को नचाने मे रस लेता है। बोला—तुम नाम को इतना महत्व क्यो देती हो ? यह तो बिल्कुल तृण पर शिशिर-बिन्दु की तरह है। अभी है और अभी नही। महर्षि वाल्मीकि पहले डाकू थे। उन्होने जाने कितने गृहस्थों का बधिया बैठाया होगा, पर बाद को उन्होने रामायण लिखी और लोग उन्हे महर्षि कहने लगे। इसलिए बदनामी और नाम दोनो कोई महत्व नही रखते। महाकाल मे अन्ततोगत्वा दोनो एक ही हैं। उनमे कोई अन्तर नही।

अर्चना बिल्कुल ही बौखला उठी थी। बोली—तुमसे बढकर नीच और कायर कोई हो ही नही सकता। केवल बाते, बाते, बाते ? जैसे बातो के सिवा दुनिया मे कुछ है ही नही।

प्रेमचन्द की सिगरेट खत्म हो रही थी, इसलिए उसने उसे बुझाकर राख-दान मे रख दिया और दूसरी सिगरेट जला ली। बोला—क्रोध मे भी मनुष्य कभी-कभी बहुत बाते कह जाता है, जिनपर पैगम्बर रश्क करते है। सचमुच बातो के सिवा और दुनिया मे है ही क्या ? यो तो उस प्रसिद्ध श्लोक मे कहा गया है कि आहार, निद्रा, भय और मैथुन नर और पशुओ मे सामान्य हैं और धर्म के कारण ही मनुष्य पशु से बडा है। पर असली तत्व यह है कि मनुष्य बात कर सकता है जबकि दूसरे जानवर बात नही कर सकते। बडे-बडे महाग्रथ क्या हैं ? केवल बडे लोगो की बातो के सग्रह और इन्ही सग्रहो को पाथेय बनाकर सभ्यता का रथ बराबर आगे चलता रहा है।

इसपर अर्चना क्रोध के कारण सुबक-सुबककर रोने लगी। प्रेमचन्द ने

नती हुई सिगरेट ऐशट्रे पर रख दी और कमर से पिस्तौल निकालकर कहा—
स्वयं पिस्तौल ले आया था····

प्रेमचन्द इतना ही कह पाया था कि अर्चना ने झपटकर उसके हाथ से
ास्तौल छीन ली और उसे प्रेमचन्द की ओर तानते हुए बोली—मै दल का
ाम तो बाद को करूंगी, पहले अपना हिसाब निबटा लू। मैं पहले तुम्हे
ारूंगी, फिर यदि जीवित रही तो टेगर्ट की हत्या करूंगी।—कहकर उसने
ोडे पर अगुली रखी।

इसपर प्रेमचन्द जोर से हस पडा, बोला—तुमने तो उर्दू कवि के उस
कथन को सार्थक करके दिखला दिया कि 'लडते है और हाथ मे तलवार नही।'
अरे पहले उसमे गोली तो भर लो।

कहकर प्रेमचन्द ने अपनी जेब से गोलियो का एक पुलिदा निकालकर
अर्चना को देना चाहा, पर अर्चना को रिवाल्वर मे गोली भरना तो आता था,
पिस्तौल मे गोली भरने का कभी मौका नही लगा था। क्रान्तिकारी आदोलन
मे यह कोई नई बात नही थी। गोलियो के अभाव के कारण अच्छे क्रान्तिकारियो
को भी गोली चलाने का अभ्यास करने का विशेष अवसर नही मिलता था।

अर्चना ने पिस्तौल मेज पर कुछ झटके के साथ पटक दी। इसके बाद वह
एक कुर्सी पर बैठ गई और बुरी तरह रोने लगी। वह चाहती नही थी कि
प्रेमचन्द के सामने रोए, इसलिए उसने कुर्सी का मुह दीवार की ओर कर लिया।

प्रेमचन्द उठा, उसने पिस्तौल भर ली, फिर घूमकर अर्चना के सामने जाते
हुए कहा—अब पिस्तौल भरी हुई है, घोडा दबाने भर की देर है। तुम चाहो
तो मुझे मार सकती हो, पर मै तो टेगर्ट के ही बगले पर जा रहा था। इस
समय आठ बज रहे है और वह आठ बजकर बीस मिनट पर बंगले से निकलकर
पुलिस-लाइन जाने वाला है। मैं उसी समय उसका काम तमाम करने के लिए
जा रहा था। अब तुम चाहो तो मुझे मार डालो, इससे और कुछ नही तो
टेगर्ट की प्राणरक्षा होगी और तुम्हे उसके परिवार वालो की दुआएं मिलेगी।

—अर्चना को अपने कानो पर पहले तो विश्वास नही हुआ, पर उसने जब
प्रेमचन्द के हसते हुए तरुण बुद्धिदीप्त चेहरे की ओर देखा, तो उसे विश्वास हो
गया कि वह अब तक मज़ाक कर रहा था और अब जो कह रहा है वही सत्य
है। वह बिजली की तरह तडपकर उठी और उसने प्रेमचन्द को आलिगन मे

बाध लिया और ओठो के सामने उसके शरीर का जो भी हिस्सा आता गया, उसे पागलो की तरह चूमती रही। एक बार, दो बार, सैकडो बार····

प्रेमचन्द ने भी उसको हृदय से लगाया, पर अधिक निविड रूप से नहीं। मज़ाक करने को तो उसने किया था, पर उसके मन के तार अब दूसरे ही सुर मे बध चुके थे। वहा अर्चना का अस्तित्व था, पर अधिक नही। बोला—मैंने आकर तुमसे इधर-उधर की बाते इसलिए की थी कि तुम चिढ जाओ और मुझे बुरा-भला कहो। कहोगी कि यह कौन-सी विपरीत वृत्ति है? देखने मे अवश्य विपरीत है, पर बहुत विपरीत नही है। यदि मैं तुम्हे इस प्रकार चिढाने मे समर्थ न होता तो आज की ये स्मृतियां इतनी विविध कैसे होती? मुझे तो शायद इन्ही सीमित स्मृतियो को पाथेय बनाकर फांसीघर मे जीना है।···

दोनो शान्त होकर अगल-बगल बैठ गए थे। अर्चना की आखे अभी तक गीली थी, पर उसके चेहरे पर जैसे एक लाख मोमबत्तियां एक साथ जल रही थी। बोली—तुम्हारे लिए तो मज़ाक की बात हो गई, पर मुझसे तुमने कितनी ही गालिया दिलवाईं। मेरे लिए तो यह स्मृति सुखकर नही होगी। मैं तो यही सोचती रहूगी कि जब तुम जा रहे थे, तो मैने तुम्हे गालिया दी और ऐसी गालिया दी जो क्रान्तिकारी तो क्या कुत्तो के लिए भी बहुत भारी होती।

प्रेमचन्द ने जल्दी से घडी की ओर देखा और वह उठ खडा हुआ। उसने कहा—तुमने मुझे गालिया नही दी, कायर को दी, उस कायर को दी जो दर्शन शास्त्र की आड लेकर कुछ करने-धरने से बचता है··

कहकर उसने जाने के लिए पैर बढाया। अर्चना ने दौडकर उसके पैर छुए और बोली—प्रियतम, आशीर्वाद दो कि तुम्हारे बाद मै तुम्हारे योग्य हो सकू।

चलते हुए प्रेमचन्द ने कहा—तुम रुक्मिणी दीदी के लहजे मे बात कर रही हो।

प्रेमचन्द चौखट से बाहर निकल चुका था, पर अर्चना ने कहा—सब पत्नियो का आदर्श रुक्मिणी भले ही न हो, पर सब प्रेमिकाओ का आदर्श रुक्मिणी हमेशा, हर युग मे रहेगी; यह मैं अब समझने लगी हू।

प्रेमचन्द ने लौटकर कहा—अर्चना, सत्य के भी स्तर होते हैं। पहले सत्य आता है, फिर बृहत्तर सत्य। जब सत्य तुम्हारे अन्तर मे बलपूर्वक प्रविष्ट होना चाह रहा है, तब तुम प्रतिरोध न करो। यही मेरा कहना है। फेमिनिज्म सत्य

पर रुक्मिणी दीदी बृहत्तर सत्य हैं····

प्रेमचन्द चलने लगा। अर्चना बोली—बताते जाओ क्या मैंने कभी प्रतिरोध या ··?

—नही—कहकर प्रेमचन्द लम्बी-लम्बी डगे भरकर चला गया। अर्चना हृदय मे इस समय जो भावनाए उठ रही थीं, वे हर्ष की थी या दु ख की, वह समझ नही पाई, पर उसे ऐसा अनुभव हुआ कि सारी दुनिया सूनी है, सका कोई नही है, वह बिल्कुल एकाकी है। जैसे पुष्प से उसका रूप और न्ध छिन गए हो···

## २३

अमिताभ को एकाएक सामने खडा देखकर श्यामा बिस्तर मे उठकर बैठने की चेष्टा करने लगी।

अमिताभ ने उसे आज्ञामूलक इगित से रोक दिया। श्यामा की यह दशा देखकर उनके जबड़े और कस उठे। बोले—रहने दो बहन। कबीर कहा है ?

श्यामा ने कुछ बताया, पर यह स्पष्ट था कि अमिताभ कबीर का अता-पता लेने या स्वास्थ्य पूछने नही आए थे। बोली—आपका अज्ञातवास समाप्त हो गया ?

अमिताभ एक शिशु की तरह हसे, बोले—हां।

श्यामा ने कहा—मैं जानती हू, आप किसलिए आए हैं। आप मुझसे वह धरोहर मागने आए हैं जिसे आप जाते समय मेरे पास छोड गए हैं।

अमिताभ शायद इस कथन से बहुत खुश नही हुए। कोई उनके विचारो को पढ ले, यह उन्हे रुचता नही था। मेधाणी से वह इसी कारण नाराज हुए थे कि उसने वास्तविकता का अनुमान कर लिया था। बोले—बात कुछ ऐसी ही है।

श्यामा उन्हे कुर्सी पर बैठने का इशारा करती हुई बोली—पर यह दु.ख

की बात है कि आपको अज्ञातवास छोड़कर भागना पडा ।

—दु.ख की क्यो ?

—इसलिए कि नौजवान आगे नही बढ़े तभी आपको सामने आना पड रहा है। पर आप ऐसे पुराने लोग कितने हैं ? जब वे बीन लिए जाएगे तो फिर कौन इस परम्परा को चलाएगा ?

अमिताभ कुर्सी पर बैठ गए और एक गोल मेज़ पर रखे हुए गुलदस्ते के फूलो को सस्नेह सहलाते हुए बोले—कम से कम मुझे इसकी चिन्ता नही है। मनुष्य अपना ही कर्तव्य कर सकता है, दूसरो को अपने उदाहरण से रास्ता दिखला सकता है और समझा सकता है। इससे आगे न तो मै सोचता हूं और न सोचने की ज़रूरत समझता हू। यदि लक्ष्य मे कुछ दम है, तो नए लोग पैदा होगे और वे काम को आगे बढाएगे।

श्यामा अबकी बार एकदम उठ बैठी। बोली—आप डरिए मत मैं बैठ सकती हूं, मेरी असली चोटे सिर पर हैं, यह न समझिए कि मै जोश मे आकर बैठ रही हू।

अमिताभ ने देखा कि चोटो को कम करके बताया जा रहा है। दोनो हाथ लकडी मे बधे हुए थे, सिर पर तो पट्टिया थी ही, पर वे कुछ नही बोले। एक बार कनखी से दीवार पर लगे हुए यूसुफ के चित्र की ओर देखा और उनके माथे पर बल पड गए।

श्यामा कहने लगी—आपने प्रेमचन्द की करतूत देख ली न ?

—यहा आने पर मालूम हुआ। उधर तो कुछ पता नही लगा था।

श्यामा बोली—प्रेमचन्द टेगर्ट के बगले मे एक झाडी की ओट मे छिपकर खडा था। वह शायद टेगर्ट के निकलने की प्रतीक्षा कर रहा था। पर आप सिगरेट के इतने शौकीन है कि झाडी के अन्दर भी खड़े-खडे सिगरेट पी रहे थे। किसीने देख लिया और गिरफ्तार हो गए।

—अखबार मे जो कुछ छपा है, उससे पता लगता है कि उसके पास पिस्तौल थी, पर गिरफ्तारी के समय उसने उसे सडक की तरफ फेक दिया। जब पुलिस वाले उस पिस्तौल की खोज मे सडक पर गए तो वहा कुछ भी नही मिला। इसलिए पुलिस हैरान है कि क्या मुकदमा चलाए।

श्यामा बोली—हां, पुलिस का यह ख्याल है कि कोई व्यक्ति सडक पर

ा था और वह पिस्तौल लेकर भाग गया। जो कुछ भी हो, पुलिस वाले चन्द को जेल मे बुरी तरह मारपीट रहे हैं और उसके साथी यहा तक कि ाना बहुत घबडा रही है।

—घबडा क्यो रही है ? वह फासी से तो बच ही गया, बहुत होगा सात ल की सजा होगी।....

श्यामा बोली—वह इसलिए घबडा रही है कि कही प्रेमचन्द कष्टों से घबडा र मुखबिर न बन जाए। वह मुझसे इस सम्बन्ध मे मिलने आई थी।

अमिताभ के माथे पर बल आ गए। बोले—क्रान्तिकारी आन्दोलन की इसी त मे कई लोग बहुत खिन्न रहते है। वे कहते है कि यहा कोई किसीका एतबार ही करता।

—है कुछ बात ऐसी ही। पर इससे दूध का दूध पानी का पानी हो जाता । इस आन्दोलन मे वही बडा हो सकता है जो आग मे तप-तपकर कुन्दन हो या हो।

अमिताभ बोले—यह बात तो सही है।

श्यामा की जीभ पर यह प्रश्न लगभग आ गया था कि आप क्या करने जा हे है, पर वह चुप रही। बोली—तारा का अभी तक पता नही लगा है। उसकी ा कल आई थी और बहुत रो-धो रही थी।

—वह तो टेगर्ट के पास भी गई थी, पर उसे सर्वत्र वही जवाब मिला कि हम कुछ नही जानते। भीड मे से कोई आदमी उसे भगा ले गया है।

इसपर श्यामा उत्तेजित होकर बोली—मैने तो खुद अपनी आख से देखा था कि तसद्दुक उसे अपनी मोटर पर ले गया है।

—पर और किसीने नही देखा ?

श्यामा बोली—एक और आदमी ने देखा था, पर वह अब गवाही देने के लिए नही आ सकता।

दोनो मानो मृत व्यक्ति के सम्मान मे कुछ क्षण चुप रहे। वे एक ही बात सोच रहे थे।

अमिताभ कुछ कहने ही जा रहे थे कि इतने मे वहा तारा की मा आ गई। वह श्यामा के साथ एक अजनबी को देखकर ठिठककर खडी हो गई।

श्यामा ने कहा—यह मेरे बडे भाई है। बहुत दिनो बाद प्रवास से लौटे है।

तारा का कुछ पता लगा ?

—नही ।—कहकर शायद वह रोना शुरू करना चाहती थी। बोली—वे इतने बडे अफसर थे और उनकी बेटी की यह हालत। और उसी आदमी ने यह हालत बनाई है, जिसको उन्होने स्वय आगे बढाया था।

इसपर और कुछ कहना सम्भव नही था। यह स्वय ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध एक बहुत कडवी टिप्पणी थी। तारा की मा की आखो से आसू जारी थे।

अमिताभ ने आखो-आखो मे श्यामा से कुछ इशारा किया और बोले—क्या इनकी लडकी खोई है ?

श्यामा ने दिखावे के तौर पर सक्षेप मे सारी कहानी कह सुनाई।

अमिताभ ने सारी घटना सुनकर जेब से एक कागज निकालकर उसपर कुछ लकीरे बनाईं और कहा—आप कोई चिन्ता न करे।

तारा की मा श्यामा से बोली—क्या तुम्हारे भाई कोई ज्योतिषी है ?

श्यामा ने कहा—बडे भारी। यह भूत, भविष्य, वर्तमान सब बता सकते है। बात स्वय बताए तभी बताते है, किसीके पूछने पर कुछ नही बताते। जब इन्होने कह दिया कि आप चिन्ता न करे तो आप समझ लीजिए कि कोई चिन्ता की बात नही है।

तारा की मा ने आसू पोछते हुए कहा—पर मन तो नही मानता। हर समय मन तो यही कहता है कि कुल मे कलक लग गया।

अमिताभ ने आश्वासन देते हुए कहा—मैने कह दिया कि आप कोई चिन्ता न करे। आपकी बेटी बिल्कुल सुरक्षित है। उसपर उस राक्षस के सारे पैंतरे व्यर्थ गए है। उल्टे उसने उसकी नाक मे दम कर रखा है।

तारा की मा को इन बातो पर पूरा विश्वास नही हुआ, बोली—क्या बेटा, यह सच है ? मैं तो इसी डर से मरी जा रही हूं कि यदि अब बेटी मिली भी तो मै उसे लेकर क्या करूगी।

अमिताभ ने दृढता के साथ कहा—मै आपको वह जगह भी बता देता हूं, जहा वह कैद है, पर अभी आप शोर करेगी तो वे उसे और कही हटा देगे, इसलिए आप जानकर भी अनजान बनी रहे तो अच्छा है। दुर्गाकुण्ड मोहल्ले के एक मकान मे वह इस समय है, जिसका नम्बर इतना है—कहकर उन्होने एक

र बताया ।

साथ ही उन्होने चेतावनी दे दी कि अभी आप चुप रहे । उस दुष्ट के ग्रह ाब जा रहे हैं। मैंने गणना करके देखा है कि जल्दी ही उसका मृत्यु- ा है । उसके बाद आप अपनी बेटी का उद्धार करे ।

तारा की मा ने तो इन बातो को सरल श्रद्धा से लिया, जिसमे आधा श्वास था और आधा अविश्वास । पर श्यामा ने इन वाक्यो मे यह सुन लिया नो तसद्दुक अहमद का मृत्युदण्ड सुनाया जा रहा हो । वह समझ गई कि ोहर के लिए अमिताभ इस समय क्यो आए थे ।

तारा की मा बोली—मैंने सुना है कि यदि कुणाल जी जिन्दा होते तो अब क तसद्दुक को अपनी करनी की सज़ा मिल जाती । कहते है कि वह सब कुछ ह सकते थे, पर स्त्रियो का अपमान कभी नही सह पाते थे ।

अमिताभ बोले—कुणाल जी नही रहे, पर उनकी लौ अभी बाकी है । जब- ाब ज़रूरत पडती है तो वह लौ किसी न किसी मे प्रविष्ट हो जाती है और वही फेर कुणाल बन जाता है । वह लौ कभी बुझ नही सकती ।

तारा की मा बोली—बेटा, तुम जो बात कह रहे हो, वह सच हो । मैं बहुत परेशान हू । क्या मैं दुर्गाकुण्ड मे जाकर उसे एक बार देख सकती हू ?

अमिताभ ने दृढता के साथ कहा—नही, उसपर देख-रेख रखने वाले यक्ष छोड दिए गए है । कोई उसका बाल भी बाका नही कर सकता, न उसे छू सकता है । जिस समय पापी के पाप का घडा भर जाएगा, उस समय यक्ष उसे लाकर आपके पास पहुचा देगे ।

यक्ष वाली बात से तारा की मा प्रसन्न नही हुई । बोली—कही यक्ष उसे कोई नुकसान तो नही पहुचाएगे ?

इसपर श्यामा बोली—नही वह यक्ष ऐसे नही हैं जो किसीको नुकसान पहुचाए, काफी पालतू किस्म के हैं । आप निश्चिन्त होकर घर जाइए । जब यक्षो ने इस कार्य मे दिलचस्पी लेनी शुरू कर दी तो जानिए कि पूर्ण सिद्धि होगी । —कहकर उसने अपने प्रवास से लौटे हुए भाई की तरफ देखा और कहा—इन्हे कुछ चढावा आदि चढाने की ज़रूरत तो नही है ?

अमिताभ ने गम्भीर होकर कहा—विधवा जानकर यक्ष बिना चढावा लिए ही इनका कार्य सिद्ध करेंगे ।

तारा की मा अर्ध आश्वस्त और अर्ध भीत होकर वहा से चली गई, जैसे लोग कालीबाडी मे पशुबलि देखकर लौटते है ।

वह अभी गई ही थी कि श्यामा ने उत्तेजित होकर पूछा—क्या आपने तय कर लिया ?—कहकर उसने अर्थपूर्ण ढग से इगित किया।

अमिताभ बोले—हा, हमने बहुत सोचकर काम किया, बल्कि मैने इस सम्बन्ध मे दल की केन्द्रीय समिति के लोगो से भी बातचीत कर ली है ।

—पर मैं तो यह समझ रही थी कि आपका विश्वास अब ऐसे कार्यो पर नही रहा और आप जन-आन्दोलन की तरफ आकृष्ट हो रहे है।

—तुम्हारा अनुमान ठीक है। आतंकवाद की ज़रूरत तो नही है, पर प्रत्यातंकवाद की ज़रूरत हमेशा रहेगी। विशेषकर जहा शत्रु द्वारा फैलाया हुआ आतक अराजनैतिक या वैयक्तिक किस्म का हो वहा उसका तुर्की-बतुर्की जवाब देना ही पडेगा। उन्होने बाबाजी जैसे एक ज्ञानी-मानी वृद्ध को मारते-मारते मार डाला, सैकडो अन्य लोगो को देश भर मे मारा और मार रहे है, तुम्हारी तरह प्रतिष्ठित स्त्रियो तक पर मार-पीट हो रही है, इसका मुझे अब गम नही है क्योकि यह सूचित करता है कि शत्रु के पैर उखड रहे है। यह आतक राजनैतिक किस्म का है। हम इसका जवाब जन-आदोलन को और तीव्र करके देंगे, पर तसद्दुक ने इस गडबड का फायदा उठाकर जो गुडागर्दी शुरू की है, उसका जवाब तो देना ही पडेगा।

—मै केवल विषय को और अच्छी तरह समझने के लिए पूछ रही हू, क्या स्त्रियो पर इस तरह का अत्याचार, जैसा तसद्दुक करना चाहता है, अन्ततोगत्वा राजनैतिक नही है ? क्या इस प्रकार उसे वैयक्तिक करार देकर आप ब्रिटिश साम्राज्यवाद को उससे कम घृणित चित्रित नही कर रहे है जितना कि वह है ?

अमिताभ ने कहा—जो तुम कह रही हो, उसमे भी सचाई है। सब ब्रिटिश अफसर जानते है कि तसद्दुक ने एक लडकी भगा रखी है, पर वे चश्मपोशी इसलिए कर रहे है कि वे अच्छी तरह समझते है कि यदि इस तरह स्त्रियो पर ज्यादती होगी तो स्त्रिया फिर राजनैतिक आदोलन मे भाग नही लेगी। कम से कम उन्हे आदोलन मे कूदते समय सोचना पडेगा कि उनका सतीत्व भी खतरे मे पड सकता है।

बाते करते हुए काफी समय हो चुका था। अमिताभ ने घडी की ओर
ा और वे चलने को हुए। इतने मे उधर से किसीकी आहट हुई। अर्चना
ी पर चढ रही थी। अमिताभ ने कहा—अर्चना आ रही है, मै उससे मिलना
ी चाहता।

—पर मैं क्या करू, मै तो बाहर जा नही सकती कि उसे वही रोक लू।
-श्यामा ने बडी असहायता के साथ कहा।

अमिताभ फौरन अल्मारी के पीछे छिप गए। छिपने के इस स्थान को
न्होने पहले से ही देख रखा था।

अगले ही क्षरण अर्चना उस कमरे मे आ गई। उसका सुन्दर गोरा चेहरा
कदम काला पडा हुआ था। बाल बिखरे हुए थे जैसे कई दिनो से प्रसाधन ही
ही किया। आखो के नीचे स्याही थी और ऐसा मालूम होता था जैसे अभी-
भी रोकर आई है।

श्यामा ने उसे आदर के साथ अपने बिस्तरे पर इस ढग से बैठाया कि उस-
ी पीठ अल्मारी की तरफ हो। अर्चना ने आते ही कहा—बहुत ही भयकर
ात हो गई। अब तो मेरे लिए आत्महत्या के अलावा कोई चारा नही रहा।

—क्यो, क्यो ?—श्यामा ने भय-विह्वल नेत्रो से पूछा।

अर्चना कुछ हिचकिचा रही थी। सत्य उसे ऐसा कटु लग रहा था कि
ह उसका उच्चारण करते हुए डरती थी। बोली—मेरा तो सर्वनाश हो गया' ''

श्यामा ने पूछा—कौन-सी ऐसी बात हो गई ? क्या कोई गिरफ्तार हो गया
ा तुम्हारे अस्त्र-शस्त्र पकडे गए।

अर्चना ने लगभग सिसकते हुए कहा—दीदी, इनसे भी बुरी बात हुई।—कह-
र वह फफकने लगी।

श्यामा बोली—क्या प्रेमचन्द ने आत्महत्या कर ली ? तुम कहती थी न
के वह जेल मे इस कारण बहुत दुखी है कि काम भी नही कर पाया और जेल
हुच गया।

अर्चना और भी दुखी होकर बोली—यदि वे आत्महत्या कर लेते तो मैं
ससार मे सबसे सुखी स्त्री होती, पर उन्होने तो वह कार्य किया है, बल्कि वे
ऐसा कार्य करने जा रहे हैं जिससे न केवल मेरा बल्कि सारे दल का सिर नीचा
होगा। उनके कृत्य के कारण मुझे आत्महत्या करनी पड़ेगी।

श्यामा समझ गई कि प्रेमचन्द जेल मे कमज़ोरी दिखा रहा है और अर्चना को यह डर है कि कही वह सरकारी गवाह न हो जाए। बोली—तुम्हे जो खबर मिली है, वह गलत भी तो हो सकती है। पुलिस वाले हमेशा ऐसी बात उडा दिया करते हैं। कबीर के पिता के विषय मे भी यह उड़ा दिया गया था कि वह दिन-रात घुल रहे हैं और पता नही क्या हो। तुम ऐसी खबरो पर क्यो परेशान हो रही हो ?

अर्चना प्रतिवाद करती हुई बोली—मैं गलत खबर पर बिल्कुल नही चल रही हू। उनके अपने हाथ की लिखी हुई चिट्ठी मुझे मिली है, तब मैं ऐसा सोच रही हू। यह देखिए वह चिट्ठी—कहकर उसने आचल मे से पेंसिल से लिखी हुई एक चिट्ठी पेश कर दी।

श्यामा ने उसे पढा तो उसके भी पैरो के नीचे से ज़मीन खिसक गई। वह पत्र बिल्कुल प्रेमचन्द की बातचीत की शैली मे था। उसमे लिखा था

प्रियतमे,

जीवन बडा ही विचित्र है। कई बार उसमे ऐसे मोड आते है जो बिल्कुल अप्रत्याशित होते है। मैंने जेल की एकात कोठरी मे बैठकर चिन्तन किया तो मुझे ऐसा लगा कि हम तो खेलवाड कर रहे हैं। कहा प्रबल प्रतापशाली ब्रिटिश साम्राज्यवाद और कहा हम मुट्ठी भर सिर-फिरे हुए क्रातिकारी। हम समझते है कि क्रातिकारियो ने जो कुछ किया अच्छा किया; पर प्रश्न यह नही है कि अच्छा किया या बुरा किया, प्रश्न यह है कि क्या जो कुछ किया गया, वह कुछ परिणामदायक है ?

राजनीति की भाषा मे भावुकता का स्थान अवश्य है, परन्तु उसकी भाषा भावुकता को भी परिणाम की कसौटी पर कसती है। यदि परिणाम कुछ नहीं है तो उच्च से उच्च कोटि की वीरता व्यर्थ है। यह तो उसी तरह है जैसे कोई सडक पर नाव चलाना चाहे।

मैं इस उपसहार पर पहुचा हू ( मैं विश्वास दिलाता हू कि इसमे भय का कोई अश नही है) कि क्रातिकारी आदोलन एक व्यर्थ आदोलन रहा। इसके कारण कितने ही होनहार युवको और युवतियो के जीवन नष्ट हो गए। मैं यह आशा करता हूं कि तुम मेरे साथ सहमत होगी। मैं जानता हू कि बहुत-से लोग मुझे कायर समझेंगे, शायद सभी कायर समझे, परन्तु नैतिक साहस का सबसे

उच्च पर्याय वह नही है, जब कि लोग हमे बहादुर समझ रहे हो और हम फासी पर चढ रहे हो, बल्कि वह अवस्था है जबकि हमे कायर समझ रहे है, फिर भी हम कर्तव्य-पथ पर अविचलित है।

मैं चाहता हू कि तुम और तुम्हारे सब साथी साहसपूर्वक उस दुश्चक्र से निकलकर फिर एक बार जीवन के बृहद् आकाश के नीचे आ जाए।

मैं यह भी समझ रहा हू कि जीवन का सबसे बडा सत्य प्रेम है। मानव और मानवी का प्रेम! इससे बढकर कोई सत्य नही है। मै तुम्हारी सहमति की प्रतीक्षा कर रहा हू। मुझे विश्वास है कि तुम पत्रवाहक के हाथ पत्र भेजकर मुझे नैतिक साहस प्रदान करोगी। मै तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षा मे रहूगा। आशा है कि हम दोनो शीघ्र ही स्वतन्त्र होकर, केवल जेल से स्वतन्त्र नही, बल्कि सही अर्थ मे स्वतन्त्र होकर मिलेगे।

तुम्हारा ही
प्रेमचन्द

श्यामा ने एक बार तो उस पत्र को चुपचाप पढा, फिर दोबारा अलमारी के पीछे छिपे अमिताभ को सूचना देने के लिए जोर से पढा। पत्र को पढ लेने के बाद उलट-पुलटकर फिर से देखा और बोली—यह पत्र उन्हीके द्वारा लिखा हुआ है न?

—हा, बिल्कुल उन्हीका लिखा हुआ है।

—भाषा भी उन्हीकी है? ऐसा तो नही कि किसीने जबर्दस्ती लिखवाया हो और उन्होने लिखा हो।

—भाषा उन्हीकी है, बल्कि जब मैने इस पत्र को पढा तो ऐसा लगा जैसे वे मुझसे बोल रहे हो?

श्याम बोली—फिर?

अर्चना ने कहा—उसीके लिए तो आपके पास आई हू। यो तो मैने फौरन उसी वाहक के हाथ पत्र का उत्तर दे दिया, पर आगे क्या होगा दीदी, यह तो बताइए।

श्यामा ने वाक्य का अन्तिम अश जैसे सुना ही नही, बोली—तुमने क्या लिखा? कही तुमने ऐसा पत्र तो नही लिखा जिससे तुम भी फस जाओ?

अर्चना पहली बार अपनी स्वभाव-सिद्ध बुद्धि-प्रखर हसी हंसती हुई बोली

—नही, मैंने कोई ऐसी बात नही लिखी। उल्टा मैंने उन्हे पागल सिद्ध करने की चेष्टा की।

—कैसे ?

अर्चना ने एक दूसरा कागज निकालते हुए कहा—यह रहा उस पत्र का मसविदा। जो पत्र असल मे गया है, वह इससे कुछ अच्छा ही है।

श्यामा ने अबकी बार पत्र लेकर पहले से ही ज़ोर-ज़ोर से पढना शुरू किया :

श्रद्धेय अध्यापक जी,

आपका पत्र पढकर मुझे बडा आश्चर्य हुआ। आप कल्पना-लोक मे विचरण करते-करते टेगर्ट के बगले पर चले गए और वहा शायद यह समझकर सिगरेट पी रहे थे कि उस धुए से ही उसका वध हो जाएगा। पुलिस वालो पर भी मालूम होता है कि आपके काल्पनिक जगत का असर हुआ है और वे यह समझते है कि आपके पास कोई पिस्तौल थी जिसे आपने मन्त्र बल से गायब कर दिया। मैंने तो आपके पास एकमात्र आग्नेयास्त्र जो अब तक देखा, वह था सिगरेट लाइटर। रही दल आदि की बात, उस सम्बन्ध मे भी मैं आपकी कल्पना की प्रशसा करती हू। मैंने तो कभी किसी दल से सम्बन्ध नही रखा। हां, यदि राजनैतिक नेताओ और शहीदो के रिश्तेदारो से मिलना जुर्म है तो वह जुर्म मै करती रहती हू। आशा है कि आप अपना दिमाग ठीक करेगे और मृगमरीचिका के पीछे दौड़कर अपनी विद्या और बुद्धि का अपमान नहीं करेगे। उसी हालत मे मै आपको एक मित्र के रूप मे स्वीकार कर सकती हू। अन्यथा नही।

भवदीया ··· इत्यादि··· ···

श्यामा पत्र पढकर बोली—तुमने बहुत सारगर्भित पत्र लिखा। यह पुलिस के किसी काम का नही है। साथ ही जो कहना चाहिए वह पत्र के अन्त मे कह दिया गया है।

अर्चना बोली—अब मै क्या करू ? मैंने सुना रोज़ तसद्दुक उनके साथ घटे दो घटे बिताता है। मार-पीट भी जारी है। मुझे बडा डर लग रहा है।

श्यामा बोली—मैं इस सम्बन्ध मे क्या कहू ? स्वय उठ नही पाती हू, यहा तक कि चाचाजी से जेल मे मिलने भी नही जा पाती। तुम घटनाओ की प्रतीक्षा करो और मुझसे रोज़ मिलती रहो।

अर्चना अब तक दृढता से बात करती रही, पर चलने का समय हुआ जानकर वह एकदम से बिना किसी पूर्व सूचना के टूट गई। सिसकती हुई बोली—दीदी, बडे ही दु ख की बात है कि वे इस प्रकार कमजोरी दिखा रहे है। यह बात सच है कि उनपर अमानुषिक अत्याचार हो रहा है, पर इसके लिए तो वे तैयार थे। अब वे एकाएक टूट कैसे गए ? मुझे तो सारा मामला बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण मालूम हो रहा है, पहली कमजोरी का परिचय तो उन्होने तब दिया जब कि वे किसी न किसी बहाने से इतने दिनो तक ऐक्शन टालते रहे और जब मौका आया तो उसका प्रयास इस तरह टाय-टाय फिस्स हो गया। मुझे तो यहा तक सन्देह हो रहा है कि वे पिस्तौल लेकर टेगर्ट के बगले पर गए ही नही। उन्होने पिस्तौल गगाजी मे डाल दी और फिर दल के चगुल से बचने के लिए वहा जाकर सन्देहजनक परिस्थिति मे गिरफ्तार हो गए। अब जब थोडी-सी तकलीफ पडी तो वे न केवल स्वय मुखबिर बन रहे है, बल्कि सबको मुखबिर बनने का निमन्त्रण दे रहे है। काश मै यह विश्वास कर सकती कि उन्होने जो पत्र लिखा है, वह उनसे जबर्दस्ती लिखाया गया है। यदि जबर्दस्ती पत्र लिखाया भी गया तो वे इतने विद्वान् आदमी है, उसमे कही कोई इशारा भी डाल देते, जिससे मैं समझ जाती······

श्यामा अर्चना से सहमत थी, बोली—अजीब बात है। यह तो ऐसी बात है कि विश्वास नही होता। मैंने तो प्रेमचन्द को हमेशा एक आदर्शवादी युवक के रूप मे ही जाना।

अर्चना ने लगभग विलाप करते हुए कहा—मुझे कभी उनके आदर्शवाद पर सन्देह नही हुआ। हा, वे कुछ मिलबिल्ले और दूसरी तरफ बातूनी बल्कि बात करने, बात का बतगड बनाने, हर बात पर उद्धरण देने के आदी थे, पर इन बातो से वे और भी प्यारे तथा सजीव मालूम होते थे। यह मैं कैसे जानती कि इस हसने-हसाने और बडी-बडी बातो के पीछे उनकी कमजोरी छिपी है।

श्यामा ने सान्त्वना के तौर पर कहा—ऐसा क्रान्तिकारी आन्दोलन मे अक्सर हुआ है कि कई बार आदर्शवादी युवको का भी पतन हो गया है। यह बात है कि इसमे परीक्षा बडी कठिन होती है। आघात कभी-कभी इतना भयकर होता है कि कसीकी रीढ़ में जरा भी कमज़ोरी हुई तो वह पट् से टूट जाती है, फिर भी प्रेमचन्द के विषय मे ऐसा विश्वास करने को जी नही चाहता

है क्योकि वह तो बडा सुलझा हुआ युवक लगता था। मुझे तो ऐसा मालूम होता था कि वह जीवन को जिस हसोडपन से लेता है, मृत्यु को भी उसी प्रकार हलकेपन के साथ ले सकता है। सच मानो अर्चना, मुझे कई बार उसकी बातें सुनकर ग्रीक दार्शनिकों की याद आती थी।

ग्रीक दार्शनिक शब्द सुनकर ही अर्चना विह्वल हो गई। जैसे उसके किसी बहुत ही अनुभूतिशील तार पर आघात पडा और वह झनझनाकर रह गया। वह बोली—दु ख तो यह है कि मै उन्हे अपनी जान देकर भी अपमान के इस गह्वर से बचा नही सकती, नही तो सच कहती हू दीदी, अभी जाकर उन्हे गोली मार देती और फिर अपने को गोली मार लेती। इस प्रकार सारे दु खों का अन्त हो जाता।

कहकर वह फिर एक बार अपनी असहायता पर सिसकने लगी। इसके बाद वह अपने को सम्हालने का प्रयत्न करने लगी, पर इसमे काफी देर लगी। जब वह सम्हल गई तब बिना कुछ कहे उठकर चली गई जैसे वह सबसे यहा तक कि अपने से भी बेगाना हो चुकी हो।

उसके जाने के बाद अमिताभ ने प्रकट होकर कहा—परिस्थिति बहुत ही खतरनाक हो रही है। मैं जहा तक प्रेमचन्द को समझ पाया हू, वह इस प्रकार कमज़ोर दिल नही मालूम होता था, जितना कि अब दिखाई पड रहा है, पर यह बहुत कठिन मार्ग है। कुछ भी हो सकता है।

श्यामा ने दोनो पत्र रख लिए थे। अमिताभ ने उन्हे उलट-पुलट कर देखा और प्रेमचन्द के पत्र को देर तक सू घने के बाद बोले—है तो यह जेल से ही लिखा हुआ पत्र। बैरक लिस्ट का कागज फाडकर उसपर लिखा गया है, जिससे मालूम होता कि प्रेमचन्द ने अफसरो के सामने यह पत्र नही लिखा है। यदि अफसर इसे मार-मारकर लिखवाते तो वे अच्छा कागज़-कलम आदि देते।

—तो ?

—तो कुछ भी नही। जैसा तुमने कहा कि घटनाओ की प्रतीक्षा करनी चाहिए, वही एकमात्र नीति है।

उन्होने घडी देखी, उनका जबडा तन गया, पिस्तौल के सम्बन्ध मे पूछा और एक सक्षिप्त-सा अभिवादन करके जैसे बाप बच्ची को करता है, वहा से निकल पडे।

## २४

आनन्दकुमार, अध्यापक प्रसाद आदि सभी इस बात से बहुत परेशान थे कि तसद्दुक प्रतिदिन जेल मे आता है और प्रेमचन्द से घण्टो घुल-घुलकर बाते करता है। जब वह चला जाता है तो उसके बाद पुलिस वाले उसे जेल के गोदाम मे ले जाते है और वहा उसपर मार पडती है।

मनोविज्ञान का जनप्रिय अध्यापक और उसपर इस तरह मारपीट ? आनन्द-कुमार का कहना यह था कि उसपर रोज़ मार इसी कारण पड रही है, कि पुलिस शायद उसमे कुछ कमजोरी देख रही है। वह उसकी कोमलता और सज्जनता से धोखे मे पडती है · ·

नम्बरदारो और कैदियो से घटे-घटे की खबर मिलती रहती थी। एक बात समझ मे नही आती थी कि एक तरफ तो प्रेमचन्द को सारे सुख दे रहे थे। खाने को बढिया से बढिया मिलता था। चारपाई, मशहरी सभी कुछ थी। दूसरी तरफ कोई उस हाते मे घुस नही पाता था। उसे पूर्ण एकान्तवास मे रखा जाता था। जिस समय सफैया झाडू लगाने जाता था या भगी सफाई करने जाता था, उस समय भी उसके साथ दो वार्डर होते थे। दो वार्डर इसलिए होते थे कि सम्भव है एक वार्डर हो तो मिल जाए, पर दो होने के कारण वे मिल नही पाएगे· ····

हाते के फाटक पर जेलर का सबसे विश्वस्त वार्डर रामगुलामसिह खून के प्यासे बुलडाग की तरह डटा रहता था। उसके सम्बन्ध मे यह मशहूर था कि वह अपने बाप के साथ भी रियायत नही करता। कैदियो ने उसका नाम हड्डी-काट रख छोड़ा था, और जिस हाते मे उसकी नौकरी पड़ जाती थी, वहा के कैदी पनाह मागते रहते थे, क्योकि उसके समय मे दिन मे छ बार तलाशी क्या नगाझोरी होती थी और किसीकी मजाल क्या थी कि बाहर की कोई चीज़ भीतर या भीतर की चीज़ बाहर पहुंच जाए।

आज भी तसद्दुक दिन के दो बजे आने वाला था। वह आफिस मे ही प्रेमचन्द से मिलता था। डेढ़ का अद्धा बजते ही रामगुलाम ने जाकर सैनिक ढग से प्रेमचन्द को सलाम किया और बोला—बाबूजी, तैयार हो जाइए।

प्रेमचन्द इस समय अपने छोटे-से हाते के बाग मे कुछ काम कर रहा था। मुकदमा विचाराधीन था। इसलिए प्रतिदिन पिटाई कम्बल डालकर इस प्रकार से होती थी कि शरीर पर कोई चोट का निशान न आए, पर इससे क्या, अन्दर-अन्दर दर्द तो होता ही था, फिर भी प्रेमचन्द समय काटने के लिए बाग मे आकर बैठता और उससे जो कुछ बन पडता था, करता था। वृक्षो और लताओ के सान्निध्य मे उसे बडा आनन्द आता था। यद्यपि इस समय बहुत अधिक गर्मी थी, फिर भी एक कोना ऐसा था, जहा बैठने पर गरम हवा का असर जान नही पडता था। प्रेमचन्द वही बैठा रहता था। वह जानता था कि वह जहा भी बैठा हो, रामगुलाम की सतर्क दृष्टि उसपर बनी रहेगी। यो तो रामगुलाम उसीका आदमी था।

—हा॰ हा॰ हा॰॰ ॰॰॰॰बाबू जी अब दस मिनट रह गए।

प्रेमचन्द ने जल्दी से कपडे पहन लिए, कघी कर ली, बोला—अब दो ही एक दिन की बात है, उसके बाद मैं चला जाऊगा॰॰॰॰॰॰

रामगुलाम बोला—हा, यह किसी भले आदमी के लायक जगह नही है।

उत्तर मे प्रेमचन्द ने कहा—हां, कल मैं अन्तिम फैसला कर लूगा।

रामगुलाम के कान खडे हो गए। बोला—कैसे बाबू जी, कैसे ?

—तसद्दुक को सारी बाते बता दू गा।

रामगुलाम चाहता था कि फौरन यह बात जेलर को पहुचाए और इस प्रकार खैरख्वाही दिखाए, पर अब उसका अवसर नही था, इसलिए वह बहुत दु॰खी होकर बोला—चलिए॰॰॰॰॰॰

आगे-आगे प्रेमचन्द चला और पीछे-पीछे रामगुलाम। उसने जाते समय हाते मे बाहर से ताला बन्द कर दिया ताकि इस बीच वहा कोई कुछ रख न सके। यो तो आफिस जाने का सीधा रास्ता उस तरफ से पडता था, जिधर राजनैतिक कैदियो का हाता था, पर जेलर की आज्ञा के अनुसार रामगुलाम प्रेमचन्द को घुमाकर ऐसे रास्ते से ले जाता था, जहा से वह हाता दिखाई तो पडता था, पर किसी राजनीतिक कैदी से बातचीत करने का मौका नही लगता था।

तीन-चार दिन से राजनीतिक कैदी प्रेमचन्द के आने की बाट जोहते रहते थे और ज्योही वह दूर से दिखाई पडता, त्योही बडे जोर से वे 'भारत माता की

जय', 'महात्मा गाधी की जय' बोलते थे। प्रेमचन्द उनकी तरफ देखता नही था और सिर नीचा करके चला जाता था, पर आज उसने सिर ऊचा करके उस तरफ देखा और उसे ऐसा मालूम पडा कि आनन्दकुमार लोहे के जगलेदार फाटक के सामने वाली भीड मे खडे है और हाथ से इशारा कर रहे है।

जब प्रेमचन्द ने सिर उठाकर उस तरफ देखा तो उन लोगो ने अभिवादन के रूप मे बडे जोर से नारा लगाया—महात्मा गाधी की जय! ... ...

रामगुलाम ने प्रेमचन्द को आड मे कर लेना चाहा, बोला—क्या बताऊ बाबू जी, आप को तो इन लोगो मे रखना चाहिए था, मै भी छुट्टी पा जाता और आप भी। मैने घर जाने की छुट्टी मागी तो कहा, जब तक आपका मुकदमा तय नही होता, तब तक मुझे छुट्टी नही मिलेगी।

—तुम निश्चिन्त रहो। कल मै छूट जाऊगा।

रामगुलाम न तो खुश हुआ और न नाखुश क्योकि छुट्टी मागने वाली सारी बात ही झूठी थी। कैदी तो कहते थे कि उसने कभी छुट्टी ली ही नही और वह जेल मे ही मरेगा भी।

उस दिन तसद्दुक से बातचीत बहुत सक्षिप्त रही। तसद्दुक भी अधिक बातचीत करना नही चाहता था और प्रेमचन्द तो पहले से ही निश्चय करके आया था कि अधिक बातचीत नही करनी है। तसद्दुक ने आते ही मुस्कराते हुए पूछा—कहिए, क्या सोचा?

यद्यपि तसद्दुक मुस्करा रहा था, पर उसकी मुस्कराहट के अन्दर से उसके पैने दात उतने ही खतरो की तरह झाक रहे थे। उसका मतलब यह था—सारी बात बताओगे या आज भी पिटाई हो?

अवश्य उससे इस पिटाई का कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही होता था, पर बातचीत के बाद ही पिटाई होती थी, इसलिए किसके इशारे से यह पिटाई होती थी, यह स्पष्ट था।

प्रेमचन्द बोला—मैने तो आपकी बात मानने का निश्चय कर लिया है, पर एक बात मानिए, यहा मेरा मूड नही बनता। आप मेरी बैरक मे कल तशरीफ ले आए, वही पर इतमीनान से सारी बातचीत होगी। और हा, तीन-चार सिगरेट के पैकेट ज़रूर लेते आइएगा, उसके बिना तो सोचने का माद्दा ही खत्म हो जाता है।

तसद्दुक बहुत दुःखी था, क्योकि तारा के मामले मे वह बिल्कुल असफल रहा था, यो वह चाहता तो तारा को बलपूर्वक अपनी वासना की वेदी पर बलि चढा सकता था, पर उसपर न जाने क्या ज़िद सवार हो गई थी कि वह उसे समझा-बुझाकर राज़ी से काम निकालना चाहता था। उसने आज सुबेरे तारा से कहा था—हमारे यहा चार शादी तक जायज़ हैं, इसलिए मैं तुमसे शादी कर सकता हू, इसके लिए यह भी ज़रूरी नही कि तुम मुसलमान हो जाओ।

इसपर तारा ने गुर्राकर कहा था—तुम मेरे पिता जी के मामूली नौकर थे। उन्होने ही तुम्हे क्या से क्या कर दिया। अब तुम पुलिस कप्तान बन गए, अच्छी बात है, पर तुम मेरे शरीर पर अधिकार नही जमा सकते। तुम्हारे साथ शादी करने से मैं बिना खाए-पिए मर जाना अच्छा समझूगी···· ···

तसद्दुक ने इसपर कुछ नही कहा क्योकि तारा एक बार अनशन कर चुकी थी। उसने तीन दिन तक खाना नही खाया था, जब बहुत पैर-वैर पकड़ा गया तभी वह इस शर्त पर खाना खाने को राज़ी हुई कि किसी भी हालत मे वह उसे छूने की कोशिश नही करेगा।

थोड़ी देर बाद तसद्दुक ने सोच-साचकर कहा था—अगर तुम्हे इस बात की फ़िक्र है कि मेरी पहली बीवी मौजूद है, तो मै उसे तुम्हारी खातिर अलग कर देने को तैयार हू। तुम जैसा भी कहोगी, उसका वैसा ही बन्दोबस्त कर दिया जाएगा। कहो तो उसे निकाल दू या तलाक दे दू।

पर इतने पर भी तारा उसकी बात मानने के लिए राज़ी नही हुई थी। उसने नाराज़ होकर अन्तिमता के लहज़े मे कहा था—तुम कुत्ते हो, कुतियो से दिल बहलाओ, तुम्हे सिहनी से दोस्ती करने की जुर्रत नही होनी चाहिए। तुम अब भी पिताजी के किए हुए उपकारो को याद करो और मुझे छोड दो। —कहकर वह क्रोध मे रोने लगी थी।

इसपर तसद्दुक को क्रोध आ गया था और उसने कहा था—उन्हींकी वजह से मैं तुम्हारी बदज़बानी और ज्यादतियो को सह रहा हू, नही तो अब तक तुम्हें कही का कही पहुचा देता। मै तो तुम्हारे सामने अच्छा-खासा सवाल रख रहा हू कि तुम मेरी शादीसुदा बीवी हो जाओ, पर तुम नही मानती। जाने तुम अपने को क्या समझती हो

यह कहकर वह चला आया था। मन ही मन उसने तय कर लिया था कि

अब दो-तीन दिन मे इसका वारा-न्यारा करना ही है, यदि यह सीधे से नही मानती तो मजबूरी है। इतना लम्बा मौका दिया गया, फिर भी यह नही मानती तो क्या किया जाए। अब तो एक ही उपाय है ..

आज यदि इधर प्रेमचन्द भी टका-सा जवाब देता या खामख्वाह लटकाए रखता, तो वह यह तय करके आया था कि सब दिखावा भुलाकर वह स्वय हटर लेकर उसे तब तक मारेगा, तब तक मारेगा जब तक कि वह बयान देने को तैयार न हो जाए।

जब प्रेमचन्द ने आते ही हथियार डाल दिए और मुखबिर बनना स्वीकार कर लिया तो उसका क्रोध कुछ हल्का हुआ।

जीवन के एक क्षेत्र मे यदि सफलता मिलती है तो दूसरे क्षेत्र की असफलताए उतनी अखरती नही हैं। पर यदि उससे इस समय पूछा जाता, तुम किस क्षेत्र मे सफलता चाहते हो तो वह सौ बार कहता कि प्रेमचन्द भले ही मुखबिर न हो, न होगा तो उसका क्या बिगडेगा, पर तारा का राजी होना ज़रूरी है। जो कुछ भी हो, सम्भव है यह सफलता उस क्षेत्र की सफलता का भी सूचक हो। जब विपत्तिया आती है तो झुड बाधकर आती है और जब सफलताए आती है तो तरपराकर आती हैं।

यह सोचकर वह प्रफुल्लित हो गया। उसने कहा—कल क्यो, मै आज ही सिगरेट भेजवा देता हू, आपने पहले क्यो नही कहा ?

प्रेमचन्द ने सिगरेट जिस चाव से मागी थी, अब मिलने की निश्चित सम्भावना होने पर भी उस अनुपात से वह आह्लादित नही हो सका। बोला—मैं तो इसलिए अब तक आपसे माग नही सका कि यह जेल के नियमो के विरुद्ध है।

तसद्दुक की खुशी सरूर बनती जा रही थी। वह बोला—जेल के कानून की भली चलाई, कानून हमारे लिए है कि हम कानून के लिए है ?

इसके बाद वह उठ खडा हुआ और बोला—मैं आ जाऊगा, पर सब तैयारी रखिएगा, बल्कि एक मसविदा पहले से तैयार कर लीजिए तो अच्छा रहेगा।

प्रेमचन्द उठकर बोला—जी हां, सब ठीक रहेगा, हा, एक कैदी की हैसियत से मेरी हदे हैं, उन्हें तो आप जानते ही हैं।

तसद्दुक रोज़ की तरह चुपचाप नही बल्कि बडे तपाक से आदाब-अर्ज़ करके

चला गया और दफ्तर के बाहर जाकर फिर लौटकर बोला—अभी आपको ५५५ का एक डिब्बा और दियासलाई पहुच जाएगी।

यह स्पष्ट था कि वह इस समय बहुत ही आत्मप्रसाद में था। उसे इस समय दुनिया मे कोई काम ऐसा नही मालूम होता था जो वह न कर सके। वह फौरन ट्रक-काल करके मिस्टर जानसन को यह खबर देने वाला था।

उस दिन प्रेमचन्द को कम्बल ओढाकर पीटा नही गया और सचमुच थोड़ी ही देर में उसे सिगरेट का डिब्बा पहुचा दिया गया।

## २५

जिस समय अमिताभ और श्यामा मे वह बातचीत हो रही थी, जिसका वर्णन पहले एक अध्याय मे किया गया है, उस समय रामगुलाम आकर फिर एक बार (सबेरे से बीसवी बार) सारे हाते का मुआयना कर रहा था। उसने कहा—तो बाबूजी, आज यहा रहने का आपका आखिरी दिन है ˙ ˙

—हा और क्या ? कल इतने वक्त मैं घर पहुच जाऊगा।

रामगुलाम ने छुट्टी वाले झूठ की पुनरावृत्ति करते हुए कहा—मैं भी कल से छुट्टी पर चला जाऊगा।

प्रेमचन्द कुछ हसते हुए बोला—हा, यह तो मैंने सोचा ही नही था। मेरी छुट्टी के साथ तुम्हारी छुट्टी भी हो जाएगी, यह कितनी अच्छी बात रहेगी।

रामगुलाम बोला—जी हा और मेरा इनाम ? मैंने आपकी मगेतर के पास चिट्ठिया पहुचाई उसका इनाम मुझे कल जरूर मिल जाए।

प्रेमचन्द फिर हसा, बोला—अरे मैं कभी तुम्हारा एहसान भूल सकता हू ? तुमने मेरे साथ कितनी भलाई की। कल क्यो आज ही तुम्हे भी इनाम दे दूंगा। मेरी मगेतर बहुत खुश होगी।

रामगुलाम सब कुछ अच्छी तरह देखकर चला गया। सबेरे ही दो कुर्सिया और एक मेज आ गई थी। मेज पर एक मेज़पोश भी बिछा हुआ था। कलम-

दवात, पेंसिल, रबर के अलावा कागज़ के कुछ तख्ते भी रखे हुए थे। मेज़ पर एक सुन्दर ऐश-ट्रे भी था, जो राख से भरा हुआ था। न तो प्रेमचन्द ने राख साफ करने की परवाह की और न रामगुलाम ने ही उसे देखा। रामगुलाम तो केवल गैरकानूनी चीज़ो की तलाश मे रहता था। उसकी आखे ऐसी सधी हुई थी कि ऐसी चीज़ो पर जाती ही न थी, जो उसकी दृष्टि से कोई महत्व न रखती हो।

प्रेमचन्द रात भर सोया नही था। उसकी आखे ललौही हो रही थी। जीवन-मृत्यु का निर्णय था, कोई मामूली निर्णय नही। वह रातभर पेंसिल से कुछ लिखता रहा था। जो जमादार ड्यूटी पर थे, वे उसे झक्की तो जानते ही थे, उसके रात्रि-जागरण से उन्हे बिल्कुल आश्चर्य नही हुआ। वे सभी जानते थे कि कल यह व्यक्ति अपने साथियो के साथ विश्वासघात करके अपनी मुक्ति कराने वाला है। वे सरकारी नौकर होते हुए भी उसे भीतर ही भीतर घृणा की दृष्टि से देख रहे थे, पर ऊपर से वे बाबू जी, बाबू जी कहते रहे थे।

ठीक दो बजे तसद्दुक जेल के फाटक पर पहुचा। वहा जेलर ने उससे कहा—मै आपके साथ दो अर्दली कर दू ?

तसद्दुक बोला—नही, मेरे क्लायट बडा 'मूडी' है। मूड खराब हो गया तो कही दो-चार दिन और न दौडना पडे।

जेलर ने कहा—जैसी आपकी इच्छा, यो वहा जेल का सबसे पुराना हेड-वार्डर तो होगा ही।

तसद्दुक उस हाते से अच्छी तरह परिचित था, जहा इस समय प्रेमचन्द बन्द था। वह एक कैदी पक्के को साथ लेकर रवाना हो गया और रामगुलाम के सामने पहुचा। रामगुलाम ने फौरन फाटक खोल दिया और ऐसा इशारा कर दिया, जिससे प्रेमचन्द समझ जाए कि तसद्दुक आ गया है। रामगुलाम ने चाहा कि पक्के को बाहर खडा रखकर स्वय तसद्दुक के साथ रहे क्योकि यह जेल का नियम है कि बाहरी आदमियो के साथ कोई न कोई जमादार या सन्तरी रहता है, पर तसद्दुक ने इशारे से मना कर दिया और कहा—तुम बाहर रहो। कहू तो आ जाना।

रामगुलाम तो यह जानता ही था कि आज यह हाता खाली हो जाएगा, क्योकि प्रेमचन्द को यहा मुखबिर बनाने के लिए रखा गया था, जब वह मुख-

बिर बन गया तो फिर उसे यहा रखने का कोई अर्थ नही होता था। साथ ही वह यह भी जानता था कि प्रेमचन्द आज ही छोड नही दिया जाएगा, जैसी कि वह अ शा कर रहा है। मुखबिर बनते ही कैदी इस्तगासे के लिए बडी भारी सम्पत्ति बन जाता है, इसलिए उसकी सुरक्षा के लिए उसे छोडा नही जाता। तब वह कैदी नही रहता, बल्कि गिरोह वालो से उसकी रक्षा के लिए उसे किसी स्थान मे पहरे के अन्दर रखा जाता है। रामगुलाम के तजरबे मे तो एक मामला ऐसा भी हुआ था कि मुखबिर ने बयान दे दिया और फिर जेल से भाग गया। नतीजा यह हुआ था कि इस्तगासा हाथ मलकर रह गया था।

जैसे तसद्दुक हाते के अन्दर दाखिल हुआ, प्रेमचन्द कुछ शरमाता और कुछ झेपता हुआ आगे बढकर आया और आदाब-अर्ज़ कहकर स्वागत किया। तसद्दुक ने कहा—क्या सोचा ?

—मैंने सारा लिख रखा है। आप पहले उसे पढ जाए इसमे जहां कोई नई बात पूछनी हो, आप पूछ ले, मै बताता जाऊगा।

छोटी-सी बैरक थी। मुश्किल से तीन चारपाइया पड सकती थी, पर प्रेमचन्द के लिए यह बुरा नही था। यो उसकी चारपाई बैरक के बीचोबीच रखी रहती थी और छडदार जगले के पास कुर्सी रखी रहती थी, पर आज चारपाई एक किनारे लगी हुई थी। बिस्तरा बहुत साफ था, मसहरी लगी हुई थी, जगले के पास मेज़ पर दो-तीन पुस्तके थी, पर तसद्दुक का ध्यान इन चीज़ो पर न जाकर ऐश ट्रे से दबे हुए कागजो पर गया। उसने फौरन ही झपट्टा-सा मारकर उन कागज़ो पर कब्ज़ा कर लिया। बयान अग्रेज़ी मे था, उसका पहला वाक्य यो था—मेरा जन्म बनारस के खुदाई चौकी मुहल्ले मे १९०७ मे हुआ।

तसद्दुक को यह वाक्य बुरा लगा। झुझलाकर बोला—आप अपनी प्रोफेसरी से बाज नही आए। आप किस सन् मे किस मुहल्ले मे पैदा हुए इससे भला मुझे क्या मतलब ?

वह तो चाहता था कि फौरन दल का ब्यौरा मिले और उस बयान के बूते पर कुछ गिरफ्तारिया हो। सच तो यह है कि वह सारा बन्दोबस्त कर आया था जिससे कि तलाशिया लेने और गिरफ्तारी करने मे देर न लगे। वह चाहता था कि इस सफलता के बाद फौरन दूसरी सफलता मिले यानी आज तारा के

साथ भी उसका मामला ठीक हो जाए। वह मन ही मन अपने को भाग्य का वरपुत्र समझ रहा था।

प्रेमचन्द ने कहा—आप बेताब न हो। पढते तो जाइए, इसमे आप जो चाहते है सब हैं।

तसद्दुक पढने लगा—मेरे माता-पिता बहुत मामूली आदमी थे। पर मुझमे न जाने क्यो बचपन से ही एक बेचैनी और बौखलाहट थी। और मै यह समझता था कि मैं साधारण आदमियो की तरह जिन्दगी बिताने के लिए पैदा नही हुआ, बल्कि बचपन से ही मुझे यह एहसास रहा कि मै कुछ कर गुज़रूगा। मेरी यह भावना इस बात से और पुष्ट हुई कि बचपन से ही मै अपने साथियो का स्वभावसिद्ध नेता रहा।

पढने-लिखने मे मैं हमेशा सबसे आगे रहता था, पर इसका अर्थ यह नही कि मैं खेल-कूद मे भाग नही लेता था। नही, मैं खेल-कूद मे भी अग्रणी था और अपने स्कूल के ग्यारह खिलाडियो मे मेरा शुमार किया जाता था। हाकी, फुटबाल, क्रिकेट सबमे मैं अच्छा था। साथ ही नम्बर भी अच्छे ले जाता था। भाषाओं और गणित मे मै शत-प्रतिशत नम्बर ले जाता था।

यहा तक पढकर तसद्दुक फिर एक बार झुझला गया। बोला—आपने तो अपनी तारीफ ही तारीफ लिखी है। और एक ही बात को घुमा-फिराकर बार-बार लिखा है। दो जुमलो की बात आपने इतनी लम्बी करके लिखी है। इसीलिए तो रिवोल्युशनरी पार्टी फेल हुई।

प्रेमचन्द अबकी बार नाराज हो गया, बोला—साहब, अगर आपको मेरा यह बयान पसन्द नही है तो इसे फाडकर फेक दीजिए आप सवाल पूछिए मैं जवाब दूगा। लाइए कागज वापस कीजिए मैं फाडकर फेक देता हू।

तसद्दुक डरा कि कही क्लायट फिर बिगड खडा न हो कि सब गुड-गोबर हो जाए। बोला—आप हमे बताइए कितने पेज के बाद असली बयान शुरू होता है, मै वही से पढूगा।

इसपर प्रेमचन्द बोला—आप नाख्वादा डाकुओं और चोरो का बयान लेते रहे होगे, इससे आपकी आदत बिगडी हुई है। पढा-लिखा आदमी जो भी करेगा, उसपर उसकी छाप पडेगी ही। आदमी अपने ही ढग से काम कर सकता है। याद रखिए यह मेरा चौथा मसविदा है, तीन मसविदे फाडकर फेक चुका

हू । लाइए ...

कहकर उसने हाथ बढाया पर तसद्दुक ने कागज़ नही दिया और अबकी बार मन मारकर प्रेमचन्द के जीवन के सम्बन्ध मे, उसके अनुसार जो नितान्त अप्रयोजनीय ब्यौरे थे, उन्हे पढने लगा।

वह एक-एक सतर पढता और झुझलाहट होती। तुम्हारे बाप सस्कृत के पडित थे, या तुम्हारी मा एक बहुत ही व्यक्तित्वशालिनी महिला थी तो इससे हमे क्या ? यदि लिखना ही था तो श्यामा या अर्चना या प्रतिभा के विषय में लिखते तो कोई मज़ा भी आता, सो नही, वहा अपनी मा की तारीफ मे कई पन्ने रग डाले है।

वह ज्यो-ज्यो आगे बढता गया त्यो-त्यो उसे यह भी ख्याल आता रहा कि लिखा अच्छा है। कितनी अप्रयोजनीय और बेकार बाते है, पर कितने सुन्दर तरीके से लिखा है, काश, वह भी एक इस तरह का पत्र तारा को लिख पाता तो शायद इतनी कठिनाई न होती।

कभी उसने रेल की यात्रा करते समय एक पत्रिका मे पढा था कि स्त्रिया रूप या धन या गुण से जीती नही जाती, बल्कि बातो से जीती जाती है। क्यो न प्रेमचन्द से एक पत्र लिखवा लिया जाए। पर यह तो दूर की बात है, पहले बयान तो हो जाए फिर बेटे को जैसे चाहेगे वैसे नचाएगे।

मा का वर्णन समाप्त हुआ तो अब ननिहाल का वर्णन शुरू हुआ। तुम्हारे जीवन पर यदि तुम्हारे नाना का सबसे अधिक प्रभाव पडा, तो इससे दुनिया वालो को क्या ? तुम दो कौडी के हो—तुम्हारे नाना इससे भी गए-गुज़रे हुए। लिखा था कि नाना को सब धर्मो, विशेषकर इस्लाम धर्म मे बडी श्रद्धा थी। यह वाक्य तो इसने मेरी खुशामद के लिए लिखा होगा। जरूर। इसमे कोई शक नही। वह अरबी, फारसी के विद्वान थे और जब बैठते तो पैर मोडकर इस्लामी ढग से बैठते थे। यह तो मुझे खुश करने के लिए ही लिखा है

तसद्दुक ने यहा तक पढा था कि उसे जान पड़ा जैसे विचारो का सूत्र एकाएक छिन्न-भिन्न हो गया। उसने अवाक् होकर देखा तो प्रेमचन्द मसहरी के डण्डो से उसपर हमला कर रहा था। उसने उठने की चेष्टा की तो, पर प्रेमचन्द ने इस फुर्ती से चोट पर चोट की कि उसके मुह से चीख भी अच्छी तरह निकल नही पाई और वह वही ढेर होकर गिर पडा। अबकी बार

प्रेमचन्द किसी प्रकार का सन्देह नही रखना चाहता था, इसलिए उसने बागबानी वाली खुरपी निकालकर गिरे हुए तसद्दुक के गले की नली भी काट दी।

सारा स्थान खून से भर गया था। प्रेमचन्द खून देखकर खुश हुआ—और कम्बल ओढाओ ! मारो ! तारा पर बलात्कार करो ! पापी, बदमाश, नीच !

उसी हालत मे प्रेमचन्द मसहरी का डडा हाथ मे लेकर हाते के फाटक की ओर दौडा और बोला—रामगुलाम, जल्दी आओ ! कप्तान साहब को साप ने काट खाया। जल्दी आओ !

रामगुलाम ने खून से लथपथ उसके कपडे देखे तो समझ गया कि साप का बहाना झूठा है और प्रेमचन्द ने तसद्दुक की हत्या की है। पहले सहजात बुद्धि से उसने सीटी बजा दी, पर सीटी बजाने के बाद उसे ध्यान आया कि यदि मैं हाते का दरवाज़ा नही खोलता हू और अफसर आकर यह देखते हैं कि भीतर कत्ल हुआ है तो मेरी नाक कट जाएगी, मैं कायर समझा जाऊगा, छब्बीस साल की खैरख्वाही मिट्टी मे मिल जाएगी। इसलिए खतरा मोल लेकर भी उसने फौरन फाटक खोल दिया। हाथ के डडे से उसने प्रेमचन्द पर हमला बोल दिया। पर प्रेमचन्द के सिर पर खून सवार था, उसने जो एक बार रामगुलाम के सिर पर मसहरी का डडा मारा, तो उसकी पगडी खुल गई। तुरन्त ही उसने दूसरा डडा रामगुलाम के सिर पर मारा, पर वह सिर पर न लगकर पैर मे लगा और वह लगडाता हुआ भागता दिखाई पडा।

प्रेमचन्द उसके पीछे-पीछे भागा, बोला—साले, इनाम नही लेगा ? तूने मगेतर को चिट्ठिया पहुचाईं, साले, उनका इनाम नही लेगा ?

इतनी देर मे कैदी, नम्बरदार, पक्के, वार्डर सब दौड पडे। इसलिए प्रेमचन्द ने रामगुलाम का पीछा करना छोड दिया और वह राजनीतिक कैदियो की बैरक की ओर पहुचा। वहा बहुत-से राजनीतिक कैदी फाटक पर एकत्र हो गए थे।

सच तो यह है कि तसद्दुक को प्रेमचन्द के हाते मे जाते देखकर ही राजनीतिक कैदी फाटक पर एकत्र हो गए थे, पर वे जयकारा नही लगा रहे थे क्योकि वे जानते थे कि प्रेमचन्द रात भर कुछ लिखता रहा और आज वह बयान तसद्दुक के हवाले होने वाला है। अब जो उन्होने प्रेमचन्द को खून से लथपथ

को मारने के लिए रचा था और इस प्रकार उसने टेगर्ट के बंगले से असफल होकर गिरफ्तार होने की क्षतिपूर्ति की थी। सब लोग बडे ज़ोर से 'भारत माता की जय' और 'महात्मा गाधी जी की जय' का नारा देने लगे।

सब राजनीतिक कैदी, यद्यपि वे अहिंसावादी थे, बेहद खुश थे। जब थोडी देर मे सतरियो ने आकर प्रेमचन्द को पकड लिया और ले गए तो राजनीतिक कैदी और भी ज़ोर से गगनभेदी नारे लगाने लगे। किसीने नारा लगा दिया—प्रेमचन्द ज़िन्दाबाद!—फिर तो सारे क्रातिकारी शहीदो की जय के नारे बहुत ज़ोर से लगने लगे। चारो तरफ जहा भी घटे थे, घन-घन, घन-घन बज रहे थे; कैदियो की गिनती करके उन्हे बैरको मे बन्द किया जा रहा था; जेल के अन्दर बन्दूक वाले सतरी घुस गए थे।

सब राजनीतिक कैदी यह जानने के लिए उत्सुक हो रहे थे कि तसद्दुक को मामूली चोट आई है या वह बिल्कुल ही मर गया है। पक्की खबर पाने का कोई कानूनी जरिया नही था, पर थोडी ही देर मे एक कैदी ने आकर चुपके से बता दिया—तीन जगह से भेजा खुल गया है। गले की नली भी कटी हुई है।··

सब नौजवान राजनीतिक कैदी खुशिया मनाने लगे। दो-एक बुजुर्ग कुछ कहना चाहते थे कि इस तरह की खुशी उचित नही है, पर सभी तारा वाला किस्सा जानते थे, इसलिए उन लोगो ने रहस्यजनक रूप से इतना ही कहा—जो जैसा करता है, वह वैसा पाता है। इसमे खुशी या गमी कुछ नही। यह तो प्रकृति का नियम है···

## २६

अमिताभ को यह पता था कि तसद्दुक जेल से अपने दफ्तर जाएगा और उसके बाद वह रोज़ की तरह अवश्य ही उस स्थान पर जाएगा जहा तारा कैद थी। अपने साथियो के साथ उन्होने एक सुनसान जगह चुन ली और वहा उसकी प्रतीक्षा करने लगे।

उनके हिसाब के अनुसार ५ बजे उसे आना चाहिए था। पहले उन्होने सोचा था कि जेल के अन्दर से जब ब्यान लेकर लौटे, तभी उसका काम तमाम कर दिया जाए, पर जेल से उसके दफ्तर का रास्ता भरी बस्ती से होकर पडता था इसलिए वह अधिक विपत्तिजनक था। विपत्ति की खैर कोई परवाह नही थी क्योकि फासी से बढकर कोई सज़ा नही हो सकती, पर डर था असफल हो जाने का। अभी जनता बिल्कुल प्रशिक्षित नही हुई थी और वह चोर-चोर चिल्ला पडते ही न आव देखती थी न ताव, आक्रमण करने वाले के पीछे पड जाती थी, भले ही वह आक्रमण करने वाला क्रातिकारी ही क्यो न हो। अभी लोगो मे क्रातिकारी भावनाओ का अभाव था।

पर यह रास्ता लगभग खाली रहता था। केवल गैबी नामक एक प्रसिद्ध कुए का पानी पीने वाले इधर से आते थे। अधिकाश लोग पैदल ही आते थे। शायद इसी कारण लोगो के स्वास्थ्य को फायदा पहुचता था पर नाम कुए का होता था। हा, कुछ लोग बग्घी, टमटम, तागा, इक्का मे भी आते थे। कुछ रईसो ने इधर अपने बगले भी बना रखे थे, पर वे इसमे रहते नही थे, बल्कि किसी-किसी दिन उनका इस्तेमाल प्रमोदगृह के रूप मे होता था। कुछ धनियो ने इन बगलो मे अपनी रखेलिया रखी थी।

अमिताभ बिल्कुल अकेले न थे, बल्कि उनके साथ चार युवक थे। ये युवक स्काउटो के रूप मे थे और अमिताभ के न चाहने पर भी दल के दूसरे नेताओ के द्वारा भेजे गए थे। दूसरे नेताओ का यह कहना था कि अमिताभ ही सब काम करे, इसका कोई अर्थ नही होता। इसलिए वे युवक प्रशिक्षण के लिए उनके साथ भेजे गए थे।

युवको मे से दो उधर थे, जिधर से तसद्दुक आने वाला था और दो उसकी विपरीत दिशा मे थे। सबके पास पिस्तौल या रिवाल्वर थे, पर किसीको भी गोली चलाने की आज्ञा नही थी। वे केवल अमिताभ के अगरक्षक थे। सब अलग-अलग थे। कोई किसीसे बात नही कर रहे थे। हा, बीच-बीच मे जब सड़क बिल्कुल सुनसान होती थी तो वे आकर दो-एक बात कर जाते थे या इशारो मे ही बात हो जाती थी।

पाच बज गए, यहा तक कि छः भी बज गए, फिर भी तसद्दुक का कही पता न था। अमिताभ चिन्तित हो गए। कही ऐसा तो नही कि उसे इस षड्यत्र

का पता लग गया ? उन्होने युवको से बारी-बारी से कहा—कुछ दाल मे काला मालूम होता है, तुम लोग खिसक जाओ।—जिससे भी उन्होने यह बात कही, उसने पूछा—और आप ?

अमिताभ ने हसकर सबसे उत्तर दिया—मेरा क्या है ? तुम्हारी बात और है ˙

पर किसीने बात नही मानी।

सात भी बज गए तब अमिताभ को यह सन्देह हुआ कि कही तसद्दुक किसी दूसरे रास्ते से उस बगले मे पहुच तो नही गया ? यह बात सूझते ही वे पागल-से हो गए क्योकि मनुष्य चरित्र सम्बन्धी उनका ज्ञान यह बताता था कि तसद्दुक उधर बयान लेकर लौटेगा तो पहले तलाशिया और सभव है कुछ गिरफ्तारिया करवाए और उसके बाद निश्चिन्त होकर इधर आएगा।

आज वह निराश नही लौटेगा। अवश्य दो युवक उधर भी थे, पर वे निरस्त्र थे। घटना घटित हो जाने के बाद वे खबर पहुचा सकते थे। और कुछ उनके बूते का नही था। उन्हें इस सम्बन्ध मे कुछ हिदायत भी नही दी गई थी। हा, तारा पर हमला होते देखकर कोई युवक आपे से बाहर हो जाए और तसद्दुक पर टूट पडे तो यह बात दूसरी है, पर उसकी सम्भावना कम थी, क्योकि भेजे हुए युवक बगले के बाहर ही रहते थे और तसद्दुक तारा के पास भीतर होता। अवश्य चिल्लाने पर बाहर पता लग जाता, पर तत्काल कुछ सहायता नही पहुचाई जा सकती थी।

अमिताभ ने घडी देखी तो साढे सात हो रहे थे। कुछ-कुछ अन्धेरा होने लगा था। उन्होने युवको से कह दिया—कोई बात हो गई है, तुम लोग घर जाओ, मैं गैबी की तरफ जाता हू।

युवको मे से किसीको भी यह पता नही था कि उधर तारा कैद है, और उसपर दल के दो जासूस लगे हुए है। जब अमिताभ सचमुच चलने लगे तो वे शहर की तरफ रवाना हो गए। उन्होने समझ लिया कि आज का कार्य परिस्थितिवश स्थगित हो गया।

अभी अमिताभ दो फर्लाग ही गए होगे कि उन्होंने गोली चलने की आवाज़ सुनी। वे चौकन्ना होकर एक मोटे तने वाले पेड़ की आड़ मे हो गए और समझने की कोशिश करने लगे कि क्या हुआ।

जो बात हुई थी वह इस प्रकार थी ।

जब वे चारो युवक निराश होकर जा रहे थे तो उन्होने देखा कि पुलिस की एक खुली गाडी आ रही है । इतना देखना था कि उन्होने यह मान लिया कि इसमे तसद्दुक होगा । न सही अमिताभ जी, हम लोग क्या कम है । यह सोच-कर उन्होने इस तरह से व्यूह बनाया कि गाडी किसी तरह न निकल पाए । एक ने टायर पर गोली मारी जो नही लगी । दूसरे ने ड्राइवर को गोली मारी जो लग गई । नतीजा यह हुआ कि गाडी थोडी दूर जाकर सडक से उतरकर टेढी होकर खडी हो गई । उसमे जो लोग सवार थे, वे छिटक कर बाहर गिर पडे ।

युवको की आखो के सामने चटगाव का शस्त्रागार-काण्ड का दृश्य नाच गया, और उन्होने अनुभव किया कि हम इतिहास-निर्माण कर रहे है । उन लोगो ने दौडकर उनपर हमला किया । तसद्दुक तो वहा दिखाई न पडा, पर एक गोरा दिखाई पडा । उसे कोई विशेष चोट भी नही लगी थी । उसने शायद पिस्तौल निकालने की चेष्टा की, इसपर एक युवक ने ठाय-ठाय करके उसका काम तमाम कर दिया।

यह गोरा और कोई नही, स्वय जिला मजिस्ट्रेट टेगर्ट था और इस समय वह किसी बुरे कार्य के लिए नही, बल्कि तारा को छुडाने के लिए जा रहा था। जब तसद्दुक की हत्या हो गई और यह खबर फैलते ही सारे शहर मे खुशी की लहर दौड गई, यहा तक कि लोगो ने मिठाइया बाटी, तब किसी विश्वस्त पुलिस-कर्मचारी ने टेगर्ट से कह दिया कि इस प्रकार से ततद्दुक ने एक लडकी भगाई थी और उसे अमुक स्थान पर कैद रखे हुए है । उसने अनायास यह भी कह दिया कि इसी कारण प्रेमचन्द ने उसकी हत्या की है ।

इसपर टेगर्ट ने उस लडकी को छुडाना तय किया । वह इसी कार्य के लिए जा रहा था । यदि वह हुक्म देता तो भी यह कार्य हो सकता था, पर मनुष्य मे कौतूहल प्रबल होता है, और वह यह देखना चाहता था कि वह लडकी कैसी है । किसीने उसे यह नही बताया था कि यह लडकी भूतपूर्व पुलिस-कप्तान मिस्टर बनर्जी की लडकी है ।

अमिताभ को इन बातो का पता नही लगा । बस उन्होने गोलिया चलते सुनीं, वह यही समझे कि किसी तरह पुलिस को इस षड्यन्त्र का पता लग गया

श्रौर वह इधर क्रान्तिकारियो को पकडने श्रा रही होगी, इसपर गोलिया चल गई होगी। वह इस बात पर बहुत दु खी हुए कि कुछ काम भी नही बना श्रौर इस तरह श्राफत श्राई, पता नही नातजुरबेकार युवको पर क्या बीती।

श्रब सोचने का मौका नही था। गोलियां चलनी बन्द हो गई थी, पर उधर दौड-धूप शुरू हो गई थी, इसलिए श्रब एक ही उपाय था कि किसी तरह यहा से भाग निकला जाए। वे समझ गए कि श्रब न तो श्यामा के यहा जाना उचित होगा, न कही श्रौर, इसलिए वे जिधर जा रहे थे, उधर ही चलते रहे।

मनुष्य सोचता कुछ श्रौर है श्रौर होता कुछ श्रौर। कहा तो वे तसद्दुक को मारने के लिए श्राए थे श्रौर कहां बिना कुछ किए जा रहे है, पता नही युवको मे से कितने मारे गए। मारे जाने का श्रफसोस नही है, श्रफसोस है कि बिना कुछ किए मारे गए। वे समझे कि फिर एक बार भाग्य ने साथ दिया श्रौर वे ऐन मौके पर ध्रुव मृत्यु या गिरफ्तारी से बचकर निकल श्राए।

उन्हे बनारस की गलियो श्रौर रास्तो का श्रच्छी तरह पता था, इसलिए वे बच-बचाकर उस घर मे पहुचे जहा से उन्होंने पिस्तौल ली थी। श्रसल मे यह घर नही, बल्कि एक बहुत ही छोटी-सी जगह थी, जिसे शायद बनाने वाले ने श्रपना तागा या घोडा रखने के लिए बनाया था, पर श्रब इसमे एक विधवा रहती थी।

यह बुढिया कभी किसी राजनीतिक सभा मे नही जाती थी, यहा तक कि वह नमक बनाने तो क्या, नमक बनाना देखने भी नही गई थी। उसकी श्रामदनी बहुत मामूली थी, उसीपर वह गुजर करती थी। वह कुणाल को जानती थी, इस नाते श्यामा को भी जानती थी। वह मानती थी कि यही लोग ईश्वर के श्रसली भक्त है। वह इन्हे श्रपनी ही सन्तान मानती थी इसलिए वह इनसे प्रेम रखती थी। जब भी उसे कुछ छिपाकर रखने के लिए कहा जाता था, वह उसे श्रपने टूटे हुए बक्स मे रख देती थी। कभी खोलकर भी नही देखती थी कि रखी हुई पोटली मे क्या है! जप करती जाती थी श्रौर दो-चार से श्रधिक प्रश्न नही पूछती थी श्रौर प्रश्न भी सब मामूली होते थे।

जब श्रमिताभ श्रपनी पिस्तौल को पोटली बनाकर उस बुढिया के सुपुर्द करने लगे तो उसने पूछा—बेटा, खाकर श्राए हो या खाश्रोगे?

—नही मा, रहने दो। कुछ खाऊंगा नही, तुम्हे कष्ट होगा!

और बुढिया ने पहले ही से अमिताभ के लिए जो पराठे बना रखे थे, उन्हे बांधकर अमिताभ के हाथ मे दे दिया। बोली—खाना हो तो खालो, जाना हो तो ले जाओ।

अमिताभ यह जानकर जाना चाहते थे कि गोलिया क्यो चली और कौन मरा और कौन जिया। पर उन्होने अपनी इच्छा का दमन किया, बोले—मा, आज नही सोऊगा, तुम निश्चिन्त रहो।

## २७

जब तारा ने अगले दिन सबेरे यह देखा कि उसपर कोई प्रतिबन्ध नही है, तो पक्षी जिस प्रकार पिंजडे का दरवाज़ा खुला देखकर उड जाता है, उसी प्रकार वह सीधे अपने घर पहुच गई। पर घर मे मा का पता नही था। वह तारा का ही पता लगाने गई थी। जब एलोकेशी को तसद्दुक के मरने का पता लगा था, तभी से वह अपनी बेटी से मिलने के लिए व्याकुल हो रही थी। पर मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक। वह श्यामा के घर पहुची।

वहा अभी-अभी पुलिस तलाशी लेकर गई थी। आनन्दकुमार जेल मे थे और श्यामा अभी तक चल नही पाती थी, फिर भी तलाशी हो रही है, देखकर एक उत्तेजित भीड वहा जमा हो गई थी। और जब तलाशी के बाद पुलिस वालो को कुछ नही मिला तो जनता ने पुलिस वालो को निकलते देखकर नारे लगाए और आवाजकशी की।

जब एलोकेशी वहां पहुची तो भीड छट चुकी थी, पर कुछ लोग अब भी उत्तेजित होकर आपस मे बातचीत कर रहे थे। एलोकेशी सीधे श्यामा के पास पहुची और बिना भूमिका के बोली—वह तो मर गया, पर तारा ?........

श्यामा इसका कोई उत्तर नही दे पाई क्योकि उसे कोई पता नही था। अमिताभ स्थिति बिगडती देखकर ज़रूर ही शहर से बाहर चले गए होगे ऐसा उसका अनुमान था। अन्य कोई व्यक्ति भी उससे ऐसा नही मिला था जो भीतरी खबर

बता सके। साधारण तरीके से उसे यही खबर मिली थी कि प्रेमचन्द ने तसद्दुक का काम तमाम कर दिया और टेगर्ट दो अन्य व्यक्तियो के साथ गैबी के रास्ते मे मारा गया था। पर कैसे हुआ, इसका उसे कुछ पता नही था, इसलिए वह कुछ बोल नही सकी।

श्यामा को इस समय अपना अपाहिजपन बहुत अखर रहा था। वह तो बिल्कुल इतिहास-निर्माताओ के चक्र से निकलकर केवल इतिहास की एक दर्शक भर रह गई थी, एक निष्क्रिय दर्शक।

उसने कहा—मुझे कुछ नही मालूम, आप देख रही है कि अभी-अभी पुलिस वाले तलाशी लेकर गए है। वे अच्छी तरह जानते हैं कि चाचा जी जेल मे हैं और मैं फालिज की रोगिणी की तरह पड़ी हुई हू, फिर भी जब कोई बात होती है तो पुलिसवाले फौरन इधर ही दौडते हैं · ····

श्यामा के इस कथन मे जहां एक ओर शिकायत थी, वहा दूसरी ओर गौरव-बोध भी था। एलोकेशी ने पूछा—तुम्हारे वह ज्योतिषी भाई किधर गए?

श्यामा का चेहरा कडा पड गया। यद्यपि अब तारा के सम्बन्ध मे उसके मन मे कोई सन्देह नही रह गया था, ऐलोकेशी के सम्बन्ध मे भी विशेष सन्देह नही; फिर भी अन्तराल मे रहकर कभी-कभी जीवित मनुष्य ही नही, लाशे भी विचारों पर प्रभाव डालती हैं। उसे मिसेज बनर्जी की ओर से यह प्रश्न अच्छा नही लगा, फिर भी कोई कडी बात कहने की इच्छा नही हुई क्योकि मिसेज बनर्जी इस समय केवल अपनी कन्या के प्रेम से आतुर होकर ही आई थी।

श्यामा बोली—उनका दर्शन तो कभी दस-पाच साल मे होता है, वे तो हिमालय की कन्दराओ मे रमते रहते हैं।

ऐलोकेशी ने अर्धभय और अर्धविश्वास से कहा—पर उन्होने तो कहा था कि यक्ष तारा की रक्षा कर रहे है?

—हा हा, यक्षो ने ही तसद्दुक को मारा होगा। और नाम क्रान्तिकारियों का हो रहा है।

ऐलाकेशी सुनकर अवाक् रह गई। बोली—तो फिर यक्ष उसे घर भी पहुचा देगे?

—देगे, पर वे किसीके नौकर नही हैं, इसलिए अपने समय से सब काम करेंगे।

एलोकेशी को यह बात उतनी पसन्द नही आई, बोली—अब मै क्या करू ?

—आप क्या करेगी ? मैने कहा न कि सब काम खुद-ब-खुद हो जाएगे। यक्ष लोग किसी बात मे दिलचस्पी नही लेते, पर लेते है तो फिर किसीको मंझधार मे नही छोडते। अन्तिम मीमासा करने के बाद ही दम लेते है।

कल जो घटनाए हुई थी, श्यामा उनपर किसीसे घुल-मिलकर दिल खोलकर बात करना चाहती थी, पर एलोकेशी से सारी बाते होते हुए भी अधिक बात करने को जी नही चाहता था। बोली—आप जाइए, कोई खबर होगी तो मैं आपके पास भेज दूगी।

यद्यपि अब अमिताभ का यहा आना न तो उचित ही था और न उसकी विशेष सम्भावना ही थी, फिर भी श्यामा यह आशा करती थी कि शायद अमिताभ एक बार दो मिनट के लिए उससे मिल जाए, इसलिए वह एलोकेशी को जल्दी से जल्दी विदा करना चाहती थी। कही ऐसा न हो कि वे यहा आए और लौट जाए।

एलोकेशी समझ गई कि श्यामा उससे अधिक बात करना नही चाहती, वह बुदबुदाकर बोली—यक्षो ने यदि तसद्दुक को मार डाला, पर हमारी लडकी हमे नही मिली तो क्या लाभ हुआ ?

कहकर वह जाने ही वाली थी कि स्वय तारा वहां पहुच गई और वह पहले तो अपनी मा से लिपटी फिर वह श्यामा से लिपटना ही चाहती थी कि श्यामा ने कहा—सम्हलकर मिलो, सारे शरीर मे बैडेज हैं।

तारा श्यामा के पैताने बैठ गई और मिसेज बनर्जी भी एक कुर्सी पर जम गई। श्यामा बोली—मै तुम्हारी मा से कह रही थी कि तुम आती ही होगी।

एलोकेशी आश्चर्य के साथ अपनी बेटी को देख रही थी। वह एकाएक बोल पड़ी—तसद्दुक को अपने किए की सज़ा मिल गई, तुम्हे मालूम है न ?

हा, तारा को मालूम था, पर वह अधिक ब्यौरा चाहती थी। उसने अपने छोटे भाई प्रदीप से यही सुना था कि तसद्दुक को प्रेमचन्द नाम के एक क्रान्तिकारी ने जेल मे मार डाला है, पर वह कुछ ब्यौरा नही बता सका था।

श्यामा ने कहा—मुझे भी कुछ नही मालूम। जितना अखबारो मे निकला है उतना ही जानती हूं। हां, चाचीजी और कबीर चाचाजी से मिलने गए है, शायद उनके आने पर कोई नई बात मालूम हो।

तारा ने उस बगले का पूरा ब्यौरा बताया जहा वह कैद थी। सारी बाते सुनकर एलोकेशी बोली—तूने वहा किसी यक्ष को देखा ?····

श्यामा बीच मे बोल पडी—यक्ष चर्मचक्षु से दिखाई थोडे ही देते है!

उधर एलोकेशी ने कहा—तुम्हारे उन ज्योतिषी भाई ने तो यह कहा था कि तारा दुर्गा-कुण्ड मे है, पर यह तो गैबी के रास्ते मे थी।

श्यामा ने सफाई देते हुए कहा—ज्योतिष है, गणना मे कोई भूल हो गई होगी। दिशा तो ठीक ही रही पर मील दो मील का फर्क आ गया।

इसी प्रकार थोडी देर बातचीत होने के बाद मा-बेटी घर चली गई। तारा जाते समय कह गई—फिर आऊगी।

एलोकेशी ने कहा—मै अब तुझे अकेली कही नही जाने दूगी।

पर श्यामा बोली—अब इसकी तरफ कोई आख उठाकर भी नही देखेगा क्योकि जो भी ऐसा करेगा उसे यक्ष यमपुर भेज देंगे।

बात ठीक थी, इसलिए एलोकेशी कुछ नही बोल सकी।

अगले दिन सुबह दो सिपाही एक गाडी लेकर एलोकेशी को लेने के लिए आए। सिपाहियो ने कहा—जानसन साहब ने बुलाया है।

सुनकर मा-बेटी दोनो तन गई। फिर एलोकेशी ने कहा—मैं प्रदीप को लेकर जाती हू, तू घर ही मे रह। जानसन अच्छा आदमी है, तेरे पिता का मित्र था, उससे मुझे किसी प्रकार की शका नही है।

पर तारा बोली—कितना भी अच्छा आदमी हो, वह ब्रिटिश साम्राज्यवाद का प्रहरी है, वह इसीलिए बुला रहा है कि पेंशन बन्द करने की धमकी दे।

एलोकेशी अविचलित रहकर बोली—यदि वह धमकी देगा तो मैं भी धमकी दूगी। मुझे जो पेशन मिलती है, वह मेरी सेवाओ के कारण नही, बल्कि तेरे पिताजी की सेवाओ के कारण मिलती है, इसलिए मै या मेरी बेटी उनकी जासूस बने इस स्थापना को मै कतई नही मान सकती।

तारा ने और कुछ कहना उचित नही समझा और एलोकेशी प्रदीप को लेकर चली गई।

# २८

सारे देश मे नमक सत्याग्रह जारी था। सैकडो गिरफ्तार हो चुके थे और हजारो पर मार पड चुकी थी। गाधी जी ने धरसना के नमक गोदाम पर धावे का नारा दिया था। पर वह स्वय गिरफ्तार कर लिए गए थे।

इसके बाद उसी नमक गोदाम पर धावा बोलने के लिए क्रमशः वृद्ध नेता अब्बास तैयब जी और सरोजिनी नायडू तैयार हुईं, पर वे भी धावा बोलने के पहले ही गिरफ्तार कर लिए गए। धरसना के अनुकरण पर दूसरे नमक गोदामो पर भी हमले शुरू हुए। अक्सर कई स्थानो पर तो लोग धावा बोलने के पहले ही रोक दिए जाते या गिरफ्तार कर लिए जाते थे, पर कही-कही स्वयसेवक नमक लेकर भाग जाने मे भी समर्थ हुए।

जहा भी नमक बनता था, वहा सैकडो और हजारो आदमी एकत्र होते थे और वे नारा लगाते थे। पुलिस के लिए अब हर जगह नमक बनाने की क्रिया को रोकना असम्भव हो गया था, बल्कि कई जगह पुलिस वाले आग बुझाने या कडाही को उलटने के फेर मे पडते ही नही थे। वे मजमे मे पहुच जाते और जिसे भी गिरफ्तार करना होता, सच तो यह है कि जो भी सामने पड जाता, उसे गिरफ्तार कर लेते। नमक बनाना उसी प्रकार जारी रहता।

बीच-बीच मे समझौते की जो बातचीत चलती रहती उससे पुलिस वाले ढीले पड जाते थे, साथ ही आन्दोलन पर भी बुरा असर पडता था, यद्यपि कुछ लोग ऐसा भी समझते थे कि गाधी जी तो ऐसी बाते करते ही रहते है, उनका कोई विशेष अर्थ नही होता।

यद्यपि अर्थशास्त्रियो (सरकारी और उदारदलीय) ने यह कहा था कि नमक बनाना उनके शास्त्र की दृष्टि से बिल्कुल निरर्थक है, क्योकि टैक्स दे-दिलाकर नमक का जो दाम बाजार मे पडता है, उससे बहुत अधिक दाम पर यह नमक बनता है, फिर भी नमक बनाना जारी था और इसमे बनाने वाली सस्था यानी कांग्रेस को कोई आर्थिक घाटा नही था। नमक बन जाने पर वह होमियोपैथी-दवा की तरह छोटी-छोटी पुडियो मे बाध दिया जाता था और लोग अधिक से अधिक दाम देकर उस नमक को खरीदते थे। पता नही कोई उसे खाता भी

था या नही, पर बहुत-से लोग माथे पर टीका बडे गौरव के साथ—उसी गौरव के साथ जिससे लोग किसी मन्दिर का टीका लगाकर आते हैं—लगाते थे और यह अनुभव करते थे कि वे भी उस विराट आन्दोलन मे हिस्सा ले रहे है। इस प्रकार नमक खरीदने वालो तथा उसका टीका लगाने वालों मे बहुत-से सरकारी नौकर भी थे।

राजनैतिक कैदी चोरी से वह नमक जेल मे भी मगाते थे। इस प्रकार नमक क्लोराइड आफ सोडियम नही रहा, बल्कि वह राष्ट्रीय आन्दोलन का एक प्रतीक वाहन और भभूत बन गया, जैसे १८५७ के विद्रोह मे चपाती और कमल प्रतीक बन गए थे। जब कोई वस्तु प्रतीक बन जाती है, तो फिर आर्थिक दृष्टि से उसका मूल्य कितना अर्थहीन हो जाता है।

राजनैतिक कैदियो के लिए यह नमक इसलिए महत्वपूर्ण था कि उनमे से बहुतेरे नमक बनाने की प्रतिक्रिया के दौरान मे ही गिरफ्तार कर लिए गए थे और यह कौतूहल उनके मन मे रह ही गया था कि पता नही कानून तोडकर बनाया हुआ नमक कैसा होता है। इस प्रकार कौतूहल निवृत्ति के अतिरिक्त यह नमक अनुप्रेरणा देने का भी काम करता था।

अबकी बार जो लोग जेल मे आए थे, उनमे बीसियो ऐसे आदमी थे जो काग्रेस की स्वयसेवक सम्बन्धी शर्तो को पूरा किए बगैर ही जेल गए थे। यह स्वाभाविक था इसलिए यदि वह विलायती कपडा पहने हुए थे या और तरह से सत्याग्रह के योग्य नही थे तो भी नेता उनका उसी तरह स्वागत करते थे जैसे काग्रेसियो का करते थे। काग्रेस उस समय एक दल नही थी बल्कि यह जनता की विद्रोही भावना की प्रतीक थी।

नित्य जब भी कोई नया कैदी जेल मे आता तो बहुत उत्साह का वातावरण हो जाता था। पर आज और भी उत्साह का कारण था क्योकि फैजाबाद जेल से कैदियो का जो जत्था आया था उसमे राजेन्द्र भी था।

आनन्दकुमार देखते ही समझ गए कि राजेन्द्र बहुत खुश नही है। उन्होने नई शादी पर इसका सारा दोष थोपा, यह तो मालूम था ही कि वह इस आन्दोलन से भीतर ही भीतर असन्तुष्ट है।

आनन्दकुमार ने मौका पाते ही पूछा—कहो, तुम्हारी गिरफ्तारी का तुम्हारे ससुर साहब पर क्या असर हुआ ? क्या वह आन्दोलन मे शरीक हुए ?

राजेन्द्र को अपने अन्दर सुलगते हुए असन्तोष को बाहर रखने का मौका मिल गया। उसने कहा—ससुर साहब पहले तो बहुत उत्साह दिखाते रहे, पर उन्होंने जब मेरी गिरफ्तारी के बाद जो लाठी चार्ज हुआ वह देखा तो सुनते हैं कि वे बहुत नाराज़ हुए। उन्होंने कहा : यह तो सुना था कि अपने को कष्ट देने से, तप करने से चित्रगुप्त की बही मे नम्बर जमा होते है और स्वर्ग जाने को मिलता है, पर मार खाने से अंग्रेज कैसे निकल सकते हैं ?

आनन्दकुमार ने इसके उत्तर मे कुछ नही कहा, क्योकि वे जानते थे कि राजेन्द्र स्वयं ही इसका उत्तर दे सकता है। यह अजीब बात है कि अब राजेन्द्र की सहानुभूति ऐसे लोगो से हो गई थी जो इस प्रकार की बेतुकी नुक्ताचीनी करते है। पहले तो वह ऐसे लोगो से चिढता था। बोले—तुम्हारी पत्नी का क्या हुआ ? वह अपने पति का साथ देगी या पिता का ?

राजेन्द्र सुनकर ऐसे तिलमिला गया जैसे यह कोई अपमान हो, बोला—एक परिवार मे एक ही सनकी बहुत है, और ज़रूरत नही है।

आनन्दकुमार ने यह याद दिलाना उचित नही समझा कि पहले राजेन्द्र ने कुछ और ही कहा था, पर उस समय एक ताल्लुकेदार घराने के साथ अपनी शादी का देशभक्तिमूलक कारण दर्शाना था, अब वैसा कोई प्रयोजन नही था।

उन्होने अब उधर की कोई बात पूछना उचित नही समझा। बोले—इधर की खबर तो तुमने सुनी ही होगी ? तसद्दुक मारा गया और टेगर्ट भी मारा गया।

राजेन्द्र बोला—हा, मुझे भी मालूम है। मेरे ससुर साहब, कहते है, इसपर बहुत खुश हुए और अपने नौकरो मे मिठाई बाटी। अवश्य चोरी से।

'अवश्य चोरी से' इन शब्दो मे ही उनके कृत्य पर पूरी टिप्पणी आ गई थी, आनन्दकुमार बोले—अफसोस है कि प्रेमचन्द पर बहुत मारपीट हुई ...

इसकी कोई खबर अखबारो में नही छपी थी या छपी भी हो तो राजेन्द्र के देखने मे नही आई थी। बोला—यही तो एक खराब बात है। फासी देना हो तो दे डाले पर इस तरह मारते-पीटते क्यो है ? अच्छा प्रेमचन्द है कहां ?

राजेन्द्र इस जेल के पूरे भूगोल से परिचित था, आनन्दकुमार ने उसे उस हाते की स्थिति बता दी। राजेन्द्र बोला—क्या उससे आप लोगो का पत्र-

व्यवहार है ?

—नही, पर खबर सब मिलती रहती है।

—आप कोई खबर भेजते हैं ?

पता चला कि उडती हुई खबरे आती-जाती है, पर बाकायदा कोई पत्र-व्यवहार सम्भव नही, और इसकी ज़रूरत भी नही समझी गई।

राजेन्द्र ने किसीको बताया नही और उस दिन से वह प्रेमचन्द से पत्र-व्यवहार करने के प्रयत्न मे लग गया। कोई विशेष उद्देश्य नही था। वह स्वय नही जानता था कि ऐसा क्यो कर रहा है, पर उसने पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया। वह इस प्रकार से पत्र-व्यवहार करना चाहता था कि अपने ऊपर कोई आच नही आए, इसलिए पहले तो उसने गुप्तलिपि की चाभी उसके पास भेज दी फिर उसीके जरिए से अग्रेज़ी के बडे हरफ मे पत्र-व्यवहार शुरू किया। पहले लिखा—देश आपके पीछे है, आप किसी तरह की धौस मे न आए। आप बयान दे कि मुझपर हमला हुआ था इसपर मुझे क्रोध आ गया और मैंने मसहरी का डंडा छोडकर मारा—फिर देखा जाएगा।

ज्ञात हुआ कि प्रेमचन्द ने यही बयान दिया है। थोडे दिन पत्र-व्यवहार के बाद प्रेमचन्द ने यह लिखा कि साथ वाला पत्र बाहर अमुक स्थान पर अर्चना को भेज दे। राजेन्द्र को कौतूहल हुआ कि यह देवी कौन-सी हैं, पते से ही मालूम हो गया कि यह श्यामा नही है, फिर भी उसने पत्र खोलकर पढा जो इस प्रकार था :

अब शायद तुम्हे मुझसे कभी खुलकर बात करने का मौका न लगे, इसलिए पहला मौका पाते ही यह पत्र लिख रहा हू। तुमने, बल्कि तुम लोगो ने मेरे जिम्मे जितना काम कर दिया था, मैंने उसे दूसरे रूप मे ही सही, पूरा कर दिया। परिणाम निश्चित है, क्या परिणाम, काहे का परिणाम, यह सब इस पत्र मे स्पष्ट करके लिखने की आवश्यकता नही है।

ये लोग मुझे मारते और कष्ट देते-देते थक गए है। यहा एक सहृदय सत्याग्रही से पत्र-व्यवहार करने पर मालूम हुआ कि समझौते की बातचीत बराबर चल रही है, पर मैं इतना मूर्ख नही हू कि यह समझू कि इस समझौते से मुझे कोई फायदा होगा। गाधी जी जब भी राजनैतिक कैदियो की छुडाने की बात

करेंगे तो उसके साथ अहिंसात्मक शब्द जरूर लगा देंगे और स्वाभाविक रूप से इतिहास की सबसे बडी हिंसात्मक शक्ति ब्रिटिश साम्राज्यवाद इसका फायदा उठाकर क्रान्तिकारियो को नही छोडेगा ।

अन्त मे केवल यही निवेदन है कि मैंने रामगुलाम के हाथ से जो पत्र भेजे, उनसे तुम्हे जो मानसिक कष्ट पहुचा उसके लिए मै दु खी हू । उन पत्रो के बिना यहा सही वातावरण न बनता और मैं जो करना चाहता था, न कर पाता । सभी अवसरो पर मैं उस नीति को मानता हू कि यदि लक्ष्य अच्छा है तो साधन कुछ भी हो, वे अच्छे ही है । कागज खत्म हो गया, इसलिए आज यही तक ।

राजेन्द्र ने जो यह पत्र पढा तो वह एक बार सिहर उठा । जीवन इनके लिए कोई अर्थ नही रखता । अजीब लोग है । बिल्कुल मृत्यु सिरहाने खडी है फिर भी कोई विशेष परवाह नही है । श्यामा के साथ अनबन के कारण वह सम्पूर्ण क्रान्तिकारी दल के ही विरुद्ध हो गया था, पर अब वह फिर से इस विषय पर सोचने के लिए बाध्य हुआ ।

उसने चिट्ठी यथास्थान भेजवा दी । और प्रेमचन्द के लिए उत्तर भी मगवा दिया । पर उत्तर साधारण भाषा मे नही था । वह किसी तरह की साकेतिक भाषा मे था जिसे राजेन्द्र ने उलट-पुलटकर देखा पर कुछ समझ नही सका । अब की बार इधर से जो उत्तर आया वह भी उसी साकेतिक भाषा मे था । राजेन्द्र समझ गया कि यह उचित ही है कि वे इस प्रकार साकेतिक भाषा मे पत्र-व्यवहार करे, पर उसका मन नही माना और वह खीझ गया । उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे उससे कोई दूतमात्र का काम ले रहा हो । दो-तीन बार उसने पत्र भेजवा दिए, पर जब दोनो तरफ से जल्दी-जल्दी पत्र आने लगा तो उसने पत्र फाडकर फेक दिया और अपने वार्डर को अर्चना की ओर नही भेजा । उसने अपने मन को यह कहकर समझा लिया कि पता नही यह लोग भागने-भूगने का कार्यक्रम बना रहे हो तो हम भी बीच मे मारे जाएं । राजेन्द्र ऐसे लोगो की सहायता करने को तैयार था, पर किसी प्रकार जोखिम उठाकर नही ।

## २९

आन्दोलन नित्य बृहत्तर पेग मार रहा था और प्रतिदिन सैकडो लोग देश भर मे गिरफ्तार हो रहे थे। सरकारी लालबुझक्कडो ने यह जो समझा था कि आन्दोलन जोर नही पकडेगा, वह गलत सिद्ध हुआ। नमक के गोदामो पर हमले जारी रहे। नमक के किसी-किसी कारखाने पर १५ हजार लोगो ने एक साथ हमला किया। वडाला नामक स्थान मे ऐसा ही हुआ। कर्नाटक के शनिकट्टा नामक स्थान मे १० से १५ हजार लोगो ने एक-एक बार मे एक-एक साथ हमला किया और वे हजारो मन नमक उठाकर ले गए। विदेशी कपडो के बायकाट का आन्दोलन भी जोरो पर था।

आन्दोलन शुरू होने के कुछ ही दिन बाद एक अग्रेज पत्रकार गाधी जी से मिला था। वह काग्रेस और सरकार के बीच समझौता कराना चाहता था, पर वह असफल रहा क्योकि गाधी जी ने स्पष्ट कह दिया कि केवल गोलमेज सम्मेलन बुलाना यथेष्ट नही है बल्कि पहले से यह वादा करना जरूरी है कि उसके फलस्वरूप जो विधान बनेगा उसमे भारतीयो को स्वराज्य नही तो स्वराज्य का सार दिया जाएगा।

सरकार यह शर्त मानने को तैयार नही थी, इसलिए वह अग्रेज पत्रकार लौट गया। जुलाई १९३० मे सर तेज बहादुर सप्रू और एम० आर० जयकर ने फिर वार्ता चलाई और इस सम्बन्ध मे जेलो मे जा-जाकर नेताओ से मिले। इसके बाद होरेस एलैक्जेन्डर ने भी बातचीत की, पर वह भी व्यर्थ गई।

देश मे सभी तरह के लोग इन वार्ताओ को ध्यान से पढते थे। जो लोग यह चाहते थे कि अन्तिम लडाई हो, वे अप्रसन्न होते थे, पर दूसरे लोग जो सीमित त्याग करने को तैयार थे, वे यह चाहते थे कि जल्दी समझौता हो और हम लोग घर जाए।

इसी वातावरण मे प्रेमचन्द पर मुकदमा चल रहा था। शत्रु-मित्र सभी जानते थे कि उसे फासी होना निश्चित है। प्रेमचन्द के वकील ने इसी आधार पर उसका मुकदमा तैयार किया था कि जब तसद्दुक होते मे पहुचा तो उसने फौरन ही मार-पीट शुरू की, तब प्रेमचन्द को गुस्सा आ गया, और उसने

मसहरी का डंडा लेकर उसे मारा, जिससे वह मर गया।

टेगर्ट के बगले मे वह क्या कर रहा था, इसके उत्तर मे वकील ने यह मुकदमा बनाया कि प्रेमचन्द को पक्षियो के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करने का शौक था और इस कारण वह इस सम्बन्धी अखिल भारतीय सस्था का सदस्य भी था। एक बहुत ही विरल पक्षी एकाएक देखकर वह उसके पीछे-पीछे सुधबुध भूलकर मिस्टर टेगर्ट के बगले पर जा पहुचा। प्रेमचन्द के पास न तो गोली बरामद हुई न पिस्तौल, इस कारण वकील को यह किस्सा बनाने का मौका मिल गया।

इस्तगासे के गवाह लगभग समाप्त हो चुके थे, अब सफाई पक्ष की गवाहिया चाहिए थी।

अर्चना इसी सम्बन्ध मे श्यामा के पास पहुची थी। वह चाहती थी, बल्कि प्रेमचन्द का वकील यह चाहता था कि आनन्दकुमार या कोई उसका कैदी साथी यह गवाही दे कि पहले उन्होने प्रेमचन्द के कराहने की आवाज सुनी और इसके बाद यह सुना कि प्रेमचन्द चिल्ला-चिल्लाकर कुछ हल्ला-सा कर रहा है और साथ ही थोडी देर मे उन्होने देखा कि रामगुलाम हाते मे से भागा और उसके पीछे-पीछे प्रेमचन्द डडा लिए हुए भागा। इस गवाह को यह भी कहना था कि प्रेमचन्द पर मार के दाग मालूम होते थे।

श्यामा ने अर्चना का प्रस्ताव सुनकर कहा—तुम्हारा वकील पागल है। इस प्रकार की गवाहियो से कुछ नही होगा। पहली बात तो यह है कि ब्रिटिश सरकार फासी देने पर तुली हुई है और दूसरी बात यह है कि हम लोग कैसे आशा कर सकते है कि अहिंसावादी कैदी इस तरीके से झूठ बोलेगे। मैं समझती हूं कि उनसे ऐसी आशा रखना गलत होगा।

अर्चना बोली—तभी तो मैं आपके पास आई हू। आप चाहे तो चाचा जी या और कोई ऐसी गवाही दे सकते है, आप पत्र लिख दीजिए या मिलकर कह दीजिए फिर मैं उनका नाम गवाहो मे लिखा देती हू। मैं भी समझती हू कि शायद इसपर भी कुछ लाभ न हो, पर एक प्रयास करने मे क्या हर्ज है? शायद फासी के बजाए काले पानी हो जाए, तो भी बहुत है।

एकाएक श्यामा को यूसुफ की याद आ गई। वह बोल उठी—मै आज ही जेल जाकर चाचा जी से मिलती हू और उनसे कहती हू, तुम सध्या समय मुझसे

मिल लेना।

कहने को तो उसने कह दिया, पर जब उसने गहराई के साथ सोचा तो उसे मालूम हुआ कि चाचा जी से इस प्रकार झूठी गवाही देने के लिए कहना एक प्रकार की ज्यादती होगी। साथ ही उसे यह भी सदेह था कि उसके कहने पर शायद आनन्दकुमार ··

उस हालत मे तो यह बहुत ही खराब बात होगी, पर केवल असफलता का भय ही नही अब उसे विवेक भी कचोट रहा था। आखिर आनन्दकुमार ने क्या नहीं किया ? पुलिस तो उन्हे सत्याग्रही कम और क्रातिकारी अधिक समझती रही है। कुणाल यहा बराबर आते-जाते रहे, युसुफ का भी आना-जाना रहा और वे स्वय यहा जब आई थी तो क्रातिकारिणी के रूप मे ही आश्रय मिला था।

नही, वह आनन्दकुमार से ऐसी बाते नही कह सकती। रहा यह कि वे और किसी राजनीतिक कैदी से गवाही दिला द सो वे इसपर भी राजी नही होंगे। जिस बात को वे स्वय नही करेगे उस बात के लिए वे दूसरे को भी नही कहेगे। तो फिर प्रेमचन्द की तरफ से कोई गवाही होगी ही नही ? नही, कैसे होगी ?

वह इसी उधेडबुन मे इतनी परेशान रही कि उस दिन वह मिलाई करने ही नही जा सकी। रूपवती ने पूछा तो बोली—अभी कुछ कमजोरी है, अगले दफे आपके साथ जाऊगी।

रूपवती ने अर्चना और श्यामा मे जो बातचीत हुई थी, वह सुन ली थी, इसलिए उसने आग्रह नही किया, वह समझ गई कि श्यामा की इस कमजोरी का क्या अर्थ है। वह कबीर को साथ लेकर आनन्दकुमार से मिलने के लिए चली गई।

घड़ी का काटा जब सध्या समय छ: बजा रहा था तब अर्चना आ गई। वह पहले से अधिक परेशान थी। श्यामा ने साफ-साफ बता दिया कि वह आज मिलाई करने ही नही गई। इसपर अर्चना साप की तरह फुफकारकर बोली—आप जान-बूझकर नही गईं और अब यह बहाना बना रही है।

श्यामा ने स्पष्ट रूप से कह दिया—मैं बहाना नही बना रही हूं। मै इसीलिए नही गई कि मैं कही प्रलोभन मे आकर उनसे यह बात कह न डालू जो मुझे उनसे कहना नही चाहिए।

अर्चना बोली—क्या यह इतनी गर्हित बात है ?

—गर्हित की बात नही। वे जिस पद्धति मे विश्वास नही करते, उस पद्धति के अनुसार वे काम कैसे कर सकते है ? जान-बूझकर यह झूठी गवाही कैसे दे सकते है ? उनके साथ इस समय चार सौ राजनीतिक कैदी है, सब जानते हैं कि न उधर से कोई आवाज आई न कोई शोरगुल हुआ और जब हुआ तो उन्होने यह देखा कि प्रेमचन्द लहूलुहान हालत मे रामगुलाम का पीछा कर रहा है ·····

—पर वह लहू उनका अपना लहू था या किसी और का, यह तो उस लहू पर नही लिखा था।

श्यामा ने बिल्कुल निस्पृह ढग से बिना किसी प्रकार के क्रोध के कहा—तुम मुझे जो कुछ कहो, मैं सब कुछ करने को तैयार हू पर चाचा जी को ऐसे काम के लिए नही कह सकती जो उनके सिद्धान्तो के विरुद्ध है। और जब वे स्वयं नही करेगे तो किसीसे करवाएगे भी नही।

अर्चना के मुह से करीब-करीब फेन आ गया। वह क्रोध मे पागल-सी बोली—यही आपका क्रान्तिकारीत्व है ?—कहकर उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह जितनी कडवी बात कहना चाहती थी, शायद उतनी कडवी नही कह सकी। बोली—आपने शहीद यूसुफ के साथ विश्वासघात किया है। आप उनकी पत्नी होने योग्य नही है। देश के नौजवान आपको कुछ और समझकर आपकी पूजा करते है, पर आप अब भीतर से सम्पूर्ण रूप से आनन्दकुमारजी की चेली हो गई है।

श्यामा को भी क्रोध आ गया था पर उसने संयम से काम लेते हुए कहा—तुम क्रोध मे हो इसलिए तुम्हारी सारी बातो का उत्तर देना ज़रूरी नही है, इसके अलावा तुम जिस कारण क्रुद्ध हो, उससे मेरी पूर्ण सहानुभूति है। मैंने किसके साथ विश्वासघात किया और किसके साथ नही, इसपर मै तुमसे तर्क-वितर्क करने को तैयार नही हू, पर एक बात कान खोलकर सुन लो कि मेरे निकट यूसुफ और आनन्दकुमार दो विरोधी नही, बल्कि दोनो एक ही वृक्ष के पत्र और पुष्प है। एक वृक्ष के पत्र और पुष्प मे जितना अन्तर होता है, उनमे उससे अधिक फर्क नही।

इसपर अर्चना उसी वेगबल से परिचालित होकर बोली—इस प्रकार

उदाहरण और उपमाए देकर विचार-विभ्रम पैदा करना आसान है, पर आप भूल रही है कि पत्र और पुष्प एक दूसरे के विरुद्ध नही जाते बल्कि एक दूसरे की अनुकूलता करते हैं।

—हा, पर उनके बुद्धि और विकास के नियम अलग-अलग होते हैं। लक्ष्य एक होते हुए भी उनका विकास अलग-अलग ढग से होता है।

इस प्रकार इन दोनो विदुषी महिलाओं मे देर तक वाद-विवाद तो क्या कुतर्क होता रहा।

अर्चना बिल्कुल दबकर नही बोल रही थी। यदि यूसुफ फासी पर चैढ चुके थे तो प्रेमचन्द फासी पर चढने वाला था। फिर हीनता किस बात की? सच तो यह है कि वह अपने मन मे प्रेमचन्द को यूसुफ से कही ऊचे दर्जे का आदमी समझती थी क्योकि यूसुफ केवल एक सैनिक था पर प्रेमचन्द एक विद्वान था। यूसुफ तो अन्तिम दिनो मे कुछ धार्मिक हो गया था, पर प्रेमचन्द तो बिल्कुल सब तरह से मुक्त था।

रूपवती हमेशा की तरह इनकी बातचीत कुछ आड़ मे और कुछ प्रकट रहकर सुनती जाती थी। जब उसने देखा कि अब मामला हद से आगे जा रहा है, तब वह सामने आई और बोली—सबेरे तुम लोगो की जो बातचीत हुई थी, मैंने सब सुना था और अब भी जो बातचीत हुई है, सब सुन चुकी हू।

श्यामा बोली—चाची, आपसे हम लोग कभी कोई पर्दा तो करते नही।

रूपवती ने इसका उत्तर न देकर मानो अपनी पहली बातचीत जारी रखते हुए कहा—मैंने उनसे जेल मे सारी बात बताई तो उन्होने यह बताया कि कानूनी दृष्टि से इस प्रकार की गवाही से कोई लाभ नही होगा। अर्चना, तुम शायद जानती नही हो कि वे मजिस्ट्रेट रह चुके है। उन्होने साथ ही यह भी कहा कि उनके साथ के राजनैतिक कैदियो मे कई आदमी पहले से ही यह कह रहे हैं कि वे इसी ढग की गवाही देना चाहते है, तब मैंने ऐसे लोगो के नाम भी पूछ लिए—कहकर रूपवती ने अर्चना के हाथ मे एक सूची भी दे दी, जिसमे छ नाम थे।

सब अपरिचित नाम थे, पर इससे क्या? अर्चना ने श्यामा की तरफ विजय-गर्व से देखा, बोली—आप आनन्दकुमार जी को जितना पथराया हुआ समझती हैं, वे इतने पथराए हुए नही है।······

रूपवती ने बीच मे ही कहा—उन्होने नामो की सूची देने के बाद भी मुझसे कहा कि इससे कोई लाभ न होगा। हा, वकीलो को चोचलो का अच्छा मौका मिलेगा।

अर्चना रूपवती से बोली—पर प्रेमचन्द जी के वकील तो यही समझते हैं कि इस प्रकार की गवाही से लाभ होगा।

रूपवती बोली—उन्होने यह कहा कि इस प्रकार की गवाही से तभी लाभ हो सकता है जब स्वय जेलर या कम से कम रामगुलाम उनके पक्ष मे गवाही दे। पर साथ ही उन्होने कहा—प्रेमचन्द की जान एक ही तरीके से बच सकती है, वह यह कि उसे जेल से भगाया जाए।

अर्चना भी कई दिन से यही बात सोच रही थी, अब आनन्दकुमार से परोक्ष इगित के रूप मे जो यह बात सुनी तो उसे बहुत खुशी हुई। श्यामा का भी चेहरा बदल गया। यूसुफ उस बेईमान डाक्टर के कारण जेल से भाग नही सका था और प्रेमचन्द को सम्भव है वैसी किसी बाधा का सामना न करना पडे। वह बोली—अर्चना, मैं सब तरह से इस सम्बन्ध मे तुम्हारी सहायता करने को तैयार हू। तुम इसके लिए प्रयत्न करो।

इतना कहना था कि अर्चना जाने कैसी हो गई। उसने उठकर श्यामा के पैर छू लिए और दीदी-दीदी कहकर रोने लगी। बोली—मुझे माफ करना, मैंने अज्ञानवश जाने क्या-क्या कह डाला। आप सहायता करेगी तो यह काम अवश्य ही सफल होगा।

रूपवती धीरे से खिसक गई और श्यामा तथा अर्चना मे देर तक प्रेमचन्द को जेल से भगाने के सम्बन्ध मे बातचीत होती रही। अर्चना सफाई के गवाहो की सूची फाडकर फेंकने जा रही थी, पर श्यामा बोली—नही, तुम इन लोगो का नाम वकील से जरूर पेश करवा दो। इससे और कुछ नही होगा तो मुकदमे का फैसला होने मे देर लगेगी। और इस बीच मे हम अपनी तैयारिया पूरी कर लेगे····

## ३०

जब से राजेन्द्र जेल मे गया था तब से राजा बसावनसिह ने अग्रेज़ अफसरो को कोई पार्टी नही दी थी और लोगो ने यह समझ लिया था कि राजा साहब अब आगे फिर किसी अफसर को पार्टी नही देगे। प्रथम बार विलायत जाने के पहले वे अग्रेज़ को देखते ही उसे पार्टी दिया करते थे, पर जब वहां से लौटकर आए, तब समझ गए कि अग्रेज़-अग्रेज़ सब एक-से नही हैं। यहा जो लोग नवाब वाजिदअलीशाह के नाती बने फिरते है, और २०-२० नौकर रखते हैं, यो तो हर भारतवासी ही उनके नौकर हैं, वहां कोई उनको टका सेर भी नही पूछता।

वह एक भूतपूर्व ज़िला मजिस्ट्रेट से पत्र-व्यवहार करते रहते थे। जब ढूढ-ढाढकर वे इंगलैंड के देहात मे उसके घर पर पहुचे तो देखा कि अपने यहां के गाव के मोटे किसानों से भी उसकी हालत खराब है। वह स्वय ही सारा काम करता है और उसकी बीवी घर की देख-भाल रखती है। न कोई नौकर है न नौकरानी। हा, बिजली आदि है, इससे कुछ सुविधा है।

तब से वह कमिश्नर से नीचे किसीको पार्टी नही देते थे। अधिकतर तो लाट साहब या विलायत से आए हुए उनके अतिथियों को उस समय पार्टी देते थे जबकि वह फैजाबाद पधारते थे।

सुमित्रा ने जब सुना कि राजा साहेब वर्तमान कमिश्नर मिस्टर फाकेट को पार्टी दे रहे है तो उसका माथा ठनका, पर विशेष नही। वह राजेन्द्र की तरह यह आशा नही करती थी कि राजा साहब अब काग्रेसी हो जाएगे या कम से कम ऐसी कोई बात नही करेंगे जिसे काग्रेसी नापसन्द करते हो।

उसने इसलिए भी पार्टी मे कोई दिलचस्पी नही ली कि जिस दिन यह पार्टी रखी गई थी, उस दिन रविवार पडता था और सबेरे ही कार से वह राजेन्द्र से मिलाई करने जा रही थी।

पार्टी की तैयारिया बहुत बडे पैमाने पर हो रही थी। झाड-फानूस आदि जो प्राचीन युग के ऐश्वर्य के प्रतीक थे, उन्हे झाडा-पोछा जा रहा था और जगह-जगह तोरण-द्वार बन रहे थे। राजा साहब को फूलो का बहुत शौक था, इसलिए उन्होने अपनी ताल्लुकेदारी मे जगह-जगह जौनपुर की तरह गुलाब

और चमेली की खेती का प्रवर्तन किया था।

इस अवसर पर उन बागो से फूल टोकरियों मे नहीं बल्कि गाडियो मे भरकर आने वाले थे।

सुमित्रा की मा रानी सारन्धा स्वय तैयारियो मे भाग ले रही थी, पर अभी तक यह तय नही कर पाई थी कि वे इस पार्टी मे एक रानी की पोशाक मे भाग ले या अबकी बार पेरिस जाकर जो कपडे सिलवा लाई थी, उसमे पेरिस की उच्च घराने की एक सम्भ्रान्त मेम की तरह भाग ले। उनका उद्देश्य स्पष्ट था। एक तो श्रीमती फाकेट को शिकस्त देना और दूसरे अवध की सारी रानियो से बाज़ी मार ले जाना।

वे भी यह तौल नही पा रही थी कि किस पोशाक के पहनने से ये दोनों उद्देश्य बेहतर सिद्ध होगे। वे इसी परेशानी मे रहती थी और कमरा बन्द करके अपनी लौडियो के साथ रिहर्सल करती रहती थी कि कौन-सी पोशाक ठीक रहेगी।

अब पार्टी के केवल तीन दिन रह गए थे, तब सारन्धा को एकाएक मालूम हुआ कि जिस दिन पार्टी हो रही है उस दिन सुमित्रा राजेन्द्र से मिलाई करने जा रही है।

उन्होने जल्दी से सुमित्रा को बुलाया—मैने सुना कि पार्टी के दिन तू बनारस जा रही है ?

—हा।

—यह कैसे हो सकता है ? तुम्हारे ही लिए तो पार्टी हो रही है और तुम्हीं गायब !

सुमित्रा ने आश्चर्य के साथ कहा—मेरे लिए पार्टी कैसे ? पार्टी तो कमिश्नर साहब को दी जा रही है।

—हा, दी तो उनको जा रही है, पर उद्देश्य यह है कि राजेन्द्र को छुडाया जाए। नई शादी हुई और एक साल की सजा हो गई। इसीसे राजा साहब ने यह जुगत निकाली है।

—जुगत कैसी ?

रानी सारन्धा इस समय उसी रिहर्सल में लगी हुई थी। न मालूम कितनी साड़ियो और स्कर्टो का वहा ढेर लगा हुआ था। तीन-चार लौडिया उन्हे पेश

करने तथा रखने-रखाने और पहनाने में व्यस्त थी ।

रानी सारन्धा ने आश्चर्य के साथ कहा—अरे तुझे कुछ नही मालूम ? मैंने समझा था कि राजा साहब ने सारी बात बताई होगी ।

—नही तो ।

रानी जी के संगमरमर-ऐसे शुभ्र माथे पर बल पड गए, पर आदमकद आइना सामने था, उन्होने झट से अपने को सम्हालते हुए कहा—प्रोग्राम यह है कि राजा साहब अपने परिवार को इन्ट्रोड्यूस करेंगे और जब तेरी बारी आएगी तो कहेंगे कि इसकी अभी शादी की थी पर इसका पति जेल पहुच गया । राजा साहब आशा करते है कि इतने ही से काम बन जाएगा, और वे राजेन्द्र की रिहाई का आर्डर दे देंगे । तू मिलाई करने जा रही है, पर वह खुद ही यहा पर चौबीस घटे के अन्दर पहुंच जाएगा ।

सुमित्रा को यह बात अच्छी नही लगी, बोली—राजा साहब ऐसा क्यो कर रहे हैं ? उनके खानदान का कोई आदमी जेल में हो सकता है, इससे तो कमिश्नर के सामने अप्रतिष्ठा ही होगी ।

रानी सारन्धा ने एक स्कर्ट छोडकर साडी पहनते हुए कहा—अप्रतिष्ठा कुछ नही है । यदि अप्रतिष्ठा होती तो यह शादी ही न होती । प० मोतीलाल और सी० आर० दास-ऐसे लोग जेल मे गए हैं इसलिए अब इसमे कोई अप्रि-तिष्ठा नही है ।

बात तो ठीक थी फिर भी सुमित्रा इसे टालना चाहती थी । बोली—फिर भी इसके उल्लेख की ज़रूरत क्या है ?

रानी सारन्धा अब तक अपने को ही देख रही थीं, या बेटी को देख भी रही थी तो आइने के अन्दर । अब उन्होने सिर घुमाकर बेटी को देखा, बोलीं—तो क्या तू यह नही चाहती कि राजेन्द्र छूट आए ?

—मै जरूर चाहती हू, पर इस तरह नही । मैं राजा साहब के पास जा रही हूं ।

रानी सारन्धा अप्रसन्न हुईं, पर वे चाहती थी कि जिस समाधान की वे साधना कर रही थी, वह जल्दी प्राप्त हो जाए क्योंकि केवल तीन ही दिन रह गए थे और इतनी बडी समस्या सुलझानी थी, इसलिए उन्होने कन्या के यहा से चले जाने का स्वागत किया । बोली—अच्छी बात है, उन्हीको समझाकर देख

लो पर वे शायद ही मानें।

जब पार्टी देने का उद्देश्य ही यह था तो सचमुच उन्हे मनाना टेढी खीर था, फिर भी सुमित्रा हिम्मत करके राजा साहब के पास गई। राजा साहब बेटी को आते देखकर यह समझे कि कुछ साडियो या किसी खिलौने की (राजा साहब स्त्रियो को ही खिलौना समझते थे) माग लेकर आई है। उन्हे कुछ आपत्ति नही थी, फिर भी स्वभाववश उन्होने चेहरा कुछ कडा बना लिया।

सुमित्रा ने सारी बात कह सुनाई और अन्त मे बोली—यह ठीक नही रहेगा। वे इसे कतई पसन्द नही करेंगे।

राजा साहब ने बेटी की तरफ देखा फिर बोले—मैं इस इरादे से पार्टी नही दे रहा हू। रानी साहबा गलत समझी है। यदि मैं चाहू तो गवर्नर से कहकर सारी बनारस जेल खाली करा सकता हू, फिर मै फाकेट की खुशामद क्यो करू? अब तुम नही चाहती तो यह नही कहूगा कि तुम्हारा पति जेल मे है।

सुमित्रा इससे सन्तुष्ट हो गई, पर बोली—मै तो उस दिन बनारस मिलाई करने जा रही हू।

—पर पार्टी तो रात मे है, तुम लौट आना।

—पर सब बहनो के पति होगे, कही फाकेट ने मुझे अकेली देखकर पूछ लिया तो? फिर तो वही बात हो जाएगी, इससे मेरा वहा न होना ही अच्छा है....।

राजा साहब ने इसे भी स्वीकार कर लिया।

सुमित्रा जाने लगी तो लौटकर बोली—मेरा न रहना इस दृष्टि से भी अच्छा रहेगा कि मेरी बहने शायद भीतर-भीतर यह नही चाहती कि मैं उस पार्टी में रहू। क्योकि आपके बाकी सब दामाद या तो आई० सी० एस० है या स्वय ही ताल्लुकेदारो के लड़के है।

राजा साहब भावुक व्यक्ति नही थे। जीवन के हमामदस्ते मे वे घुट-पिसकर छन गए थे। बोले—यदि तू ऐसा कहती है, तब तो मैं कहूगा कि राजेन्द्र को मैं इन सबसे ऊचा समझता हू। मैं भविष्यवाणी करता हू कि यह सबके सब उसके सामने पानी भरेंगे।

सुमित्रा यह समझ नही पाई कि पिता जी ने ऐसा उसकी स्थिति के प्रति दयार्द्र होकर कहा या इसमे कुछ तत्व था।

वह आख पोछती हुई वहा से चली गई।

# ३१

अर्चना के लिए तो कोई बन्धन नही था। उसे किसीकी अनुमति लेनी नही थी। क्योकि वह जिस टुकडी की सदस्या थी, वह बहुत पहले ही मुख्य दल से अलग हो चुकी थी। अब अर्चना ही अपनी टुकडी की सर्वेसर्वा थी।

बीच मे प्रेमचन्द के सम्बन्ध मे गलत धारणा फैल जाने के कारण जो मर्यादा-हानि हुई थी, अब उसका न केवल पुनरुद्धार हुआ था, बल्कि वह पहले से कई गुनी अधिक हो गई थी। पर प्रेमचन्द को जेल से भगाने के कार्य मे भाग लेने के लिए श्यामा को मुख्य दल से अनुमति लेनी थी। यह अनुमति जितनी आसानी से मिलने की आशा थी, उतनी आसानी से नही मिली।

प्रान्तीय समिति मे जब यह प्रस्ताव रखा गया तो इलाहाबाद के 'उपदेशक' वेदव्यास (यह उनका उपनाम था) ने आपत्ति उठाते हुए कहा—जब वह टुकड़ी हमसे अलग हो गई है तो हम उसका अस्तित्व ही नही मानते। यही क्या कम है कि हमने उन्हे सजा नही दी। उन्होने दल के विरुद्ध षड्यत्र करके काशी वाले हथियार हथिया लिए।

इसपर काफी तर्क-वितर्क हुआ क्योकि वेदव्यास ने जो बाते कही थी, वे सही थी। इससे इन्कार नही किया जा सकता था कि अर्चना और प्रेमचन्द आदि नौजवानो ने मुख्य क्रान्तिकारी दल के विरुद्ध विद्रोह किया था, उसपर भीरु और दीर्घसूत्री होने का अभियोग लगाया था और सबसे बडी बात यह कि हथियार ले लिए थे। आदमी तो मिल जाते है, पर हथियार नही मिलते।

खैरियत यह है कि उस बैठक मे बगाल के वे दादा भी मौजूद थे। वे बडी देर तक बाल की खाल निकाला जाना बर्दाश्त करते रहे, फिर एकदम से आगबबूला होकर बोले—तुम लोग शाला क्रान्तिकारी दल को शमझता क्या है ? हाम लोग विधानवादी नही है, और न हाम बाल का खाल निकालने में

विश्शाश करता है। यह जरूर है कि यह लोग विद्रोह किया, किन्तु प्रेमचान्द अब एक नेशनल फिगर हो गया है क्योकि उशने शाला तशद्दुक को खतम कर दिया। वह लोग हामशे कुछ मागता नही है, शिर्फ श्यामा की मदत मागता है, इशमे क्या हरज है ? तुम लोग नही मानेगा तो हाम भी दल शे अलग होगा।

इस व्याख्यान से हवा एकदम दूसरी तरफ बहने लगी। स्वय वेदव्यास ने कहा—दादा ने जो नेशनल फिगर वाली बात कही है, वह सही है। मैने उस कोण से सोचा नही था। हमे ज़रूर मदद करनी चाहिए।

सचमुच प्रेमचन्द इस समय बहुत प्रसिद्ध हो गया था और जहा भी दस नौजवान एकत्र होते उसकी चर्चा होती और उसकी जय बोली जाती। ख्याति के भी अजीब नियम होते हैं या यो कहना चाहिए कि ख्याति का कोई नियम ही नही होता।

जहां तक हिसाब मे आते थे ये घटक उसमे दिखाई देते थे : तारा एक सुन्दर नवयुवती, तिसपर मिस्टर रतन बनर्जी की बेटी जो स्वयं क्रान्तिकारी के द्वारा विशेषकर कुणाल-ऐसे व्यक्ति द्वारा मार डाले गए थे; तारा सत्याग्रह करती है, उसे गिरफ्तारी के बहाने मिस्टर बनर्जी के द्वारा उठाया हुआ तसद्दुक उड़ा ले जाता है, उसीका बदला प्रेमचन्द अत्यन्त असम्भव इसलिए रोमाटिक परिस्थितियो में लेता है; इसके साथ ही प्रेमचन्द का अद्भुत व्यक्तित्व, मजिस्ट्रेट के बगले पर जाकर सिगरेट पीते रहना, जीवन के प्रति व्यग्यात्मक दृष्टिकोण और मृत्यु के प्रतीक शायद करुणाभरी दृष्टि से देखने की प्रवृत्ति, फिर भी इतना सावधान कि पुलिस वाले पिस्तौल नही पा सके; पता नही उसे कैसे तिड़ी कर दी।

दादा ने जो नेशनल फिगर कहा था, वह कोई अत्युक्ति नही थी। ऊपर जो बातें बताई गई हैं उनके अलावा इस समय आन्दोलन का चालू होना और पुलिस के डडों के नीचे रोज़ पडाक-पडाक सैकड़ो खोपडियो का फटना; उसी पुलिस के एक प्रमुख व्यक्ति के सिर पर मशहरी के डडो की मार और उसे खतम कर देना। कम से कम एक बार पुलिस वालो को इसका मज़ा तो मिल गया कि खोपडी फटने से कैसा लुत्फ आता है।

इन दिनो प्रेमचन्द का फोटो चोरी से बिकता था और लोग उसे चाव से खरीदते थे। क्यो न ऐसा हो ? प्रेमचन्द केवल उग्र राष्ट्रीयता का प्रतीक ही नही

था, बल्कि वह नारीत्व का भी जागरूक प्रहरी था। यदि वह टेगर्ट पर हमला करता तो कम से कम सौ मे दस सम्भावनाए ऐसी थी कि वह भाग निकलता। क्या इससे पहले कई क्रान्तिकारी हत्या करके भाग नही निकले है? बगाल मे तो बहुत-से क्रान्तिकारी ऐसा कर पाए।

इधर उत्तर भारत में चन्द्रशेखर आज़ाद, भगतसिह आदि कितने ही लोगों ने इस प्रकार सफल हमले किए थे। स्वय कुणाल ने और तो और बनर्जी को ही इस प्रकार खतम किया था, पर प्रेमचन्द ने ऐसी परिस्थितियो मे हमला किया था कि उसके लिए भागने की कोई गुजाइश ही नही थी। और एक तरह से उसने जान-बूझकर फांसी का फन्दा अपने गले में डाल लिया था। नवयुवको से कही अधिक जोश प्रेमचन्द के बारे मे नवयुवतियो और स्त्रियो मे था।

दादा ने समिति के सामने तो नहीं, पर बाद मे दो-तीन अतरंग क्रान्तिकारी नेताओ मे यह कहा—हामे तो इश बात पर खुशी है कि श्यामा को फिर शे जोश आया। नही तो हामने तो उशे केवल एक शत्याग्रही शमझ लिया था।

दादा ने आगे कुछ नही कहा, पर सब लोग उनका मतलब समझ गए।

## ३२

अर्चना और श्यामा बहुत प्रयत्न करने पर भी प्रेमचन्द के साथ कोई सम्पर्क स्थापित नही कर सकी और जब सम्पर्क स्थापित नही हुआ तो जेल से भागना कैसे सम्भव होता? बाहर वाले तो मदद ही दे सकते थे, असली काम तो भीतर से ही होना था।

अर्चना ने जब यह बताया कि राजेन्द्र जी चाहे तो पत्र-व्यवहार हो सकता है तब श्यामा बडे असमजस मे पड गई क्योकि वह किसी भी काम के लिए राजेन्द्र से अनुरोध नही करना चाहती थी। वह अर्चना को यह भी नही बता सकती थी कि क्यो वह अनुरोध नही करना चाहती, विशेषकर जब कि एक नेशनल फिगर के (अब तक प्रेमचन्द के सम्बन्ध मे यह शब्द क्रान्तिकारियो मे

प्रचलित हो चुका था) जीवन और मृत्यु का प्रश्न था। सारी बाते सुनकर श्यामा ने मुह कडवा करके कहा—तो राजेन्द्र जी ने एकाएक तुम्हारा पत्र-व्यवहार रोक दिया·· ···

अर्चना बोली—उन्होने जान-बूझकर रोका ऐसा तो नहीं कह सकती, सम्भव है कि कोई अडचन आ गई हो और प्रेमचन्द जी के पास पत्र भेजना सम्भव न रह गया हो।

श्यामा ने अभी यह निर्णय नही किया था कि वह राजेन्द्र से अनुरोध करेगी या नही, इसलिए उसने स्थिति का और अच्छी तरह अध्ययन करने के लिए कहा—अच्छा मैं देखू गी, और भी तो राजनीतिक कैदी है, शायद उनमे से कोई काम आ सके।

श्यामा जिस बात को बताना नही चाहती थी, अर्चना ने उसे अस्पष्ट रूप से सुन रखा था, जैसे स्वप्न मे बात देखी हो, बोली—राजेन्द्र जी आनन्दकुमार को तो मानते है·· ···

—पर मैं इसमे आनन्दकुमार को घसीटना नही चाहती। इतने बड़े-बडे काण्ड हुए, पर कभी हमने उनसे अनुरोध नही किया। हा, वह खुद ही सब मामलो मे पैर फसाते जाते है, यह दूसरी बात है। उन्हे तो यह भी पता नही था कि यूसुफ साहब को जेल से भगाने की चेष्टा की गई थी और वह असफल रही। उन्हे बाद को बताया गया।

अर्चना बोली—बस काम हो जाए, चाहे जैसे हो।

अगले दिन श्यामा आनन्दकुमार से जेल मे मिलने गई तो उसने अनायास ही पूछा—प्रेमचन्द का क्या हाल है ?

—बडा अच्छा हाल है। वह रात को कभी-कभी गाता है तो हमारे यहा उसकी आवाज़ स्पष्ट सुनाई पडती है। ऐसा मालूम होता है कि वह मस्ती के साथ अन्तिम बलिदान की प्रतीक्षा कर रहा है। हमारे बैरक के भी कुछ लोग उसे प्रोत्साहन देने के लिए उसी समय शहीदो की जय बोलते हैं।

श्यामा कुछ नही बोली। उसे यूसुफ की याद आ रही है। वह भी अच्छे गाने वाले थे, पर किसीने यह नही बताया कि वह फासी घर मे या जेल मे गाया करते थे। बोली—क्या किसी तरह प्रेमचन्द को फासी से बचाना सम्भव नही है ?

आनन्दकुमार ने निराशा के साथ कहा—मुकदमा तो बिल्कुल साफ है। सफाई के गवाहो से कुछ लाभ नही, सिवा इसके कि कुछ समय मिल जाए।

—हू......

फिर एकाएक श्यामा ने पूछा—क्या राजेन्द्र जी अब भी तिकडम से चिट्ठी आदि भेजा करते है ?

आनन्दकुमार हसे, बोले—नई शादी है .....

जाने क्या बात थी, इसके बाद इसके सम्बन्ध मे कोई बातचीत करने की प्रवृत्ति श्यामा को नही हुई। वह इधर-उधर की बातचीत करके वापस चली आई।

घर मे पहुची तो देखा अर्चना बैठी हुई है। वह अपनी चिन्ताओ मे इस प्रकार डूबी थी कि उसने श्यामा को आते हुए नही देखा।

श्यामा ने उसे देखा और उसका मन करुणा से, जो आंशिक रूप से आत्म-करुणा थी, भर गया। वह भी तो यूसुफ के लिए इसी प्रकार तडपती थी। क्या कुछ मामूली झिझक या शिष्टाचार के कारण वह इस प्रयास को सफल नही होने देगी ? नही, वह सब कुछ करेगी। यह तो वह जानती ही थी कि राजेन्द्र उसका अनुरोध टाल नही सकता। यदि उसने उसे यह लिख भेजा कि किसी वार्डर को ठीक कर दो तो वह जरूर ऐसा करेगा। बोली—मैं अभी राजेन्द्र जी के घर जाती हू, आशा है कि सब काम ठीक हो जाएगा।

अर्चना को फिर भी कुछ खटका रहा कि शायद श्यामा इस कार्य के महत्व को पूर्णरूप से नही समझ रही है। बोली—मैं आशा करती हू कि उनके बाहर आने से क्रान्तिकारी दल का कार्य ठीक से होने लगेगा। आपने देखा होगा, उनके चित्र सडको पर बिकते है, यद्यपि पुलिस इस बीच मे कई बार तलाशी लेकर कई दुकानो से चित्र के पुलिन्दे बरामद कर चुकी है।

श्यामा ने उसके उत्तर मे कुछ नही कहा। कहने को था ही क्या ? वह चित्र खरीदने वाली भावुकता की विशेष कायल नही थी। रहा, जो लोग बेच रहे थे, वे कहा तक व्यापार के कारण बेच रहे थे और कहा तक भावुकता के कारण, यह सन्दिग्ध था। बोली—यहा के लोग जल्दी ही किसीकी पूजा, मूर्ति गढकर पूजा करने लगते है। पर इसे मैं भक्ति की निशानी नही मानती। जहा कोई देवता के स्तर पर पहुचा दिया गया, वहा लोग आपस मे इस तरह कह-

सुन लेते है कि वे तो देवता थे, उनकी बात और थी। इस प्रकार उनका अनुसरण या अनुकरण नही होता जो असली चीज है, बल्कि केवल पूजा चलती रहती है।

अर्चना बोली—है तो कुछ ऐसी ही बात। पर साथ ही उसके मन ने कहा कि कही श्यामा दीदी ईर्ष्या तो नही कर रही है कि प्रेमचन्द का इतना सम्मान हो रहा है। बोली—तो दीदी, आज आप उनसे मिल लीजिए। कुछ तो करना ही है।

उसी दिन श्यामा सुमित्रा से मिली और अगले ही दिन एक सफेदपोश जेल वार्डर राजेन्द्र का एक पत्र लेकर श्यामा से मिला। पत्र मे लिखा था·

यह पत्र केवल आप ही के लिए है। मैंने अर्चना और प्रेमचन्द का पत्र-व्यवहार इसलिए बन्द कर दिया कि मैंने सोचा दो प्रेमियो मे पत्र-व्यवहार कराना कोई इतना ज़रूरी नही है।···

पत्र-व्यवहार कराने का असली कारण कुछ और ही था। श्यामा को अब तक यह बात मालूम नही थी, पर वह मन ही मन हसी कि स्वय तो ''पत्नी को दिन मे दो बार पत्र लिखते है और बेचारे प्रेमचन्द को मना करते है। आगे पत्र मे लिखा था :

पर अब आपका पत्र पाकर मैं सारी स्थिति समझ गया। यह अवश्य ही शुभ कार्य है। मै हृदय से आप लोगो की सफलता चाहता हू। मेरे जरिए से पत्रो के आने-जाने की कोई जरूरत नही, इसलिए पत्रवाहक को आपके पास भेजता हू, आप उससे बात कर लें।

उसी दिन से पत्र-व्यवहार जारी हो गया। प्रेमचन्द ने पहले पत्र मे लिखा·

मैंने अपने मन के तारो को एक दूसरे ही सुर मे बाध लिया था। अब तुम्हारा पत्र पाकर एक धक्का-सा लगा। जहा मै हूं, वहा मुझे तो जीवन और मृत्यु मे कोई प्रभेद नही ज्ञात होता। जब मृत्यु जीवन के तत्व को और बल पहुचाने के लिए है, तो वह मृत्यु कहा रही? मुझे तो लगता है, असली जीवन वही है। केवल श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया के षट्राग मे क्या धरा है?

मैंने अपने लिए एक अक्ष निर्दिष्ट कर लिया था, अब उससे च्युत होकर दूसरे अक्ष में प्रघूर्णित होना कुछ अटपटा लग रहा है, पर जब तुम लोगो की इच्छा

है तो यही सही । चिता के लिए एकत्र की हुई लकडिया कहां तक मंगलकार्य की समिधा बन सकती हैं, इसमे मुझे बड़ा सन्देह है।····

ज्यो-ज्यो अर्चना इस पत्र को गुप्त लिपि से बदलकर साधारण लिपि मे करती रही, त्यो-त्यो उसका आश्चर्य बढता रहा। यो तो वह जानती थी कि प्रेमचन्द अपने स्वभाव से जहा एक वाक्य से काम चल सकता है, वहा दस वाक्य कहता है, जहा बिल्कुल सीधी सादी बात कहनी है, वहा भी बडे घुमाव-फिराव के साथ बाते करता है, पर इस प्रकार जीवन और मृत्यु के ऐन चौखट पर खडे होकर वह वागाडम्बर मे फस सकता है, और केवल वागाडम्बर ही क्यो, ऐसी अजीब बाते लिख सकता है, यह अर्चना को कैसा-कैसा लगा।

कुछ देर तक तो वह यह निश्चय नही कर पाई कि वह इस पत्र को श्यामा को दिखाए या नही। या दिखाए तो बदलकर दिखाए। पर अन्त तक उसे कुछ भय-सा मालूम हुआ और उसने श्यामा को जाकर पत्र दिखा दिया।

श्यामा को भी ऐसा मालूम हुआ कि जैसे खाना खाते वक्त कई ककड़िया एक साथ उसके दातो से टकरा गई हो।

उसने भी अपना असली भाव छिपाया, बोली—ऐसी मानसिक अवस्था मे जो बात निकलती है, वह ऋजु और सरल रेखा मे नही निकलती, इससे विक्षुब्ध होने की कोई बात नही है।

कहकर वह कुछ सोचने लगी फिर बोली—सम्भव है कि उनको हमारी कार्य-कुशलता पर पूरा विश्वास न हो, यानी वे यह समझते हो कि हम लोग शायद यह कार्य्यक्रम सफल नही कर सकेगे। तभी उन्होने आधे दिल से पत्र लिखा है। इतने दिनो तक बीच मे पत्र-व्यवहार रुक जाने का भी उनपर असर होगा ही।

—तो क्या उन्हे मैं यह सूचना दे दू कि मुख्यदल की प्रान्तीय समिति ने भी इसमे स्वीकृति दे दी है और उनका भी इसमें सहयोग रहेगा ?

—नही, ऐसी कोई बात लिखने की जरूरत नही है। कुणाल जी कहा करते थे कि हमे हर एक पत्र ऐसे लिखना चाहिए कि उनके पकडे जानेपर कम से कम नुकसान हो। उस ख्याल से व्यर्थ के ब्यौरे देने की कोई आवश्यकता नही है।—इतना कहने के बाद उसे ख्याल आया कि कही अर्चना यह न समझे कि मैं अपनी चमड़ी बचा रही हू। बोली—हा, तुम मेरा नाम दे सकती हो। उसीसे वह समझ जाएगे कि पूरा दल तुम्हारे पीछे है। और कुछ कटिंग, फोटो आदि भी

भेज देना, उससे जीवन के प्रति अभिरुचि बढेगी।

अर्चना बोली—मैंने तो यह सब पहले पत्र के साथ ही भेज दिया था।

—तो फिर तुम अगले पत्र मे काम की बाते लिखो।

## ३३

प्रेमचन्द का मुकदमा जेल के अन्दर ही होता था। बहुत थोडे-से लोग उसमे जा पाते थे। सफाई के गवाह आठ थे। इनमे से छ· तो सत्याग्रही कैदी थे, जिन्होने घुमा-फिराकर वही एक बात कही कि हमने तसद्दुक को उस बैरक की तरफ जाते देखा, जिसमे प्रेमचन्द रखे गए थे। हम लोग कौतूहलवश वही फाटक पर डटे रहे क्योकि हमे यह खबर मिली थी कि प्रेमचन्द को मारकर सरकारी गवाह बनाया जा रहा है।

जब पहले गवाह रामचरण अग्रवाल ने यह कहानी कही, तो सरकारी वकील पूछ बैठा—आपको यह खबर कैसे मिली कि प्रेमचन्द को मार-मारकर सरकारी गवाह बनाया जा रहा है?

यह खबर तो कैदियो और सहानुभूति रखने वाले जमादारो से मिली थी, रामचरण इसे अदालत मे कैसे कह सकता था? एक क्षण के लिए उसका चेहरा फक् पड गया, पर अगले ही क्षण उसे एक नई बात सूझ गई। एक ऐसी बात जो अब तक कभी सोची नही थी। पर जिसे सुनकर सरकारी वकील साहब को कोई खुशी नही हुई। रामचरण बोला—मैंने आंख से तो देखा नही, पर कान से सुना।

—क्या सुना?

—यह सुना कि तसदुद्क चिल्ला-चिल्लाकर धमकिया दे रहा है, और उसके बाद मार पडने की आवाज़ सुनी।

सरकारी वकील ने गरमाकर कहा—आप यह हलफिया कहते हैं?

—जी हा, मैं हलफिया कहता हू कि प्रेमचन्द रोज मारे जाते थे।

इसपर सरकारी वकील ने अदालत की तरफ रुख करके कहा—हुजूर, मैं बाद को जेल का नक्शा दिखाकर यह प्रमाणित करूगा कि अभियुक्त जिस बैरक मे बन्द था, उससे कोई भी आवाज़ इन लोगो की बैरक मे नही पहुच सकती।

जो अगले गवाह आए उनसे सरकारी वकील ने इस सम्बन्ध मे जिरह ही नही की। जब छ के छ: जेल वाले गवाहो ने तोते की तरह एक ही बयान दिया तो अन्तिम गवाह परेशचन्द्र के समय सरकारी वकील फिर एक बार उत्तेजित हो गए। बोले—आप लोगो ने सलाह करके यह गवाही तैयार की ?

इसपर परेशचन्द्र बोला—हमने कोई सलाह नही की। हां, यदि हमने कोई षड्यंत्र किया तो वह यह कि हम किसी भी दामोपर सच बोलेंगे।

सरकारी वकील ने और कुछ नही पूछा। बाकी दो गवाहो ने यह कहा कि प्रेमचन्द पक्षी विज्ञान मे बहुत दिलचस्पी रखते है और हम लोग यहा की जो बर्ड-वाचर्स-एसोसिएशन है उसके सदस्य है।

इसपर सरकारी वकील को कुछ कहना नही था, फिर भी एक प्रश्न उसने पूछ ही लिया—यह तो मालूम हो गया कि आप लोग पक्षी-विज्ञान मे दिलचस्पी रखते हैं, पर यह बताइए, क्या यह किसी पक्षी-वैज्ञानिक के लिए सम्भव है कि वह कोई नई किस्म की चिडिया देखे तो सुध-बुध भूलकर कही भी चला जाए ?

गवाह मुस्ताक हुसैन न कहा—मैं औरो की तो जानता नही हू, पर इग्लैंड से लौटते समय एक जहाज़ पर मैंने एक नई किस्म का सीगल देखा तो उसका पीछा करता हुआ मैं करीब-करीब समुद्र मे गिर पडा था। यह तो कहिए कि मेरी ज़िन्दगी बाकी थी, इसलिए एक फ्रासीसी नौजवान ने मुझे पीछे से खीच लिया, नही तो उसी दिन मेरा काम तमाम हो जाता।

सरकारी वकील ने फिर कुछ नही पूछा।

इन दिनो दोनो तरफ के वकीलो की बहसे जारी थी। मुश्किल से हाथ मे दस रोज़ थे। इसी अवधि मे सारा काम करना था।

यह तय हुआ कि प्रेमचन्द अपनी बैरक का जंगला काटकर बाहर आ जाए। उसके बाद वार्डर द्वारा पहुचाई हुई रस्सी के सहारे भीतर वाली दीवार कूदे, फिर एक दूसरे वार्डर की सहायता से बाहर वाली दीवार फांद जाएगा। दो दीवारे कूद जाना कोई मामूली बात नही थी, पर पानी की तरह रुपया बहाया जा रहा था। मौके के दो वार्डरो को बडी मुश्किलों से तैयार किया गया था।

सौभाग्य से इन दिनो कृष्ण पक्ष था।

जब अर्चना बार-बार आने लगी और हर समय घर मे खुसुर-फुसुर रहने लगी, तब रूपवती ने एक दिन कहा—श्यामा, तुम्हे यह याद रखना चाहिए कि कबीर का भार तुमपर है।

यह बात श्यामा को खूब अच्छी तरह याद थी और हर समय वह इसी चिन्ता मे घुली रहती थी। एकाध बार उसने अपने से कहा भी कि सहायता देना और बात है, पर मुझे इसमे सक्रिय भाग नही लेना चाहिए क्योकि कही यदि कुछ हो-हवा गया तो कबीर लगभग अनाथ हो जाएगा। बाप भी फासी पर चढे और मा भी जेल मे रहे तो ऐसे मा-बाप का लडका आवारे के सिवा और कुछ हो ही नही सकता।

वह जानती थी कि उसके फिर से सक्रिय रूप से दल मे आ जाने के कारण बहुत-से लोग खुश थे, शायद अर्चना इसका श्रेय खुद लेती थी। कभी ऐसा उसके मुह से सुना तो नही, पर उसके दूसरे भक्त उसे यह श्रेय देते थे, इसका पता श्यामा को अच्छी तरह लग चुका था। यदि वह उस दिन, जिस दिन बाबाजी शहीद हुए, जेल भेज दी जाती तो वह इन समस्याओ से बचती। आखिर देश-सेवा देश-सेवा ही है, पर उस हालत मे भी कबीर की दशा क्या होती? अवश्य सत्याग्रह मे चार-छ महीने की ही सजा होती। इतनी ही आशाजनक बात थी।

उसने रूपवती से कहा—वह तो आपके ही पास रहता है, फिर मुझे क्या फिक्र?

फिर इसपर कोई बात नही हुई।

तैयारिया चलती रही, पर इस तैयारी मे एक बडी भारी कमी यह थी कि कोई तजरबेकार आदमी नही था। प्रणवकुमार ऐसे व्यवहार कर रहा था मानो वह बहुत ही तजर्बेकार हो, पर हर पग पर उसकी नातजर्बेकारी खुल जाती थी। वह पिस्तौल लेकर साथ-साथ चल सकता था और मौके पर दस-बीस फायर कर सकता था, पर यह पता नही था कि इन फायरो मे से कितने खाली जाएंगे। यो कुणाल के शिष्य के नाते वह अपने को चादी की दुअन्नी पर निशाना मारने वाला मानता था।

जेल से जो पत्र-व्यवहार हो रहा था, उसके सम्बन्ध मे कोई सीधी-सीधी

जानकारी नही दी जाती थी। यह तय हुआ था कि उससे बस उसी दिन, उसी रात को काम लिया जाएगा जिस रात को प्रेमचन्द भागेगा।

प्रतिभा को तो बिल्कुल इस काम के पास ही नही फटकने दिया गया था पर जब उसे किसी तरह इस तैयारी का पता लगा और उसने इसमे भाग लेना चाहा तो अर्चना ने यह कहा—श्यामा दीदी सब कुछ स्वय कर रही है, मुझे भी कुछ विशेष पता नही। अदालत के बीच से उन्हे उडा लेने का कार्यक्रम चल रहा है··

उसने जान-बूझकर गलत बात कही। प्रतिभा पर किसी प्रकार अविश्वास नही था फिर भी क्रान्तिकारी दल की नीति के अनुसार उसने बिना कारण ही गलत सूचना दे दी। यह इतना बडा कार्य था कि इस सम्बन्ध मे किसी प्रकार का जोखिम उठाने का प्रश्न उठता ही नही था। अर्चना के रक्त की हर बूद अब इसी कार्य को सफल बनाने के लिए सन्नद्ध थी। बोली—तुमसे बहुत बडा काम लिया जाएगा इसलिए तुम रिज़र्व मे रखी गई हो ·

प्रतिभा ने पूछा ( यद्यपि उसे पूछना नही चाहिए था )—वह कौन-सा काम है ?

अर्चना ने इस सम्बन्ध मे कुछ भी सोचा ही नही था। पर वह अनुप्रेरित-सी होकर बोली—उनके जेल से भागने के बाद वातावरण बहुत ही गरम हो जाएगा। सम्भव है श्यामा दीदी और मैं गिरफ्तार हो जाऊं, तब उन्हे यहां से किसी सुरक्षित स्थान मे पहुचाने के लिए उनकी अल्हड़ नवविवाहिता पत्नी का पार्ट अदा करना पडेगा। सम्भव है कि वह दाढ़ी रखाकर मुसलमान बन जाए तो तुम्हे भी मुसलमानिन बनने का कार्य करना पडेगा।

प्रतिभा बहुत उत्साह के साथ बोली—मैं बहुत खुशी से उनकी बीवी बनूगी। मुझे उर्दू भी अच्छी तरह आती है। इस बीच मे और अभ्यास कर लूगी।

जब प्रतिभा इस प्रकार खुश होकर चली गई तो जाने क्यो अर्चना के मन मे एक टीस-सी उठी। केवल रेल की यात्रा भर के लिए सही प्रेमचन्द की प्रतिभा पत्नी बने, यह भी उसे असहनीय लगा।

प्रतिभा ने जो उल्लास-अभिव्यक्ति की थी, वह क्या केवल क्रान्तिकारी दल में कुछ उपयोगी कार्य करने का उल्लास मात्र था ? या इसमे और भी उपादान

थे ? हमेशा हर बैठक मे प्रतिभा प्रेमचन्द का मखौल उडाया करती थी और अब वह उसके साथ किसी प्रकार सयुक्त होने को लालायित है।

उसकी भौहे तन गई, पर उसे इस सम्बन्ध मे अधिक देर तक सोचने का समय नही था। पहले वे निकल तो आए, फिर देख लूगी।

उसी दिन दोनों वार्डरो को पेशगी भुगतान के रूप मे पाच-पाच सौ रुपये देने थे जिनका प्रबन्ध अभी तक नही हो सका था। देना आज ही था। अबतक जितने रुपये खर्च हुए थे, वे भी मुश्किल से दिए जा सके थे और उनमे से काफी रुपये श्यामा को अपने निजी थैले से देना पडा था।

ये रुपये आए तो कहा से आए ? इसके बाद भी काम हासिल हो जाने पर उन्हे इनाम देना था, इस झगडे से छुट्टी पाने के लिए उसने एकाध बार यह भी सोचा था कि प्रेमचन्द बाहर आए और वह भीतर चली जाए तो अच्छा रहे। लोग जय बोलते है, पर पैसे नही देते। सब झझटो से छुट्टी मिल जाए, साथ ही यदि किसीके मन मे कोई सन्देह है, तो उसका भी निरसन हो जाए। पर ? पर उन्हे प्रतिभा ऐसी मुग्धा के हाथो कैसे छोडा जा सकता था। वह तो बाद की बात है, अभी रुपयो का क्या प्रबन्ध हो।

प्रणवकुमार से इस सम्बन्ध मे सलाह लेने की चेष्टा की गई तो उसने अक्खडपने से एक बात कह दी। बोला—कहो तो अभी मैं दाढी-मूछ लगाकर जिस सेठ को चाहू लूट लू। एक हजार रुपये की भी कोई बिसात है ?

अर्चना को यह प्रस्ताव बिल्कुल पसद नही आया क्योकि यह तो घर बैठे मुसीबत बुलाना था। यो डाके मे कोई हर्ज नही, पर उससे कोई नई मुसीबत न आ खडी हो और असली काम खटाई मे पड जाए। नही, यह प्रस्ताव बिल्कुल ही गलत था। बोली—हमे तुम्हारे नेतृत्व का दूसरे तरीके से उपयोग करना है। अभी तो तुम केवल इसी बिन्दु पर अपना ध्यान केन्द्रित रखो कि उन्हे बाहर निकालना है।

—तो फिर रुपये कहां से आएगे ?

—कही न कही से आ ही जाएगे।

पर वह 'कही न कही' कहा है, यह तो दिखाई ही नही दे रहा था। उसके अपने गहने तो सब जा चुके, हाथो मे शख की एक चूडी पडी हुई है। भाई साहब को लिख-लिखकर हार गई थी। उन्होने तो यही लिखा था कि तुम चली

आओ। रुपये का नाम ही नही लिया था। बाल-बच्चेदार ठहरे, फिर सरोज भाभी रुपये को पाई बराबर नही समझती। पर है बडी स्नेहशीला ...

प्रतिभा से उसने क्यो नही कहा? वह पत्नी बनने को तो तैयार है पर कर्तव्य निभाने को कहा तक तैयार है, इसकी भी परीक्षा हो जाती।

तो प्रतिभा से ही कहा जाए।

वह उसी समय प्रतिभा के घर की ओर चल पडी, मिलकर सारी स्थिति बताई। अर्चना को डर था कि प्रतिभा शायद कुछ सकपका जाए या बहाना करे, पर वह तो जैसे कृतकृत्य हो गई और गद्गद होकर बोली—दीदी, आपने मुझसे पहले क्यो नही कहा? मै एक हजार तो क्या और अधिक धन आपको दे सकती हू।

अर्चना को इस प्रकार की बाते सुनकर ऐसा प्रतीत हुआ कि कही यह लडकी वास्तविकता को बिना समझे बाते कर रही है, ऐसा तो नही। बोली—कैसे? क्या कही रुपया रखा है कि तुम्हे फौरन ही मिल जाएगा।

प्रतिभा बोली—हा, ऐसी ही बात है। खैरियत यह है कि आज इसका मौका भी है। पिताजी ने ज़मीन खरीदने के लिए रुपये इकट्ठे किए है। आज या कल मे ज़मीन लेने वाले है, मैं जानती हू कि वे रुपये कहा है। इस समय पिताजी घर पर है भी नही, देखिए, आप खडी रहे, मैं अभी लाती हू।

न जाने क्यो प्रतिभा के इस कथन से अर्चना को कोई तसल्ली नही हुई। बल्कि उसे यह प्रतीत हुआ कि यह किसी अमगल का सूचक है। वह चलने की तैयारी करके बोली—तुम घटे-दो घटे मे लेती आना, मैं जाती हू। . .

प्रतिभा ने बहुत ज़ोर से प्रतिवाद करते हुए कहा—नही-नही, आप यही बैठे, मैं अभी खडे-खडे रुपये लाती हूं।—कहकर वह अर्चना को आगे बोलने का कुछ मौका न देकर भीतर चली गई।

अर्चना अजीब उलझन मे पड गई। न तो वह ठहरना ही चाहती थी क्योकि उसे प्रतिभा की बुद्धि पर भरोसा नही था और न वह जा ही सकती थी। वह एक किताब उठाकर उसे यो ही उलटने-पुलटने लगी।

पहले भी वह कई बार इस कमरे मे आ चुकी थी, पर आज वह जिस परिस्थिति मे बैठी थी, इसमे उसे बहुत बुरा लग रहा था। क्या प्रतिभा सचमुच रुपये ला सकेगी? यदि ला सके तो ठीक ही है, नही तो कोई और प्रबध किया

जाएगा ।

ऐसा लगा कि कोई दरवाज़े से मकान के अन्दर आया, हा, वह इधर ही आ रहा था । अरे यह तो प्रतिभा के पिता ही थे । हा, वही थे, इसमे कोई शक नही । वे आकर एकदम उसके सामने खडे हो गए । बोले—तुम प्रतिभा के लिए आई होगी ?

अभी अर्चना इस प्रश्न का उत्तर नही दे पाई थी कि उधर से प्रतिभा आई । उसे पता नही था कि उसके पिता वहा खडे है, ज्यो ही पता हुआ त्यों ही उसने हाथ के नोटो की गड्डी साडी की आड मे कर ली, पर अब भी वह अच्छी तरह दिखाई देती थी । प्रतिभा के पिता उसी तरफ देख रहे थे । अर्चना की ऐसी हालत हुई कि काटो तो लहू नही । अब तो इस बेवकूफ लकडी ने फसा ही दिया, पता नही यहा से कुशलपूर्वक लौट भी पाती हूं या नही ।

अर्चना ने एकाएक कहा—अच्छा मैं जाती हू ।

अर्चना ने यह केवल इसलिए कहा था कि प्रतिभा सतर्क हो जाए, पर वह बिल्कुल सतर्क नही हुई । वह तो समझ रही थी कि नोट दिखाई नही दे रहे है । अर्चना सचमुच चलने लगी तब अध्यापक वर्मा ने कहा—तुम तो प्रतिभा से मिलने आई थी फिर इतनी जल्दी क्यो जा रही हो ? बैठो, चाय-वाय पियो, फिर जाओ । प्रतिभा, तुम अपनी सहेली के लिए चाय लाओ ।

प्रतिभा चाय लाने के लिए चली गई क्योकि इस घर मे नौकर के सिवा यही दो प्राणी रहते थे । प्रतिभा की मा बहुत पहले ही मर चुकी थी । प्रतिभा का एक भाई बोर्डिंग मे रहकर इजीनियरिग पढता था ।

अब की बार प्रतिभा आई तो वह नोट की गड्डी रखकर आ गई । अर्चना को चाय तो पीनी ही पडी, पर उसे सचमुच किसी वस्तु का स्वाद नही लगा । अध्यापक वर्मा के अनुरोध पर एक पेस्ट्री की पीस भी खानी पडी, पर वह गोबर की तरह मालूम हुई । अब वह चाहती थी कि किसी तरह यहा से जान लेकर भाग जाए । अध्यापक वर्मा ने नोटो की गड्डी तो देख ही ली है, इसलिए उस सम्बन्ध मे कोई आशा तो अब रही नही । यही क्या कम है कि उन्होने कुछ शोरगुल नही मचाया । वह तो यह आशा करती थी कि वह बुरी तरह बिगडेगे और जैसा कि होता है, सारा दोष पराई लडकी पर मढकर उसीको ज्यादा गालियां देंगे । पर इस सम्बन्ध मे कोई बात ही नही छिडी ।

अर्चना जल्दी-जल्दी चाय पीकर भागना चाह रही थी, पर अध्यापक वर्मा स्वय बडे तकल्लुफ के साथ धीरे-धीरे दो-दो मिनट मे एक-एक घूट करके चाय पीने लगे। उन्हे पीता छोडकर भी जाया जा सकता था, पर अर्चना के मन मे जो अपराध-बोध था, इससे वह कुछ नही कर पाई। इधर-इधर की बाते होने लगी, जिनका कोई महत्व नही था।

जब अर्चना उठकर चलने लगी तब अध्यापक वर्मा ने कहा—वह नोट तो लेती जाओ। ...

अर्चना को ऐसा मालूम हुआ जैसे एकाएक उसके पैर ऊपर की तरफ और सिर नीचे की तरफ हो गया है और उसी हालत मे भूचाल आ गया हो। वह लड़खडा गई।

इसपर अध्यापक वर्मा ने उसे सहारा देकर बैठाया और बोले—मै जानता हू कि तुम लोग किसी अच्छे कार्य के लिए धन ले रही थी और फिर यह धन तो प्रतिभा का ही है। सुरेश के लिए तो यह मकान है ही, इसलिए मै प्रतिभा के लिए एक दूसरा मकान बनवाना चाहता था। यदि कोई काम उससे भी भला हो तो प्रतिमा को यह हक है कि वह उसमे धन लगाए।

इसपर अर्चना और प्रतिभा दोनो की आखो मे आंसू आ गए। प्रतिभा तो जाकर अपने पिता से लिपट गई और अर्चना ने क्रातिकारी दल के सम्पूर्ण नियमो के विरुद्ध यह बता दिया कि किसलिए धन चाहिए। इतनी बाते तो प्रतिभा को भी मालूम नही थी।

इसपर अध्यापक वर्मा बोले—उन्होने एक लडकी के प्रति किए हुए अत्याचार का उचित उत्तर दिया है। एक लडकी का बाप होने के नाते मैं यह समझता हू कि उसकी जान बचाने के लिए जो भी त्याग करना पडे, वह कुछ भी नही है। तुम लोग तो अभी भावुक हो, पर मैं भी अपनी जान के बदले उसकी जान बचाने को तैयार हू। धन तो बहुत ही तुच्छ वस्तु है।

अर्चना ने गद्गद होकर कहा—मै तो आपसे डर रही थी, पर आप तो क्रातिकारी से भी क्रातिकारी निकले। ..

इसपर अध्यापक वर्मा ने कहा—यह दु:ख की बात है कि अक्सर ऐसा होता है कि जिनके हाथो मे राज्य का सूत्र होना चाहिए, वे जेलखानो मे सडते है, और जिन्हे जेलखानो मे होना चाहिए वे राज्य के कर्णधार दिखाई देते है।

जब प्रतिभा की मा मरी उन्ही दिनो असहयोग आन्दोलन चला था, मेरी बडी इच्छा थी कि उसमे कूद पडू, पर दो-दो नाबालिग बच्चो का भार जिसपर हो, वह देश-सेवा की विलासिता कैसे कर सकता था। मुझे खुशी है कि प्रतिभा राजनीतिक कार्यो मे दिलचस्पी ले रही है, पर अर्चना, मैं समझता हूं कि यह लड़की तो तुम्हारे दल के लिए उपयोगी सिद्ध नही हो सकती। यह समझ रही थी कि नोट की गड्डी मुझे दिखाई नही पड रही है, पर मुझे तो आते ही दिखाई पड गई थी और छिपाने के बाद भी दिखाई पड रही थी। पतली साडी पहनने का यही नतीजा है।—कहकर अध्यापक वर्मा ठठाकर हस पडे मानो कोई बहुत ही बडा मजाक कर रहे हो।

अन्त तक एक हजार रुपये लेकर अर्चना जब वहा से निकली, तो जीवन के सम्बन्ध मे उसकी आस्था बहुत तगडी हो गई थी। तो केवल मुट्ठी भर युवक और युवतिया ही नही बल्कि हजारो हृदयो मे हर समय क्राति की होमाग्नि प्रज्वलित होती रहती है! अब कुछ न कुछ होकर ही रहेगा!

उसने उस दिन जेल के जमादार के हाथ प्रेमचन्द को जो पत्र भेजा, उसके शब्द-शब्द मे आशावाद लहरा रहा था। उसने लिखा—जो लोग बडे-बडे साम्राज्यो के मालिक है, जिनके पास हज़ारो तोपखाने है, वे इस भ्रम मे पडे रहते हैं कि वे चाहे तो जीवन की चिनगारी का गला दबाकर अपने अन्धकार-मय साम्राज्य को कायम रख सकते है, पर यह उनका भ्रम है।

—मद मे चूर होने के कारण उन्हे दिखाई नही पडता कि कई जगह तो आग राख से दबी है, और यद्यपि वह आख से दिखाई नही देती, तो भी वह है, और मौका पडने पर वह अग्निकाड मे परिणत हो सकती है।

—हमे यह गौरव प्राप्त है कि हमने तुममे एक ज्योति-पुज प्राप्त किया है। परिस्थितियो का षड्यन्त्र तो यह है कि तुम्हे बुझा दिया जाए। पर जीवन की सम्भावनाए अनन्त है, वे किसी भी प्रकार तुम्हे निर्वापित होने नही देगी।

—हमें पूर्ण विश्वास है कि तुम फासी पर चढने के लिए पैदा नही हुए हो, बल्कि तुम्हे तो देश का नेतृत्व करना है। तुम अब सारे देश के हो चुके हो, पर यह न भूलना कि देश के अन्दर मैं भी हू। देश के अनुपात मे मै और मेरा व्यक्तित्व तुच्छ और क्षुद्र है, अत्यन्त क्षुद्र है, मै कुछ अधिक नही चाहती, मै केवल तुम्हे देखकर ही तृप्त हू। तुम अब बहुत महान् हो गए हो, उसी अनुपात

से मै बहुत क्षुद्र हो गई हू, पर इससे क्या, मै उस छोटी-सी तारिका की तरह हू, जो पता नही किस सौर जगत से अपने चन्द्रमा को देखकर झिलमिलाती रहती है। "उसका झिलमिलाना ही उसका सुख है।

इसके बाद पत्र मे भागने के ब्यौरो की याद दिलाई गई थी और तारीख तथा समय फिर से बताया गया था। अर्चना ने पत्र को कई बार पढा फिर वह उसे गुप्त लिपि मे बदलने में लग गई।

## ३४

कुणाल की शहादत के बाद से अमिताभ उस पक्षी की तरह हो चुके थे, जिसका घोसला उजड चुका हो।

क्या यह मृत्युभय था ?

निश्चित रूप से नही !

क्या यह आस्थाहीनता थी ?

हा भी और नही भी। ऐसा लगता था कि कुछ होगा जरूर। ससार जैसा है वैसा नही रहेगा, पर जल्दी मे कोई परिवर्तन होगा, ऐसा भी नही लगता। महान त्याग के फलस्वरूप कुछ बुलबुले उठते थे, पर वे शीघ्र ही विलीन हो जाते थे। ऐसे धीरे-धीरे कब तक क्या होगा ? यही प्रश्न था।

हा, जन-आदोलन आशानुरूप तेजी से बढ रहा था। पर उसका नेतृत्व और उसका वर्ग-चरित्र ? पहले के क्रातिकारी वर्ग-चरित्र के बारे मे नही सोचते थे, पर इधर अमिताभ ने गत पाच साल से जो साहित्य पढा था, उससे उन्हे निश्चय हो गया था कि इतिहास का विकास वर्गो के सघर्ष के जरिए होता है और काग्रेस जनता की सस्था होने पर भी उसका नेतृत्व उच्चवर्ग के हित मे ही कार्य कर सकता था। चौरीचौरा के कारण असहयोग आदोलन रोक देना इसीका प्रमाण था। महात्मा गाधी आदि नेता जनता को जोश दिलाने और भडकाने के गुर जानते थे। वे निजी जीवन मे बडे त्यागी थे, पर वे सही अर्थो मे जन-कान्ति

नही चाहते थे। चौरीचौरा की तरह की घटनाओ से जन-क्रांति का डर था, सचमुच जन-आदोलन होता और उसके फलस्वरूप जन-सरकार कायम होती, तभी···

इसी प्रकार कई कारणो से बारी-बारी से आस्था और आस्थाहीनता का वातावरण उनके मन मे तरगित होता था। इसके साथ ही जब वे आत्म-परीक्षा करते थे तब कई बार यह सोचते थे कि कही मै अपने को धोखा तो नही दे रहा हू ? कही मेरे मन मे चलने वाली यह सब बाल की खाल पृष्ठ-प्रदर्शन या प्रत्यावर्तन की इच्छा का सूचक तो नही है ?

जब ऐसा सोचते थे, तो वे पागल-से हो जाते और अपनी परीक्षा देने के लिए व्याकुल हो उठते थे। ऐसी ही मानसिक अवस्था मे वे उस दिन काशी पहुचे थे, जिस दिन टेगर्ट उनके हाथो तो नही, पर उन्हे गुरु मानने वाले और उनसे अनुप्रेरणा लेने वाले लोगो के हाथो मारा गया था।

उसके अगले दिन वे काशी छोड़कर चले गए थे। वे जल्दी-जल्दी कई स्थानो पर गए और कभी खडे होकर नमक सत्याग्रह देखते रहे तो कभी एक-दो दिनो तक अपने छिपने के स्थान से निकले ही नही। अन्त मे वे छोटा नागपुर के एक जगल मे अपने एक वन-अधिकारी मित्र के पास पहुचे। वहा जब मित्र ने देखा कि उनकी तबियत लग नही रही है, तो उन्होने कहा—चलो, शिकार मे चले।

दोनो बडे उत्साह के साथ शिकार के लिए गए, पर कोई खास शिकार हाथ न लगा। हा, कुछ मुर्गाबी आदि पक्षी मारे और उनको वही अपने साथियो के सहारे भूनकर खाया।

पिकनिक के रूप मे दिन बुरा नही कटा। जगल की मस्त हरियाली, अज्ञात फूलो और फलो की महक और यत्र-तत्र पहाडियो के सान्निध्य से शारीरिक स्फूर्ति आ गई, पर मन उसी हद तक उदास हो गया। मित्र ने कहा—बडा शिकार नही मिला, इससे तुम्हारी तबियत नही लगी ··

अमिताभ हसे, बोले—कुछ ऐसी ही बात है···

मित्र ने कुरेदकर पूछा—कैसी बात है ?

अमिताभ बोले—मै यह सोच रहा था कि जिन लोगो ने मृगया या शिकार की प्रथा चलाई, वे बहुत ही बेवकूफ थे। यदि मारना ही है तो ससार मे दुष्टो

की कमी थोडे ही है। सबसे अच्छे शिकारी तो राम, कृष्ण आदि थे, जिन्होने रावण, कस आदि का शिकार किया' '

मित्र बोले—तो तुम यहा भी इस ढर्रे पर सोच रहे हो ?

अमिताभ ने इसका कोई उत्तर नही दिया और दोनो जगल से लौट आए।

मित्र रघुबर दयाल, अमिताभ के सहपाठी थे, उन्हे किसी राजनैतिक दल से सम्बन्ध नही था, पर वह अमिताभ के मित्र होने के नाते उन्हे बराबर कारतूस आदि दिया करते थे। अमिताभ ने इस व्यक्ति का पता दल को नही दिया था। ऐसे दो-एक निजी मित्र बडे काम आते है। दल को इनसे जो फायदा होना है, वह तो होता ही रहता है, पर इस प्रकार गुप्त रखे जाने से उस व्यक्ति पर किसी प्रकार की आच नही आती, इसके अलावा मौके पर छिपने के लिए आश्रय मिलता है।

मित्र ने कहा—मुझे ऐसा मालूम होता है कि तुम्हारी तबियत ठीक नही रहती है, तुम यही कुछ दिन विश्राम करो। जगल की हवा से तुम्हे लाभ पहुचेगा '

इस कथन का बिल्कुल ही विपरीत असर हुआ। किसीने जैसे अमिताभ के कानो मे कहा—अरे, देश मे इतनी बडी-बडी घटनाए हो रही है और तू इस प्रकार निठल्ला बैठा है ? शर्म नही आती ? जान बचाते फिरता है ?

अमिताभ ने रघुबर दयाल की बाते नही सुनी, अपने मन की बात सुनी ! अपनी अन्तरात्मा की उस आवाज़ के सामने रघुबर दयाल की बात सुनाई ही नही पडी। बोले—तुम तो जानते हो मित्र, कि प्रकृति मे कोई विश्राम नही है। प्रकृति मे या तो मृत्यु है या जीवन। निद्रा मे भी सब अग नही सोते, कुछ अग सोते है, कुछ जागते है।

रघुबर दयाल बोले—मैने इतने गूढ अर्थ मे नही कहा था। जो कुछ कहा था, लौकिक अर्थ मे कहा था।

अमिताभ ने केवल कहा—हू।

उनका मन इस समय बारी-बारी से या तो खारे पानी की कडाही के इर्द-गिर्द पहुच रहा था या बनारस जेल मे पहुच रहा था, जहा प्रेमचन्द कैद था। वे जानकर ही आए थे कि प्रेमचन्द को भगाने का प्रयास हो रहा है और मुख्य-दल ने श्यामा को तो इस कार्य मे हाथ बटाने की अनुमति दी है, इसके अलावा

और कई सहायता नही दी जा रही थी। यह खटकने वाली बात थी। श्यामा को तो कोई तजर्बा नही था और अर्चना केवल तर्क मे ही पटु थी, हा, प्रणवकुमार थोडा-बहुत तजर्बा रखता था, पर कोई विशेष नही। उसे जो तजर्बा था, उससे काम बिगडने का ही डर था।

अगले दिन जब सबेरे रघुबर दयाल ने अपने नौकर से कहा कि वर्माजी को (अमिताभ का इस घर का छद्म नाम) बुलाओ'' 'तो उसने आकर खबर दी, वे तो रात ही को चले गए। मगरू कहता है कि तार पाकर चले गए। पर साहब, तार किधर से आया? मै तो सामने ही लेटा हुआ था, तार वाला आता तो पता नही लगता?

रघुवर दयाल समझ गए कि वे हमेशा की तरह एकाएक चले गए। कोई बात नही, वे चाय पीने लगे, नौकर से बोले—वर्माजी को तार पाने के लिए तार वाले की जरूरत नही होती। उनको सीधे-सीधे तार मिल जाता है।

पता नही इससे नौकर ने क्या समझा, पर वह वहा से टल गया। उसने पहले भी कई बार वर्माजी को इसी तरह अजीब ढग से आते और जाते देखा था। इसके लिए इतना जानना ही काफी था कि साहब वर्माजी को गुरु की तरह मानते है और माने क्यो न? साहब बहुत अच्छे निशानेबाज है, पर वर्माजी उनसे भी अच्छे निशानेबाज़ है। और आदमी कितने अच्छे है, सबसे भाई-भाई करके बोलते है। बिल्कुल गऊ आदमी है।

अमिताभ अपने मित्र के घर से बल्कि जगल वाले घर से सीधे बनारस पहुचे और उस वृद्धा के पास पहुचकर बोले—मा, मैं आ गया।

मा से मालूम हो गया कि प्रेमचन्द का मुकदमा समाप्त हो चुका है। दो-चार दिनो के अन्दर फैसला सुनाया जाने वाला है।

अमिताभ ने पूछा—गैबी की तरफ जो हत्याकाण्ड हुआ था, उसमे कोई पकडा गया? अखबार मे तो कुछ भी नही निकला।

मा बोली—नही, कोई पकडा नही गया है। पकडा कैसे जाता? पुलिस ने सारा काड तुम्हारे नाम लिख दिया, फिर क्यो कोई पकडा जाता?

यह एक तरह से चेतावनी थी कि तुम बिल्कुल ही बाहर मत निकलो, जो कुछ खबर लेनी-देनी हो, वह मुझसे कहो। मै किसलिए हू, माला जपते-जपते

कही भी जा सकती हू। जिधर जाऊगी, उधर ही किसी न किसी मन्दिर का बहाना है।

अमिताभ भी चेतावनी की बात समझ गए। बोले—मा मै तेरा ही बेटा हू ···।

मा की चेतावनी के फलस्वरूप ही हो या और किसी कारण से हो, अमिताभ दिनभर कोठरी से बाहर नही गए। कभी मा की रामायण लेकर उलटते-पुलटते रहे, कभी सोते रहे। सध्या की ओर नाश्ता देते समय मा बोली—बेटा, तुम्हारा मन कुछ उद्विग्न है—कहकर एक बार चेहरे को देखकर फिर बोली—मैने तुम्हे कभी इस प्रकार नही देखा। न हो कुछ दिन हिमालय हो आओ।

अमिताभ बोले—तपस्या करने के लिए किसीको हिमालय जाने की ज़रूरत नही है। मैं कुछ सोच रहा हू ······।

मा बोली—बेटा, सोचने से गुत्थिया नही सुलझती। कर्म के अन्दर से ही स्वय समाधान निकल आता है। यदि निरन्तर कर्म करता हुआ व्यक्ति कुछ गलती भी करे तो उसमे दोष नही लगता। कर्म का अर्थ गति है, और गति मे बहुत-से कार्य सम्भव है, जो निष्क्रियता की हालत मे सम्भव न होते।

अमिताभ बोले—मा, मैं निष्क्रिय नही हू, पर कर्म-सकट मे ज़रूर हू—

न मा ने कोई स्पष्ट बात कही और न बेटे ने, पर दोनो ने एक दूसरे को समझ लिया।

क्रातिकारी दल की यह मा अपने बेटो को बहुत अच्छी तरह समझती थी। अन्त मे मा बोली—न हो, कुछ दिनो के लिए तुम दक्षिण मे जाकर सत्याग्रह मे जेल हो आओ, सोचने का भी समय मिलेगा और सोने का भी।

अमिताभ समझ गए थे कि मा दिन मे इतनी लम्बी नीद लेने के कारण नाराज़ हुई थी, वह अपने बेटो को आलसी नही देखना चाहती थी। अमिताभ ने सफाई देते हुए कहा—निशिचर दिन मे सोएगे नही तो क्या करेगे ?

निशिचर शब्द पर मा की बाछे खिल गई, मानो अब तक जिस प्रश्न का उत्तर वह चाहती थी, इसमे मिल गया, बोली—निशिचर होना उतना कठिन नही है, जितना कि उनकी मा होना।

इसके बाद मा-बेटे मे धीरे-धीरे बाते होने लगी। जब बिल्कुल अधेरा हो गया तब अमिताभ बाहर निकल पडे और मा रामनामी चादर ओढकर माला जपने लगी। उसके सामने प्रश्न यह था कि एक का खाना बनाया जाए या दो का ?

## ३५

जानसन ने एलोकेशी को बडी इज्जत के साथ बैठाया और पहले ही माफी मागता हुआ बोला—तारा के साथ जो कुछ हुआ है, उसका मुझे सख्त अफसोस है। मुझे तो यही रिपोर्ट मिल रही थी कि तारा को बुरी सगत से बचाकर ब्रिटिश सरकार का इन्फार्मर बनाने के लिए जितनी सख्ती जरूरी है, उतनी सख्ती की जा रही है। मुझे उससे अधिक कुछ मालूम नही है।

एलोकेशी ऐसी बातो मे आने वाली नही थी। बोली—पर मैने आपको रजिस्ट्री से एक पत्र लिखा था, फिर उसके बाद एक तार भी दिया था, आपको तार और पत्र यथासमय मिले होंगे ?

—अवश्य मिले थे, पर मैं यह सोच रहा था कि दो-चार दिन कैद रहने से तारा का कुछ बिगड़ेगा नही, सरकारी जेल से वह बगला कुछ बुरा नही था। मुझे पूरा विश्वास था कि किसी भी हालत मे तसद्दुक कोई बेजा हरकत नही करेगा।

एलोकेशी इससे बिल्कुल आश्वस्त नही। बोली—वह जेल वाली घटना हो गई नही तो तारा बताती है कि उस रात को किसी भी तरह उसकी रक्षा नही हो पाती।

जानसन को उस सम्बन्ध मे कुछ कहना नही था, पर एकाएक उसे टेगर्ट की बात याद आ गई। बोला—देखिए, ज्योही स्वर्गीय श्री टेगर्ट को यह पता लगा कि इस तरह से ज्यादती हो रही है, त्यो ही वह तारा के उद्धार के लिए चल पडे थे और इन कथित क्रान्तिकारियो की बदमाशी देखिए कि उन्होने आव देखा न ताव, और उन्हे गोलियो से झलरा बना दिया। ''यह केवल ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध नही बल्कि मनुष्यता के विरुद्ध अपराध है। मैने आपको इसीके विरुद्ध सहयोग के लिए बुलाया है। आप सच जानिए श्रीमती बनर्जी, मुझे इस सहयोग की बड़ी आवश्यकता है, मैं तसद्दुक की तरह यह नही कहना चाहता कि पेशनर के नाते ऐसा करना आपका कर्तव्य है, मैं केवल इतना कहना चाहता हू कि आप उसी काम को जारी रखे जिसे स्वर्गीय श्री बनर्जी ने किया था। इस सम्बन्ध मे मैं आपको यह भी याद दिलाना चाहता हू कि श्री बनर्जी

भी इन्ही लोगो की निर्बुद्धिता और दुष्टता के शिकार हुए थे...

जानसन ने इस मुलाकात के लिए पूरी तैयारी की थी, इसलिए उसने इतना कहकर एक एलबम निकालकर रख दिया जिसमे रतन बनर्जी के तरह-तरह के चित्र (अकेले और सामूहिक) लगे हुए थे।

एलोकेशी ने थोडी देर तक वह एलबम देखा, फिर बोली—हमारे परिवार मे सब लोग इस प्रकार के सहयोग के विरोधी है, जैसा आप चाहते हैं—कहकर वह एकाएक एलबम लौटती हुई बोली—हमारा परिवार स्वर्गीय बनर्जी की विचारधारा या विचार करने के तरीके से कटकर अलग हो गया, बल्कि उसके सम्पूर्ण विरुद्ध हो गया, तो इसकी सारी ज़िम्मेदारी उन्हींपर है। यदि उन्होने हम लोगो का लगभग परित्याग न कर दिया होता तो शायद उन्हींके ढर्रे पर सोचना हमारे लिए स्वाभाविक होता।

दोनो कुछ देर चुप रहे पर ऐसा लगा कि जानसन इस तर्क के विरुद्ध भी तैयार था, बोला—उन्होने जो कुछ भी किया उसकी हम सराहना नही करते, वह उनका निजी मामला था, पर ज्यों ही सरकार के सामने गया, त्यो ही आपको पेशन का हकदार माना गया। अवश्य उससे सारे अन्यायो का प्रतिकार नही होता, पर आप मानेगी कि सरकार इस सम्बन्ध मे मजबूर थी। वह अधिकारियो के निजी जीवन मे हस्तक्षेप तो नही कर सकती थी।

एलोकेशी ने लगभग कडवेपन के साथ कहा—पर उस छिनाल को भी तो कुछ मिलता है। दूसरी तरफ चलिए, मेरे और बच्चो के निजी जीवन मे हस्तक्षेप की बात क्यो सोची जा रही है?

—उस स्त्री को जो कुछ मिलता है वह पेशन के रूप मे नही, बच्चो के भत्ते के रूप मे मिलता है, आखिर वे भी तो उन्ही बनर्जी की सन्तान हैं।

इसपर एलोकेशी एकाएक बहुत तैश मे आ गई और वर्षो से दबी हुई ज्वालामुखी से फिर एक बार विस्फोट हुआ, बोली—जब विवाह असिद्ध था, बल्कि विवाह हुआ ही नही, तो फिर बच्चो को स्वीकार करने का प्रश्न ही कहा आता है? मैं तो कहूंगी कि इस प्रकार सरकार ने भी वही अन्याय जारी रखा, जो उसके एक बडे अफसर ने किया था। यह तो व्यभिचार को प्रोत्साहन देना भी है। आप लोग ऐसा क्यो करते है? इसलिए न कि अधिकाश सरकारी अफसर दुश्चरित्र है......

जानसन ने देखा कि असली बात तो खटाई मे पड गई और बातचीत ऐसी धारा मे चल निकली है कि उसमे फटाव ही पैदा हो गया, सहयोग का वातावरण पास भी नही फटकेगा। बोला—जो हुआ सो हुआ, लैटिन मे एक कहावत है कि जो मर गया उसकी भलाई के सिवा कुछ मत बोल, इसलिए इन बातो को जाने दीजिए, अब आगे की बात कीजिए । तारा को जिस तरह जितनी क्षतिपूर्ति चाहिए उतनी दी जा सकती है, कहिए तो महगाई के नाम पर उसकी शादी का भत्ता बढा दिया जाए ताकि उसके दहेज की रकम काफी बन जाए और योग्य वर आकर्षित हो ।

एलोकेशी ने रुखाई से कहा—यह तो आपको यो ही करना चाहिए था, पर एक बात समझ लीजिए कि हम किसी हालत मे आपकी इन्फार्मर नही बन सकती । यदि आप यह समझते है कि श्री बनर्जी ने सरकार की जो सेवाए की है और जिस प्रकार वे सरकार के शत्रुओ के हाथ मारे गए, उसके कारण उनके परिवार को सहायता मिलनी चाहिए तो आप अपना पेशन जारी रखे, नही तो उसे भी बन्द कर दे । आपको मालूम होगा कि मैने तारा को किस बुरी तरह मारा था क्योकि उसने इन्फार्मर बनना अस्वीकार किया था, पर तब से जो घटनाए हुई है, उनसे मै इस नतीजे पर पहुच चुकी हू कि यदि मुझे अपने बच्चो से अलग नही होना है तो अपने को बदलना पडेगा ।

जानसन का चेहरा फक् हो गया । वह समझ गया कि श्रीमती बनर्जी टस से मस नही होने वाली है । बोला—तो मै ऐसी ही रिपोर्ट सरकार को लिख देता हू । मैने आपको पूरा मौका दिया, और मैं कुछ नही कर सकता । आप शायद एक बात और यह समझ रही हैं कि नमक सत्याग्रह से सरकार उलट जाएगी, पर यह भ्रम है । अभी सैकडो सालो तक ब्रिटिश साम्राज्य कायम रहेगा । जो आन्दोलन चल रहा है, उसे हमने करीब-करीब कुचल दिया है और यदि कुचलने मे कोई कसर रहेगी तो कूटनीति से उसे पूरा किया जा सकता है········धन्यवाद ।

जानसन की बाते सुनकर एलोकेशी की उत्कण्ठा बल्कि उद्विग्नता बहुत बढ गई, जैसे किसी अशुभ घटना की पूर्व सूचना मिली हो ।

•

वह जब घर पहुची तो तारा उसकी प्रतीक्षा कर रही थी । उसने फौरन

ही प्रश्न पर प्रश्न जडने शुरू किए और जब तारा को सारी बाते मालूम हो गई, तो वह मा से लिपट गई, बोली—तुम कोई चिन्ता मत करो। मैं ग्रेजुएट हू। मै कही नौकरी कर लू गी। सारा भार सम्हाल लूगी ..

एक तरफ एलोकेशी जानसन की लतरानिया, जिसमे पृष्ठ-पोषण की भी गन्ध आती थी, सहने के लिए तैयार नही थी, तो दूसरी तरफ अपनी बेटी की बडी-बडी बाते भी सहने के लिए तैयार नही थी। बोली—इस भवसागर मे मैं तेरी ही नाव की बदौलत तो चल रही हू—कहकर वह गृहकार्य मे लग गई।

उसे खुशी ही थी कि अब आगे कोई इन्फार्मर बनने की बात नही कहेगा, पर साथ ही भीतर ही भीतर यह भय भी था कि कही पेंशन तो बन्द नही होगी ? वह चाहती थी कि पेंशन भी मिलती जाए और इन लोगो से छुट्टी भी मिल जाए, पर तारा के भगाए जाने से उसका मन इतना तिक्त हो गया था कि वह दूसरे विकल्प के लिए तैयार भी थी।

वह अपने ढग से एक सग्रामशीला स्त्री थी। वह जिस सग्राम मे लगी हुई थी, वह था तो बिल्कुल पारिवारिक, फिर भी कई स्थितिया ऐसी आ चुकी थी जब वीरता की ज़रूरत पडी थी और ऊच-नीच देखना पडा था।

जानसन की बाते उसे उतनी बुरी नही लगी थी, जितनी कि तारा की बाते अखरी। यह लडकी समझती क्या है ? इसे ज़िन्दगी का तजर्बा ही क्या है ? यह मुझे तसल्ली देती है, कहती है कि मैं तुम्हे कमा कर खिलाऊगी। कितनी अजीब बात है !

एलोकेशी अब कुछ अकेली रहने लगी। दो दिनो तक वह जैसे अपने आप घुलती रही फिर एकाएक एक दिन अपनी दोनो सन्तानो को बुलाकर बोली—तारा, तुम तो सत्याग्रह करने गई थी, अब तुम घर सम्हालो, मै सत्याग्रह करने के लिए जाती हू। मेरा मन यही कहता है कि यही सबसे उचित रहेगा।

तारा यह समझ नही पाई कि यह धमकी मात्र है या और कुछ। मानो इसी विचार को पढती हुई एलोकेशी बोली—तुम यह समझती हो कि तुम नई पीढी की हो, इसलिए तुम्हे ही बदलने का अधिकार है, मुझे नही।

न तारा कुछ बोली न प्रदीप, पर एलोकेशी ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा—जब उन्होने दूसरा घर बसा लिया, तब मैं भी गैर-ज़िम्मेदराना तरीके से तुम्हे उनके दरवाज़े पर बैठाकर जिधर मन होता जा सकती थी, पर मैं तुम

लोगो के मोह मे पडी रही। अब तुम लोगो के पख जम रहे है और तुम लोग मेरा मोह छोड़ रहे हो तो मैं ही क्यो न पहले तुम लोगो को छोड़ दू। सत्याग्रह से मुझे कोई प्रेम नही है, पर सारी समस्याओ से भागने के लिए जेल एक अच्छी जगह है। लौटने का भी कोई रास्ता नही रहता···जेल का ढोल गले पड जाए तो बजाना ही पडेगा।

तारा यह समझने की चेष्टा कर रही थी कि जानसन का प्रस्ताव न मान पाने की ही यह एक विस्फोटक प्रतिक्रिया है या और कुछ है। उसने कहा—क्यो ? जेल जाने पर भी माफी मागने का रास्ता तो खुला ही रहता है।

पता नही क्या हुआ, एलोकेशी ने कसकर-एक चाटा तारा के गाल पर जड दिया। वह तो और भी गुस्सा उतारने जा रही थी कि उसे वह दृश्य याद आ गया, जब तारा नगी पडी थी और तसद्दुक आ पडा था। बोली—तुम नई पीढी वाली यह समझती हो कि सारा साहस तुम्हारे ही हिस्से मे है, पर यह भी भ्रम है। मै जीवन से बिल्कुल ऊब गई हू। ऊबा हुआ आदमी भी सबकुछ कर सकता है ··।

तारा की आखो मे आसू आ गए थे और उसके कपोलो पर चार अगुलियो के दाग स्पष्ट दिखाई पड रहे थे। उसने कहा—मा तुम नाहक क्रोध कर रही हो, मैने यह नही कहा कि तुम माफी माग ही लोगी, मैंने तो इतना ही कहा था कि किसी भी हालत मे किसीके लौटने का रास्ता बन्द नही होता। रहा यह कि जो तुम नई पीढी की बात कर रही हो, सो कोई भी व्यक्ति जानता है कि साहस किसी भी पीढी की बपौती नही। पर मैं इतना अवश्य कहूगी कि जिस निराशा के कारण तुम सत्याग्रह करना चाहती हो, वह आन्दोलन मे भाग लेने के लिए सही मनोदशा नही है ··।

एलोकेशी ने ठडा पडते हुए कहा—यही तो मैं भी सोच रही हू और इसीलिए चुप मारकर बैठ जाती हू।

तारा ने अब अपने से नया प्रसग छेडते हुए कहा—अब, केवल भावुकता की बात नही, बल्कि अन्य कारणो से भी हमे देशभक्तो के प्रति श्रद्धा रखनी है। प्रेमचन्द जी ने मेरे प्रति किए गए अत्याचारो का बदला लिया है, इसके लिए उन्हे चरम मूल्य चुकाना पडेगा, इसलिए किसी भी हालत मे हम लोग जानसन ऐसे लोगो की बातो में नही आ सकती। अब तो उससे मिलना भी नही चाहिए।

एलोकेशी ने कहा—जब मैंने सत्याग्रह की बात कही थी, तब मेरे मन मे यह बात भी थी। अब तुमसे कोई कुछ नही कहेगा। मैं भी इसी तरह एक बार हवालात हो आऊ, तो फिर मुझे यह परेशान करना छोड देंगे।

तारा बोली—कही किसीने तुम्हे जानसन के यहा जाते देख लिया हो, इसलिए मैं श्यामा दीदी के पास जाती हू और सारी बातें जैसी जो हुई, बता आती हू।

एलोकेशी ने इसपर कोई आपत्ति नही की। उसने तारा के आंसू अपनी साडी में पोछे और पुचकारा। मा-बेटी ने एक दूसरे को अच्छी तरह समझ लिया। दोनो ने आगे कोई बातचीत नही की, पर दोनो ने यह अनुभव किया कि मा-बेटी मे इस समय विचारो की जितनी एकता है, उतनी पहले कभी नही थी।

## ३६

देश मे सर्वत्र सत्याग्रह ज़ोरो पर था। जितने लोग गिरफ्तार हो रहे थे, उससे कही अधिक लोग लाठी-चार्ज के कारण सामयिक रूप से बेकार कर दिए जा रहे थे। जुर्माने के रूप मे भारी रकमे वसूल की जा रही थी। पुलिस और जगह-जगह पर सैनिक जत्थे ताडव मचा रहे थे।

लोगो पर इस बुरी तरह लाठियों की मार पडती थी और घोड़े दौडाए जाते थे कि विलायती पत्रो के प्रतिनिधि भी इन दृश्यो को देखकर भय और घृणा से मुह फेर लेते थे। वेबमिलर नामक एक अग्रेज पत्र-प्रतिनिधि ने अपने पत्र मे यह लिखा—गत १८ साल से मैंने २२ देशो मे रिपोर्टिंग की और इस दौरान मे हमने अनगिनत शहरी झगडे, दगे, सडक पर लडाइयां तथा विद्रोह देखे, पर मैंने धरसना मे जो दर्दनाक दृश्य देखा, वह कही देखने मे नही आया। कई बार ऐसी बाते हुई कि मैंने मुह फेर-फेर लिया।

इसी प्रकार अन्य पत्र-प्रतिनिधियों ने भी लिखा, पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद

के कानो मे जूं तक नही रेगी। मजे की बात यह थी कि अत्याचार जितना ही भयकर होता था, जनता आन्दोलन मे उतनी ही तेजी से शामिल होती जाती थी। लाठी-चार्ज केवल बाहर ही बाहर तक सीमित नही था, बल्कि जेलो के अन्दर भी जब-तब लाठी-चार्ज हो रहे थे।

इन खबरो को जो भी देशभक्त पढता, उसका खून खौलने लगता। अक्सर जनता गाधी जी की बात मानकर बडे अनुशासन के साथ लाठी-चार्ज सहती थी, पर कई बार लोग इसका तुर्की-ब-तुर्की जवाब भी देते थे।

आन्ध्र मे मालाबार सैनिक पुलिस भेजी गई और वह बरहमपुर से एल्लोर गई। रास्ते मे ताकिनाड़ा और राज महेन्द्रवरम् का बाजार पडता था। सैनिक पुलिस को वहा जाना नही था, पर लूट-मार का आनन्द लेने के लिए वह बाजार मे घुस पडी। जिसपर भी शक होता कि यह काग्रेसी है, उसका अपमान किया जाता या उसे मारा-पीटा जाता। जब यह दस्ता एल्लोर पहुचा तो वहा के लोगो ने इनपर ढेले चलाए। नतीजा यह हुआ कि गोलिया चली और कई आदमी मरे और घायल हुए।

इसी वातावरण मे श्यामा और अर्चना प्रेमचन्द को जेल से भगाने की तैयारी कर रही थी। इन दिनो जान की भी कोई कीमत नही थी, बाकी विपत्तियो से तो कोई डरता ही नही था।

योजना बहुत सुन्दर ढग से बनाई गई थी। जब जेल की घडी मे ग्यारह बजेगा, उस समय अन्तिम टन् के साथ एक मोटर जेल की दीवार से सौ गज की दूरी पर एक पेड की आड में खडी हो जाएगी, उसी समय प्रेमचन्द अपनी काल-कोठरी से निकलेगा, फिर एक के बाद एक दो दीवारे फांदता हुआ बाहर आएगा, साथ ही मोटर चल पडेगी। यो तो प्रणवकुमार अपने को प्रेमचन्द से अधिक श्रेष्ठ तथा तजुर्बेकार क्रान्तिकारी मानता था, पर उसने इस समय ऐसी छोटी-छोटी बाते भुलाकर उसी प्रकार से प्रेमचन्द का अगरक्षक होना स्वीकार किया था, जैसे वह कुणाल का था।

अर्चना यह चाहती थी कि उसे कुछ समय के लिए प्रेमचन्द से अलग मिलने का मौका मिले, पर अभी तक जो योजना बनी थी, उसमे इस प्रकार की किसी भेंट की गुजाइश नही थी। अर्चना यह समझती थी कि श्यामा के चले जाने के [illegible] वह किसी न किसी प्रकार प्रणवकुमार को टाल सकेगी, पर यह बाद की

बात थी ।

उसने अपने मन को टटोलकर देखा कि वह कुछ नही चाहती । वह केवल प्रेमचन्द को उसकी वीरता के लिए निर्बाध होकर धन्यवाद देना चाहती थी। बाकी उमगें तो स्वप्न थी। प्रेमचन्द तो परीक्षा मे उत्तीर्ण हो गया था। अब उसे भी अपने सम्बन्ध मे कुछ प्रमाणित करना था कि हा, वाकई वह प्रेमचन्द की योग्य सहकारी ही नहीं, बल्कि उसी पाए की क्रान्तिकारिणी है। उसके मन मे यह बात थी कि यदि वह प्रेमचन्द को जेल से भगा पाई, (हा, इसमे 'यदि' तो लगा ही हुआ था और वह 'यदि' बहुत बडा 'यदि' था) तो वह श्यामा से तो स्वयं आगे निकल जाएगी। अवश्य इसमे श्यामा का भी हाथ है, पर कितना ? केवल नैतिक समर्थन है। और क्या ? यदि वह उस दिन जेल के पास न जाए तो क्या आता-जाता है।

श्यामा को उन दिनो यूसुफ की याद बहुत आती थी, यदि वह भाग पाते तो इतिहास ही कुछ और हो जाता। क्या उसके मन मे कोई ईर्ष्या इस प्रकार की थी कि वह तो नही भाग पाए और प्रेमचन्द भाग रहा है। सौभाग्य से प्रेमचन्द का भागना फासीघर के डाक्टर तेजराम-ऐसे किसी साथी पर निर्भर नही था।

अब कुछ घटो की ही बात थी।

श्यामा की स्नायुएं बहुत उत्तेजित अवस्था मे थी। कभी क्रान्तिकारी जोश से मन छलागे भरने लगता तो कभी एक अज्ञात भय और आशका से मन दबा जा रहा था। कभी ऐसा लगता कि जीवन बहुत सुन्दर है, उसमे बडा रस है, तो कभी जान पडता, अन्ततोगत्वा जीवन एक छूछा घडा है।

वह अर्चना की प्रतीक्षा कर रही थी, उसे छ बजे ही आना था, पर यहां तो सवा छ. बज गए और अब सूर्य लगभग अस्ताचलगामी हो चुके हैं।

उसने कबीर को टहलने के लिए भेज दिया था और रूपवती से यह कह दिया था कि कबीर जब आए तो सम्भाल लीजिएगा। रूपवती को पूरा ब्यौरा तो मालूम नही था, पर यह मालूम था कि प्रेमचन्द को भगानें के सम्बन्ध में कुछ षड्यन्त्र चल रहा था।

श्यामा ने आज कई बार कमरे मे टगे हुए यूसुफ के फोटो की ओर देखा, जो तरुणाई से दमक रहा था। ऐसा वह अनुप्रेरणा लेने के लिए कर रही थी या और किसी कारण से ? मृत्यु क्या है ? क्या इसका अर्थ चिरविच्छेद है ? या

धर्मों के द्वारा दिए हुए आश्वासनो मे कुछ तत्व है ? इस प्रकार की अनर्गल, परस्पर सम्बन्धहीन, अप्रासगिक, अप्रासगिक नही तो व्यर्थ की बाते मन की खिडकी के सामने तेजी से कौंध रही थी। क्या हम किसी अदृश्य शक्ति के अधीन है ? क्या अन्ततोगत्वा न्याय होता है ? या न्याय की धारणा ही कपोल-कल्पना है।

साढे छ: बज गए। अर्चना अभी तक नही आई। तो क्या कोई दुर्घटना हो गई ? बिल्कुल किनारे पर आकर किश्ती डूबी ? मैं क्या करूं ? यहा बैठी रहूं या कही जाऊ ? कुछ समझ मे नही आ रहा था।

एकाएक आहट हुई और उसने घूमकर देखा कि उसके कमरे मे कोई व्यक्ति था। अर्चना ? नही, यह तो कोई और था। पर अगले ही क्षण उस व्यक्ति की मधुर हसी से पहचान गई कि ये तो अमिताभ है।

उसे ऐसा लगा जैसे किसीने उसमे उत्साह सचारित कर दिया। सारे ससार का रग ही बदल गया, जैसे पारस पत्थर ने लोहे को छू दिया हो। बोली—दादा, आप बडे मौके से आए!

—मौका क्या है ?

संक्षेप मे श्यामा ने सारी बाते बता दी। सुनकर अमिताभ गभीर हो गए, बोले—अर्चना क्यों नही आई ?

घडी की ओर देखते हुए श्यामा ने कहा—उसे आना चाहिए था, कोई बात हो गई होगी!

## ३७

सचमुच ही कुछ हुआ था और गहरा कुछ हुआ था। साढे चार बजे जेलवार्डर रामउजागर अर्चना के पास आया और बोला—देखिए, कुछ समझ मे नहीं आता, मैं तो इस मामले मे पडना ही नही चाहता था। अपने भतीजे लाखन के कारण इसमें पड़ा, सो अब बडी मुसीबत आई है।....

अर्चना को ऐसा लगा जैसे उसके पांव तले से ज़मीन खिसक गई। वह पसीना-पसीना हो गई। इच्छा-शक्ति के प्रबल प्रयास से बोली—क्या हुआ ? किसीको कुछ पता चल गया ?

रामउजागर बोला—पता किसीको कुछ नही लगा, सब कुछ मज़े मे चल रहा था, पर अभी लाखन ने आकर बताया कि बाबू कहते हैं, मैं इस झगडे मे नही पडना चाहता।

अर्चना के सिर पर जैसे किसीने ज़ोर से हथौडा मारा, ऐसी ही किसी बात की आशका भी थी। बोली—कोई रुक्का दिया ?

—रुक्का देने का मौका नही था। लाखन ने आकर ज़बानी कहा कि बाबू कह रहे हैं कि मैं इन झमेलो मे पड़ना नही चाहता, शहादत मे मज़ा कुछ कम नही है, छोडो इन बातो को।

अर्चना का चेहरा ऐसा हो गया, जैसे उसने एकाएक यह सुना हो कि उसके सब प्रियजन किसी दुर्घटना से मौत के घाट उतर गए और सर्वनाश हो गया। उसके आन्तरिक मन ने कहा, ज़रूर प्रेमचन्द ने ऐसा कहा होगा। अद्‌भुत व्यक्ति है, पर अब समय नही है। किसी भी दाम पर उसे पीछे लौटाना चाहिए और क्या पता इसने गलत सुना हो या लाखन ने ही गलत सुना हो।

ज़रूर गलत सुना होगा। हैं तो वे झक्की, नही तो मजिस्ट्रेट के बगले पर उसे मारने के लिए जाकर पक्षी देखने लगे (सफाई मे कहते-कहते यह सत्य ही बन गया था।) बोली—मुमकिन है तुमने गलत सुना हो या लाखन गलत समझ गया हो।

—नही, नही, ऐसा नही हो सकता। गलती हमारी तरफ से नही हुई है, यो आप जाने और वह जाने। सवाल तो रुपयो का है, हमे हर हालत मे बाकी हज़ार रुपये मिलने चाहिए।···

—मिलेगे, मिलेगे क्यो नही, पर उसी वक्त मिलेगे जब तुम उन्हे लाकर मेरी मोटर पर सवार करा दो।··

—पर मान लीजिए हमारी तरफ से सब तैयारी हो, पर वे बाहर आने से इन्कार करे, तो क्या होगा ?

—ऐसा कही हो सकता है ? तुम जानते हो कि दिन-दहाड़े जेल के अन्दर खून हुआ है। फासी हुई रखी है, फिर कौन भागने से इन्कार करेगा, जबकि

सारी तैयारियां हो चुकी हों।

रामउजागर बोला—मैं उनके साथ ड्यूटी दे चुका हूं। मैं जानता हूं, वे बड़े वैसे आदमी हैं। रातभर पढ़ते रहते हैं, फिर बैठकर जमीन पर कुछ लकीरें-सी बनाते हैं और अपने आप कुछ कहते जाते हैं। फांसी की उन्हें कतई परवाह नहीं है। वे तो इस दुनिया में रहते ही कम हैं। अब जेल बन्द होने वाली है, मुझे ड्यूटी पर जाना है, आप जल्दी से एक रुक्का लिखकर उन्हें दीजिए। मैं ऐसा जानता तो इस काम में गला न फंसाता। पकड़ा जाऊंगा तो सात साल नपेगी। पर मैंने कहा, देशभक्ति का काम है।

अर्चना मन ही मन यह सोचती रही कि कहीं रुक्का लिखाने में कोई चालाकी तो नहीं है? यह ऐन मौके पर रुक्का क्यों लिखाना चाहता है? पर नहीं, चालाकी क्या होगी? हम लोग, विशेष रूप से मैं तो सम्पूर्ण रूप से इसके हाथ में हूं। मेरे कितने ही रुक्के जा चुके हैं, एक और से क्या फर्क पड़ा जाता है? बोली—तो रुक्के में क्या लिखूं?

—यह तो आप जानें, पर यह समझ लीजिए कि लाखन ने जो बात कही है, वह सोलहों आने सही है। उसमें कहीं कोई शक की गुंजाइश नहीं है। जब उसने देखा होगा कि ऐन मौके पर काम बिगड़ रहा है तभी मुझसे कहा होगा। मैं तो बड़ी देर तक मना करता रहा कि अब शहर जाकर लौटना मुश्किल है, पर वह बोला—बहुत ज़रूरी है, चाचा तुम जाकर एक रुक्का ज़रूर ले आओ।

अब अर्चना को कोई सन्देह नहीं रह गया था। उसने जल्दी से कलम उठाई और लिखा—मुझे यह सुनकर बहुत आश्चर्य नहीं हुआ कि आपने जीवन की पुकार को ठुकरा दिया और मृत्यु का वरण करने का निश्चय किया है। आप शायद यह समझते हैं कि इस क्षेत्र में मृत्यु जीवन से बढ़कर रसायन साबित होगा। विचार गलत नहीं है, पर आप एक बात भूल रहे हैं कि आपका जीवन अब दूसरों का है, उसे चाहे जिस तरह काम में लाने का हक देश को और दल को है। क्या आप इस तरह अपनी किश्ती को किनारे पर डुबा देंगे? हम लोगों ने उस दिन के लिए कितनी साधना की है, कितना त्याग किया है, उसकी हम कितनी बाट जोह रहे हैं, क्या आपको यह सब खोलकर बताने की ज़रूरत है?

देश को इस समय आपके नेतृत्व की बहुत ही सख्त ज़रूरत है और मुझे भी तो आपकी ज़रूरत है। यदि किसी कारण से देश की बात आपको अपील

नही करती तो कम से कम आप मेरी तरफ तो देखिए। यो तो आप एक ऐतिहासिक पुरुष हो ही चुके है। जब भी भारत का सही इतिहास लिखा जाएगा तो उसमे आप ऐसे लोगो की कहानी अवश्य लिखी जाएगी। पर आप एक शहीद मात्र नही है, यह बात आपको साबित करनी है। आपके सिर पर हमेशा फासी का फदा लटकता रहे, फिर भी आप सग्राम करते जाए, नेतृत्वहीन दल को नेतृत्व दे, तभी आपका असली जौहर जनता के सामने आएगा।

आप यदि मेरी कुछ भी परवाह करते है, तो आज का कार्यक्रम आपको हर हालत मे पूरा करना है। आशा करती हू, आप एक भक्त की बात किसी हालत मे नही टालेगे और यदि आपको फासी के फदे का विशेष शौक ही है तो उसके लिए तो दरवाज़ा हमेशा खुला रहेगा। आप जब भी गिरफ्तार होगे तभी यह सम्मान आपके लिए प्रस्तुत रहेगा। कम से कम आकर एक बार बात तो कर लीजिए। दो-चार दिन बाहर की हवा देखिए।

यहा तक लिखने के बाद अर्चना अपने स्वभाव के अनुसार उसे गुप्तलिपि मे बदलने लगी, पर किसीने जैसे उसके साथ से कलम ही खीच ली। अब गुप्तलिपि की क्या ज़रूरत है? घटो मे तो अन्तिम वारा न्यारा हुआ जाता है। उसने लिखी हुई चिट्ठी फिर पढी, वह बिल्कुल अपूर्ण लगी जैसे उसमें असली बात लिखी ही नहीं गई हो, जैसे लिफाफा तो भेजा जा रहा हो, पर उसके अन्दर कोई पत्र ही न हो।

उधर रामउजागर बार-बार घडी देख रहा था, इसलिए उसने वह अपूर्ण पत्र ही उसके हवाले कर दिया, बोली—अब रात को भेंट होगी।

रामउजागर बोला—रात को मेरे बहनोई से आपकी भेट होगी, मैं तो दीवार के उस पार रहूगा।

वह चला गया।

अर्चना ने जल्दी-जल्दी कपड़े पहने। फिर वह पुलिस की आख बचाने के लिए कारमाइकेल लायब्रेरी मे जा बैठी और पीछे से चुपचाप निकल गई।

जब वह श्यामा के घर पहुची तो घडी का छोटा काटा सात और आठ के बीच मे था और बड़ा काटा चार पर था।

वह भी अमिताभ को देखकर बड़ी खुश हुई। श्यामा ने पूछा—देर क्यो हुई?

पर अर्चना ने न तो रामउजागर के आने की बात बताई और न यह

बताया कि वह इस प्रकार का सन्देश लाया था और उसका इस प्रकार उत्तर दिया गया ।

अमिताभ को मौके पर पहुच जाने से उसके सारे सन्देहो का निरसन हो गया । उधेड-बुन दूर हुई । उसने यह मान लिया कि वे भी साथ चलेंगे । शायद यह भी सोचा कि श्यामा दीदी पहले ही से उनके आने की बात जानती थी, पर फरार होने के कारण यह बात किसीको बताई नही गई थी । पता नहीं क्यो आज इस बात से उसे खुशी ही हुई क्योकि यदि श्यामा दल के फायदे के लिए कोई बात छिपा सकती है तो वह भी रामउजागर द्वारा लाए हुए सन्देश की बात छिपा सकती है । उसने देर के कारण के रूप मे बताया—जब मैं घर से निकली तो मुझे यह सन्देह हुआ कि मेरे पीछे कोई लगा है, इसलिए मैं कारमाइकेल लायब्रेरी मे जा बैठी, फिर वहा से निकलकर बचती हुई यहा आई । इसीमें देर हो गई ।

श्यामा ने इशारे से पूछ लिया—बाकी सब तो ठीक है ?

इसके उत्तर मे अर्चना ने कहा—दादा भी चलेंगे न ?

श्यामा ने कुछ नही कहा, पर अमिताभ मुस्कराए । बोले—तुम लोगों ने तो हम लोगो को निकम्मा और घरघुसू करार दिया है, फिर यह प्रश्न क्यो पूछती हो ?

उसके उत्तर मे अर्चना ने एकाएक उठकर अमिताभ के पैर छू लिए । अमिताभ सकुचाकर पैर हटाते हुए बोले—वह क्या श्लोक है न ! कि पुत्र, और शिष्य से पराजय की इच्छा रखनी चाहिए । मैं तो प्रेमचन्द के साहस से बहुत प्रभावित हू ।

अर्चना ने भर्राई हुई आवाज़ से कहा—बस आपका आशीर्वाद चाहिए ।

अमिताभ फिर मुस्कराए। बोले—सफलता के लिए प्रयास करना हमारे हाथ मे है, सफलता मिले, या न मिले हमे प्रयास करते रहना चाहिए ।

अर्चना को ऐसा लगा कि दादा के वचन आशा से उतने ओत-प्रोत नहीं हैं जितने होने चाहिए, पर श्यामा ने भी तुरन्त जैसे उनकी प्रतिध्वनि करते हुए कहा—हमे प्रयास करना चाहिए ।

अमिताभ ने धीरे-धीरे सारा ब्यौरा पूछ लिया, यह देखने के लिए कि कही कोई कसर तो नही है, तैयारी पूरी तो है, आकस्मिक घटना पर कुछ छोडा तो

नही गया है। वह इसी तरह पूछताछ कर रहे थे कि उधर कुछ खटका हुआ और अमिताभ एक ही छलाग मे अलमारी के पीछे चले गए।

देखा गया कि तारा आ रही है। उसे इस प्रकार असमय आया देखकर श्यामा और अर्चना दोनो की स्नायु तन गई। यद्यपि वह इस बीच मे बार-बार इस बात की परीक्षा दे चुकी थी कि वह किन लोगो के साथ है और किनकी विरोधी है, पर आखिर वह एक कुख्यात पुलिस-अफसर की बेटी ही थी, पता नही इस समय क्या सूघती हुई आई है। आने के लिए उसने बडा अजीब दिन और अजीब समय चुना है। श्यामा ने करीब-करीब जवाब तलब करने के स्वर मे कहा—कहो तारा क्या बात है ?

तारा ने फौरन यह महसूस कर लिया कि वह ऐसे समय आई है जब उसका आना अवाछित है। बोली—मैं तो यो ही चली आई।

श्यामा ने इसका कोई उत्तर नही दिया। उसने केवल अपने चारो तरफ ध्यान से देखा कि कही भागने के कार्यक्रम से सम्पर्कित कोई वस्तु सामने तो नही पडी है। अर्चना ने भी कुछ नहीं कहा।

तब तारा ही बोली—मैं यह बताने के लिए आई थी कि आज हमे यानी माताजी को एक पत्र मिला है, जिसमे यह पूछा गया है कि जब तुम और तुम्हारी बेटी सरकार विरोधी कार्य कर रही हो तो तुम लोगो की पेशन बन्द क्यो न कर दी जाए ?

श्यामा ने कहा—हा, जानसन श्रीमती बनर्जी से मिला भी तो था।

—हा, वह तो पुरानी बात हो गई, पर आज यह पत्र आया है।—कहकर उसने वह पत्र श्यामा के हाथ मे दिया।

श्यामा ने पत्र देखकर पूछा—क्या उत्तर दिया ?

—माताजी तो वही उत्तर बराबर दे रही हैं कि तुम जो पेशन देते हो, वह श्री बनर्जी की सेवाओ के लिए देते हो न कि हमारी सेवाओ के लिए। ऐसी हालत मे पेशन बन्द करने का प्रश्न नही उठता।

—उत्तर दे दिया ?

—वही आपसे पूछने आई हू।

—वही उत्तर ठीक है। बस और तो कोई काम नही है ?

तारा ने कुछ सकुचाते हुए कहा—आप लोग बहुत व्यस्त है ?

श्यामा के मन मे तारा के प्रति जो थोडा-बहुत सन्देह था, वह लुप्त हो चुका था, पर इस प्रश्न से फिर सन्देह ने सिर उठाया। बोली—हम लोग यही बात कर रहे थे कि अब तो श्री प्रेमचन्द को फासी होनी ही है, सो फासी के बाद उनकी लाश का कैसे क्या किया जाए, जिससे अधिक से अधिक क्रान्तिकारी उपयोग हो। यही सोच रहे थे।

श्यामा अनायास ही ये बाते कह गई। इन बातो को कहने का उद्देश्य था कि यदि तारा इसलिए भेजी गई है कि कुछ पता लगाए, तो वह सम्पूर्ण रूप से असली बात से दूर चली जाए। कम से कम यह तो समझ ले कि हम लोगो ने फासी होना अनिवार्य मान लिया है।

तारा सकुचाती हुई बोली—मुझे भी कुछ काम दीजिए।

श्यामा ने अर्चना को देखा, अर्चना ने श्यामा को, मानो यह कहा हो कि यह आसानी से टलने वाली नही है। वे समझ नही पा रही थी कि क्या किया जाए कि इतने मे अमिताभ अलमारी के पीछे से सामने आ गए और बोले—मैं बताता हू, इस लडकी की सेवा कैसे ली जाए।

श्यामा और अर्चना दोनो बहुत घबडा गई थी कि अमिताभ जी ने यह क्या किया कि स्वय इस लडकी के सामने प्रगट हो गए। कही इसने जाकर कुछ कह दिया, मान लो हज़ार मे इसकी केवल एक सम्भावना है, तो भी सारा काम चौपट हो जाएगा। कहा तो प्रेमचन्द को जेल से निकालने जा रहे है, कहा अमिताभ से भी हाथ धोना पडे। इस समय साम्राज्य की सारी पुलिस-व्यवस्था अमिताभ को खोजने मे जी जान से लगी हुई है क्योकि पुलिस टेगर्ट के हत्याकाड मे उन्हे दोषी मानती हैं। आम तौर से बनारस की सड़को पर भी यह कहा जा रहा है कि यह अमिताभ का ही काम है।

अमिताभ को देखकर तारा और भी सहम गई मानो वह अपने को बिल्कुल अपराधी समझ रही हो। अमिताभ एक कुर्सी पर बैठते हुए बोले—तारा, तुमने मुझे कभी देखा नही है, पर मान लो कि मेरा नाम कुणाल है....

कहकर वे हमेशा की तरह मुस्कराए, फिर बोले—तुम सोच रही होगी कि मेरा नाम कुणाल कैसे हो सकता है क्योकि वह तो शहीद हो गए। मैं इस पर यह कह सकता हू कि जो व्यक्ति उस दिन शहीद हुआ था, वह कुणाल नही था, तो तुम क्या कह सकती हो? पर मैं उस रास्ते नही जाऊगा। तुम पढी-

लिखी लडकी हो, मै यदि आलकारिक अर्थ मे कहू कि कुणाल मरा नहीं करते तो तुम्हे कोई आपत्ति नही होगी। तुम उसी अर्थ मे मुझे कुणाल समझ लो। मेरा असली नाम क्या है, इससे क्या आता-जाता है। यदि तुम चाहो तो मुझे अमिताभ भी समझ सकती हो क्योकि अमिताभ भी किसीका असली नाम नही है ··

श्यामा और अर्चना यह समझने का प्रयास कर रही थी कि अमिताभ कहना क्या चाहते है। वे अपने को इस तरह विपत्ति मे क्यो डाल रहे है और केवल अपने को ही नही सबको ; पर साथ ही वे दोनो रहस्यजनक रूप से विश्वास करती थी कि अमिताभ जो कुछ करेंगे, ठीक ही करेगे।

तारा कुछ बोल नही पाई कि अमिताभ ने फिर कहा—तारा, तुम थोडी देर यही बैठो, मैं अभी आता हू।

कहकर उन्होने अर्चना को इशारा किया और दोनो बाहर चले गए।

बाहर जाकर अमिताभ ने कहा—क्या यह ज़रूरी है कि भागने के बाद प्रेमचन्द को शहर से निकलने के लिए प्रतिभा का ही उपयोग किया जाए? और फिर यह भी तो हो सकता है कि प्रतिभा किसी कारण से न आ पाए?

यह विचार अर्चना को बहुत अच्छा लगा। सचमुच वह नही चाहती थी कि प्रतिभा को प्रेमचन्द के साथ भेजा जाए क्योकि प्रतिभा तो प्रेमचन्द की उपासिका बन चुकी थी और प्रेमचन्द को देखते हुए उसके लिए कोई भी बात असम्भव नही। यही एक बात थी जो इस सारे कार्यक्रम मे उसे खटक रही थी। यो तारा प्रतिभा से देखने-सुनने मे कही अच्छी है, पर यह अभी अपने को औरो के बराबर नही समझती बल्कि सबको अपने से बहुत ऊचा मानती है, पर प्रतिभा की बात और है। उसने जो रुपये दिए उनके कारण सम्भव है कि वह यह समझती हो कि उसने प्रेमचन्द को खरीद लिया है।

यह सब विचार एक क्षण मे अर्चना के मन मे कौध गए। बोली—बिल्कुल ठीक है, आपने बहुत सही सोचा है··

अमिताभ ने शायद उसकी पूरी बात नही सुनी और भीतर जाकर आदेश देने के लहजे मे तारा से बोले—तुम आज रात को यही रहोगी। तुम्हारी सुरक्षा के लिए तुम्हे हम बाहर से बन्द कर देगे। तुम अपनी मा से नही कह आई हो, इसलिए जब भी तुम घर जाओगी, तुम्हारे साथ श्यामा देवी जाएगी।

तारा इसपर खुश हुई, यद्यपि वह एक बात नही समझ पाई कि उसे भीतर रखने से कौन-सा उद्देश्य सिद्ध होगा । बोली—आपकी जैसी आज्ञा ।

अर्चना ने कहा—सम्भव है तुम्हे कल सबेरे ही कही दूर की यात्रा करनी पडे । अवश्य तुम्हारे साथ कोई न होगा ।

अमिताभ ने परिहास के लहजे मे कहा—सम्भव है मैं ही रहू, सम्भव है कन्या स्थानीया होने पर भी तुम्हे मैं अपनी बीवी बताकर रेल पर यात्रा करू । ऐसा केवल पुलिस वालो की आखो मे धूल झोकने के लिए होगा, यह तो तुम समझती ही हो । यह कैसा रहेगा ?

श्यामा और अर्चना तो इसका अर्थ समझ गईं । अर्चना को तो बताया ही गया था, पर श्यामा भी समझ गई कि किस बहाने क्या हो रहा है । तारा समझी नही कि यह यात्रा क्यो होगी, कैसी होगी, फिर भी उसने कहा—बहुत अच्छा रहेगा । मैं तो इसे अपना बहुत बडा सम्मान समझूगी ।

तारा ने अन्तिम शब्दो को इस रूप मे कहा कि यह साफ झलक गया कि उसने इन शब्दो मे अपना पूरा अस्तित्व बिना किसी हिचकिचाहट के उडेल दिया था । अर्चना को कैसा-कैसा लगा । अरे, इसके भी लहजे मे वही सुर है जो प्रतिभा के लहजे मे था । यह तो तब है जब कि वह समझ रही है कि उसे इनके साथ इनकी बहू बनकर यात्रा करनी है, यदि कही मालूम हो जाता कि असल मे प्रेमचन्द के साथ यात्रा करनी है तो पता नही आत्मनिवेदन का लहजा किस हद तक आतुर होता !

अभी थोडी देर पहले अर्चना के मन मे निश्चिन्तता और आत्मसन्तोष की जो भावना छा गई थी, वह दूर हो गई । वह समझ गई कि वह प्रेमचन्द को किसी भी तरुणी के साथ बर्दाश्त करने के लिए तैयार नही है । जैसे अभी अमिताभ जी ने कहा, नाम कुणाल है या अमिताभ इससे क्या आता-जाता है, उसी तरह नाम प्रतिभा है या तारा इससे क्या आता-जाता है ?

उसने ध्यान से तारा को देखा तो तारा सचमुच उस दृष्टि से अधिक अवाछनीय प्रतीत हुई । इसके चेहरे पर भोलापन अधिक था, आखो मे एक गुलाबी नशा था साथ ही अपरिचित वातावरण मे हरिणी की तरह एक चचल आशका भी थी और इसके उरोज····

उसने सोचा कोई और व्यवस्था की जाएगी । क्या यह ज़रूरी है कि यात्रा

के समय साथ मे कोई स्त्री ही हो। यदि वह स्वयं इस कार्य के लिए इस कारण अग्राह्य है कि पुलिस उसे जानती है तो तारा को तो और भी अधिक जानती है। सम्भव है बचपन मे बहुत-से सिपाहियो ने उसे गोद मे खिलाया हो।

प्रतिभा बल्कि ठीक है।

अमिताभ या श्यामा कतई यह अनुमान नही लगा पाए कि अर्चना के मन मे इस समय विचार १२० मील प्रति घटे के हिसाब से दौड रहे थे। अमिताभ तो कमरे को ध्यान से देख रहे थे कि बाहर से बन्द किए जाने पर कोई इसमे से किसी और रास्ते से निकल तो नही सकता।

श्यामा यूसुफ की बात सोच रही थी। वह उस रात की बात सोच रही थी, जब उसने आशा की थी कि उसके सामने तपोक्लिष्ट यूसुफ होगा और वह लपक-कर उसे आलिंगनवद्ध कर लेगी, पर उसके बदले उसे उस बदमाश डाक्टर तेजराम से साबका पडा जिसने एक अजीबो-गरीब कहानी सुना दी।

अमिताभ ने घडी देखी और श्यामा को एक ऐसा इगित किया जिससे वह उठ खडी हुई। वातावरण मे एकाएक जैसे बिजली भर गई। यहा तक कि तारा भी समझ गई। बोली—आप लोग जाएंगे?

किसीने इस प्रश्न का उत्तर नही दिया। श्यामा ने उत्तर के रूप मे उससे एक प्रश्न किया—तुम खाकर आई हो न?

तारा झूठ बोल गई—हा···

सब लोग इस झूठ को समझ गए। सब एक क्षण के लिए कुछ संकुचित भी हो गए जैसे एक भिखमगा जब किसीके सामने हाथ पसार देता है तो वह सकुचित हो जाता है, पर इस समय तो जगन्नाथ का रथ घर्घर आवाज़ से चलने लगा था। पीछे लौटकर देखने का मौका नही था। तारा भीतर ही रही और बाहर से साकल चढा दी गई। न किसीने तारा से कुछ कहा और न शायद तारा ने कुछ आशा की।

जब तारा ने इस प्रकार अपने को बहुत दिनो बाद बन्दिनी पाया, तो उसके मन मे वह दृश्य आ गया, जब वह तसद्दुक के उस बगले मे कैद थी; पर परिस्थितियो मे काफी फर्क था। उसे यह नही मालूम था कि सुरक्षा की दृष्टि से उसे इस प्रकार बन्द रखा गया है, वह समझती थी कि उसे इसलिए बन्द रखा गया है कि कही ऐसा न हो कि वह समय पर न आ पाए। इतना तो उसने

समझ लिया कि वह व्यक्ति, वह व्यक्ति अमिताभ ही होगे, या सम्भव है, उसी पाए के कोई अन्य व्यक्ति हो, कोई भीषण कार्य करने वाले है, और कल सुबह निरीह भद्रपुरुष के भेष मे यहा से नौ-दो ग्यारह होने वाले है। उसीमे उसकी सहायता चाहिए थी।

पर उसमे कही कुछ अजीब बात लग रही थी। वह तो बिल्कुल ही अप्रत्याशित रूप से यहां आई थी, वह न आती तो फिर वह व्यक्ति कैसे यात्रा करते? सभव है इसीके लिए अर्चना बुलाई गई हो, पर किसी कारण से अर्चना उस कार्य के लिए पूर्ण रूप से उपयुक्त न पाई गई हो या उसकी अन्यत्र जरूरत हो। तो यह खूब रही।

वह हसी, पर हसते ही उसका सामना कमरे मे टगे हुए यूसुफ के फोटो से हुआ। इसके पहले भी उसने यह फोटो कई बार देखा था, पर कभी अच्छी तरह देखने का मौका नही मिला था। अरे, ये तो बडे खूबसूरत व्यक्ति थे। लम्बे-चौडे, बडी-बडी आखे और उनमे एक विषादपूर्ण मधुर हसी। माथे पर दृढता के चिह्न, विशाल वक्षस्थल, जिसमे एक पूरा ससार ही समा जाए। रग गोरा, हाथ सुपुष्ट और तगडे होने पर भी चिल्ला-चिल्लाकर बता रहे थे कि हमने कोई श्रम नही किया। छात्र के वेष मे थे। तो श्यामा दीदी ने केवल रोमाटिक धारणाओ के वशवर्ती होकर इन्हे नही चुना था?

यह विचार तारा के शिशिरधौत निर्दोष मन को कुछ अनुपयुक्त लगा। उसने ज़बर्दस्ती यूसुफ की तरफ से अपनी आखे हटा ली, तो उसकी आख जाकर कुणाल के फोटो पर पडी। कुणाल उस अर्थ मे सुन्दर नही थे, जिस अर्थ मे यूसुफ। पर दोनो मे कोई ऐसा सादृश्य था जो फौरन झलक जाता था। उनकी भी आखो मे विषाद, और हसी का वही अपूर्व सम्मिश्रण (या कि समन्वय) था। जो शायद नवजीवन का सूचक है।

उसने ध्यान से कुणाल के चेहरे को देखा, तो उसे साथ ही बाबाजी की याद आ गई। बाबाजी को तो उसने देखा भी था। केवल देखा क्यो, उनके साथ तो सत्याग्रह करने भी गई थी। वे तो ऐसे प्यारे थे कि उन्हे देखते ही न जाने क्यो मातृस्तन की याद आती थी। उनके सामने आते ही अपने को शिशु समझने की प्रवृत्ति प्रबल हो पडती थी। ऐसे थे, तभी न वैसा पुत्र पाया था। और रुक्मिणी देवी? उन्हे तो उसने देखा भी न था, न उनका कोई फोटो ही कही

था, फिर भी उनके विषय मे जो कुछ सुना था, उससे एक तरफ तो मीरा का ख्याल आता था और दूसरी तरफ पद्मिनी का। मीरा और पद्मिनी एक मे !

तारा जब इस प्रकार सोच रही थी उसी समय एकाएक बाहर से साकल खुली और अमिताभ एक परोसी हुई थाली लिए हुए सामने दिखाई पडे। बोले—लो तुम खाना खा लो। ब्रिटिश सरकार भी अपने कैदियो को खाना देती है।

वह इतना ही कह पाए थे कि सबने तारा की आखो मे आंसू देखे। अमिताभ बोले—तारा, तुम रो रही थी···

तारा ने जल्दी से आसू पोछते हुए कहा—मुझे मालूम न था कि मेरी आखों मे आसू आ गए थे। मैं तो यूसुफ साहब और कुणाल जी के फोटो देख रही थी कि इतने मे बाबाजी की याद आ गई।···

सबने एक दूसरे के चेहरे की तरफ देखा। रूपवती भी इस बीच जान चुकी थी कि तारा क्यो यहां रखी जा रही है। वह एकाएक बोल पडी—यह यहा अकेली क्यो रहेगी। मेरे साथ मेरे कमरे मे चले, वही यह मेरे और कबीर के साथ रहेगी या हम दोनो ही यही आ जाते हैं।

सबने इसमे सम्मति दी। सब लोग समझ गए थे कि तारा के साथ अन्याय हो रहा था, पर मजबूरी थी। तारा बोली—मुझे यहा कोई कष्ट नही है ··

अमिताभ ने घड़ी देखी और उत्कण्ठा के साथ बोले—अब तारा चाची जी के साथ रहेगी, हम लोग चले।

तारा और रूपवती तो वही रही। श्यामा, अर्चना और अमिताभ सीढी से उतर पडे और मोड पर जाकर आखो से ओझल हो गए।

## ३८

जिस दिन प्रेमचन्द जेल से भागने वाला था, उसी दिन आनन्दकुमार जिस बैरक मे रहते थे, उसमे मामूली बात चलते-चलते एक छोटा-मोटा दगा हो गया। यदि आनन्दकुमार, रघुवशनाथ, इकराम उल्ला आदि पुराने लोग वहा न होते तो खून-खच्चड़ हो जाता।

बातचीत प्रेमचन्द के मुकदमे को लेकर ही शुरू हुई थी। एक युवक अध्यापक नीरज जो पहली बार जेल आया था, पर था कट्टर गाधीवादी, कहते-कहते कह गया—परेश जी, आखिर आपने जो गवाही दी, वह सच तो थी नही।

परेश, रामचरण आदि जो लोग प्रेमचन्द की सफाई-पक्ष मे गवाही दे आए थे, वे कई दिनो से इस प्रकार की कानाफूसी सुन रहे थे। यह प्रतिपादित करने की चेष्टा की जा रही थी कि इन लोगो ने झूठी गवाही देकर सत्य और अहिंसा का उल्लघन किया है, दूसरे शब्दो मे वे पतित हो गए है, यह कहा जा रहा था। जब तक यह अफवाह भीतर-भीतर धुधुआ रही थी तब तक कोई बात नही थी, पर अब जब कि वह इस प्रकार खुलकर बल उठी तो परेश बहुत नाराज़ हुआ। उसने कहा—मैं तो अहिंसा या सत्य को केवल एक राजनैतिक साधन के रूप मे मानता हू और मैं लज्जित नही हू कि मैंने एक जीवित शहीद के पक्ष मे गवाही दी।

रामचरण इतनी दूर जाने के लिए तैयार नही था। बोला—परेश जी, आप इतनी दूर क्यो जाते है? मै तो यह कहता हू कि मैंने जो बातें सुनी, गवाही मे वही बाते कही। सब लोग सुन नही सकते, पर मैं सुन सकता हू।

इसपर नीरज ने व्यग्य के साथ कहा—आप तो और भी हज़रत निकले। परेशजी कम से कम यह तो मानते है कि उन्होने असत्य भाषण किया, पर आप तो चोरी और सीनाजोरी की कहावत को चरितार्थ कर रहे है। अदालत मे आपने जो कुछ भी कहा, कहा, पर हम लोगो को क्यो धोखे मे डालना चाहते है?

इसपर रामचरण बहुत बिगड गया। खास कर उसे चोरी शब्द बहुत बुरा लगा था। वह एकदम से बौखलाकर बोला—चोर तो आप हैं, जो यह समझते है कि नमक बनाने से ही स्वराज्य प्राप्त हो जाएगा। अग्रेजो से लडने की, उनसे लोहा लेने की हिम्मत नही है, इसलिए अगुली मे खून लगाकर ख्वाहमखा शहीद बन रहे है। आप और हम ऐसे लोगो को तो प्रेमचन्द ऐसे लोगो के पाव धो-धोकर पीना चाहिए। मैंने तो केवल गवाही दी, जिससे पता नही उनको कुछ लाभ होगा भी या नही। मैं जानता हू जिस दिन से मैंने गवाही दी उस दिन से आप लोग पीठ पीछे हम लोगो की निन्दा करते हैं। इतने दिनो के बाद खुलकर सामने आने की हिम्मत हुई।

रामचरण इतने ही पर नही रुका उसने समग्र नमक सत्याग्रह आन्दोलन

पर हमला बोलते हुए कहा—इसमे सन्देह नही कि नमक सत्याग्रह के बहाने अच्छी जागृति हुई है, यह बहुत अच्छी बात है, पर इस जागृति का आप करने क्या जा रहे है ?

नीरज बीच मे ही बोल पडा—तसद्दुक और टेगर्ट दोनो मारे गए, इससे कौन-से किले फतह हो गए ? आप उससे करने क्या जा रहे हैं ? दो-चार हत्याओ से ब्रिटिश साम्राज्यवाद का क्या बिगड़ता है ? यदि एक बडी भारी इमारत की दो-एक ईटे खिसक जाए तो उससे वह ढह थोडी ही जाती है खासकर जबकि फौरन ही उसकी मरम्मत कर दी जाती है और पुरानी की जगह नई ईंट ले लेती है ।

परेश ने बीच-बचाव करते हुए कहा—दोनो मार्ग सही हैं, हम लोगो ने जरा गवाही दे दी तो उससे बिगड क्या गया ? हम लोगो ने कोई झूठी बात तो नही कही । आखिर प्रेमचन्द जी रोज मारे जाते थे । यह भी सच है कि इस मारने का उद्देश्य उन्हे सरकारी गवाह बनाना था । हमने गवाही मे यही बाते तो कही, फिर झूठ कहा बोले ? हमने तो सच ही कहा ।

इस समय तक सब राजनैतिक कैदी वहा एकत्र हो गए थे और सब लोग जेल के इकरस जीवन मे कुछ नई हलचल पैदा होने की आशा से वहा आए थे । अधिकाश लोग परेश के ही मतवाद के थे । वे अधिक सैद्धान्तिक दन्तकटाकटी मे पडना नही चाहते थे और क्रान्तिकारियो को पूर्णत सही न समझने पर भी उनके प्रति एक ममतापूर्ण सहिष्णुता की भावना रखते थे जैसे लोग अपने से कुछ भिन्न मत रखते हुए प्राप्तवयस्क पुत्र के प्रति रखते हैं ।

नीरज आक्रमणात्मक ढग से बोला—आपने सच जरूर कहा, पर अदालत के लिए वह सत्य तभी बना जब आपने उसके साथ यह झूठ मिला दिया कि आप अपने कानो से तसद्दुक द्वारा धमकाया जाना तथा मारना-पीटना सुनते थे । मैं कहता हू कि उसकी जरूरत क्या थी ? यदि श्री प्रेमचन्द ने तसद्दुक की हत्या की तो मैं समझता हू कि एक बहादुर सैनिक के नाते वे फासी पर झूलने के लिए भी तैयार थे, पर आप लोगों ने तो आगे बढकर इस कारण गवाही दी ताकि अखबारो मे आपका नाम छपे और सब लोग यह समझें कि आप शहीद नही तो उनके साथी-सघाती जरूर हैं ।

रामचरण तो पहले से ही बिगडा हुआ था । अब और बिगडकर बोला—तो आपको इस बात पर चिढ है कि आपने पूरा पाच सेर नमक बनाया, पर

आपका नाम किसी अखबार मे नही छपा और इतना ही छपा कि बीस आदमी खारे कुए के पास नमक बनाते हुए गिरफ्तार हो गए। मैं नही जानता था कि आप यश और नाम के इतने भूखे हैं। मैं तो कहता हू कि अगर आपको नाम की भूख है और आपको श्री प्रेमचन्द की बराबरी करनी है और एक राष्ट्रीय वीर बनना है, तो आप भी कुछ हिम्मत कीजिए, अब की बार नमक बनाकर आए, अगली बार किसी गोरे को मारकर आइए, सो नही, नाम तो चाहते है, पर चाम प्यारा है, और दाम देने को तैयार नही, मैं तो कहता हू, हुजूर, इस तरह काम नही बनेगा, कुछ पुरुषार्थ कीजिए।

नीरज इस बात पर एकदम से बाहे चढाकर आगे आ गया और बोला—कौन साला कहता है कि मैं नाम चाहता हू। मुझे नाम करना होता तो मैं इशारा कर देता, मेरा फोटो भी अखबारो मे छप जाता। मुझसे कहते है कि कुछ पुरुषार्थ करो। धोखे मे मुझे वैसा अहिसावादी न समझना, मै सरकार के विरुद्ध अहिंसावादी हू यो ईंट का जवाब पत्थर से देने के लिए तैयार रहता हू।....

रामचरण ने नीरज का गला पकड लिया, पर लोगो ने दोनो को अलग कर दिया, फिर भी रामचरण बोला—मैंने तुम्हारे ऐसे बहुत देखे है। इतने आदमियो मे रहते हो, इसलिए डटे हुए हो। कही दो दिन कोठरी बन्द रखा जाए तो माफी मागते दिखाई पडो।

इस समय तक सभी बुजुर्ग वहा पर आ गए थे। अध्यापक प्रसाद ने कहा—इस तरह एक दूसरे पर व्यक्तिगत आक्षेप करना बहुत ही बुरी बात है। न तो ऐसा करना गाधीवादी दृष्टि से सही है और न क्रान्तिकारी दृष्टि से। आप लोग पढे-लिखे होकर ऐसी बाते करते है। बडा अफसोस है। आप यह जानते हैं कि यहा की रत्ती-रत्ती बात अफसरो तक पहुचाई जाती है और इन रिपोर्टों से आन्दोलन के सम्बन्ध मे सरकार गलत धारणा बनाती है

रामचरण अब भी लडने के लिए व्यग्र हो रहा था। दो साथी उसे पकडे हुए थे। बोला—नीरज ऐसे लोग ही अफसरो को खबर पहुचाया करते है। मैं ऐसे बगुला भगतो को खूब जानता हू मुह मे राम बगल मे छुरी'

नीरज जोर से रामचरण की तरफ झपटा, पर लोगो ने उसे बीच ही मे थाम लिया। वह बोला—मुखबिर तो क्रान्तिकारी ही होते है, उनमे तीन मे

एक तो जरूर मुखबिर होता है। भगतसिंह वाले लाहौर षड्यन्त्र मे आधे से ज्यादा लोगो ने बयान दिया।

यह गाली किसी भी तरह रामचरण पर नही पडती थी क्योकि वह न तो क्रान्तिकारी था और न उसने कभी क्रान्तिकारियो की इस सम्बन्ध मे विशेष प्रशसा ही की थी। सच तो यह है कि उसने इधर जो कुछ सोचा था, उसमे एक मुखबिर सारे षड्यन्त्र को नष्ट कर सकता है, यही एक विचार था, जिसके कारण वह क्रान्तिकारी आन्दोलन मे शरीक नही होना चाहता था, पर नीरज के मुह से यह बात सुनकर वह चिल्ला-चिल्लाकर बोला—मैं तुमको और तुम्हारे ऐसे लोगों को खूब अच्छी तरह पहचानता हू। तुम लोग इसी भरोसे पर इस आन्दोलन मे आए थे कि कही न कही कोई न कोई आदमी या गिरोह आपे से बाहर हो जाएगा, कोई छोटा-मोटा चौरीचौरा हो जाएगा और तब गाधी जी आन्दोलन बन्द कर देंगे और तुम अपने घर जाओगे।

इस कथन से अध्यापक प्रसाद भी बहुत नाराज हुए। बोले—रामचरण, तुम तो अब सब पर हमला करने लगे। गांधी जी क्या करेंगे या नही करेंगे, इसपर न तो नीरज का कोई नियन्त्रण है न मेरा

नीरज ने देखा कि अब अध्यापक प्रसाद तथा अन्य लोग उसके साथ ही सहानुभूति दिखला रहे हैं तो वह कुछ शान्त हो गया। लोगों ने इसका फायदा उठाकर उसे वहां से हटा ही दिया। पर रामचरण बोला—मैं तो खुले आम कहता हू कि यह सारा आन्दोलन ही गलत ढग से चलाया जा रहा है। कभी यह नही कहा जा रहा है कि हम अन्तिम लडाई लड रहे है, बल्कि शुरू से ही जार्ज सोलोकोम्ब जैसे दो कौडी के गोरो के जरिए समझौते की बातचीत की जा रही है और यह कहा जा रहा है कि स्वराज्य के सार से ही हम खुश हो जाएगे।

आनन्दकुमार सारी बातो को ध्यान से सुन रहे थे, पर अब तक उन्होंने कुछ नही कहा था, अब उनसे रुका नही गया और वे सामने आकर सब लोगो से बोले—अब तो गाली-गलौज खत्म हुआ, अब सैद्धान्तिक बाते आ गईं। आप लोग सब बैठ जाइए और बाकायदा इसपर बातचीत कीजिए।

सब लोग, जिसको जहा जगह मिली, बैठ गए। आनन्दकुमार भी एक ढूले पर बैठ गए।

अध्यापक प्रसाद ने कहा—बहुत ही अच्छा हुआ। इस विषय पर सब लोग खुलकर वाद-विवाद करे, पर किसी प्रकार का व्यक्तिगत आक्षेप न किया जाए।

सब लोगो ने इस विषय मे सम्मति दे दी। जो लोग नीरज को ले गए थे, वे उसको साथ लेकर फिर आ गए और नीरज अपने साथियो के साथ चुपचाप एक कोने मे ऐसे बैठ गया जैसे वह भी एक साधारण श्रोता हो, पर रामचरण अब भी एक चुनौती की तरह तनकर खडा था।

अध्यापक प्रसाद ने आनन्दकुमार से ही सबसे पहले अपने विचार व्यक्त करने के लिए कहा। तब आनन्दकुमार बोले—पहले ही मैं यह बता दू कि भारत मे दोनो मतवाद बहुत प्राचीन काल से रहे है। एक तरफ कृष्ण और राम थे, जिन्होने शस्त्र से अन्याय के विरुद्ध युद्ध किया। दूसरी तरफ बुद्ध और महावीर हुए जो अहिंसावादी थे। राम, कृष्ण, बुद्ध सब अवतार माने गए हैं

रामचरण बीच मे बोल पडा—कृष्ण पूर्ण अवतार माने गए, जब कि बुद्ध एक साधारण अवतार रहे। महावीर तो अवतार ही नही माने गए।

लोग रामचरण के इस प्रकार बीच मे बोलने से बहुत नाराज़ हुए और शोर मचाने लगे। नतीजा यह हुआ कि उसे बैठ जाना पडा और वह भी एक साधारण श्रोता हो गया।

आनन्दकुमार कहते रहे—कृष्ण पूर्ण अवतार ज़रूर माने गए, पर और कारणो से। हम अपने विचारो को पौराणिक कथाओ पर लाद नही सकते। कही भी यह नही लिखा है कि कृष्ण पूर्ण अवतार इसलिए माने गए कि उन्होने कौरवो के विरुद्ध सशस्त्र युद्ध के लिए प्रेरणा दी। छोडिए उन बातो को, मै तो केवल यही कह रहा था, कि दोनो मतवाद अत्यन्त प्राचीन है और दोनो सम्मानित हैं। अब वर्तमान स्थिति मे आइए कि देश निरस्त्र था हम सशस्त्र होकर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध लड नही सकते थे, इसलिए गाधी जी ने युद्ध का यह तरीका निकाला······

रामचरण तो ठडा हो गया था, पर परेश बीच मे बोल पडा—तो इसका अर्थ यह हुआ कि हम मजबूरी से अहिंसावादी है।

आनन्दकुमार ने फौरन ही कहा—बडे से बडा महापुरुष परिस्थितियो से मजबूर तो होता ही है, एक मत तो यहा तक है कि वह परिस्थितियों की ही उपज होता है। गांधी जी ने किसीपर जबर्दस्ती नही की, उन्होने ऐसे लोगो को साथ

देने के लिए बुलाया जो उनके मत के थे। स्मरण रहे कि ऐतिहासिक रूप से वह भारत की विशेष परिस्थिति की उपज होने पर भी व्यक्तिगत रूप से अहिंसा के पुजारी हैं, पर उनके साथियो और अनुयायियो मे कई है जो अहिंसा मे केवल राजनैतिक रूप से विश्वास रखते हैं। गाधी जी तो अन्त तक अहिंसा के मार्ग पर ही चलेगे, पर जो लोग केवल राजनैतिक अस्त्र के रूप मे अहिंसा मे विश्वास करते है, वे जब चाहे तब उससे अलग हो सकते हैं। ऐसे किसी व्यक्ति पर यह बन्धन नही है कि वह अन्त तक अहिंसा के साथ ही रहे। हम ऐसे कई व्यक्तियों को जानते है जो १९२१ मे हमारे साथ थे, पर अब वे क्रान्तिकारी हैं। मैं तो कहता हू इसमे कोई बुराई नही है। आप जानते हैं कि मेरा स्वय क्रान्तिकारियों के साथ बहुत गहरा सम्बन्ध रहा है, पर मैं गाधी जी मे विश्वास रखता हू।

यह सभा देर तक चलती रही। यह कहना मुश्किल था कि आनन्दकुमार, अध्यापक प्रसाद, रघुवशनाथ, इकराम उल्ला आदि के भाषणो से कितनो को सन्तोष हुआ।

जब सभा कई घटे बाद विसर्जित हुई तो नीरज अपने अन्तरंग साथियो से कह रहा था—मैने रामचरण को चोरी से मार्क्स ऐंगिल्स रचित साम्यवादी घोषणापत्र पढते देखा है, यह सब उसीका नतीजा है·· ···

पर एक साथी ने कहा—मैंने तो सुना है वह घोषणापत्र मज़दूर और किसानो को साथ में लेकर क्राति का नारा देता है और उसमे आतकवाद का कही उल्लेख नही है।

नीरज ने यह सब सुना नही था, पर बोला—यही तो सालो की बाते समझ मे नही आती, इनके कौल और फेल मे समन्वय होना भी तो ज़रूरी नही है।

इसपर नीरज़ के साथी हस पडे।

# ३९

ठीक रात के ग्यारह बजे बल्कि अभी घडी का काटा ५९वे मिनट पर ही था कि एक कार धीरे से आकर जेल से एक फर्लांग की दूरी पर एक घने पेड की छाया मे रुक गई।

इसमे अमिताभ के अलावा प्रणवकुमार, श्यामा और अर्चना तीनो व्यक्ति थे। प्रणवकुमार ड्राइवर की जगह पर था। अमिताभ और प्रणवकुमार तो ऐसे ही छिपकर आए थे, पर श्यामा और अर्चना ने नौ बजे के शो के टिकट लिए थे। कुछ देर वे मूवी ( उन दिनो वहा मूक चित्र ही थे ) देखती भी रही और फिर मौका देखकर वहा से खिसक आई थी। यो वे इस चित्र को पहले भी देख चुकी थी, वह इसलिए कि ज़रूरत पडने पर चित्र का पूरा ब्यौरा बता सके।

प्रणवकुमार बहुत ही उत्तेजित था। उसका हाथ बार-बार रिवाल्वर के घोडे पर जा रहा था। अमिताभ ने उसकी यह बेचैनी देख ली थी, इसलिए वह कुछ चिन्तित थे, पर उन्होने मुह से कुछ नही कहा कि कहने पर वह और भी उत्तेजित न हो जाए।

अमिताभ को गाडी चलाना नही आता था, इसलिए सभी लोग प्रणवकुमार पर निर्भर थे। यदि सब काम ठीक-ठीक हो गया फिर भी लौटते समय गाडी जाकर किसी पेड से लड गई, तो बना-बनाया काम बिगड जाने का डर था। एक डर और भी था जिसे अमिताभ ही महसूस कर रहे थे, वह यह कि कही वह टोली पकडी गई तो उसीपर टेगर्ट की हत्या का दोष भी लदने की सभावना थी। उन्हे तो इस सम्बन्ध मे वैयक्तिक दृष्टि से कोई चिन्ता नही थी। पुलिस-विभाग क्या सोच रहा है कौन जाने ? अब तो कुणाल जी गए। सम्भव है जो अपराध पहले उनके नाम लिखे जा रहे थे अब वे भी मेरे ही नाम दर्ज हो।

अमिताभ कभी प्रणवकुमार की ओर और कभी जेल की ओर देख रहे थे, इसलिए वे यह नही देख पाए कि प्रणवकुमार से कही अधिक जोश मे तो अर्चना थी। न देख पाने का एक कारण यह भी था कि श्यामा और अर्चना पीछे की सीट पर बैठी हुई थी। अर्चना इसी विचार मे उलझी हुई थी कि पता

नही अन्त तक क्या हुआ ? रामउजागर लाखन को पत्र पहुचा भी पाया या नही ?

यदि कही पत्र न पहुचा, तो ?

उसका दिल धक् से हुआ। ऐसा जान पडा कि हृदय की गति एक क्षण के लिए रुक गई।

पर नही, उसने फिर अपने से कहा—वे हमेशा कुछ न कुछ गडबड करते है, पर अन्त तक सही रास्ते पर आ जाते हैं। यही उनकी विशेषता रही है। न जाने किस मानसिक स्थिति मे उन्होने यह कह डाला कि मुझे बाहर नहीं जाना है। एक बिलकुल सामयिक विचार था, चिल्लाकर सोचना था, पर उसकी क्या ज़रूरत थी ?

उसे एक झुझलाहट महसूस हुई, फिर ध्यान मे आया कि इसका एक पहलू और भी तो है। वैयक्तिक पहलू। क्या वे मुझसे मिलना नही चाहते ? माना कि वे मृत्यु से नही डरते, पर जीवन के प्रति, मेरे प्रति क्या उनमे कोई आकर्षण नही है ? बडी अजीब बात है। तब तो उन्होने नीट्शे का कथन याद दिलाया था और अब ?

और मैं कहा-कहा की उडानें भर रही हू। कही उन्हे प्रतिभा से बचाना चाहती हू, तो कही तारा से। और वे हैं कि उन्हे मेरे प्रति भी कोई आकर्षण नही है।

इस विचार से अर्चना बहुत दुःखी हो गई। वे आए तो, सब ठीक हो जाएगा।

सब लाग अपनी कलाइयो मे बधी घडियो की तरफ बार-बार देख रहे थे। अर्चना ने घडी कान से लगाकर देखी कि कही वह बन्द तो नही हो गई। नही, वह तो चल रही थी···चिक्···चिक्···चिक्···ग्यारह बजकर नौ मिनट हो चुके थे।

ग्यारह बजे के बाद जेल के अन्दर राउन्ड का कुछ ऐसा हिसाब पड़ता था कि उसीके बाद भागने का समय रखा गया था। अमिताभ जी के अनुसार सवा ग्यारह तक प्रेमचन्द को जेल की दीवारो के बाहर आ जाना चाहिए था, इसलिए कुछ ही मिनट रहते थे। जितना ही समय बीत रहा था उतना ही अर्चना को भय हो रहा था कि क़ही वह नहीं आए तो ? कहीं उन्होने सारी सुविधाओं के

होते हुए भी भागने से इनकार किया तो ? उसने पहले ही अमिताभ से पूछ रखा था—यदि किसी कारण से कार्य असफल रहा तो हम लोग पेड के नीचे कब तक प्रतीक्षा करेंगे ?

अमिताभ ने इसके उत्तर मे बिना किसी प्रकार हिसाब लगाए कहा था—यदि भागते हुए वे दीवारो के अन्दर पकडे गए, तब तो 'पगली' बजेगी। पगली बजते ही हम चल पडेंगे क्योंकि फिर तो हम कुछ भी नही कर सकते। पर यदि वे दीवारो से बाहर आ गए होगे तो मौका देखकर खण्ड युद्ध तक करेंगे। यदि कुछ भी पता नही लगा और कोई खबर नही मिली तो बारह बजे तक प्रतीक्षा करना यथेष्ट होगा।

ग्यारह बजकर ग्यारह मिनट हो चुका था। अमिताभ और प्रणवकुमार कार के बाहर हुड से पीठ लगाकर खडे थे। छायामूर्तियो की तरह दोनो मे से कोई भी हिल नही रहा था। हा, बीच-बीच मे घडी की ओर अवश्य देख लेते थे। श्यामा और अर्चना कार मे ही रही, पर दरवाजा खुला हुआ था।

इतने मे जेल की तरफ कोई आहट मालूम पडी। सब लोग सतर्क हो गए। कोई इधर आ रहा था। सब लोग यही समझे कि काम बन गया। पर आहट एकाएक बन्द हो गई, जैसे किसीकी थाह ली जा रही हो।

फिर वह आहट सुनाई पड़ी, पर अब की बार अजीब बात है कि वह आहट इधर आती हुई नही, बल्कि दूर जाती हुई मालूम पडी।

क्या बात हो गई ? इस तरह खटर-पटर, खटर-पटर करके आने का अर्थ ही क्या था ? ऐसा काम तो चुपचाप ही होना चाहिए था। अगर आए तो फिर लौटे क्यो ?

तो क्या ? ··

यह कुछ और बात है ? आवाज़ स्पष्ट सुनाई दे रही थी, कोई उधर ही जा रहा था। तो क्या कोई पहरा बैठा दिया गया है जिसके सिपाही इस प्रकार इधर से उधर मार्च करते हुए पहरा दे रहे हैं ?

अमिताभ ने ज़मीन से कान लगाकर सुना और इसके बाद उन्होने प्रणव-कुमार से कुछ कहा, जिसपर प्रणव जाकर फौरन स्टीयरिंग पकडकर बैठ गया। दरवाज़ा खुला रहा और अमिताभ पिस्तौल हाथ में लेकर उस आवाज़ की तरफ बढ़े। कुछ कदमो के बाद उनकी छायामूर्ति भी अदृश्य हो गई।

सब लोग सास रोककर प्रतीक्षा कर रहे थे कि देखे क्या होता है।

अब भी वह आवाज़ उसी प्रकार सुनाई दे रही थी, हा कुछ क्षीण हो गई थी। सब लोगो की आखे उसी तरफ लगी हुई थी, यद्यपि दिखाई कुछ भी नही दे रहा था।

अर्चना ने घडी देखी, ग्यारह बजकर पन्द्रह मिनट हो गए थे।

सोलह......

सत्रह......

अठारह मिनट भी हो गए!

इतने मे मोटर के अन्दर बैठे हुए सब लोगो ने पहले अस्पष्ट रूप से यह देखा कि अमिताभ की छायामूर्ति इधर ही बढी चली आ रही है। उनकी चाल से ही मालूम हो रहा था कि कोई विशेष बात नही है।

अमिताभ ने आकर पहले श्यामा और अर्चना को और फिर प्रणवकुमार को बहुत धीरे से बताया कि कोई खास बात नही थी, एक गाय थी। अर्चना बाहर निकल आई और अमिताभ के कान मे बोली—ग्यारह बजकर बीस मिनट हो गए।

अमिताभ ने इसका कोई उत्तर नही दिया। वह अधकार की ओर देखने लगे, मानो अंधकार से ही इसका उत्तर पूछा जा सकता हो ..

और अधकार ने इसका उत्तर दिया भी। दो छायामूर्तिया उधर से आती हुई दिखाई पडी।

प्रणवकुमार और श्यामा भी बाहर निकल आए, पर अमिताभ ने इंगित से सबको भीतर बैठ जाने के लिए कहा और वे स्वय आगे बढे। अर्चना ने आज्ञा पालन तो किया, पर वह फौरन प्रेमचन्द से मिलना चाहती थी। छाया-मूर्तियो मे रामउजागर के बहनोई को तो उसने पहले ही अलग पहचान लिया क्योंकि वह बहुत लम्बा था, पर प्रेमचन्द कुछ झुके हुए लगते थे। शायद ऐसा जेल के कष्टो के कारण हुआ हो।

बेचारा ? फिर भी चलो अब सब कष्टो का अन्त हो गया। पतझड गया, वसन्त आया...

अमिताभ आगे बढ गए। रामउजागर के बहनोई ने धीरे से कहा—यह रहा आपका आदमी, मुझे दीजिए, मैं जाऊ।

श्यामा ने कार से निकलकर फौरन वह राशि दी जो तय थी। रामउजागर के बहनोई ने नोट गिने भी नही और वह बात की बात मे लुप्त हो गया।

अमिताभ ने बहुत जल्दी की। प्रेमचन्द पीछे की सीट पर श्यामा और अर्चना के बीच मे बैठाया गया, और कार स्टार्ट हो गई। थोडी देर तक तो कार कुछ धीरे-धीरे चली ताकि आवाज न हो, पर जब वह जेल से कुछ दूर निकल आई तो प्रणवकुमार ने ऐक्सेलरेटर दबाया और कार हवा से बाते करने लगी।

जब गाडी कुछ देर लोकालय मे चल चुकी, तो एकाएक अमिताभ की आज्ञा से प्रणवकुमार ने गाडी रोक दी और अमिताभ उसमे से उतर गए, फिर उन्होने बाहर खडे होकर गाडी चलाने का इशारा दिया। एक सेकेण्ड पहले तक किसी-को यह पता नही था कि अमिताभ इस तरह बीच रास्ते मे उतर पडेंगे, पर किसीने कुछ नही कहा क्योकि अमिताभ से बढकर उनकी भलाई कौन समझ सकता था?

श्यामा भी चाहती थी कि वह उतर जाए। उसका उतर जाना सब दृष्टियो से उचित भी होता, पर नारी-सुलभ कौतूहल के कारण और एक हद तक इस भय से कि कही प्रणवकुमार और अर्चना यह न समझे कि वह अमिताभ की नकल कर रही है, वह चुप बैठी रही। वह नही जानती थी कि अर्चना उसके उतर जाने का स्वागत ही करती।

## ४०

अमिताभ कार से उतरकर सीधे अपने अड्डे पर पहुचे और निश्चिन्त होकर लेट गए। जीवन की विचित्रता पर कुछ देर तक वे चिन्ता करते रहे, फिर सो गए। पितामह भीष्म ने इच्छामृत्यु की साधना की थी, पर अमिताभ ने इच्छानिद्रा की साधना की थी। थोडी देर मे ही उनकी सास सुनकर मा समझ गई कि वे सो गए।

जब अमिताभ सोकर उठे तो बूढी मा ने कहा—एक लड़का आया था, वह

एक कागज़ दे गया ।

अमिताभ ने घडी देखी तो आठ बज चुके थे, बोले—मा आपने मुझे जगाया क्यो नही ? •

—मैने तो उससे कह दिया कि तुम चले गए ।

—फिर भी वह कागज़ दे गया ? कहा है ?

मा ने कागज़ दिया तो अमिताभ ने खोलकर देखा कि उसमे दो अलग-अलग कागज़ थे । एक मे लिखा था कि साथ का कागज़ उस मोटर पर मिला । यही लिखा था 'उस' । पर अमिताभ को समझने मे दिक्कत नही हुई कि उस कार से मतलब है जिसमे कल रात को प्रेमचन्द लाया गया था । कागज़ बडा ही महत्वपूर्ण था, पर अमिताभ उसे पढकर समझ नही पाए कि उसका लेखक कौन है, किसके लिए लिखा है, लिखने वाला क्या कहना चाहता है । सारी बातें बडी उलझी हुई थी, यद्यपि यह स्पष्ट हो जाता था कि लिखने वाला बडा विद्वान है ।

यह कागज़ या पत्र किसके पास था और कार मे कैसे आया ?

साथ के पत्र मे जीवानन्द ने लिखा था कि कार मे यह पत्र मिला है, उसने और कुछ नही लिखा था ।

यह पत्र किसके हाथ से गिरा ? प्रणवकुमार पर तो इस सम्बन्ध मे उनका विचार ही नही गया, तो क्या यह पत्र श्यामा के हाथ से गिरा ? उसे यह पत्र किसने लिखा ? क्यों लिखा ? नही इससे उसका कोई सम्बन्ध नही मालूम होता ।

अब रह गए दो व्यक्ति, अर्चना और प्रेमचन्द । अर्चना को भी भला यह पत्र किसने लिखा होगा ? इतना तो साफ है कि किसीने जेल से यह पत्र लिखा है। कह रहा है कि अमुक-अमुक कारणो से मैं भागना नही चाहता । ऐसा मालूम होता है कि यह पत्र किसी अन्य राजनीतिक कैदी ने (नही आनन्दकुमार नही) लिखा है और प्रेमचन्द के हाथ भेजा गया था, पर प्रेमचन्द इसे भूल गया था या उससे यह पत्र खो गया । पर इसमे फासी की बात लिखी है, फासी तो केवल प्रेमचन्द को ही हो सकती है । ·····फिर ?

मा ने कहा—बेटा, यह सब होता रहेगा, तुम कुछ खा-पी लो ।······

अमिताभ गुत्थी को सुलझाना चाहते थे, पर मा की बात टालना सम्भव नही था । वे जल्दी से उठे और मुह-हाथ धोकर कपडे बदल कर आ गए । मा

ने उनके सामने एक कांसे की कटोरी मे थोडा-सा हलवा और काशी के प्रसिद्ध पत्थर के एक छोटे सकोरे मे चाय रख दी ।

अमिताभ ने बडी तृप्ति के साथ दोनो चीजे ग्रहण की और मा से बोले—हम लोग तुम्हे बहुत सताते है ।

मा ने अब फिर माला फेरना शुरू कर दिया था, वह पोपले मुह से मुस्कराई, मानो कोई बहुत ही मूर्खतापूर्ण बात कही गई है और चुप रही ।

यद्यपि अमिताभ यान्त्रिक रूप से खाते-पीते जाते थे, पर उनका मन उसी पत्र मे अडा हुआ था । वह लगभग इसी नतीजे पर पहुच चुके थे कि प्रेमचन्द के साथ एक और राजनैतिक कैदी भागने वाला था, पर उसने अन्तिम मुहूर्त मे न भागना तय किया । पत्र से यही झलक मिलती थी कि कोई उसपर बहुत ज़ोर से जेल से भागने लिए दबाव डाल रह था, पर अन्त मे शायद यह समझ कर कि यह नीतिविरुद्ध होगा, न भागना ही निश्चित हुआ । उस जेल मे उस समय तो कोई और क्रान्तिकारी कैदी नही था, इसलिए किसी सत्याग्रही कैदी का ही पत्र होगा, पर उसमे सत्य और अहिंसा का हवाला न देकर समाजवाद आदि का उल्लेख क्यो था ?

अजीब गुत्थी थी । श्यामा की सहायता से शायद कुछ गुत्थी सुलझे । जीवानन्द ने यदि यह पत्र पढा भी होगा, तो उसकी समझ मे कुछ नही आया होगा । जब मेरी ही समझ मे कुछ नही आ रहा है तो उसकी समझ मे यह बात कैसे आएगी ?

बस इसका एक ही अर्थ हो सकता है कि आनन्दकुमार के साथ रहने वाले राजनैतिक कैदियो मे से किसीका प्रेमचन्द के साथ भागने का कार्यक्रम बना था । यदि ऐसा कार्यक्रम बना होता तो श्यामा को इसका पता होना चाहिए था, पर श्यामा ने तो एक बार भी इसका उल्लेख नही किया । यह तो बडी खराब बात थी कि उनसे सब तरह की मदद ली गई, वे जान जोखिम मे डालकर कार मे गए, पर उन्हीसे सारी बातें गुप्त रखी गई । श्यामा तो ऐसी नही थी । उसका व्यवहार तो हमेशा बहुत ही सरल रहा, कम से कम उनके साथ ।

फिर उन्होने सारी बातो पर विचार किया तो प्रणवकुमार पर तो सन्देह गया ही नही । वह तो बेचारा उस उपादान का बना था, जिससे सब शिष्य बने

होते है। उसके लिए तो आदेश का पालन ही सबसे बडा धर्म था। वह इस पेच के काबिल नही था, फिर उसे क्या मतलब, कोई सत्याग्रही कैदी भागे या न भागे। वह तो सत्याग्रहियो के प्रति सौतियाडाह-सी रखता था। वह तो इतना भी मानने के लिए तैयार नही था कि वे लोग भी देशभक्त है और अपने ढग से देशसेवा कर रहे है।

अर्चना ?

अर्चना तो अपने को उग्र साबित करने के लिए ही महीनो से प्रपच रच रही है। उसे किसी सत्याग्रही कैदी को भगाने मे कोई दिलचस्पी होगी, ऐसा अनुमान करना गलत है।

घूम-फिरकर सन्देह श्यामा पर ही आता है क्योकि वही एक ऐसा व्यक्ति है, जिसका एक तरफ क्रान्तिकारियो से घनिष्ठ सम्बन्ध है और दूसरी तरफ सत्याग्रहियो से। आनन्दकुमार का घर दोनों धाराओ का सगमस्थल था।

अमिताभ सोचते-सोचते गम्भीर हो गए। इसका अर्थ यह हुआ कि उन्हे धोखा दिया गया और सारी बात बिना बताए ही सहयोग लिया गया। अवश्य वे न आते तो भी यह काम होता ही और वे यह स्वीकार करने के लिए बाध्य थे कि अच्छी तरह होता। हा, मुख्यदल का इतना सक्रिय सहयोग मिलता या नही, इसमे सन्देह था।

उनका मन खिन्न हो गया और एकाएक उन्हे डाडी के पास के समुद्र तट की लहरे याद आने लगी जैसे वे लहरे उन्हे पुकार रही हो। हर पग पर छिपाव-दुराव, हर पग पर सन्देह, हर पग पर सतर्कता····

उन्होने फिर से पत्र पढना शुरू किया, पर उलझन ज्यो की त्यो बनी रही। एकाएक उनका चेहरा प्रदीप्त हो गया, मानो सूर्य जिस दिशा मे है, उसका झरोखा खोल दिया गया। क्यो न प्रेमचन्द से सारी बात पूछ ली जाए ? सम्भव है कि वह उनसे कोई बात न छिपाए। हा, यदि अर्चना सम्बन्धी कोई बात होती तो शायद छिपाता, पर श्यामा सम्बन्धी बात, विशेषकर एक सत्याग्रही कैदी की बात क्यो छिपाएगा।

इस विचार से उन्हे कुछ तसल्ली हुई। अब प्रश्न यह था कि दिन के समय प्रेमचन्द से कैसे मिला जाए ? अपने खतरे के अलावा प्रेमचन्द के खतरे का भी ख्याल रखना था। फिर कल रात को प्रेमचन्द भागा है, इस नाते वातावरण

बहुत ही गरम हो गया होगा और पुलिस वालो के चिरन्तन सिद्धान्त के अनुसार इस खुराफात का सारा दोष उन्हीके सिर पर मढ दिया गया होगा ।

## ४१

जब अमिताभ को रास्ते मे उतारकर कार आगे बढी थी तो अर्चना अपने को एक हद तक स्वतन्त्र समझने लगी । वह प्रेमचन्द से बोली—आप अच्छी तरह तो रहे ?

—हू ।

अर्चना यह चाहती थी कि प्रेमचन्द को इस बात की चेतावनी दे दे कि आप उस पत्र का ज़िक्र न करे, जिसे आज मैंने रामउजागर के हाथ आपको भेजा था, पर यहां श्यामा के रहते हुए उस सम्बन्ध मे कुछ कहने का मौका नही था । उसे हर मुहूर्त यह डर बना रहा कि कही प्रेमचन्द अपने झक्की स्वभाव के कारण पहले वाक्य मे यह न कह डाले कि मैंने तुम्हारा पत्र पाकर तभी बाहर आना स्वीकार किया नही तो बाहर आने की इच्छा बिल्कुल नही थी । यदि वे ऐसा कह देते तो बहुत ही खतरा पैदा हो जाता, उसके लिए, नये दल के लिए, सबके लिए । इतनी महत्वपूर्ण बात छिपाना बहुत ही भयकर अपराध समझा जाता । इस अपराध की कम से कम सज़ा उसे दल से निष्कासन ही होता, जिसका अर्थ यह है कि प्रेमचन्द को उससे मिलने का अधिकार न रहता क्योकि अब तो प्रेमचन्द एक फरार हो गया था और इस नाते उसका जीवन सोलहो आने दल के नियन्त्रण मे और दल के लिए था ।

अर्चना ने श्यामा से कहा—मालूम होता है, इनपर बहुत स्ट्रेन पडा है, इसलिए बात करनी अच्छा नही लग रहा है । क्यो यही बात है न ?

—हू ।

श्यामा ने इसे बिल्कुल स्वाभाविक समझा क्योकि एक घटा बल्कि दस मिनट के अन्दर किस प्रकार से भाग्य चमका था । कहा तो जेल की कोठरी

और सिर पर लटकती हुई फासी की रस्सी और कहा स्वतन्त्रता और जीवन की सहस्रो उमगे ।

श्यामा ने यह देख लिया था कि अर्चना प्रेमचन्द से बहुत सटकर बैठी है, पर प्रेमचन्द की तरफ से ऐसी कोई चेष्टा नही थी, बल्कि वह उसीकी तरफ खिसकता आ रहा था । पर वह जितनी बार अर्चना से अलग हुआ, अर्चना उतनी ही बार उसकी तरफ बढ आई ।

श्यामा ने सोचा कि उतर जाती तो अच्छा रहता, पर अब कितनी देर की बात है ? इसके अलावा उसने एक बात और भी सोची कि अर्चना और प्रेमचद में प्रेम हो तो कोई बुरी बात नही है, पर कही प्रणवकुमार यह बात समझ ले तो पता नही क्या कर बैठे । वह कुणाल का पक्का चेला था । पुरुष और स्त्री का प्रेम उसके लिए फालतू बात थी और वह ऐसे लोगो को कभी भी अच्छी दृष्टि से नही देखता ।

कार निर्दिष्ट स्थान पर पहुची । अर्चना, श्यामा और प्रणवकुमार प्रेमचन्द को लेकर एक मकान मे प्रविष्ट हुए । कोई आकर कार लेकर चला गया ।

चारो एक कमरे मे पहुचे और प्रणवकुमार ने दरवाजा बन्द करने के बाद बत्ती जलाई । प्रेमचन्द ने बत्ती जलते ही दोनो हाथो से अपना मुह ढक लिया । और मिरगी रोगग्रस्त व्यक्ति की तरह अजीब तरीके से सिसकने लगा ।

अर्चना ने कहा—कई हफ्तो से इनपर बडी-बड़ी विपत्तिया पड़ रही है, इसलिए स्नायुओ की धज्जिया उड गईं ।

प्रेमचन्द ने मुह ढकी हुई हालत मे बत्ती की तरफ इशारा करते हुए कहा—नहीं, नही ।

अर्चना अब तक अपने विचारो मे इतनी खोई हुई थी कि वह वास्तविकता पर गिलाफ चढाकर देख रही थी, पर उसने जो 'नही-नही' सुना तो वह प्रेमचन्द के स्वाभाविक कण्ठस्वर से इतना भिन्न और बेसुरा लगा कि वह चौंक पडी । उसने प्रेमचन्द की ओर ध्यान से देखा तो वह एकाएक बोली—अरे, यह तो प्रेमचन्द है ही नही ।

यदि अर्चना तरह-तरह की भावनाओ के कारण सुध-बुध खोकर बैठी थी तो दूसरी तरफ प्रणव और श्यामा भी अपनी सफलता से इतने मतवाले थे कि उन्हे भी वास्तविकता सूझी नही थी । अब सबने एक साथ प्रेमचन्द की तरफ

देखा, तो उन्हे खडे-खडे काठ मार गया।

अरे ! सचमुच यह तो प्रेमचन्द हैं ही नही। अजीब बात है, आखो को विश्वास नही होता। उनपर बहुत विपत्तिया अवश्य पडी है, पर क्या मनुष्य इतना बदल सकता है ? गोरा शरीर काला पड गया, घने-घने बालो की जगह छितराए हुए बाल थे, चेहरा जाने कैसा भौडा लगता था, कहा वह प्रतिभा और बुद्धि से दीप्त चेहरा और कहा यह बिल्कुल ही बुझा-बुझा-सा रोगी निष्प्रभ चेहरा ?

अर्चना ने फिर से प्रेमचन्द को देखा और श्यामा से लिपटती हुई बोली—यह हर्गिज़ वे नही है।

सबने हामी भरी।

उस आदमी ने भी मुह पर से हाथ हटा लिए थे, वह आसू पोछ रहा था, बोला—मै प्रेमचन्द नही हू ·

प्रणवकुमार अब सामने आ गया और उसे घुड़कते हुए बोला—तुम कौन हो ?

उसने कहा—मैं सब कुछ बताता हूं, आप लोग मुझसे नाराज़ न हो। मेरा कोई दोष नही है। मैं तो किसी भी तरह भागना नही चाहता था। मुझे जबर्दस्ती भगाया गया।

श्यामा ने धक् से सोचा, अरे, तेजराम वाली घटना की पुनरावृत्ति हो गई। साथ ही उसे वह दृश्य भी याद आया जब थोडी देर पहले अर्चना इस व्यक्ति से बिल्कुल सटकर बैठना चाह रही थी और यह व्यक्ति उससे बच रहा था ···

उस व्यक्ति ने जो कहानी बताई, वह इस प्रकार थी .

मुझे एक दगे मे पाच साल की सज़ा हुई थी। मैं दो साल सज़ा काट चुका था कि मुझे प्रेमचन्द जी के यहां रसोइए के रूप में भेजा गया। मैं दिन को उनके हाते मे जाकर रसोई करता और रात को सोने के लिए फिर मामूली कैदियो की बैरक मे भेजा जाता था। पर तीन दिन से मैं रात को भी उन्हीकी बैरक मे रखा गया था। ऐसा इसलिए हुआ था कि लाखन जमादार ने जेलर से यह कहा था कि हाते के बाहर से कोई भी आदमी आए-जाए तो मैं कैदी की पूरी ज़िम्मेदारी नही ले सकता।

जेलर ने कहा—मैं पोलिटिकल कैदी के साथ मामूली कैदी को कैसे रख

सकता हू ? तुम आते-जाते उसकी नगाझोली लिया करो।

इसपर सुनते हैं लाखन जमादार राज़ी नही हुआ। नतीजा यह हुआ कि मुझे भी रात को वही रहना पडता था। मुझे यह अच्छा नही लगा, पर जेल मे अपने मन की कौन-सी बात होती है ?

आज छ बजे जब बैरके बन्द हो गई तो मैं बाबू साहब (प्रेमचन्द) को रोज़ की तरह खाना गरम करके खिलाने को हुआ तो उन्होने खाने से मना कर दिया, बोले—चित्रकूटी बाबा, तुम खा लो, आज मैं खाना नही खाऊगा।

ऐसा वह कभी-कभी दिन को भी करते थे, पर अक्सर ऐसा भी होता था कि इस तरह कहने के बाद भी वे घटे-दो घटे मे मुझसे खाना मागते थे, इसलिए मैंने खुद तो खाना खा लिया और उनका खाना ढककर रख दिया कि खाएगे तो खा लेगे। मैं तो खा-पाकर सो गया, पर बाबू साहब जगते रहे। वे तो अक्सर रात-रात भर किताब पढते और जब-तब टहलते काट देते थे। तीन रात से हालत देख रहा था।

मैं सो गया तो मुझे ऐसा लगा कि दो आदमी चुपचाप बातें कर रहे हैं। जब से मैं आया था, तब से देखता था कि बाबू साहब औरो से तो नही लाखन जमादार से गुपचुप बाते किया करते हैं। इसलिए मैं सो गया।

अभी थोड़ी देर पहले मैं जगाया गया। बाबू साहब ने जगाकर कहा—चित्रकूटी बाबा घर जाओगे ?

मैंने समझा मैं स्वप्न देख रहा हू। मैंने कहा—घर ? घर कैसे जाऊगा ?

बाबू साहब बोले—यह कपड़े पहन लो, अभी घर पहुच जाओगे।

मैंने सामने देखा तो लाखन खडा है। मैं कुछ समझा नही कि हो क्या रहा है। क्या बाबूजी मेरी परीक्षा ले रहे हैं ? पर उन्होने कहा—जल्दी कपड़े पहन लो, बच्चो से नही मिलोगे ?

उधर लाखन जमादार बाबू साहब से कह रहा था—बाबूजी अब भी मान जाओ, ज़रा सोचो कि लोग कितने मायूस होगे। हराम के पैसे नही लेने हैं।

पर बाबू साहब ने कहा—मुझसे इस आदमी का घर जाना ज़्यादा ज़रूरी है क्योकि इसके चार बच्चे हैं जो इससे मिलना चाहते होगे। इसके अलावा बूढी मा है, बीवी है, मेरा कौन है ?

मैं कुछ भी नही समझ पाया कि इस बातचीत का क्या मतलब है ?

इतने मे ग्यारह का घटा बजा। लाखन जमादार ने कहा—जो करना है फौरन करिए · ·

यो मैं समझ तो रहा था कि यह सब स्वप्न है, पर मैंने इस बीच मे वे कपडे पहन लिए थे। बाबू साहब ने फौरन जगले की एक छड, जिसे किसीने पहले से काट के रखा था, हटा दी और मुझसे कहा—जाओ—कहकर मुझे करीब-करीब जबर्दस्ती उसी तरह से जगले से बाहर कर दिया जैसे पर्व के दिन पिजडे से पछी को बाहर करते है। फिर तो मै एक दीवार, फिर दूसरी दीवार फादकर आपकी मोटर मे आ बैठा। लाखन ने मुझे बता दिया था कि अपना सिर ढाके रहना सो मैंने उसका दिया हुआ एक अगौछा बाध लिया था और अब मै यहा पर हू···

चित्रकूटी बाबा की यह कहानी सुनकर सबसे ज्यादा आश्चर्य प्रणवकुमार को हुआ था। बोला—यह सारी बात बडी अजीब मालूम होती है, भला फासी का आसामी कभी भागने का मौका पाकर इनकार कर सकता है ?

अर्चना को यह बात बहुत बुरी मालूम हुई। बोली—फासी से डरकर भागने वाले वे नही हैं। वे किसी बृहत्तर उद्देश्य से ही भाग सकते थे।·

प्रणवकुमार इसके उत्तर मे कुछ कहने जा रहा था पर उसने अर्चना का चेहरा देखा तो ऐसा लगा जैसे उसके शरीर मे खून की एक भी बूद नही रह गई है। वह उसे देखकर मुह बाकर रह गया। क्या वह बेहोश होने जा रही है ?

श्यामा ने नेतृत्व का सूत्र अपने हाथ मे लेकर कहा—यह विचार तो फिर भी होता रहेगा, पर अब पहला काम यह है कि चित्रकूटी बाबा का क्या किया जाए ?

प्रणवकुमार बोला—यह घर जाए और क्या ? मै इनकी आखे बाधकर इन्हे किसी सडक पर छोड आता हू।

श्यामा ने इसमे सम्मति नही दी। उसने ऐसा चेहरा बना लिया जैसे प्रणवकुमार की बात सुनी ही न हो। बोली—इतनी जल्दबाजी ठीक नही।

स्वय चित्रकूटी ने भी कहा—मैं भागना नही चाहता था, मुझे ज़बर्दस्ती भगाया गया। अब मैं घर भी नही जा सकता क्योकि वहा तो अब तक पुलिस पहुच गई होगी। मैं तो छ. महीने मे यो ही बोर्ड से छूट जाता, मैं तो कहीका

/

नही रहा। 'मुझे तो आप लोग बल्कि जेल ही पहुचा दे।

श्यामा अब तक यही सोच रही थी कि इतिहास की पुनरावृत्ति हो रही है। पर नही इतिहास की पुनरावृत्ति कभी एक ही रूप मे नही होती। तेजराम दूसरे उपादान का बना था और यह बेचारा, यह तो महज़ षड्यन्त्र का शिकार हुआ। जब प्रेमचन्द ने भागने से इनकार किया, तब जमादार ने यह कहा होगा कि मेरे तो रुपये मारे जाएगे। इसपर प्रेमचन्द और जमादार ने मिलकर उसे भगाया होगा। पर यह उद्देश्य भी तो दूसरे तरीके से सिद्ध हो सकता था। पास के गाव से कल्लू, मल्लू, जग्गू किसीको भी इस तरह मुह ढांपकर मोटर मे पहुचा सकते थे। इस प्रकार जेल से किसीको भगाने की ज़िम्मेदारी नही लेनी पडती। पर ऐसा करने का न तो समय था, न मौका। रात ग्यारह बजे जो हुआ, वही हो सकता था।

श्यामा ने कहा—प्रणवकुमार, तुम इन्हे भीतरवाले कमरे मे ले जाओ और वही रहने दो। बाहर से ताला लगा दो ताकि कोई यह न समझे कि इसके भीतर कोई है।

कहकर श्यामा एकदम से उठ खडी हुई। चित्रकूटी बाबा फिर भी बोला—मुझे जेल पहुचा दो।...

पर श्यामा ने कहा—अभी अपने को जेल मे ही समझो। तुम्हारे घर से पता लेकर तब कुछ किया जाएगा।

श्यामा ने अपनी छिपी हुई पिस्तौल इस तरह से एक बार दिखा दी मानो वह एकाएक ही दीख गई है और वह अर्चना का हाथ पकडकर घसीटती हुई बाहर ले गई।

# ४२

अर्चना के सम्बन्ध मे यह तय था कि वह और प्रणवकुमार बाकी रात प्रेमचन्द के साथ ही रहेगे, पर जब प्रेमचन्द ही नही आया तो अर्चना जाकर आनन्दकुमार के यहा तारा के साथ लेट गई। अब तक रूपवती और कबीर भी वही थे, पर श्याया ने कबीर को ले लिया और रूपवती लायब्रेरी मे चली गई। आनन्दकुमार के जेल चले जाने के बाद वह अक्सर पुस्तकालय वाले कमरे मे सो जाती थी।

अर्चना को बिल्कुल नीद नही आई। वह प्रेमचन्द के चरित्र से बखूबी परिचित थी। वह जानती थी कि वह हद दर्जे का झक्की है, पर कोई व्यक्ति मृत्यु के सामने खडा होकर इस प्रकार का कौतुक कर सकता है, यह उसकी कल्पना के बाहर था।

तारा तो मज़े मे सो रही थी, पर अर्चना की आख एक बार भी नही झपकी। वह कभी फासीघर की बात सोचती तो कभी उस पूरी प्रक्रिया की बात सोचती जैसे फासी दी जाती है। सन्ध्या समय फासीवाले को बताया जाता है कि कल तुम्हे इस नश्वर जगत से कूच कर जाना है, फिर उससे पूछा जाता है कि तुम्हारी कोई अन्तिम इच्छा है या नही। यहा अर्चना कुछ रुक गई। प्रेमचन्द इसके उत्तर मे क्या कहेगा ? क्या वह यह कहेगा कि वह अर्चना से एक बार मिलना चाहता है ? नही, वह कभी ऐसा नही कहेगा। वह अब सबसे दूर है, अर्चना से तो हज़ारो कोस दूर। वे तो केवल एक ही बात सोच रहे होगे, अन्तिम त्याग की बात। पर इस अन्तिम त्याग से उन्हे रोकता कौन था ? उसके मौके तो अनन्त हैं। फिर यह जल्दबाज़ी क्यो ?

अर्चना चाहती थी, बहुत चाहती थी कि उसे प्रेमचन्द पर क्रोध आए, पर क्रोध नही आ रहा था। जो स्वय अपने हाथ से अपने गले मे फासी का फन्दा डाल रहा है, उसपर क्रोध कैसे आ सकता था ? एक बात पर क्रोध आते-आते रह गया था, वह यह कि खुद नही आए तो उसके बदले उस अर्द्धपागल, अधेड रसोइए को क्यो भेज दिया। पर इसमे भी क्रोध आने की कोई बात नही थी।

उन्होने उसे भी इसलिए भेजा था कि कही लाखन और रामउजागर के रुपये मारे न जाए। किसीके प्रति अन्याय न हो, सारी मुसीबत अपने ऊपर रहे, अन्याय हो तो अपने ऊपर हो, यही उनकी आकाक्षा थी। ऐसा व्यक्ति क्रान्तिकारी आन्दोलन मे क्यो आया ? इसमे तो हर समय व्यक्ति को सावधान रहना पडता है, पैतरे धरना पडता है, दूसरे के पेंच को पेच से काटना पडता है।

वह मन ही मन अपने को दोष देने लगी कि उसने एक तरह से ज़बर्दस्ती प्रेमचन्द को क्रान्तिकारी दल मे भरती किया फिर वही तक बात रहती तो भी गनीमत थी, गरमजोशी दिखाकर उपदल बनाया और वह इस नाते कि पुराना दल यथेष्ट उग्र और सक्रिय नही है।

प्रेमचन्द शायद एक साधारण गृहस्थ के रूप मे भी सफल न होता। ऐसे व्यक्ति सफलता के लिए पैदा ही नही होते। पर वह यदि उनकी जीवनसगिनी बनती और उसपर ससार के झगडो-टटो से आड किए रहती तो कदाचित वह सफल होता, पर दल मे तो उल्टी बात हुई। उसीने टेगर्ट को सज़ा देने के लिए उसका नाम प्रस्तावित किया और महज़ यह दिखाने के लिए ताकि कोई यह न समझे कि प्रेमचन्द किसीसे किसी प्रकार पीछे है।

ये सब तो पुरानी बाते हुई। अब तो उन्हे फासी होगी और कोई इससे उन्हे बचा नही सकता। जब उन्हीके बैरक से एक आदमी भागा तो यह निश्चित है कि उनपर पहरा अधिक कर दिया जाएगा। जहा रात को एक जमादार पहरे पर रहता था, वहा शायद तीन या चार जमादार रहे। इसलिए आगे भगाने की कोई चेष्टा यदि वे चाहे भी तो सफल नही हो सकती। क्या वे चाहेगे ? कौन जाने ? सचमुच अर्चना भी प्रेमचन्द को कुछ भी नही जानती थी। वे कब क्या करेंगे इसे कोई नही जानता।

अर्चना ने बहुत चेष्टा की कि सारी घटनाओ को बृहत्तर परिप्रेक्ष्य मे देखे और इस अकृतकार्यता को अपना दुर्भाग्यमात्र न समझे, पर वह किसी भी तरह सफल नही हुई। घूम-घामकर विचार केवल वैयक्तिक कोल्हू के इर्द-गिर्द ही चक्कर लगाने लगे। वह उन्हे किसी भी प्रकार निवृत्त करने मे समर्थ नही हुई।

इतने मे तारा हिली। शायद वह सो नही रही थी, महज़ बहाना किए हुए पडी थी। अर्चना ने धीरे से आवाज़ दी—तारा सो रही हो ?

तारा ने जमुहाई ली और हाथ-पैर फैलाती हुई बोली—कुछ ऐसे ही सो

रही थी। एक सपना देख रही थी।

भला तारा के सपने से अर्चना को क्या मतलब था, पर इस समय वह अपनी उलझनो से इस बुरी तरह निकलना चाहती थी कि बोली—क्या सपना देखा ?

तारा अब उठकर बैठ गई, बोली—मैने सपना देखा कि मै जेल मे पहुच गई हू और वहा प्रेमचन्द जी से मेरी भेट हुई।

यदि कई घटे पहले कोई तरुणी इस प्रकार की बात करती तो अर्चना को बुरा लगता, पर इस समय यह बात बुरी तो लगी ही नही, उल्टा यह मालूम हुआ जैसे कम से कम एक तो है जो अपने दु ख मे दु खी है। अर्चना बोली—तुमने तो कभी प्रेमचन्द जी को देखा नही है, फिर भी तुमने कैसे पहचाना ?

—फोटो से पहचाना·

हा, अर्चना तो यह भूल ही गई थी कि प्रेमचन्द का फोटो घर-घर मे है। बोली—तुमने क्या कहा ?

—मैंने उनको प्रणाम किया तो वे मेरी तरफ ऐसे देखने लगे जैसे मै कोई नई किस्म का प्राणी होऊ।

अर्चना बोली—क्या उन्होने तुम्हे ऐसे देखा जैसे एक पुरुष स्त्री की तरफ देखता है ?

तारा इस प्रश्न का उत्तर न दे सकी। वह अजीब तरीके से आखो से शून्य को टटोलने लगी। बोली—मैंने ऐसा कुछ नही देखा····

अर्चना को स्मरण हो आया कि तसद्दुक ने तारा को लोलुप दृष्टि से देखा था और कई दिनो तक देखा था इसलिए तारा उस दृष्टि को समझ सकती है। बोली—जाने दो। यह बताओ कि क्या बातचीत हुई ?

—मैंने उनसे कहा कि बाहर चलिए, आपकी बड़ी प्रतीक्षा है। देश के नौजवान आपकी ओर टकटकी लगाकर देख रहे है।

इसपर वे मुस्कराए, बोले—तभी तो मेरा जाना नही हो सकता। यहा मै एक उच्चपीठ स्थान पर हू, किसी तरह पतन का कोई डर नही है, पर बाहर सैंकडो प्रलोभन है, असंयम है, झगडे-रगडे है, मैं बाहर नही जाना चाहता।

अर्चना ने इन बातो को एक प्रकार भीत और त्रस्त होकर सुना। इस लड़की को तो भागने की योजना का कुछ भी पता न था, फिर यह कैसे ये

बाते कह रही है ? पर उसे स्मरण आया कि प्रेमचन्द ने एक बार स्वप्नो के सम्बन्ध मे बताया था कि कई बार सरल और निष्पाप मनो पर भविष्य की परछाई उसी तरह से साफ पड जाती है जैसे दर्पण मे उनके सामने की वस्तु का प्रतिबिम्ब पडता है ।

अर्चना बोली—फिर तुमने क्या कहा ?

—मैं क्या कहती ? मैंने केवल इतना कहा, हम लोगो को कोई रहबर भी तो चाहिए । इसपर वे फिर मुस्कराए । बोले—कोई किसीको राह नही दिखाता है । राह स्वय ही अपने को दिखाती है । जब मैने तसद्दुक को मारा तो मुझे किसने राह दिखाई थी ? स्वय मैंने ही सारी तैयारी की थी ।—कहकर वे फिर हसे, बोले—तारा, कई बार रहबर राहजन भी तो हो जाते हैं····

तारा बोली—न जाने मुझमे क्यो यह इच्छा हुई कि मैं उनके चरण छू लू और मैंने झपटकर उनके चरण छू लिए और कहा—आप राहजन कैसे हो सकते है ? वे बोले, तुम सस्कृत तो समझोगी नही इसलिए मैं हिन्दी मे कहता हू, जो हमारी अच्छी बाते हैं, तुम उन्हीका अनुकरण करो । बाकी बातो का नही । मैंने जो मार्ग अपनाया, वह तुम्हारा मार्ग है ही, यह न समझो।

मैं सुनकर ठग रह गई । कितने नम्र थे । अपने को किसी भी हालत मे कोई महत्व देना नही चाहते थे ।

तारा ने अपनी कहानी यही पर समाप्त कर दी, उसपर छाया हुआ सरूर स्पष्ट दिखाई पड रहा था । अर्चना समझ गई कि कोई बात ऐसी है, जिसे तारा अकेले ही जुगाली करना चाहती है । बोली—और कोई बात नही हुई ?

तारा यो तो कहना नही चाहती थी, पर अपनी साथिनो से झूठ भी नही बोलना चाहती थी । बोली—स्वप्न की बाते स्वप्न ही हैं ।

—फिर भी ।

तारा ने कुछ अनिच्छा के साथ कहना शुरू किया—मैंने लडकबुद्धि से उनसे कहा, जो आप बाहर चलना नही चाहते तो मैं भी यही रह जाऊगी !

अर्चना एकाएक जोश मे आकर बोली—तुमने ऐसा कहा ?—कहकर अगले ही क्षण बुझती हुई बोली—तुमने ऐसा कहा तो वे क्या बोले ?

तारा बोली—मैंने उन्हे जब यह बात कही तो वे आगे बढ आए और मेरी पीठ पर एक थपकी-सी देते हुए बोले—तुम यहा रह जाओगी तो क्या

होगा ? तुम्हे जेल वाले फौरन निकाल देगे। दो व्यक्तियो के भाग्य जबर्दस्ती एक धारा मे नही बहाए जा सकते।

इसपर मैंने जिद नही की और मैंने हाथ उठाकर उनसे नमस्ते किया और चलने को हुई। वे बोले—एक बात समझ लो तारा ···

—मैं रुक गई कि वे मुझे कोई गूढ बात बताने वाले हैं। अगले ही क्षण वे बोले—बहुत लम्बी बात है। कहते-कहते सबेरा हो जाएगा, लोग आकर देखेगे तो पता नही क्या समझेगे। इसलिए तुम जाओ। बस इसकी बात याद रखना···

कहकर उन्होने अपनी मेज़ पर से एक पुस्तक उठाई और दिखाई। मै जल्दी मे उस पुस्तक का नाम नही पढ पाई और जेल के बाहर हो गई। मुझे बडा अफसोस हुआ कि उनकी अन्तिम वाणी पूरी तरह मेरे पल्ले नही पडी। मैं बडी दु.खी हो रही थी, उसी समय आपने मुझे पुकार लिया। ··

तारा और अर्चना देर तक सारी बातो पर सोचती रही, यद्यपि दोनो के सोचने का दायरा बिल्कुल अलग-अलग था। तारा इस स्वप्न को एक रोमाटिक विचार-विलास के रूप मे ले रही थी। विचार क्यो विमर्श के रूप मे क्योकि इसमे कई बाते बड़ी गम्भीर थी, पर अर्चना इस स्वप्न पर कई दृष्टियों से विचार कर रही थी। एक तो इस स्वप्न मे भी प्रेमचन्द ने जेल से भागने से इन्कार किया, और एक बार नही तो दो बार यह कहा कि मेरे जीवन से सीख न लो। न मेरी मृत्यु से सीख लो, बल्कि।

यह तो स्पष्ट था कि जो बात उन्होंने सस्कृत मे न कहकर हिन्दी मे कही थी, उसका मूल तो उपनिषद् का वचन था—मान्यस्माकं सुचरितानि तान्येव त्वमोपास्यानि, नो इतराणि। इसका स्पष्ट आशय यह था कि मुझपर भी सदेह की दृष्टि से देखो, मेरे कार्यो पर गम्भीर विचार करो। वह पुस्तक कौन-सी थी, जो उन्होने दिखाई थी ? क्या वह कार्ल मार्क्स की 'पूजी' नामक पुस्तक थी ? या वह जर्मन दार्शनिक नीट्शे का 'ऐसे जरथुस्त्र ने प्रवचन किया था' नामक पुस्तक थी या वह गीता थी ? प्रेमचन्द तीनो के उदाहरण दिया करते थे। यो अग्रेज़ी 'गीताजलि' भी उनकी प्रिय पुस्तको मे थी।

तारा ने अजीब स्वप्न देखा। स्वप्न होते हुए भी वह किस प्रकार वास्तविकता से भी अधिक सत्य था। इस स्वप्न मे उस महान् व्यक्ति का चरित्र कितना

स्पष्ट रूप से सामने आ गया था, पर अजीब बात है, सारी दुनिया यह सब कुछ नहीं जानेगी। वह इतना ही जानेगी कि एक मनोविज्ञान का लेक्चरार एक अंग्रेज़ मजिस्ट्रेट के बगले पर पकडा गया था। पुलिस वाले कहते थे कि उसके पास एक पिस्तौल थी और वह गोरा मजिस्ट्रेट की हत्या करने आया था। जब उसकी तलाशी ली गई, तो सिर्फ सिगरेट का एक पैकेट निकला। जेल मे एक पुलिस अफसर उन्हे सताया करता था, किसी सूत्र से उन्हे मालूम हुआ कि इसने एक देशभक्त लडकी को बुरे उद्देश्य से कैद कर रखा है, बस इसपर उन्होने घात लगाकर बिना किसी अस्त्र के केवल मसहरी के डडो के सहारे उसकी हत्या कर डाली। बराबर वह अपने मुकदमे के प्रति उदासीन रहा, मानो कचहरी मे जो कुछ हो रहा था, वह एक नाटक है और वह उसके दर्शकमात्र। नाटक का टिकट खरीद चुके हैं इसलिए आते-जाते रहते हैं, पर देखना न देखना अपनी इच्छा है। संसार यह तो नही जानेगा कि सारी तैयारी यहा हो चुकी थी, यहां तक कि उनका रसोइया बहुत आसानी से जेल से बाहर चला आया, पर उन्होने अन्तिम बलिदान करने मे कही देर या बाधा न हो जाए, इसलिए जान-बूझकर भागने से इन्कार किया। नतीजा यह है कि ससार प्रेमचन्द की पूजा तो करेगा, पर प्रेमचन्द के असली बडप्पन से अपरिचित रह जाएगा।

अर्चना एकाएक उत्तेजित होकर बोली—तारा, उनका यह बडप्पन कैसे संसार के सामने आएगा कि उन्होने जान-बूझकर बाहर आने से इन्कार किया?

तारा प्रश्न ठीक तरीके से समझ नही पाई, बोली—दीदी, यह तो स्वप्न था।

अर्चना बोली—कौन कहता है कि यह स्वप्न था? यही वास्तविकता है। वे इतने ही महान हैं।

तारा फिर भी समझ नही पाई कि अर्चना दीदी इतनी बुद्धिमती होकर स्वप्न और वास्तविकता को उलझा कैसे रही हैं। स्वप्न के आधार पर वे बडप्पन कैसे कूत रही हैं?

अर्चना विस्फारित नेत्रो से तारा के चेहरे को देख रही थी, देखते-देखते वह एकाएक बोल उठी—तारा, तुम धन्य हो कि तुम्हारे लिए एक इतने महाप्राण व्यक्ति अपने को न्योछावर करने जा रहे हैं और जब तक इतिहास रहेगा तब-तक उनकी शहादत के साथ तुम्हारा नाम जुडा रहेगा।

तारा बोली—यही सोचकर मैं यहा आई थी कि शायद मैं उनकी नही तो

आप लोगो की कुछ सेवा कर सकू ।

—इसीलिए तुमने वह स्वप्न भी देखा जिसमे स्वप्न के अन्दर से वास्तविकता की पूरी झलक आ गई ।

तारा ने व्यथित होकर कहा—तो आपका यह ख्याल है कि यदि उनको जेल से भागने का मौका मिले तो न भागे ?

अर्चना ने बडी तेज़ी के साथ मानो पाठ मे याद किया हो, कहा—मेरा विश्वास है कि वे अंन्तिम त्याग करने का निश्चय कर चुके है । वे किसी भी हालत मे उस लक्ष्य से हटने के लिए तैयार न होगे ।

अभी रात कुछ बाकी थी । दोनो चुपचाप सो गई ।

अबकी बार अर्चना ने स्वप्न देखा । उसकी आखो मे आसू थे । एक प्रेमिका जैसे प्रेमिक से कहती है, उस रूप मे नही उसने प्रेमचन्द से, भक्त जैसे भगवान से कहता है, उस रूप मे कहा—यह आपने क्या किया नाथ ?

कन्धे पर हाथ रखते हुए, बडे स्नेह से प्रेमचन्द ने कहा—यही उचित था, मेरे लिए भी और तुम्हारे लिए भी ।

—क्यो ?

—इसलिए कि यदि मै दीवार फादकर बाहर आ जाऊ तो लोग मुझे एक साधारण प्रेमिक समझेगे । बहुत हुआ तो मुझे मजनू और फरहाद के साथ एक पक्ति मे बैठाया जाएगा । और बहुत सम्भव है,यह भी कहे कि मेरा असली रूप यही था । बाकी जो कुछ हुआ, वह तो इस प्रेम को समृद्ध, ऐश्वर्यशाली, रोमाटिक बनाने के लिए हुआ !

इसपर अर्चना ने आंसू पोछते हुए कहा—पर क्या प्रेम मे कोई बुराई है ? आप ही ने कहा था·· ···

प्रेमचन्द ने देर तक इसका उत्तर नही दिया; ऐसा मालूम हुआ कि अब वे आत्मसमाहित और अपने मे लीन हो गए हैं, शायद आगे कुछ कहे नही । पर वे एकाएक बोले—प्रेम में कोई बुराई नही है । वह दिव्य है, पर जो बात जैसी नही है, उसे उस रूप मे चित्रित होने देना कोई अच्छी बात नही कही जा सकती । क्या तुम यह नही चाहती हो कि तुम्हारे प्रेम से मेरी शहादत को उत्तेजना मिले ?

कहकर वे चुप हो गए । उन्होने कौतूहल से अर्चना की ओर देखा भी

नही मानो उत्तर की उन्हे प्रतीक्षा ही न हो। धीरे-धीरे उनकी मूर्ति जैसे कोहरे मे धुधली पडकर डूब गई।

अर्चना एकदम से जाग गई तो उसने देखा कि तारा गहरी नीद मे सो रही है और सबेरा हो चुका है। पर कैसा अजीब सबेरा था जो सारी आशाओ और स्वप्नो पर पानी फेर कर आया था। अब तो केवल शून्य था! महाशून्य•••

## ४३

यो अमिताभ जोखिम उठाने से कभी पीछे नही हटते थे, पर उन्होने आज किसी भी हालत मे आनन्दकुमार के घर जाना उचित नही समझा। उन्हे वह स्थान मालूम था जहा प्रेमचन्द टिकाया गया था, पर उन्होने देर तक सोचने के बाद तारा के यहा जाकर स्थिति की थाह लेना उचित समझा। इसमे एक ही खतरा था कि कहीं तारा को प्रेमचन्द की पत्नी बनाकर शहर से निकाला गया हो, तो वहा लेने के देने पड सकते है। जवान लडकी रातभर गायब थी और अब दिन के तीन बजे तक नही थी, कही वहा भी पुलिस न पहुच गई हो। पुलिस वहा कई तरह से पहुच सकती है। एक तो मिसेज़ बनर्जी की रिपोर्ट पर कि उनकी लडकी गायब हो गई है, और दूसरे प्रेमचन्द के भागने और तारा के गायब होने को मिलाकर भी पुलिस यहा आ सकती थी। पर इतना जोखिम तो उठाना ही था।

अमिताभ कुछ मामूली-सा भेष बदलकर तारा के घर पर पहुचे। सौभाग्य से तारा घर ही मे थी। श्रीमती बनर्जी उन्हे किसी न किसी रूप मे यानी एक भले आदमी के रूप मे जानती ही थी इसलिए दिक्कत की आशका नही थी।

एलोकेशी ने देखते ही अमिताभ का स्वागत किया। बोली—बेटा, तुम आ गए, बहुत अच्छा हुआ। इस समय मुझपर किसी ग्रह का कोप मालूम होता है, इसलिए तुम्हारी बहुत ज़रूरत थी।

अमिताभ लगभग यह भूल गए कि एक बार बेमौके सामने पड जाने के

कारण श्यामा ने इनका परिचय देते हुए इन्हे ज्योतिषी बतलाया था, पर उक्त प्रकार के स्वागत से वह बात याद आ गई, चेहरा गम्भीर बनाकर बोले—आपकी मारकेश की दशा चल रही है, और शनि आपका मारकेश है और मगल के साथ उसका अशुभ सम्बन्ध चल रहा है। शान्ति स्वस्त्ययन आदि कराने से कल्याण हो सकता है। आप नीलम धारण करे।

एलोकेशी खुश तो हुई पर साथ ही फौरन ही बुझकर बोली—बारह साल तो उधर गए। इधर भी काफी दिन हो गए, मेरा क्या भला होगा ?

तारा सामने आकर खडी हो गई थी, पर मा के सामने न तो वह कुछ बोल सकती थी और न अमिताभ ही कुछ पूछ सकते थे, फिर भी दोनो मे आखो-आखो मे जो बाते हुईं, उनके फलस्वरूप तारा ने मा से कहा—पहले इनको चाय-वाय तो पिलाओ, फिर ग्रह-दशा पूछना !

चाय के लिए यह तकाजा एलोकेशी को कुछ अच्छा नही लगा, पर इधर सभी बाते इस ढग से हो रही थी। उनपर नियत्रण करने का प्रयास करना व्यर्थ दीख पडता था। वह कुछ दुखी होकर दूसरे कमरे मे चाय का प्रबन्ध करने गई। तारा ने फौरन पूछा—आप किसी विशेष कार्य से आए हैं ?

अमिताभ यह तो पूछ नही सकते थे कि प्रेमचन्द कहा हैं, इसलिए उन्होने इसके बाद ही जो प्रश्न बिना किसी आपत्ति के पूछा जा सकता था, वह पूछा, बोले—अर्चना कहा है ?

—अर्चना दीदी रात को मेरे ही साथ सोईं।

—सबेरे कहा गई ?

—सबेरे अपने घर गई।

—तुमने कैसे जाना कि वह अपने घर गई ?

—मैं उन्हे स्वय घर पहुचाकर अपने घर आई।

अमिताभ ने सोचा कि सम्भव है प्रेमचन्द को सबेरे ही प्रतिभा के साथ काशी से रवाना कर दिया गया हो, पर कही कुछ खटक रहा था। अर्चना तारा के साथ क्यो सोई ? स्वाभाविक तो यही होता कि वह प्रेमचन्द से रात भर बात करती रहती। तो क्या वह सारी खबर मनगढन्त थी ?

इसी समय एलोकेशी आ गई। इसलिए कोई बात नही हो सकी। अमिताभ ने जान-बूझकर चाय पीने मे देरी कर दी। यह कुछ कठिन नही था, क्योकि

एलोकेशी बात करने के लिए, विशेषकर भविष्य के सम्बन्ध में जानने के लिए बहुत उत्सुक रहती थी और अमिताभ को भविष्य के सम्बन्ध मे बात करने मे कोई आपत्ति नही थी क्योकि पूर्वापर सम्बन्ध कायम रखकर जो भी मु ह मे आता गया, कहते गए। तारा जानती थी कि वे न तो ज्योतिषी हैं न ज्योतिष मे विश्वास ही करते है, इसलिए वह दोनो की बाते सुनकर मन्द-मन्द मुस्कराती जाती थी, कभी-कभी उसका मन मा के प्रति करुणा से और कभी व्यग से पूरित हो जाता था।

खैरियत यह हुई कि प्रदीप सध्या के कुछ पहले खेल-खालकर आ गया, इसलिए एलोकेशी उसीको खिलाने-पिलाने मे व्यस्त हो गई। वह चाहती थी कि जब यहा ज्योतिषी मौजूद है ( नाम का पता नही था ) तो वे प्रदीप का भी हाथ देखे, पर अमिताभ ने ज्योतिषी-सुलभ नखरे के साथ कहा—गुरु की आज्ञा नही है। मै एक दिन मे एक से ज्यादा हाथ नही देखता। फिर कभी देखूगा। यो लडका बड़ा होनहार दिखता है। ज्ञात होता है कि इसके दशम स्थान पर गुरु उच्च होकर बैठा है........

एलोकेशी के चेहरे पर विषादपूर्ण गौरव की रेखाए दिखाई पडी और वह वहा से चली गई थी। थोड़ी देर मे अमिताभ सध्या के अंधकार मे लुकते-छिपते उस मकान मे पहुचे जहा प्रेमचन्द के रुकने का इन्तजाम था।

वहां यह मालूम हुआ कि किसी व्यक्ति को ताले के अन्दर बन्द रखा गया है, एकमात्र चाभी प्रणवकुमार के पास है। यह बहुत ही रहस्यजनक बात थी। प्रेमचन्द को इस प्रकार ताले मे बन्द रखने का क्या अर्थ था ?

पर प्रतीक्षा के अतिरिक्त और कोई चारा नही था। वह वही अन्धेरे मे बाग में बैठ गए और घटनाओ की प्रतीक्षा करने लगे। जो युवक पहरे पर था, उससे उन्होंने पूछा—आज का अखबार तो नही है ?

पता लगा कि न तो आज का कोई अखबार है और न उसने आज का अखबार देखा ही है। इसलिए यह भी रास्ता गया। अखबार से कम से कम यह तो पता लगता कि कल रात की जेल वाली घटना के सम्बन्ध मे कुछ छपा है कि नही।

वह युवक अमिताभ को नही जानता था, पर इतना जानता था कि ये अवश्य कोई विशेष व्यक्ति है क्योकि वह उन्हे काशी मे होने वाली केन्द्रीय

समिति की एक बैठक मे सबसे बाद को प्रवेश करते हुए देख चुका था। उस दिन भी यही युवक पहरे पर था। अमिताभ ने भी देखते ही उस युवक को पहचान लिया था, पर उन्हे याद नही आ रहा था कि किस मौके पर उन्होने उसे देखा था।

लगभग एक घटे प्रतीक्षा करने के बाद अमिताभ ने देखा, बहुत-से लोग एक-एक करके एक ही समय विभिन्न दिशा से उस मकान के हाते से प्रविष्ट हुए। वे समझ गए कि कोई छोटी-मोटी सभा होने जा रही है। वे कुछ आड मे हो गए। वे अभी निश्चय नही कर पाए थे कि क्या करे, इतने मे उस युवक ने जीवानन्द के साथ उनके पास आकर कहा—यह रहे वे सज्जन।

जीवानन्द ने अपेक्षाकृत अधेरे मे भी उन्हे पहचान लिया। बोला—आप यहा हैं और हम लोग आपको जाने कहा-कहा ढुढवा रहे हैं...

—क्या कोई गम्भीर बात है ?

—अत्यन्त गम्भीर।

दोनो साथ-साथ भीतर गए। वहा श्यामा, अर्चना और प्रणवकुमार पहले से ही मौजूद थे। जीवानन्द ने सक्षेप मे सारी बात सुनाई कि किस प्रकार प्रेमचन्द के बदले उनका रसोइया बाहर आया है।

सुनकर अमिताभ का चेहरा गम्भीर हो गया। वे कभी अपनी भावनाओ को सार्वजनिक रूप से व्यक्त नही करते थे, पर इस अवसर पर वे अपने को रोक नही सके। बोले—यह सब क्या हो रहा है ?

जीवानन्द ने भी कहा—मेरी भी समझ मे कुछ नही आता। इतनी बड़ी सुविधा पाकर भी बाहर नही आए, यह बहुत ही रहस्यजनक बात है।

अमिताभ को जैसे कुछ याद आ रहा था, पर वे यह समझ नही पा रहे थे कि क्या ? जैसे पूर्वजन्म मे कोई बात देखी हो। केवल परछाई पकड़ मे आ रही थी। सो उसे भी ठीक तरह से नापने-जोखने के पहले ही वह इस तरह बिगड जाती थी जैसे पानी मे पडी हुई परछाईं ढेला मारने से बिखर जाती है, पर पानी शात होते ही, फिर वह कुछ-कुछ दीखने लगती है।

अच्छा। ठीक याद आ रहा है। उन्होने जेब मे हाथ डाला और वह पत्र निकाला जो सबेरे मा ने उनको दिया था। जीवानन्द द्वारा लिखा हुआ पत्र तो उन्होंने पहले ही नष्ट कर दिया था, पर दूसरा पत्र रख छोडा था। अब उन्होंने

वह पत्र अर्चना को दिखाते हुए कहा—यह पत्र किसका लिखा हुआ है ?

अर्चना उसे देखते ही लपकी। ऐसा लगा, वह पत्र छीन लेना चाहती है, पर अमिताभ ने जल्दी से हाथ खीच लिया। उन्हे अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया। बोले—तो यह प्रेमचन्द का पत्र है ?

सारा वातावरण गम्भीर हो गया। अर्चना समझी कि शायद इस पत्र मे वह बात खुल गई है, जिसे उसने सबसे छिपाया था। उसे ऐसा जान पडा जैसे वह अभियुक्ता है और अब उसका मुकदमा होगा। एक क्षण के लिए उसके पाव तले से धरती खिसक गई, क्योकि वह जानती थी कि इस गम्भीर मामले को छिपाने का कोई भी समर्थन नही करेगा। नये दल के लोग भी जो उसे प्रेमचन्द के बदले एक तरह से नेत्री मानते थे, वे भी उसका समर्थन नही करेंगे।

अब तक सब लोग खडे-खडे बातचीत कर रहे थे, अब सब लोग बैठ गए। जीवानन्द ने बाहर जाकर युवक से कुछ कहा और फिर वह लौट आया।

अमिताभ ने फिर से पत्र जेब मे डाल लिया था, बोले—यह तो पता लग गया कि पत्र प्रेमचन्द का लिखा हुआ है। सम्भव है कि उनका रसोइया इस पत्र को लाया हो, पर हडबडाहट मे यह गिर पडा हो। क्यो जीवानन्द, तुम्हारा क्या विचार है ?

—मैं भी यही समझता हू, पर उससे पूछ ही क्यो न लिया जाए ?

अर्चना इस बात से खुश नही हुई, बोली—यह पत्र उनका लिखा हुआ है, यह तो मैंने दूर से ही देखकर पहचान लिया। यह भी साफ है कि पत्र उसी समय आया, कैसे आया, यह कोई महत्व नही रखता।

अर्चना यह डरती थी कि कही वह रसोइया कोई और ऐसी-वैसी बात न कह जाए। अवश्य वह इस बात के लिए किसीसे डरती नही थी, और अब तो वह सार्वजनिक रूप से इस बात को मानने के लिए तैयार भी थी, कि वह प्रेमचन्द से प्रेम करती थी। पर किसी मुकदमे के अभियुक्त बनने मे एक हीनता होती है। अभियुक्त को आंखें नीची करके सबके सामने खडा होना पडता है, वह इसीसे बचना चाहती थी।

जीवानन्द ने कहा—पूछ लेने मे कोई हर्ज तो नही है। क्यो दादा ?

अमिताभ ने कहा—हां, मैं उसे देखना भी चाहता हू। रात के अधेरे मे तो मैंने उसे देखा ही नही। उसका शायद मुह भी ढका था।

प्रणवकुमार ने इगित पाकर फौरन ही चित्रकूटी को हाजिर किया। वह बेचारा बहुत डरा हुआ था और गिडगिडाकर यही कहने लगा कि मुझे जेल पहुचा दिया जाए।

जीवानन्द ने उसे डाटते हुए कहा—हम तुम्हारी भलाई के लिए ही तुम्हे यहा रखे हुए है, नही तो अब तक तुम पकडे जाते और यह तो जानते ही हो कि पकडे जाने पर सबसे पहले तुमपर बेभाव की मार पडती। शायद फिर कभी उठने के काबिल होते ही नही। अब तुम आसू पोछकर, जो बात पूछी जाए उसका ठीक-ठीक जवाब दो।

अमिताभ ने चित्रकूटी से पूछा—तुमको प्रेमचन्द जी ने कोई चिट्ठी दी थी?

प्रश्न सुनकर चित्रकूटी थर-थर कापने लगा। उसने समझा कि पत्र किसी तरह पुलिस के हाथो पड गया है और ये लोग यह समझ रहे हैं कि मैंने ही पुलिस को पत्र दिया है। घबराहट के साथ बोला—नही-नही, उन्होने मुझे कोई पत्र नही दिया था।

तब अमिताभ ने पत्र दिखाकर उससे पूछा—तुम्हारी जेब से यह पत्र गिर पडा और गिरते ही किसीने अपनी जेब मे रख लिया। तुम सच क्यो नही वोलते?

तब वह आदमी रोने लगा और सिसक-सिसककर बोला—हा, बाबूजी ने चलते वक्त एक चिट्ठी मुझे दी थी, पर मै उसकी बात बिल्कुल भूल गया।

जीवानन्द ने रुखाई के साथ कहा—या कि जब तुमने देखा कि पत्र खो गया है, तब तुमने उसका जिक्र ही नही किया?

घुमा-फिराकर चित्रकूटी ने माना कि बात ऐसी ही है। अब वहा उस व्यक्ति का कोई प्रयोजन नही रहा और अमिताभ का इशारा पाकर प्रणवकुमार ने उसे ले जाकर पहले वाले कमरे मे बन्द कर दिया।

अर्चना ने सन्तोष की सास ली कि कोई ऐसी-वैसी बात नही छिडी। छिडती तो भी वह हिचकिचाने वाली नही थी। ज्यो-ज्यों समय जा रहा था, वह और दृढप्रतिज्ञ होती जा रही थी। वह सब कुछ साफ-साफ मानेगी। हा, केवल एक बात वह यह छिपाना चाहती थी कि रामउजागर का आना, उसका पत्र देना और उत्तर ले जाना गुप्त रहे। बाकी बातो को तो वह सार्वजनिक रूप से मानने को तैयार थी। यहा श्यामा बैठी हुई है, उसके और यूसुफ के प्रेम के

मुकाबले मे तो उसका प्रेम कही श्रेष्ठ था। और अब तो प्रेम का एक ही अर्थ था, वह था आजीवन रुदन। इसमे कही भी कोई अगौरव की बात नही थी न स्वार्थ था। सच्चे अर्थ मे यह अफलातूनी प्रेम था।

अमिताभ पत्र को चुपचाप पढ रहे थे। कुछ देर तक चुपचाप पढने के बाद उन्होने कहा—जब मुझे सुबह यह पत्र मिला तो मैं इसे पढने को तो पढ गया, पर इसका कोई अर्थ नही निकाल सका, क्योकि एक तो मैं प्रेमचन्द के हस्ताक्षर से परिचित नही था, दूसरे मैं यह समझता था कि प्रेमचन्द बाहर हैं।…

अमिताभ की वाग्धारा को बीच ही मे रोककर अर्चना बोली—क्या यह पत्र मेरे लिए है? उस हालत मे आप पत्र मुझे दे दें।

अमिताभ, जीवानन्द, प्रणवकुमार, श्यामा सब इस अप्रत्याशित औद्धत्य से एक क्षण के लिए पथरा गए।

सबसे पहले अमिताभ सम्हले। वे बोले—यह पत्र किसीके नाम से नही लिखा गया है। पत्र का लहजा तथा स्तर इतना ऊचा है कि पत्र सारे राष्ट्र के नाम लिखा गया ज्ञात होता है।—कहकर वे जैसे दुखी हो गए और बोले—अर्चना जी, आपने मुझे थोडा-सा देखा है, आपको मुझपर इतना विश्वास होना चाहिए था कि यदि पत्र मे ऐसी कोई व्यक्तिगत बात मुझे दीख पड़ती जो आप ही को पढना चाहिए या आप ही के लिए लिखी गई होती, तो मैं इस पत्र को इन लोगों के सामने पेश ही न करता।

जीवानन्द ने कहा—मेरी भी स्थिति यही है। मैंने जब पत्र को पढा तो मुझे यह मालूम नही था कि श्री प्रेमचन्द भागे नही, इसीलिए मैं पत्र पूरी तरह समझ नही पाया था, पर इतना मैं भी कह सकता हूं कि इसमे कोई व्यक्तिगत बात नहीं है।

अर्चना अब पूरी तरह आश्वस्त हो गई थी। उसे अब विश्वास हो गया था कि जिस बात को वह छिपाना चाहती थी, वह किसी पर खुली नही है, न खुलेगी। रहा प्रेमचन्द के प्रति प्रेम, सो वह यह समझ गई थी कि इस सम्बन्ध मे कोई इसपर न तो रुष्ट है और न कोई कुछ कहना चाहता है।

अमिताभ ने पत्र पढना शुरू किया—समय-समय पर मनुष्य को कई महत्व-पूर्ण निर्णय करने पड़ते हैं। जीवन निर्णयो का ही एक ताता है। जो व्यक्ति

जीवन मे जितने अच्छे निर्णय करता है, ऐसे निर्णय जिनसे युगान्तकारी घटनाएं हो जाती है, वह उतना ही श्रेष्ठ समझा जाता है। मैंने भी समय-समय पर निर्णय किए है। मेरे व्यक्तित्व को उन निर्णयो से अलग नही किया जा सकता।

एक निर्णय का ही परिणाम था कि मै क्रान्तिकारी दल का सदस्य बना। दूसरे निर्णय के अनुसार मैने मुख्य दल से अलग होकर एक उग्र दल की सृष्टि की। इसके बाद मै जेल आया वह भी एक निर्णय का ही फल था, फिर एक दूसरे निर्णय का फल यह रहा कि फासी का फन्दा मेरे सिर पर झूल रहा है।

फासी का फन्दा मुझे दिखाई पड रहा है, इसलिए मैं जानता हू कि मेरे जीवन के दिन इने-गिने है। पर क्या यह कोई अनहोनी बात है ! मृत्यु कोई आश्चर्यजनक घटना नही है और न उससे कोई डरने की ही बात है। सैकडो लोग ऐसे है जो आज के दिन आराम से लेटे हुए है और मेरे फासी पर झूलने से पहले ही वे इस लोक से विदा हो जाएगे। यदि इस दृष्टि से देखा जाए तो फासी की सम्भावना कोई विशेष घटना नही मालूम होगी।

मेरे कुछ मित्र चाहते थे, और मित्र ही क्यो, मैं स्वय भी चाहता था कि बच निकलू इसीलिए कार्यक्रम बनाया गया था, पर मेरा मन आन्तरिक रूप से सन्तुष्ट नही था। उसके कई कारण है जिनको मैं यहा स्पष्ट रूप से रख रहा हू।

मै आशा करता हू कि मेरा यह वक्तव्य अन्तिम सन्देश के रूप मे ध्यान से सुना जाएगा और इसपर सब साथी खुले दिल से विचार करेगे। मैं इसी कारण इस पत्र मे वैयक्तिक बाते नही लिख रहा हू, यद्यपि मेरा हृदय उन्ही बातो को लिखना अधिक पसन्द करेगा। ...

अमिताभ ने यहा तक पढकर कहा—यह तो भूमिका मात्र है। असली वक्तव्य आगे आता है, जो यो है—स्वतन्त्रता-आन्दोलन का एक विशेष उद्देश्य है। वह एक विशेष उद्देश्य लेकर आरम्भ हुआ। इसमे कोई सन्देह नही कि इस आन्दोलन का सूत्रपात करने का श्रेय क्रान्तिकारियो को ही है। १९२१ के पहले सग्रामशील आन्दोलन के नाम पर केवल क्रान्तिकारी आन्दोलन ही था। पर इसके बाद जन-आन्दोलन का युग आया, जिसके नेता महात्मा गाधी हुए। फिर दोनो आन्दोलन साथ-साथ चलते रहे। इसके पहले भी स्वदेशी आन्दोलन एक

जन-आन्दोलन था, पर वह एक प्रान्त तक ही अधिकतर सीमित था। गाधी जी ने बाद को उस आन्दोलन के बहुत-से विचार अपना लिए।

इधर एक तीसरी धारा समाजवादी धारा के रूप मे आ रही है, जिसमे जन-आन्दोलन तो होगा ही, साथ ही साथ वह न तो हिंसा को धर्म मानेगा और न अहिंसा को। यदि किसी मौके पर अहिंसा परिणामदायक है तो उस मौके पर हिंसा करना अपराध है। परिणामदायकता से मेरा मतलब ऐसे समाज की स्थापना है जिसमे सब प्रकार के शोषणो का अन्त हो जाए।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह तीसरी धारा जिसमे हिंसा भी रहेगी और अहिंसा भी साथ ही जन-आन्दोलन भी होगा, अन्त तक देश के लिए कल्याण-कारी होगी। यदि मैं जेल से अभी निकल जाता हू और यह बात कहता हूं तो सम्भव है कि देश के लोग यह समझे कि मैं कायरतावश यह बात कह रहा हूं, पर यदि मैं, मृत्यु जिस रूप मे मुझे चुनौती दे रही है, उसे स्वीकार करू तो मेरे इस कथन को करोडो गुना ज्यादा बल मिलेगा। ऐसी अवस्था मे मुझे यही कर्तव्य जान पडा कि सब प्रियजनो को निराश करू, अपने सुख का बलिदान करू और यह सन्देश छोड जाऊं। अब कम से कम कोई मुझे न तो कायर कह सकेगा और जब कायर नही कह सकेगा तो मेरी बातो पर विचार करना पड़ेगा।....

अमिताभ ने जब यह पत्र पढकर सुना दिया तो सब लोग स्तब्ध रह गए। ऐसा ज्ञात हुआ जैसे एक युग पर यवनिका पड गई। पर साथ ही आगामी युग अभी महाकाल के गर्भ से निकलता हुआ स्पष्ट दिखाई नही दे रहा था। हां, गर्भयन्त्रणा की मरोड सबके मन मे अवश्य उठ रही थी।

अमिताभ ने सबसे पहले मौन भग किया। बोले—कुछ समझ मे नही आता यह सब क्या हो रहा है।—कहकर उन्होंने अपने फेफडो मे अधिकतर आक्सीजन खीचकर मानो अपने को सबल बनाया और फिर विषण्ण होकर बोले—यह सब क्या हो रहा है ?

जीवानन्द कुछ बोलने के लिए आतुर दिखाई पडा पर कुछ समझकर वह रुक गया। अमिताभ ने शायद यह देखा, इसलिए वे बोले—जीवानन्द, तुम कुछ कहना चाहते हो ?

जीवानन्द बोला—अध्यापक प्रेमचन्द हमेशा से बडे झक्की रहे।

अमिताभ एकदम सतर्क हो गए। बोले—इसे तुम झक कह रहे हो ? यह

तो युग की वाणी है। मै भी यही सोचा करता था, पर कभी खुलकर नही कह सका क्योंकि ·· ·'उन्होने वाक्य पूर्ण नही किया।

—तो आप भी समझते है कि क्रातिकारी आदोलन व्यर्थ है ?

—व्यर्थ नही, मै तो कहता हू कि क्रातिकारी आदोलन हमेशा रहा, और हमेशा चलेगा, पर उसका रूप बदलता है और बदलेगा। जो लोग एक लक्ष्मण-रेखा बाध देते है और यह कहते है कि इस लकीर के दायरे मे ही क्रातिकारी आदोलन है, बाहर नही, वे गलती पर है। उन्होने ठीक तो लिखा है। हिंसा भी रहेगी, अहिंसा भी। लक्ष्य होगा, सब प्रकार के शोषणो का अन्त। मै स्पष्ट देख रहा हू कि यह जो नमक सत्याग्रह चल रहा है, यह भी अपूर्ण है और जो हम लोग कर रहे है, वह भी अपूर्ण है। जो नाम के वास्ते कम्युनिस्ट पार्टी है, वह भी अपूर्ण है क्योकि वह तो पर्चेबाजी तक अपने को सीमित रखती है। हा, यह कह सकते है कि हम लोग सब मिलकर पूर्णता की साधना कर रहे है। वह पूर्णता जल्दी ही आने वाली है।

श्यामा, अर्चना, प्रणवकुमार चुपचाप उनकी बाते सुन रहे थे। जीवानन्द एकाएक कुछ उद्धत ढग से पूछ बैठा—क्या आप इस बीच मे रूस हो आए ?

अमिताभ प्रश्न का व्यग अच्छी तरह समझ गए, पर वे शात होकर बोले —मै डाडी गया था।

किसीको यह यात्रा ज्ञात नही थी, पर सबको आश्चर्य हुआ। जीवानन्द बोला—डाडी भी विपथ का एक दूसरा नाम है···

अमिताभ उठ खडे हुए, बोले—जीवानन्द, तुम स्वतन्त्र हो, जो चाहो सो सोच सकते हो, पर इतना तुम्हे बता दू कि डाडी में भी मुझे सतोष नही मिला। अब मेरा यहा रहना व्यर्थ है, अत मैं जाता हू।

जीवानन्द बोला—आप मुझे वह पत्र देते जाइए, यह एक गुमराहकुन और खतरनाक अभिलेख है, इसे नष्ट कर देना चाहिए।

अमिताभ तडपकर बोले—इसे नष्ट कर सके, ससार मे ऐसी कोई शक्ति नही है। यह तो प्रत्येक क्रातिकारी के हृदय मे अकित है। प्रेमचन्द ने उसे अपने उष्ण शोणित से लिखा है। मैं इस पत्र को दल की केन्द्रीय समिति मे पहुचा दूगा, पर मेरा जीवन भी अनिश्चयो मे पड़ा है, इसलिए सुरक्षा के लिए इस अभिलेख को अर्चना के पास रख देता हू।—कहकर उन्होने वह पत्र अर्चना को

दिया और स्वय बाहर चलने को हुए ।

अर्चना ने वह पत्र इस तरह से लिया जैसे प्रसाद लिया जाता है । उसे सिर से लगाया और फिर अपनी कुर्ती मे रख लिया । वह भी उठ पडी, साथ ही साथ श्यामा आदि भी उठ पडे ।

प्रणवकुमार ने जीवानन्द को चाभी सौप दी और कहा—मैं प्रेमचन्द की बातो से बिल्कुल सहमत नही हू, मैं सारी बाते अच्छी तरह समझना चाहता था, पर आपने उसका मौका नही दिया ।

जीवानन्द भी खडा हो गया था । वह करीब-करीब काप रहा था । उसने अमिताभ को सम्बोधित करते हुए कहा—श्रीमन्, कम से कम आपसे ऐसी उम्मीद न थी । जब ये लोग विद्रोह करके मुख्य दल से अलग हुए तब आपने घुमा-फिराकर इन लोगो का समर्थन किया और इन्हे तरह देने की सलाह दी और आज जबकि ये लोग क्रातिकारी दल की जड ही काट रहे हैं तब भी आप इनके अग्रणी हैं । प्रेमचन्द ने जो कुछ लिखा, वह पागल का प्रलाप समझा जाता, पर आपने उसे जो नैतिक समर्थन दिया उससे दल सचमुच विध्वस्त हो जाएगा ।...

अमिताभ आगे बढकर जीवानन्द के पास गए फिर जैसे पिता पुत्र को समझाता है ऐसे बोले—जीवानन्द, असली तत्व क्राति है न कि दल । कई दफे क्राति को बचाने के लिए दल को समाप्त कर देना पडता है, पर मैं कुछ नही कहता, केवल यही कहता हू कि स्वतन्त्र चिन्तन से मुह नही मोडना चाहिए । हमने यह तो नही कहा कि भाग चलो, कर्मसन्यास करो, हम यही कह रहे हैं कि सोचो !

कहकर अमिताभ पीछे हट गए और थोडी देर मे वे मा के पास थे ।

मा ने उन्हें खाने-पीने को दिया, फिर बोली—बेटे ! तुम कुछ उत्तेजित मालूम होते हो ।

अमिताभ ने केवल इतना कहा—हा मा, तुम ठीक ही कह रही हो । एक युग का अन्त हो रहा है, शायद इसीलिए मैं उत्तेजित हू ।

मा ने फिर कुछ नही पूछा और जपमाला लेकर बैठ गई । पता नही वह कब तक जप करती रही ।

अमिताभ थोडी देर मे सो गए। उन्हे ऐसी अच्छी नीद आई जैसी वर्षो से नही आई थी ।

## ४४

जिस दिन रात को चित्रकूटी जेल से भाग गया, उस दिन सुबह होते ही बडा कुहराम मचा। जेल के अधिकारी इस काड को बिल्कुल ही समझ नही पाए। यह सर्वथा उनकी समझ के बाहर था। अवश्य ऐसा कम ही होता था और इसका एक सुपरिचित उदाहरण तो यह था कि एक आदमी जिसे १५ दिन की महज़ कैद हुई थी, वह मौका पाकर जेल से भाग गया था। यो उसे और ग्यारह दिन ही जेल मे रहना था, पर अब पकडे जाने पर दो साल की सज़ा होती और सारी म्याद उसे बेडी डालकर रखा जाता।

घटना असाधारण थी, पर अभूतपूर्व नही। रात तीन बजे ही भागने वाली घटना का पता लग गया था और तबसे अच्छी तरह सुबह हो जाने तक जेल के अन्दर और बाहर के झाड-झंखाडो मे भागे हुए कैदी की खोज होती रही। जेल की गारद के अतिरिक्त पुलिस की टुकडिया भी आ गई, पर कैदी का कही कुछ पता नही लगा। प्रेमचन्द से पूछताछ हुई, पर प्रेमचन्द ने अधिकारियो से कहा—मुझे कुछ पता नही।

तब कर्नल सिम्पसन ने पूछा—आप रात को कितनी देर तक पढते रहे ?

प्रेमचन्द ने कहा—मै आज जल्दी सो गया था, फिर भी पढते-पढते एक बज चुका था।

इस प्रकार बयान देने का मतलब यह था कि पहली ड्यूटी वाला जमादार यानी अपना जमादार बच जाए। दूसरी ड्यूटी वाला जमादार यह कह रहा था कि चित्रकूटी पहली ड्यूटी मे ही भाग गया था, पर कानूनी रूप से इसका कोई महत्व नही था, क्योकि जब उसने चार्ज लिया तब इसी आधार पर लिया कि सब ठीक था।

प्रेमचन्द से इस घटना पर कोई रोशनी नही पडी, फिर भी पूछताछ जारी रही।

—आप उसे रोज़ कटे हुए जगले के पास बैठा हुआ देखते थे ?

—नही तो। वहा तो मैं सोता था। आज भी मैं ही वहा सो रहा था।

—आपके सिर के पास से जगला काटकर वह निकल गया और आपको कुछ पता नही लगा ?

—नही। मैं जब तक सोता हू, खूब सोता हू।

नवनियुक्त बल्कि स्थानापन्न पुलिस-कप्तान दुर्गाप्रसाद ने कर्नल सिम्पसन की तरफ देखा और दोनो उठ खडे हुए।

उसी समय प्रेमचन्द को ले जाकर दूसरी बैरक मे बन्द कर दिया गया।

उस दिन कैदी कुछ देर से खुले। कानाफूसी तो पहले ही से चल रही थी। जेल की ऐसी अजीब पद्धति है कि उसमे कानाफूसी बहुत जल्दी फैलती है। बात का बतगड भी जल्दी बनता है। ऐसी-ऐसी बाते उडती हैं कि बाहर के लोग विश्वास नही कर सकते। कई बार तो ये अफवाहे ईप्सित चिन्तन का ही प्रलम्बित रूप होती है।

राजनैतिक कैदी इस बात से बहुत नाराज़ हुए कि एक साधारण कैदी के भागने पर उनकी बैरक ४५ मिनट देर मे खुली। तब तक यह खबर नही पहुची थी कि प्रेमचन्द स्थानान्तरित किए गए है। पर जब यह खबर पहुची तो उसमे यह नमक-मिर्च भी लग गया कि उन्हे किसी भयकर कारण से हटा दिया गया है।

थोडी देर मे यह खबर भी उडी या पता नही किसीने कल्पना कर ली कि असल मे कोई भागा नही है, चित्रकूटी को जेल वालो ने समय से पहले ही छोड दिया और बहाना बनाकर प्रेमचन्द के साथ अकथ्य अत्याचार किया जा रहा है। यद्यपि फासी होना निश्चित है, फिर भी पुलिस वाले उनसे कोई बात नही निकाल पाए, इसलिए यह सारा षड्यन्त्र रचा गया है।

फौरन ही हाते भर के राजनैतिक कैदियों की एक सभा हुई और उसमे ये सारी बाते कही गई। रामचरण ने सारी खबरे सुनाकर कहा—हम हिंसा माने या अहिसा, पर इस प्रकार हमारी आखो के सामने अत्याचार हो, यह हम कदापि नही देख सकते। पहली बात तो यह है कि तसद्दुक ने एक सत्याग्रही

लडकी को भगाकर रखा था और उसका उद्देश्य उसपर बलात्कार करना था। सुना तो यह गया है कि वह अपनी इस दुरभिसन्धि मे सफल नही हुआ, पर कौन जाने ? हमारे यहा स्त्रियो की दशा ऐसी है कि कई बार दम घुट जाने पर भी गला दबाने वाले की बात गुप्त रखनी पडती है। मान भी लिया जाए कि कुछ भी नही हुआ तो भी वह महापापी था, उसने हमारी एक बहन पर (यहा पर वक्ता ने बडे ज़ोर से हाथ मारा) हम सबकी बहन पर बुरी निगाह डाली। यही नही, उसे वह आन्दोलन-दमन के बहाने उडा ले गया। तसद्दुक ऐसा आस्तीन का साप साबित हुआ कि उसने उसी व्यक्ति की कन्या के साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया, जिसने उसे तरक्की दिलाई थी। अब अदालत मे प्रहसन बनाकर उसी दुष्ट को मारने के लिए प्रेमचन्द जी को फासी दी जाने वाली है। पर इससे सन्तुष्ट न होकर यह षड्यंत्र रचा गया है और उसका अर्थ यह है कि उनपर और भी अत्याचार किया जाए....

रामचरण अभी अपना व्याख्यान समाप्त नही कर पाया था कि परेश एकदम से पागल की तरह खड़ा हो गया और भर्राई हुई आवाज़ मे बोला—क्या हम सत्य और अहिंसा के नाम पर इसको सहन करेगे ?—कहकर उसने अपने प्रश्न का स्वय ही उत्तर देते हुए कहा—मैं तो कहूगा जो लोग इसे सहन करेंगे वे अहिंसावादी नही कायर और बुजदिल हैं।

परेश का यह कथन साधारण समय मे बहुत अशोभन समझा जाता, पर इस समय वातावरण इस प्रकार विद्युत से प्रेरित हो रहा था कि बिल्कुल बडे-बूढों के अतिरिक्त बाकी सब लोग बहुत जोश में आ गए।

नीरज को भी कुछ कहने का साहस नही हुआ। वह आनन्दकुमार तथा अन्य लोगो के कानो मे कुछ कह रहा था, पर आनन्दकुमार ने धीरे से उससे कहा—कह तो सही बात रहा है, फिर मैं क्यो बोलू।

रघुवशनाथ ने कहा—नीरज, तुम चुप रहो। हम सभी इस बात को मानते हैं कि हमारा नैतिक कर्तव्य है कि हम देखे कि इस हालत मे जब कि प्रेमचन्द को फासी होने वाली है, उसपर इस जेल मे और कोई ज्यादती न हो। पर अभी तो यह बताया नही गया है कि ज्यादती को किस तरह से रोका जाए या प्रतिवाद के रूप मे क्या किया जाए, फिर तुम क्यो परेशान होते हो ? बोलकर लोगो की भड़ास निकल जाए, यह ज्यादा अच्छी बात है।

और भी दो-एक नौजवान सत्याग्रहियो का भाषग हुआ। इनमे गवाही देने वाले उन छः व्यक्तियो के अलावा नये लोग भी थे।

भाषणो मे गर्मी बढती गई, पर जैसा कि रघुवशनाथ ने कहा था, किसीने भी कोई ठोस सुझाव नही रखा। कोई ब्रिटिश साम्राज्यवाद को गालिया दे रहा था तो कोई उसके अफसरो को। कइयो के भाषण से तो यह स्पष्ट सूचित होता था कि वे तसद्दुक की दिन-दहाडे हत्या का समर्थन करते हैं और उसे प्रशसनीय राजनैतिक कार्य मानते हैं।

जब दो घटे इस प्रकार धुआधार भाषण हो गए तो जो लोग अत्यधिक जोश मे आ गए थे, उन्होने भी अनुभव किया कि कही कुछ कमी जरूर है। वे बार-बार बडे-बूढों की तरफ देख रहे थे।

रामचरण ने आग्नेय नेत्रो से नीरज को कई बार देखा, पर नीरज ने दृष्टि की चुनौती स्वीकार न की बल्कि रघुवशनाथ ने जो बात कही थी उसे सोचते हुए मन्द-मन्द हस रहा था कि ये लोग कैसे अजीब हैं कि केवल हवाई बात कर रहे हैं।

एक नौजवान जब अधिक जोश मे आ गया तो उसने शिवाबावनी के कुछ पदो का अपना सस्करण पेश किया

**इन्द्र जिमि जंभ पर, बाडव सु अंभ पर,**
**रावन सदंभ पर रघुकुल राज है।**
**पौन वारिवाह पर, संभु रतनाह पर,**
**ज्यो सहस्रबाहु पर राम द्विजराज है।**
**दावा द्रुमदड पर, चीता मृगझुंड पर**
**भूषण वितुंड पर जैसे मृगराज है।**
**तेज तम अस पर, कान्ह जिमि कस पर,**
**त्यो ब्रिटिश बनिए पर प्रेमचन्द आज है।**

परेश ने इसपर खूब ज़ोर से तालिया पीटी और तालियां पीटते समय उसने आक्रमणात्मक ढग से नीरज की ओर देखा और कहा—अब हम लोग यह जानना चाहते हैं कि इसपर नीरज जी के क्या विचार हैं ?

नीरज अब इस चुनौती को अस्वीकार नही कर सकता था। यो ही सारे

भाषणो मे व्यग्य का रुख हमेशा नीरज के प्रति होता था, कम से कम नीरज को यही मालूम हो रहा था क्योकि कई बार 'सत्य और अहिसा के ठेकेदार', 'गांधी जी से अधिक गाधीवादी', 'गाधीवादी शिविर के बुगलाभगत' आदि शब्दो का जब व्याख्यानो मे प्रयोग हुआ था तो साथ ही लोग नीरज की तरफ देखकर मुस्कराते जा रहे थे। नीरज उठने को हुआ पर रघुवशनाथ ने उसे जबर्दस्ती बैठाते हुआ कहा—नीरज अभी बच्चा है, उसे भाषण करना क्या आए ? मैं बोलूगा।

कहकर वह मच पर गए और उन्होने ऐसा गरमागरम भाषण दिया कि जिसके सामने अब तक दिए हुए सारे भाषण फीके पड गए। उन्होने न तो हिंसा का प्रश्न उठाया और न अहिसा का। केवल चुन-चुनकर अग्रेजो की ज्यादती के उदाहरण देते रहे। किस प्रकार अग्रेजो ने धोखाधडी, बेईमानी और षड्यन्त्र से राज्य प्राप्त किया, किस प्रकार अत्यन्त पवित्र अहदनामे बात की बात मे तोड डाले, भाई के विरुद्ध भाई को लडाया, किस प्रकार बार-बार लडाइयो मे हारने तथा दात खट्टे कर दिए जाने पर भी साम, दाम, दड, भेद से वे आगे बढे, किस प्रकार उन्होने पहले हिन्दुओ को तरजीह देकर मुसलमानो को दबाया और बाद को हिन्दुओ को दबाने के लिए मुसलमानो को उभाडा आदि सारी बाते वह प्रमाणो के साथ बताते गए। उन्होने क्रान्तिकारी आन्दोलन की भी बहुत प्रशसा की कि जब अन्धकार ही अन्धकार था तब सिर पर कफन बाधे हुए इन थोडे-से लोगो ने अपनी अस्थियो की आहुति देकर अलख जगा रखी। उन्होने उनके त्याग की सराहना की और फिर वह एकदम कूदकर प्रेमचन्द पर आ गए और उनपर जो अत्याचार हुए, उनका वर्णन एक उदाहरण के रूप मे प्रस्तुत किया।

लोग मन्त्रमुग्ध होकर उनका भाषण सुनते रहे।

जब भाषण समाप्त हुआ तो सब लोगो को एक अफसोस-सा हुआ जैसे कोई मोहक सगीत समाप्त होने पर होता है। उन्होने भी कोई दिशा नही दी।

अब नहाने-धोने, खाने-पीने का समय आ रहा था। सभा तीन घटे से ऊपर चल चुकी थी। लोगो का ध्यान नीरज से बिल्कुल हट गया था। रघुवशनाथ के भाषण की सफलता यह थी कि उनके पहले तक के भाषण दो मोर्चो पर चोट कर रहे थे। एक तो लोग अधिकारियो को गालिया दे रहे थे और दूसरे परोक्ष रूप से कट्टर गाधीवादियो की खबर ले रहे थे, पर रघुवशनाथ के व्याख्यान के

बाद वातावरण से शेषोक्त उपादान बिल्कुल समाप्त हो गया ।

अब सबका सयुक्त मोर्चा बन चुका था, पर पहले की तरह अब भी कोई दिशा नही थी ।

राजेन्द्र बैठे-बैठे मौका ताक रहा था । उसने इस बात की कतई परवाह नही की थी कि रघुवशनाथ ने जान-बूझकर ही कोई दिशा नही दी थी । वह खडा हो गया और बोला—जहा तक सरकार के विरुद्ध गालिया देने का सम्बन्ध है, हम काफी दे चुके, परन्तु हमने यह तो बताया ही नही कि हम क्या चाहते हैं ।

रामचरण, परेश आदि कुछ लज्जित और चौकन्ने हो गए, परेश ने एक प्रस्ताव रखते हुए कहा—हम यह प्रस्ताव करते हैं कि श्री प्रेमचन्द से हम लोगो की भेट कराई जाए, नही तो हम लोग आंज से अनशन शुरू करते हैं ।...

प्रस्ताव बहुत ही साहसपूर्ण था, पर साथ ही ऐसा था जिसका पालन करने के लिए सब लोग तैयार नही होते । अनशन बहुत ही कठिन कार्य है । पुराने राजनैतिक कैदी अपने तजुर्बो से जानते थे कि यह कार्य सबके वश का नही है ।

रघुवशनाथ के भाषण के बाद जो आत्मप्रसादमूलक वातावरण प्रस्तुत हुआ था, वह जाता रहा और बडे-बूढो के चेहरे पर कुछ परेशानी दृष्टिगोचर होने लगी । इसमे कोई सन्देह नही है कि यदि जेलभर के राजनैतिक कैदी जिनकी सख्या इस समय तीन सौ तक पहुच चुकी थी, एक साथ अनशन कर देते तो बहुत ही भयकर स्थिति उत्पन्न हो जाती, पर अनशन शुरू करना जितना आसान था, उसे निभा ले जाना उतना आसान नही था । उसमे बल्कि अपने लिए खतरा ही था । कुछ लोग दो-चार दिन बाद कमजोरी ज़रूर दिखाते और तब किसी भी दाम पर इज्ज़त बचाने के लिए जैसा-तैसा समझौता करना पडता ।

रघुवशनाथ जो अपनी करामात दिखा चुके थे, वह एक हद तक ही सफल रही । खुला मनोमालिन्य दूर हुआ था, पर अनशन का प्रस्ताव आया था जो किसी भी दृष्टि से उचित नही जान पडता था । सब पुराने नेता एक दूसरे का मुह ताक रहे थे ।

इतने मे राजेन्द्र फिर बोल उठा—अनशन का प्रस्ताव सर्वोत्तम है—कहकर उसने ऐसे लोगो को खुश करने के लिए, जो अनशन के नाम से घबडाते थे, बोला—कुछ लोगो को मेडिकल ग्राउन्ड पर अनशन करने के उत्तरदायित्व से

मुक्त किया जाएगा। वे अनशनकारियो के साथ सहानुभूति जताने के लिए किसी एक खाद्य द्रव्य जैसे मान लीजिए दाल का बहिष्कार करेगे।

यह प्रस्ताव पहले से कही अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण था, पर प्रश्न तो यह था, कि मेडिकल ग्राउन्ड कौन निश्चित करे ? अक्सर बहुत ही स्वस्थ और हट्टे-कट्टे लोग भूख की ज्वाला बिल्कुल सह नही पाते। मानो इसीका उत्तर देते हुए राजेन्द्र ने कहा—प्रत्येक व्यक्ति स्वय यह निर्णय करे कि उसके लिए मेडिकल ग्राउन्ड पर अनशन करना उचित है या नही।

कुछ लोगो ने बडा शोर मचाया और जब राजेन्द्र ने देखा कि उसने लोगों का ध्यान तो आकर्षित कर लिया, उसका एक मन्तव्य तो सिद्ध हो गया, पर इस भीड मे जनप्रियता कायम रखना टेढी खीर है तो वह चुपके से बैठ गया।

परेश ने नेतृत्व का सूत्र मानो अपने हाथो मे लेते हुए कहा—सब लोग अनशन करे, हां जो लोग अपने मे कुछ कमज़ोरी पाए वे अनशन न करे क्योकि बीच मे अनशन तोडने से दूसरो को हानि पहुचती है और अनशन की सफलता दूर हो जाती है।...

अब स्थिति बहुत ही गम्भीर हो गई थी। अपने को कमज़ोर कौन मानता ?

आनन्दकुमार सब कुछ सुन रहे थे और काफी रस ले रहे थे। अब जो उन्होने देखा कि सैद्धान्तिक तर्क-वितर्क और कोलाहल से बातचीत और भी निम्न स्तर पर जा रही है, जहा लोगो को दो हिस्सो मे बाटना जरूरी है, एक वीर और दूसरे कमज़ोर दिल तो वह एकदम से उठ खडे हुए।

उन्होंने कहा—मुझे आप लोगो के भाषण सुनकर बहुत खुशी हो रही थी और यह सचमुच लग रहा था कि हम एक नवयुग की चौखट पर है, जिसमे हिंसा-अहिंसा का भेद रहते हुए भी और सब लोग अपने-अपने मार्ग पर चलते हुए भी एक दूसरे से अपने को अभिन्न मानते है। हमे अवश्य ही प्रेमचन्द की सहायता करनी चाहिए। भले ही हम उनके तरीको से मतभेद रखे। यह भी सही है कि इतने राजनैतिक कैदियो के होते हुए उनके साथ, जबकि यह निश्चित है कि उन्हे फासी होगी, ज्यादती नही होने दी जा सकती। हम अवश्य उसके लिए लडेंगे और ज़रूरत पडने पर अपनी जान भी बाज़ी पर लगा देगे।

इतना कहकर आनन्दकुमार ने चारो तरफ बैठे हुए राजनैतिक कैदियो को एक बार देख लिया और बोले—पर इस सम्बन्ध में हम जो कुछ करना चाहते

है, वह भी हमारे इस नये विचार के अनुसार होना चाहिए। अनशन निस्सन्देह बहुत अच्छा तरीका है, पर शायद यथेष्ट जगजू नही है। इसलिए मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि हम और सब व्यवहार उसी तरह करते रहे, पर सन्ध्या समय जब हमे बन्द करने के लिए वार्डर आए तो हम बन्द होने से इन्कार करें। यदि वे हमें ज़बर्दस्ती भीतर ले जाए तो हम बाहर निकलने की चेष्टा करे…

आनन्दकुमार ने इसी कार्यक्रम को अच्छी तरह समझाया और उसका ऐसे चित्रण किया कि सब लोग उससे सन्तुष्ट हो गए। बोले—निस्सन्देह इसके लिए हमपर शारीरिक ज्यादती होगी, पर हमे खुशी होगी कि हम भी श्री प्रेमचन्द के साथ अत्याचार सह रहे हैं। इसके अलावा हम इस प्रकार सत्याग्रह को भी ज़ोर पहुचाएगें।

सबने यह प्रस्ताव मान लिया।

राजेन्द्र ने फिर एक बार अनुभव किया कि आनन्दकुमार बाज़ी मार ले गए। फिर भी उसने उस प्रस्ताव की तारीफ ही की।

जेल वालो को फौरन इसकी सूचना दे दी गई कि या तो प्रेमचन्द के साथ ज़्यादती बन्द हो या अधिकारी वर्ग सध्या समय की घटना के लिए तैयार रहे।

यह खबर भेजकर सब लोग नित्य की तरह अपने कार्यों मे लग गए। सभा 'महात्मा गांधी की जय' तथा 'प्रेमचन्द ज़िन्दाबाद' आदि नारो के साथ विसर्जित हुई।

## ४५

जीवानन्द ने अपने को बहुत ही भारी मुसीबतो मे पाया क्योकि वह चित्रकूटी को छोड नही सकता था। छोडने का अर्थ होता प्रेमचन्द पर जेल मे सख्ती बढ़ा देना।

यह भी पता लगा था कि प्रेमचन्द को अगले दिन सबेरे ही दूसरी बैरक मे कर दिया गया और यद्यपि उच्च अधिकारी कुछ समझ नही पाए कि चित्रकूटी

क्यो भागा क्योकि वह तो यो ही बोर्ड से छूटने वाला था, फिर भी इस काड को किसी भी प्रकार प्रेमचन्द से सयुक्त करना सम्भव नही हुआ था, पर चित्र-कूटी के पुलिस के हाथ मे पडते ही सत्य खुल जाता, सारी घटनाओ का रग ही बदल जाता।

एक बार जीवानन्द ने सोचा कि अर्चना आदि ने मुख्य दल के साथ जो बर्ताव किया है, उसे देखते हुए चित्रकूटी को छोड देना ही उचित है, पर अन्त तक उसके अन्दर के क्रातिकारी ने जोर मारा और वह प्रतिहिंसा के पक मे पडने से बच गया।

फिर भी चित्रकूटी को रखना एक मुसीबत थी। गैबी के रास्ते मे जो गोली-काड हुआ था, उसके कारण वातावरण बहुत ही गरम था और तब से जानसन दल-बल सहित यही डटा हुआ था। किसी भी समय आम गिरफ्तारी हो सकती थी। यो तो पुलिस इसके लिए सारा दोष अमिताभ के सिर पर ही मढकर निश्चिन्त थी, पर जीवानन्द तो जानता था कि असली बात क्या थी। अवश्य उसे अमिताभ से कोई ईर्ष्या नही थी।

पुलिस वाले पहले इधर की सारी वारदातो की जिम्मेदारी कुणाल पर डालते थे अब अमिताभ पर डालने लगे।

जीवानन्द ने बहुत सोचा। अन्त मे उसने यही तय किया कि प्रेमचन्द के मुकदमे का निर्णय होने तक चित्रकूटी को बन्द रखना जरूरी है। उसके बाद भी उसे छोडना कहा तक उचित होगा, यह भी सन्दिग्ध था क्योकि उसे गवाह बनाकर मजे मे एक अन्तरप्रान्तीय षड्यन्त्र चलाया जा सकता था, जिसमे अर्चना, श्यामा, प्रणवकुमार, जीवानन्द और पहरे पर नियुक्त युवक फस सकते थे।

खैर बाद की बात बाद को देखी जाएगी, अभी तो उसे छोडने का कोई प्रश्न ही नही उठता। क्यो न इस सम्बन्ध मे प्रान्तीय या केन्द्रीय समिति से कुछ पथ-प्रदर्शन मागा जाए ?

प्रणवकुमार से उसकी इस सम्बन्ध मे पहले ही बातचीत हुई थी तो प्रणव-कुमार ने यह कहा था—न रहे बास न बजे बासुरी। चित्रकूटी को हमेशा के लिए मौन क्यों न कर दिया जाए ?

जीवानन्द इस प्रस्ताव पर राजी नही हुआ था, यद्यपि इस प्रस्ताव को कार्या-न्वित करने से झझट बिल्कुल खतम हो जाती। उसने कहा था—चित्रकूटी को

जान से मारने का कोई अर्थ नही होता। उस बेचारे को तो जबर्दस्ती बाहर भेजा गया था, इसलिए उससे हम किसी प्रकार की मन्त्रगुप्ति या वीरता की आशा नही कर सकते, फिर इस सम्बन्ध मे हम अपने आदेश से कुछ कर भी तो नही सकते। प्रान्तीय और केन्द्रीय समितिया किसलिए हैं?

प्रणवकुमार ने कहा था—क्यो न अमिताभ जी से यह बात पूछी जाए?

जीवानन्द ने कहा था—तुम उन्हे नही जानते। वे तो एक चिडिया की भी हिंसा नही करना चाहते। मजबूरी की बात और है।

बात यही तक रह गई थी।

अब तो प्रणवकुमार फिर अलग हो गया था। जीवानन्द को ही स्वय सारे फैसले करने थे।

प्रान्तीय समिति से आदेश तो बाद को आएगा। पता नही कितने दिन लगें, पर जीवानन्द ने पहरे पर नियुक्त युवको को अपनी तरफ से इतनी हिदायत तो दे ही दी थी कि यदि कभी हमला हो और कुछ करते न बने तो पहले चित्रकूटी को मारकर तब भागना या आत्महत्या करके शहीद हो जाना। मौके पर जो भी उचित समझा जाए किया जाए।

जीवानन्द के मन मे चित्रकूटी के सम्बन्ध मे चिन्ता तो थी ही, पर इसके साथ ही वह प्रेमचन्द द्वारा कब्जा किए हुए अस्त्रो के सम्बन्ध मे भी कुछ निर्णय चाहता था। जब प्रेमचन्द के पत्र को लेकर अमिताभ से जीवानन्द की एक तरह से तकरार हो गई, उस समय ही इस सम्बन्ध मे कोई निर्णय करवा लेना चाहिए था। तब उसे कहना चाहिए था—श्रीमन्, आप दल के उन अस्त्रो को तो दिलवा दीजिए, अब अर्चना देवी उन्हे क्या करेगी?· ·

पर उस समय यह बात याद ही नही आई थी।

इससे भी बढकर चिन्ता उस पत्र के कुप्रभाव के बारे मे थी। क्या अर्चना-श्यामा उस पत्र को प्रकाशित करेगी? अवश्य प्रेमचन्द को फासी लगने के पहले वे इसे प्रकाशित नही करेंगी क्योकि उस हालत मे इस पत्र का यह अर्थ निकाला जाएगा कि यह एक तरह की प्राण-भिक्षा मात्र है। अवश्य ही अर्चना इतना तो समझती ही होगी। पर बाद को इसे प्रकाशित करना और भी खतरनाक होगा।

क्या इसे किसी तरह रोका नही जा सकता?

अमिताभ ने जब पत्र अर्चना को दिया, तो उनसे यह आशा तो की ही जा सकती है कि उन्होने उस पत्र के सम्बन्ध मे प्रान्तीय समिति तथा केन्द्रीय समिति को सूचना दी होगी। यदि नही दी होगी तो देगे। ऐसी हालत मे प्रान्तीय समिति तथा केन्द्रीय समिति को सूचना देने का कार्य जीवानन्द पर नही है।

एक बार उसके मन मे यह बात आई कि वह प्रान्तीय समिति की दृष्टि आकर्षित करे कि पत्र की प्रति भले ही अर्चना के पास रहे, पर असली प्रति उसके पास होनी चाहिए। क्या वह इस सम्बन्ध मे कुछ कार्रवाई करे ?

वह इसी उधेड-बुन मे पडा रहा, पर किसी नतीजे पर नही पहुच सका।

इसी प्रकार कई दिन निकल गए, न अमिताभ का पता मिला कि वे कहां गए, न अर्चना आदि ही तब से मिले। हा, जेल के अन्दर से बडी उत्तेजक खबरे आ रही थी। यह मालूम हुआ था कि प्रेमचन्द के प्रति किसी दुर्व्यवहार की शका से (शका से इसलिए कि असल मे प्रेमचन्द के वकील से पता लगा कि अलग बन्द किए जाने के अतिरिक्त कोई दुर्व्यवहार नही हुआ था) जेल के राजनैतिक कैदी कई दिनो से रात के समय बैरक मे बन्द होने से इन्कार कर रहे है। रोज़ कई आदमी घायल हो जाते है, कैदियो की मिलाई बन्द कर दी गई है और शहर मे बड़ी उत्तेजना फैली हुई है।

इधर प्रेमचन्द का फैसला सुनाए जाने की तारीख भी तय हो गई। सारी जनता मे तो नमक-आन्दोलन जारी रहने के कारण यो ही बडा जोश था, इस-से जोश को क्रोध का रूप मिल रहा था।

जीवानन्द इस समय देश के सामने कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता था, पर पता नही प्रान्तीय समिति वाले क्या कर रहे थे।

इन दिनो प्रान्त मे क्रातिकारी आन्दोलन का केन्द्र काशी से हटकर कानपुर की तरफ चला गया था, पर जब-तब एकाध साहसपूर्ण गोलीकाण्ड होने के अतिरिक्त कोई ऐसी बात नही होती थी जिससे दल का कार्य जनता के सामने आए। जो गोलीकाण्ड होते थे, वे भी आक्रमणात्मक नही होते थे, बल्कि पुलिस द्वारा एकाएक आक्रमण किए जाने पर क्रान्तिकारी गोली का जवाब गोली से देते थे।

और किसी बात से नही, इस चुप्पी तथा निष्क्रियता के कारण जीवानन्द के मन मे कुछ-कुछ सन्देह होने लगा था कि इस आन्दोलन को और तेज़ी से

चलाना चाहिए। पर वह कुछ कर नही पाता था क्योकि वह स्वतन्त्र नही था। हा, वह पहले की तरह नये-नये युवको को दल मे भरती करने का कार्य करता जा रहा था। पर इसमे तृप्ति कहा थी और इसमे भी उसे इस कष्टकर तथ्य का सामना करना पडता था कि नवयुवक कुणाल और प्रेमचन्द के नाम से ही दल की ओर आकर्षित होते थे। कुणाल तो ठीक है, काकोरी के शहीद और भगतसिंह ठीक हैं, पर इस सूची मे प्रेमचन्द क्यो? उसके अनुशासनप्रिय मन को कही से ठेस पहुच रही थी।

## ४६

एलोकेशी घर से बहुत कम निकलती थी। कभी पेंशन लेने के लिए या और किसी खास सौदा-सुलुफ के लिए ही वह बाहर जाती थी। एक दिन वह इसी प्रकार किसी कार्य से बाहर गई हुई थी तो लौटकर देखा कि एक युवक तारा से बगला मे बातें कर रहा है। वह बिल्कुल ही अजनबी था और तारा से बातचीत की थोड़ी-सी भनक कमरे मे घुसते ही पड गई थी, उससे यह मालूम हुआ कि वह उसके लिए भी अजनबी है।

तारा ने मा को देखते ही कहा—ये आपसे मिलने के लिए आए हुए हैं।

एलोकेशी की भौहे कुछ तन गईं और उसने कुछ रुखाई के साथ कहा—मुझसे?

वह युवक बडी नम्रता के साथ उठकर खडा हो गया और बोला—जी हा, आपसे मिलने आया हू। मेरा नाम रजत है और मैंने अभी-अभी एम० ए० पास किया है। गुरुजनो के आशीर्वाद से फर्स्ट क्लास मिला है

एलोकेशी कुछ समझ नही पाई कि युवक कहना क्या चाहता है। बोली—तुम मुझसे ही मिलने आए हो न? मेरे पति स्वर्गीय श्री रतन बनर्जी पुलिस-विभाग के उच्च अफसर थे।

—जी हां, मैं जानता हू। कई वर्षो से आप लोगो के विषय में सुनता

रहता हू। तारा जी के विषय मे भी अखबारो मे पढा है। यह भी मालूम है कि इनके साथ जो बर्ताव हुआ था, उसीके लिए तसद्दुक को जान से मार डाला गया।

एलोकेशी ने कुछ नही कहा, तब रजत ने बातचीत को केवल जारी रखने के उद्देश्य से कहा—मैं अक्सर यह सोचा करता हू कि ये क्रातिकारी कैसे अजीब लोग है कि एक तरफ तो उन्होने इन्हे पितृहीन किया और दूसरी तरफ उनका एक नेता इनके सम्मान की रक्षा के लिए फासी पर चढने जा रहा है।

एलोकेशी ने कहा—मैंने भी अक्सर यह बात सोची है, पर वे शायद व्यक्ति की दृष्टि से नही सोचते।

—हा, उनका दृष्टिकोण राजनैतिक है।

एलोकेशी यह समझ नही पा रही थी कि यह युवक आया किसलिए है। क्या यह कुछ टोह लेने आया है ? यह राजनैतिक बाते क्यो कर रहा है ? एक-दम से क्रातिकारियो की बात पर क्यो कूद गया ? बोली—तुम किसी अखबार के सम्वाददाता तो नही हो ?

कई बार एलोकेशी को ऐसे लोगो से भी साबका पड चुका था और वह इन लोगो से खुश नही थी क्योकि ये लोग कई बार अजीब बाते छाप चुके थे।

रजत कुछ झेपते हुए तारा की तरफ कनखी से देखकर बोला—मै तो यो ही आप लोगो का दर्शन करने के लिए आया था।

एलोकेशी को यह बात कुछ खटकी। वह बोली —यदि तुमको क्रातिकारियो या सत्याग्रहियो का दर्शन करना है तो तुम आनन्दकुमार के घर जाओ, वहा हर समय दो-चार ऐसे लोग बने ही रहते है।

तारा को मा की यह बात कुछ अधिक रूखी लगी, इसलिए उसने बातचीत मे थोडी नरमी लाने के लिए कहा—पर वहा तो इस समय सब लोग जेल पहुच गए हैं, हा, श्यामा दीदी अवश्य है।

तो इन्हे श्यामा का ही पता दे दो। मैं तो इन झगडो मे पडना ही नही चाहती हू।—कहकर वह उठ खडी हुई, पर रजत ने कहा—मैं तो आपसे ही मिलने के लिए विशेष रूप से आया था।

—पर मैं तो कोई दर्शनीय व्यक्ति नही हू।

कहकर एलोलेशी ने ऐसे पैर बढाया, जिसका मतलब यह था कि अब तुम जा सकते हो।

पर फौरन उसे यह ख्याल आया कि शायद यह युवक कोई खास बात बताना चाहता है जो वह तारा के सामने नही कहना चाहता। वह तारा से बोली—जाओ इनके लिए एक प्याली चाय बना लाओ।—कहकर वह स्वय पहले की तरह भौंहे तानकर बैठ गई।

तारा के बाहर जाते ही उस युवक ने कहा—मेरे पिताजी भी बडे अफसर थे। वे आई० सी० एस० थे। दुर्भाग्य से वे चालीस साल की उम्र मे ही मर गए। अब मा हैं और मैं हू। मां मुझसे शादी के लिए कहती रहती हैं। मैं इतने दिनो तक उन्हे टालता आया, पर अब मैंने कहा कि मैं ही अपनी पत्नी चुनूगा। वह इसपर राज़ी हो गईं। कहिए तो मैं अपनी मा को आपके पास भेजू।

तो यह बात है। एलोकेशी के चेहरे की रेखाए मुलायम हो गई। बोली—यह तो बहुत खुशी की बात है, पर आजकल की लडकियो का कोई भरोसा नही। मैं पहले उससे पूछ लू तब कुछ कह सकती हू। तुम यहा आते रहो। मैं पूछकर ही तुम्हारी माताजी से मिलूगी।

रजत चाय आदि पीकर थोडी देर बैठकर चला गया।

एलोकेशी ने तारा से इस सम्बन्ध मे कुछ भी नही कहा। रजत इस तरह तारा से शादी करने के लिए आने वाला प्रथम युवक था, पर इससे पहले तारा को इसी प्रकार की सात-आठ चिट्ठिया मिल चुकी थी, जिसके लेखको ने तारा से शादी का प्रस्ताव किया था।

अगले दिन रजत फिर आया और संयोग ऐसा हुआ कि ऐलोकेशी को कुछ काम लग गया और वह उससे थोडी देर बाते करके ही बाहर चली गई।

तारा को यह बात नागवार मालूम हुई क्योकि उसने इसमे कुछ अभिसन्धि की गन्ध पाई और यद्यपि मा ने कुछ कहा नही था कि रजत क्यो आया था, फिर भी उसने रग-ढग से कुछ अनुमान कर लिया था। अपनी मा पर एक हद तक नाराज़ होने पर भी कि वह उसे इस जटिल परिस्थिति मे छोड गई, उसने जब रजत की ओर देखा तो वह अपने क्रोध के लिए कोई मार्ग नही ढूढ पाई। वह उसे इतना भला, शरीफ और निरीह लगा कि उसके प्रति किसी प्रकार की

रुखाई करना असम्भव जान पडा।

रजत ने बात-बात मे कहा—जब मैने यह सुना कि तसद्दुक आपको सत्याग्रहियो मे से बलपूर्वक उठा ले गया गया है, तब मुझे इतना क्रोध आया कि मैंने पिता के ज़माने की पिस्तौल निकाली, पर कुछ सोच नही पाया।

तारा इसके उत्तर मे मुस्कराई। इसमे शायद कुछ व्यग्य का भी पुट था। उसीके चाबुक से तमतमाकर रजत ने कुछ झेपते हुए कहा—इस तरह की मुझे ट्रेनिग नही मिली थी, फिर मुझे मा का चेहरा याद आया। वह मुझसे कितनी आशा रखती है और इस प्रकार जाने क्या हो जाता।'' ...

तारा ने पहले से अधिक व्यग्य घोलकर मुस्कराते हुए कहा—शहीद का स्थान किसी भी क्षेत्र के सफल व्यक्ति से अधिक काम्य है। क्या आप इस बात को नही मानते ?

—मैने इस सम्बन्ध मे इस तरीके से कभी सोचा ही नही, अभी आपके मुह से जब यह बात सुन रहा हू तो मुझे यह स्वतः सिद्ध लगती है, पर उस दिन मैं पिस्तौल लेकर रात भर सोचता रहा, फिर भी किसी नतीजे पर नही पहुंच सका।

तारा ने सोचकर धीरे-धीरे कहा—एक साधारण व्यक्ति मे और क्रान्तिकारी मे यही तो फर्क है कि एक सोचता रह जाता है और दूसरा उसे कर ले जाता है। अच्छा यह बताइए कि आप मुझे वह पिस्तौल दे सकते है ...

रजत इस प्रश्न के लिए कतई तैयार नही था। इतना तो वह जानता ही था, क्योकि बचपन से यह उसके दिमाग मे कूट-कूटकर भरा गया था कि पिस्तौल के लाइसेस का अर्थ उतना ही है कि जिस व्यक्ति के नाम लाइसेंस है वही उसे रख सकता है।

वह पहले तो पीला पड गया, पर अगले ही क्षण तारा के चेहरे से अनुप्रेरणा-सी लेते हुए बोला—यदि आप मागे तो मै दे सकता हू, यद्यपि ऐसा करना सख्त जुर्म है।

तारा के चेहरे पर एक दुष्टता साथ ही गौरव भरी हसी नाच गई। बोली—मैं आपको विपत्ति मे कतई नही डालना चाहती, इसलिए ज्यो ही मैं उसे ले लू त्यो ही मैं आपको यह अधिकार दे दूगी कि आप जाकर थाने मे यह रिपोर्ट लिखा दें कि पिस्तौल चोरी हो गई।

अबकी बार रजत के हंसने की बारी थी। वह हसकर बोला—क्या आप कानून के ठेकेदारो को इतना सरल समझती हैं ? वे मुझसे दो सौ प्रश्न करेंगे। कहा से चोरी हुई ? बक्स का ताला टूटा या नही ? अन्तिम बार कब देखा था ? आदि-आदि। साथ मे शायद यह भी पूछे कि इन दिनो तुम किससे मिलते रहे थे ?

तारा खिलखिलाकर बोली—इसके माने यह हुए कि आपको दो सौ झूठ बोलने पडेंगे।······

—केवल यही नही, उन दो सौ झूठो को सयुक्त करके बोलना पडेगा। फिर भी यह सौदा बुरा नही रहेगा।

अन्तिम वाक्य पर तारा कुछ गम्भीर हो गई, बोली—हां इस दृष्टि से सौदा बुरा नही है कि क्रान्तिकारी दल को इससे बडा लाभ होगा। बेचारो को सबसे अधिक कमी अस्त्र-शस्त्र की ही रहती है।

रजत बिना सोचे ही बोला—मैं समझता था, उन्हे सबसे अधिक किल्लत व्यक्तियो की ही पडती होगी।

तारा ने निश्चयात्मक ढग से सिर हिलाते हुए कहा—नही, हमारी एक क्रान्तिकारिणी दीदी का कहना है कि यदि सही वातावरण पैदा होता जाए तो रगरूटो की कोई कमी नहीं होती। रक्तबीज की तरह क्रान्तिकारी पैदा होते हैं।

—रक्तबीज की उपमा पुरानी पड गई, शायद परवानो की तरह कहना अधिक उपयुक्त होगा।—कहकर रजत ने तारा के चेहरे की तरफ अजीब स्निग्ध और तरल दृष्टि से देखा, उस दृष्टि से परवाना शब्द मे ऐसी व्यजना आ गई कि तारा ने मृदु झेपकर सिर नीचा कर लिया। उसका चेहरा झलमलाने लगा।

रजत ने उसे देखा और प्रत्युत्तर मे उसके चेहरे पर दीप्ति आ गई। एक क्षण तक दोनों स्तब्ध रह गए मानो चलते-चलते कोई अज्ञात पर अत्यन्त कोमल और प्रिय अनुभूति हुई हो। यदि यह मौन और स्थायी होता तो पता नही···

तारा ने इसी कारण इसे विदीर्ण करते हुए कहा—मालूम होता है आप उर्दू कविता बहुत पढते हैं।

रजत ने अपने अन्दर उर्दू कविता की सफाई मे कुछ कहने की प्रवृत्ति बिल्कुल नही पाई। उसने कहा—मैं अपने को दोषी मान लेता हूं।

दोषी शब्द पर उसने ऐसे ज़ोर दिया कि उसमे भी प्रसग से कही अधिक अर्थ आ गए। उसी अर्थ का विस्तार-सा करते हुए वह आगे बोला—जो चाहे सज़ा दे सकती है।

तारा बहुत बुरी तरह चाह रही थी कि उसकी मा या कुछ नही तो प्रदीप ही घर आ जाए और इस प्रकार इस अटपटी स्थिति से मुक्ति मिले। विचार-शक्ति पर एक रेशमी घूघट पडता जा रहा था। उसने अनुभव किया जैसे कोई उसपर हावी है और प्रतिरोध भी नही किया जा सकता।

उसे अपने नन्हे-से जीवन मे पहली बार यह भान हुआ कि वह अन्ततोगत्वा नारी ही है, रक्त, मास, मेद, मज्जामयी नारी !

यह अनुभूति एक साथ ही प्रिय और अप्रिय थी, जैसे गुलाब ने काटे से घूघट फाडकर धीरे से कपोल छू दिया हो। सृष्टि के दर्पण मे मुखडा भी देखने को मिला।

उसे मा पर क्रोध आया। उसने बहुत चाहा कि इस क्रोध का विस्तार इस प्रियदर्शन युवक पर भी हो, पर जब उसने आखे चार की तो वह अपनी इच्छा और आशा के विरुद्ध मुस्कराकर रह गई।

आक्रमण का उत्तर आक्रमण से देने की प्रबल इच्छा जाग उठी। उसने अपने को कहते हुए पाया—रजत जी, यदि मै पूजा मे पिस्तौल ही लेकर सन्तुष्ट न होऊ और आपके हाथ मे पिस्तौल थमाकर देश के किसी दुर्दान्त दुश्मन की इहलीला समाप्त करने के लिए भेज दू, तो आप क्या करेगे ?

रजत तिलमिला गया। वह व्यक्ति का पुजारी था, हा, पूजा की यह भावना सार्वजनिक कारणो से आई थी। जब उसने तारा को देखा नही था, उसके सम्बन्ध मे सुना भर था, तो उसने उसे हाड-मास की पुतली करके नही सोचा था, बल्कि उसे ज्योतिर्पिंड के रूप मे ही कल्पित किया था। अब जो उसे प्रेम की उसी प्रतिमा को प्रत्यक्ष करने का सुयोग मिला और उसने देखा कि वह तो एक अधखिला कमल है, वह कमल जिसकी पखुडियो को उस पुलिस-अफसर ने ज़बर्दस्ती खोलने और नोचने की चेष्टा की थी तो उसकी कल्पना मे वह और भी कमनीय और वरणीय हो गई।

क्या कोई नर किसी नारी को हाड़-मास के आयाम मे देखता है ? वह तो उसे अपनी कल्पना के आलोक मे ही देखता है।

ज्यो-ज्यो तारा उसपर अपनी माग बढाती गई त्यो-त्यो उसे लगा कि वह उसे अपना रही है, अपने पास खीच रही है, अपनी बाहो मे बाध रही है, अपने सीने से सटा रही है, आत्मसमर्पण कर रही है।

वह इसे प्रेमिका के द्वारा ली जाने वाली परीक्षा ही समझा। वह अनायास ही बोल पडा—मैं उसे अपने जीवन का सबसे सौभाग्यपूर्ण क्षण मानूगा।

पहली पकड तो हो चुकी थी और उसमे तारा ने सम्पूर्ण रूप से रजत को आसमान दिखा दिया था। पर अभी इस विजय से उसका मन नही भरा था। अभी एक प्रतिद्वन्द्वी और था, जिसे परास्त किए बिना कोई नारी या प्रेयसी पसीजती नही। मुस्कराकर बोली—यह तो आपने आवेश मे कह दिया, पर आपकी मा · ?

उसने आगे कुछ नही कहा। इगित ही यथेष्ट था। साथ ही उसके चेहरे पर एक साथ एक हज़ार बल्ब जल उठे।

रजत विचलित नही हुआ। बोला—जब बुद्ध ने घर छोड़ा था, तो उन्होंने किसीका मुह ताका था ?

उत्तर मे कुछ सूतो की कसर अब भी थी। तारा बोली—उन्होने प्रेयसी का परित्याग किया था। सभी सन्त और त्यागी प्रेयसियों को बडी आसानी से छोडते रहे हैं, पर मा, विशेषकर जबकि वह इतनी आशा लगाए हो !····

प्रश्न बिल्कुल नग्न रूप मे सामने आ चुका था, पर पुरुष का मन जब एक बार आवालाश की तरह चल पडता है, तो वह झिझकता या ठिठकता नही। वह ज्यो-ज्यो आगे बढता है और पडाव पर पडाव पीटता जाता है, त्यो-त्यो उसकी गति बढती जाती है। फिर वह चाहे भी तो न पीछे जा सकता है, न रुक ही सकता है। उसे आगे ही जाना पडता है तब तक जाना पडता है जब तक कि वह अपने लक्ष्य से टकराकर चकनाचूर होकर उसके साथ एक न हो जाए।

रजत विशुद्ध निष्ठा के साथ बोला—मुझे तो अब कोई भी मोह नही है। तारा, तुमने मुझे इस प्रकार अनुप्रेरित कर दिया कि तुम्हारे कहने पर मैं कुछ भी कर सकता हू।

इस बिन्दु पर तारा को एकाएक स्मरण आया कि अरे, इस भले आदमी को चाय के लिए भी नही पूछा और इसे झिझोडती रही और जेरबार करती रही। वह चाय का बहाना करके भाग गई। उसने अपने कमरे मे शीशे के

सामने जाकर दम लिया, और अपने को एक नई दृष्टि से देखने लगी ।

अकस्मात् उसने शीशे मे अमिताभ की परछाईं देखी । वह डर गई जैसे उन्हे वास्तविक दर्पण मे न देखकर मन के दर्पण मे देखा हो, पर वह तो रजत से भी अधिक मधुर मुस्करा रहे थे, जैसे उसने किसी मूर्ति मे भगवान बुद्ध को मुस्कराते देखा था ।

वह पीछे लौटी और जैसे सारे हथियार डालकर अमिताभ के पैरो पर गिर पडी ।

अमिताभ ने उसके सिर पर हाथ रखा और उसे हल्के-से अपने कन्धे से लगाया, फिर बोले—मैंने सारी बातचीत सुनी है !

तारा ने उनसे जिस प्रकार की कठोरता की आशा की थी, उसके विपरीत उनके चेहरे पर एक अभयदान-सा था, जिसे देखकर वह कुछ-कुछ आश्वस्त-सी हो चली थी । पर ऐसे व्यक्तियो का विश्वास ही क्या ? कुलिश से भी कठिन और कुसुम से भी कोमल । पता नही वे क्या सोच रहे हैं । अवश्य वह क्रान्तिकारी दल की सदस्या नही थी, इस नाते वह उनके अनुशासन के अधीन नही थी, फिर भी...

जाने कैसा भय तो नही पर उलझन मालूम हो रही थी । उसने कहा—महाराज, किसीने बताया तो नही, पर मैं अपनी बुद्धि से जान गई हू कि आप ही अमिताभ हैं। मैंने कोई अपराध तो नही किया ?

अमिताभ का चेहरा निर्विकार था, वह वैसा ही बना रहा। उन्होंने सहज रूप से कहा—यदि रजत तुम्हारे कारण दल मे आता है या सत्याग्रह करता है, तो इसमे कोई निन्दनीय बात नही है, बशर्ते कि अन्त तक निभता चला जाए। यदि महज तुम्हारे सस्पर्श मे बना रहा तो भी उसके जीवन का कुछ तो विस्तार हो ही जाएगा । इस नाते यह अच्छी बात है ।

तारा कृतज्ञता जैसी किसी भावना से परिचालित होकर फिर से अमिताभ का चरण स्पर्श करने जा रही थी, पर अमिताभ ने उसे जल्दी से रोक लिया । बोले—मैं कार्यवश यहा आया था । तुम्हारे यहा आना कम खतरनाक है, यह जानकर यहा आया था । श्यामा को एक सन्देश भेजना है ।

तारा ने कुछ सोचकर कहा—मैं पहले रजत जी को विदा कर आऊ ।

अमिताभ अब अपनी निर्विकारता कायम नही रख सके । हसकर बोले—

तुम उस भले आदमी को चाय पिलाने के लिए उठ आई थीं, अब उसे छूछा ही लौटा दोगी तो वह क्या समझेगा ?

—जो भी समझे, आपका कार्य सर्वोपरि है।

—मेरे कार्य के लिए ही शायद उसका प्रयोजन हो।

कहकर उन्होंने बतलाया कि चित्रकूटी के भाग जाने से सरकार के उच्च अधिकारियो के मन मे यह धारणा बन गई है कि असल मे कोई और बात होने वाली थी, पर जाने कैसे चित्रकूटी ही भाग निकला। इस सम्बन्ध मे जानसन ने यह सिद्धान्त बनाया है कि प्रेमचन्द ने यह योजना बनाई थी कि चित्रकूटी के साथ वे भागेंगे, पर निर्दिष्ट समय या तारीख के पहले ही चित्रकूटी अकेले भाग निकला।

अमिताभ ने यह भी बताया कि पुलिस-विभाग के दिमाग में यूसुफ उर्फ महेन्द्र के भागने के प्रयत्न का किस्सा बैठा हुआ है और इसीलिए वह ऐसा समझ रहा है। उधर जेल के अन्दर भी उस दिन से अशान्ति है। कई राजनैतिक कैदी बैरक-बन्दी-विरोध-आन्दोलन मे अस्पताल जा चुके हैं। इससे देश मे बडी अशान्ति है। सरकार को क्रान्तिकारी आन्दोलन और सत्याग्रह आन्दोलन का इस प्रकार गठबन्धन अखर रहा है इसलिए यह तय किया गया है कि जल्दी से प्रेमचन्द के मामले मे फैसला सुना दिया जाए।

सारी बातें तारा के लिए बहुत कुछ नई थी। अस्पष्ट रूप से उसे कुछ न कुछ बातें ज्ञात थी, और उसने हिसाब लगाकर यह भी जान लिया था कि जिस रात को चित्रकूटी भागा था, वह उसी रात को आनन्दकुमार के घर पर थी। यह भी उसने अनुमान कर लिया था कि जिन लोगो को उसने उस अवसर पर देखा था, उन लोगो ने उस घटना मे कोई हाथ बटाया था। पर चित्रकूटी के भागने मे हिस्सा लेना कुछ समझ मे नही आया था, फिर भी वह बहुत-से अन्य लोगो की तरह यह समझ रही थी कि इसमे दल का कोई गहरा उद्देश्य होगा। उसके मन मे बहुत-से प्रश्न एक साथ उत्तर के लिए सिर उठा रहे थे, पर वह जानती थी कि यहा प्रश्न पूछना बिल्कुल मना है।

अमिताभ ने सारी बात सुनकर चारो तरफ अच्छी तरह देखकर कहा—कल फैसला सुनाया जाने वाला है।

तारा कुछ नही बोली, पर वह भीतर ही भीतर तिलमिला गई। फैसला

माने फासी ! उसके लिए फांसी, उसके सम्मान की रक्षा के लिए फासी !

उसका चेहरा रूआसा हो गया। वह एकाएक बोल पडी—क्या ऐसा कुछ नही हो सकता कि उन्हे निश्चित मृत्यु से बचा लिया जाए ? जो भी आप आज्ञा देंगे, मैं करने को तैयार हू—कहकर कुछ रुककर जैसे कोई निर्णय करती हुई बोली—इसके अलावा हम इसमे रजत की पिस्तौल और रजत का भी पूरा उपयोग कर सकते है।

अमिताभ उसे केवल सन्देशवाहिका के रूप मे इस्तेमाल करना चाहते थे, वे इतना त्याग ग्रहण करने के लिए तैयार नही थे। इसकी आवश्यकता भी नही थी, कम से कम इस समय। वह तो अपने को ही नही, रजत को भी बलिवेदी पर चढाना चाहती थी। बोले—क्या तुम एक प्रिय वस्तु के लिए दूसरी प्रियवस्तु को इस तरह अर्पित करने की बात करके कोई गलती नही कर रही हो ?

प्रश्न तो उन्होने यह किया, पर उनके मन मे यह अद्भुत विचार उठ रहा था कि नारी कैसी निर्मम है कि एक प्रेमपात्र को दूसरे प्रेमपात्र के लिए बलिवेदी पर चढाना चाहती है। केवल यह नारीत्व की ही बात हो सो नही, इसमे और भी गहरे कारण है। एक परीक्षित है, अच्छी तरह परीक्षित है, दूसरे की अभी परीक्षा नही हुई है। कहा तक वह केवल भावुकता मे बह रहा है, यह अभी तक कूता नही गया है। नही, वह एक प्रेमिका की तरह नही बल्कि एक क्रान्ति-कारिणी की तरह व्यवहार कर रही है। यह विचार आते ही उन्होने अपने प्रश्न का स्वय उत्तर देते हुए कहा—पर तारा बहन, अभी इसका प्रश्न नही है, तुम केवल जीवानन्द, अर्चना और श्यामा को यह खबर भेजवा दो। वे मुझसे किसी भी समय मिल ले। कल मैं अपने ठीहे पर ही रहूगा।

अमिताभ ने कोई और बात नही कही। तारा ने उन्हे, अलग कमरे बैठकर चाय पीने के लिए रोकना चाहा, पर वे नही रुके। हसकर बोले—तुम्हारी चाय पीना अभी मेरे भाग्य मे बदा नही है।

कहकर वे आइने के सामने आए और मूछ-दाढी लगाकर चेहरे मे कुछ मामूली हेर-फेर करके वहा से चले गए।

## ४७

उसी दिन तीन बजे तक यह खबर राजेन्द्र को मालूम हो गई कि कल प्रेमचन्द का फैसला सुनाया जाने वाला है। उसे यह खबर बाहर से इस कारण भेजी गई थी कि वह सब राजनैतिक कैदियो को यह खबर दे और साथ ही (यदि आनन्दकुमार उचित समझे) प्रेमचन्द को भी किसी सूत्र से खबर दे दी जाए।

राजेन्द्र ने फौरन ही यह खबर अपने साथियो को नही दी, बल्कि चुपचाप इसपर जुगाली करने लगा कि किस प्रकार इस सूचना का उपयोग किया जाए। बैरक-बन्दी-विरोध-आन्दोलन मे ४८ राजनैतिक कैदी तरह-तरह से घायल होकर अस्पताल पहुच चुके थे। इनमे सभी वास्तविक रूप से घायल हो, ऐसी बात नही। राजेन्द्र को पता था कि इनमे कम से कम सात व्यक्ति ऐसे थे जो मामूली खरोच आने पर घायल बनकर अस्पताल चले गए थे। सभी इनकी बात जानते थे, पर कोई कुछ नही कहता था क्योकि पता नही अभी जो लोग बचे थे उनमे कितने लोग ऐसे थे जो किसी न किसी बहाने से सग्राम से हटना चाहते थे।

जो भी व्यक्ति अस्पताल पहुचाया जाता था, वह बैरक-बन्दी-विरोध-आदोलन से खुद-ब-खुद अलग हो जाता था। राजनैतिक कैदियो मे इस विषय पर तुमुल तर्क-वितर्क हुआ था कि अस्पताल पहुचते ही व्यक्ति अपने को सग्राम से अलग क्यो माने ? अस्पताल मे भी बैरके हैं और ठीक उसी समय वहा भी बैरक-बन्दी होती है, जिस समय जेल के अन्य भागो मे होती है। जो लोग इतने घायल हैं कि उठ नही सकते, उनकी बात और है, पर जो लोग हाथ या कन्धे या सिर पर चोट लगने के कारण मामूली घायल हैं, सब तरह का साधारण व्यवहार, खाना-पीना, उठना-बैठना, चलना-फिरना, कर सकते है, वे आन्दोलन से बरी क्यो समझे जाए ?

गरम विचार के लोगो ने कहा था—संग्राम तो तब तक होना चाहिए जब तक कि उठने की शक्ति रहे। हमारा यह सग्राम अहिसात्मक है, इसलिए हमे मरते दम तक अपने ऊपर हिंसा निमन्त्रित करनी चाहिए।...

फिर एक बार क्या अहिंसा है और क्या नही है, इस विषय पर धुआधार

भाषण हुए । बुद्ध, ताल्स्ताय, गाधी सबके उद्धरण दिए गए, पर जितना ही तर्क तेज हुआ, सत्य उतना ही पहुच के बाहर चला गया । कोई भी केवल सैद्धातिक दृष्टि से विवेचन नही कर रहा था, बल्कि अपनी सुविधा और सामर्थ्य के अनुसार सिद्धात को ऊपर या नीचे ले जा रहा था । इसके अतिरिक्त लोगो के स्वभाव भी भिन्न-भिन्न थे ।

कोई तो इतना ही यथेष्ट समझता था कि उसने सत्याग्रह किया और जेल चला आया, परिवार वालो से अलग हुआ और माफी नही मागी । पर कुछ और लोग यह समझते थे कि निरन्तर सग्राम करते रहना सत्याग्रही का धर्म है ।

आनन्दकुमार तथा अन्य नेता चुपचाप यह कौतुक देख रहे थे । जब तर्को मे व्यक्तिगत आक्षेप आने लगा और लोग एक तरफ अपने विपक्षियो को कायर बताने लगे और दूसरी तरफ लोग अपने विरोधियो को अहिंसा के नाम मात्र पुजारी, पर असल मे हिंसा के पुजारी बताने लगे, तब बडे-बूढो की सम्मति से आनन्दकुमार ने इस विषय पर अपना वक्तव्य दिया ।

वह भाषण देने के पहले थोडी देर तक केवल मुस्कराते रहे । लोगो ने इस बीच मे यह देख लिया कि उनके सिर पर एक बैडेज बधा हुआ है । हाथ की एक कलाई पर भी बैडेज है । वे चाहते तो अस्पताल जा सकते थे, पर उन्होने अस्पताल जाना स्वीकार नही किया था । साथियो ने समझाया था कि सिर वाली चोट पर यदि फिर चोट पड गई तो खतरनाक साबित हो सकती है ।

जेल के अधिकारियो ने दफ्तर मे बुलाकर समझाया कि आप अपना हिस्सा कर चुके, अब नौजवानो पर आन्दोलन का भार होना चाहिए । अधिकारियो ने यह भी कहा कि आन्दोलन का आधार ही गलत है क्योकि प्रेमचन्द के साथ न तो कोई दुर्व्यवहार हो रहा है और न ऐसा करने का इरादा है । रही भेट, सो इसलिए नही कराते कि जेल के नियम बाधक हैं । हमने ऊपर लिखा है, पर वहा से कोई उत्तर नही आया ।

इन अनुरोधो पर आनन्दकुमार मुस्करा भर देते ।

इस समय वही मुस्कराहट उनके चेहरे पर थी । बैडेज के अन्दर का घाव दो इच चौडा है, खोपडी नही फूटी थी, पर चमडा बुरी तरह कट गया था, यह सभा मे उपस्थित सभी लोगो को अच्छी तरह मालूम था । उनके सामने आते ही सब लोग चुप हो गए थे । कोई कानाफूसी नही कर रहा था ।

वे वोले—हिंसा के युद्ध मे जब सैनिक घायल होकर अस्पताल पहुच जाता है, तब उसपर लडाई की कोई ज़िम्मेदारी नही रह जाती और वह एक साधारण नागरिक-सा हो जाता है। शत्रुपक्ष भी उसे उस रूप मे ही लेते हैं और अस्पतालो पर हमला करना, यद्यपि विगत महायुद्ध मे ऐसा सभी शक्तियो ने किया, अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार गर्हित और कुरुचिपूर्ण समझा जाता है। अपने देश के लोगो के सामने शत्रुपक्ष की नृशसता का चित्र पेश किया जाता है तो यही कहा जाता है कि शत्रुपक्ष ने अमुक-अमुक अस्पतालो और गिरजो पर बम डाले। जब हिंसात्मक युद्ध मे अस्पताल मे भरती लोग युद्ध से अलग समझे जाते है तो हमे तो इसका पालन करना ही चाहिए

जब आनन्दकुमार यहा तक कह चुके तो परेश ने आवाज़ लगाई—पर हमारा तो आत्मिक युद्ध है।

इसपर आनन्दकुमार फिर बैंडेज किए हुए सिर के अन्दर से मुस्कराए। बोले—आत्मिक युद्ध है, हो, आत्मा को तो कोई चोट नही लगती, चोट तो शरीर को लगती है, शरीर ही अस्पताल जाता है, इस दृष्टि से हमारे युद्ध मे और उनके युद्ध मे कोई फर्क नही है। जो इस व्याख्या को न मानता हो, वह अस्पताल जाने से इन्कार कर सकता है। यह तो अपने ही साथ मे है।

आनन्दकुमार हमेशा मानवीय कमज़ोरी के लिए कुछ रास्ता रखना चाहते थे। उन्होने उसी दृष्टि से यह व्याख्या की थी। उनकी व्याख्या से शायद सबको सन्तोष नही हुआ था, पर उन्होने यह जो कह दिया था कि अस्पताल जाना न जाना अपने हाथ मे है, यह उन लोगो के समाधान के लिए भी यथेष्ट था, जो लोग निरन्तर संग्राम, जब तक पैरो मे दम रहे तब तक संग्राम, का नारा दे रहे थे।

इस समय हाते मे कई व्यक्ति थे, जिनके सिर पर आनन्दकुमार की तरह बैंडेज बधे हुए थे।

राजेन्द्र इन सारी परिस्थितियो से अच्छी तरह परिचित था। उसके कधे पर चोट आई थी तथा उसकी बाईं कलाई मे भी मोच आई थी, पर वह अस्पताल नही गया था। जब उसे अर्चना की चिट्ठी मिली कि कल फैसला होने वाला है, तब वह यही सोचता रहा कि किस प्रकार यह खबर दी जाए, इसके साथ ही वह सोच रहा था कि इसका आन्दोलन पर क्या प्रभाव पडेगा।

उसका मन एक तरफ तो यह कह रहा था कि यह आन्दोलन तो व्यर्थ था

और व्यर्थ है क्योकि जब हम प्रेमचन्द को फासी के तख्ते से नही बचा सकते, तो उसे डडो से बचाया या बचाने का प्रयास किया या उसपर पडे हुए डडो का प्रतिवाद किया, इससे क्या आता-जाता है ? असली बात यह थी कि राजेन्द्र भीतर से बैरक-बन्दी-विरोध-आन्दोलन के विरुद्ध था, पर उसे सबके सामने अपनी इज्जत रखनी थी, अपने को बहादुर साबित करना था, किसी तरह भीड से आगे बने रहना था, इसीलिए वह न केवल आन्दोलन मे शरीक था, बल्कि वह अपने को गरम दल वालो से भी गरम साबित करना चाहता था।

अब तो इस आन्दोलन को आज चालू रखने का कोई अर्थ ही नही होता। कल पता नही फैसला सुनाने के बाद अधिकारी वर्ग प्रेमचन्द को इस जेल मे रखे या किसी दूर के जिले के फासीघर मे ले जाकर पटक दे, क्या पता ?

वह जेब मे पत्र रखकर आनन्दकुमार के पास पहुचा और उनको बाहर से आई हुई खबर बताई।

आनन्दकुमार ने सारी बाते सुनकर कहा—तो हमारे आन्दोलन के कारण प्रेमचन्द की फासी का दिन और करीब आ गया ? अजीब बात है !

—है तो ऐसी ही बात।

—पर इसमे हमे चिन्तित होने की आवश्यकता नही है। हमने अपने आन्दोलन के द्वारा एक तरफ तो प्रेमचन्द को नैतिक बल पहुचाया, उनकी आत्मा और दृढ हुई, अन्तिम परीक्षा के लिए वे और सबल हुए, दूसरी तरफ इस कृत्य के द्वारा हमने अपना आत्मबल भी बढाया। जिसे फांसी होना ही है, उसे दो-चार दिन पहले ही हो जाए तो कोई फर्क नही पडता। स्वय उसकी दृष्टि से भी यह शायद अच्छा है और देश की दृष्टि से भी यह इसलिए अच्छा है कि जो उबाल जन-मन मे चार दिन बाद आता है, वह पहले ही आ जाए।

यह मन्तव्य बहुत ही वज़नी था, पर राजेन्द्र को तो बैरक-बन्दी-विरोध-आन्दोलन से छुटकारा पाने की पडी थी। बोला—आज क्या हो ?

आनन्दकुमार ने चिन्ता की मुद्रा मे कहा—इसपर तो बिल्कुल ही व्यावहारिक दृष्टि से विचार करना चाहिए। कल तो किसी भी हालत मे यह आन्दोलन होना ही नही है, पर आज हो जाए तो बुरा क्या है ?

—फजूल में दो-चार सिर और फूटेंगे—राजेन्द्र ने निराशा के साथ कहा।

आनन्दकुमार ने कहा—यदि दो-चार सिर फूटेंगे ही तो कौन-सा अनर्थ हो

जाएगा ? मैं तो कहता हू कि हमारे सग्राम मे सिर फुडवाना भी एक ट्रेनिंग है।

राजेन्द्र इस उत्तर से सन्तुष्ट नही हुआ। वह रघुवशनाथ के पास गया, जो बराबर बहादुरी दिखाने पर भी बिल्कुल घायल नही हुए थे। उनकी पीठ और सीने पर बीसियो डडे पड चुके थे। उन्होने सव कुछ सुनकर यही पूछा कि आनन्दकुमार जी क्या कहते है।

राजेन्द्र समझ गया कि यहा दाल नही गलेगी।

थोडी ही देर मे राजेन्द्र सब महत्वपूर्ण व्यक्तियो से मिल चुका। हा, वह परेश, रामचरण आदि से नही मिला। उसने यह समझ लिया कि कोई भी आगे बढकर कुछ करने को तैयार नही है। सिर फूटने को यह लोग कोई महत्व ही नही देते।

अभी राजेन्द्र मौलाना बन्देअली से बात कर ही रहा था कि परेश, रामचरण आदि सू घते हुए वहा पहुचे और एकाएक नाराज़ होते हुए बोले—राजेन्द्र जी, यह क्या घुसुर-फुसुर हो रही है ? हमे क्यो नही बताया जाता ?

राजेन्द्र झु झलाया हुआ था, बोला—हर एक बात हर एक को नही बताई जाती।

रामचरण स्लिग मे बधे हुए अपने हाथ को स्लिग से अलग करते हुए नाराज़ होकर बोला—तो हम लोग कोई नही होते ?

मौलाना बन्देअली ने देखा कि झगड़ा बढ जाएगा, इसलिए उन्होंने थोडे में सारी बाते बताई, फिर बोले—अभी यह पता नही कि यह खबर कहा तक सच है, इसलिए इसपर खुलकर बातचीत नही हो रही है।

रामचरण तेज़ होकर बोला—यह सब कहने की बातें है। पुलिस मे भी क्रान्तिकारियों के गुप्तचर हैं, वही से पता लगा होगा। खबर ज़रूर सच होगी, नहीं तो आप लोग इतने उत्तेजित क्यो हैं ?

अब तक और भी लोग आ गए थे। फौरन इस बातचीत ने एक सभा का रूप ले लिया और राजेन्द्र को पूरी बात बतानी पडी। हा, उसने अर्चना का नाम नही बताया।

फिर वही पुरानी बहसे छिड गईं। हिंसा-अहिंसा, क्रान्तिकारी आन्दोलन, सत्याग्रह आन्दोलन, दोनो आन्दोलनो की आधारभूत भिन्नता आदि कितनी ही बातो पर बहस हुई।

अन्त तक कोई निर्णय नही हो सका और बैरक-बन्दी का समय आ गया। रोज की तरह जेल के अधिकारी लट्ठधारी जमादार, पक्का नम्बरदार, स्ट्रेचर, डाक्टर आदि सब तरह के उपकरणो से लैस होकर आए, पर उन्होने आते ही लोगो को उठा-उठाकर भीतर रखना शुरू नही किया, जैसा वे कई दिनो से कर रहे थे।

अधिकारियो को यह खबर गई थी कि प्रेमचन्द का कल फैसला होगा, इस नाते आन्दोलन बन्द कर देने की चर्चा हो रही है। जेल के सबसे उच्च अधिकारी सुपरिन्टेन्डेन्ट को भी इस बात की खबर नही थी कि कल प्रेमचन्द का फैसला सुनाया जाने वाला है, इसलिए वे चौंके कि जिस बात की खबर उन्हे नही है उसकी खबर राजनैतिक कैदियो को कैसे लग गई? पर उन्होने यह मान लिया कि खबर सच्ची होगी। यदि झूठी भी थी तो इस बहाने आन्दोलन बन्द हो जाए तो क्या बुराई थी? यह तो एक खामख्वाह का खटराग चल रहा था जिससे पूरे कर्मचारी वर्ग को कष्ट था क्योकि जमादार से लेकर डाक्टर तक सबको तैयार रहना पडता था और रोज़ देर तक ड्यूटी देनी पडती थी।

आज कर्नल सिम्पसन भी आया था। वह सभा के बीच मे पहुच गया और बोला—यदि आप आधे घटे मे यह निर्णय कर ले कि बैरक मामूली ढग से बिना किसी झगडे के बन्द होने देंगे, तो हम प्रतीक्षा कर सकते है।

इसपर रघुवशनाथ ने अग्रेजी मे कहा—हम यह वचन कैसे दे सकते है कि अमुक निर्णय ही होगा? इसके अलावा जब हम तीन घटे से विचार करके कुछ निर्णय नही कर सके तो आगामी आध घटे मे कुछ निर्णय हो ही जाएगा, यह भी हम कैसे कह सकते हैं?

कर्नल सिम्पसन ने कहा—हम अनिश्चित अवधि तक तो प्रतीक्षा नही कर सकते।

रघुवशनाथ इसपर कुछ कहने जा रहे थे कि इतने मे भजनलाल जोश मे आकर उठ खडा हुआ। वह बहुत ही साधारण सत्याग्रही था। न तो वह कभी किसी झगडे मे पडता था न तर्क-वितर्क मे दिलचस्पी लेता था। सब लोग उसको जानते थे, पर कोई उसके साथ उठता-बैठता न था। वह सबेरे उठकर सब से बन्देमातरम् करता था, फिर देर तक सास का कोई व्यायाम करता था, जिसे

वह प्राणायाम बताता था। वह सारे काम शुद्धता के साथ करता था और जेल-अधिकारी उसे एक आदर्श सत्याग्रही इस माने मे समझते थे कि कभी उसके कारण कोई झगडा नही खडा हुआ। उसे राष्ट्रीय भजन गाने का शौक था और जब-तब उसका वह गाना सुना जा सकता था

भारत जननि तेरी जय हो विजय हो।
तेरे लिए जेल हो स्वर्ग का द्वार,
बेड़ी की झनझन में वीणा की लय हो।
आएं पुन कृष्ण देखें दशा तेरी,
सरिता-सरो में भी बहता प्रणय हो।
हो ज्ञान-सम्पन्न जीवन सुफल हो,
सन्तान तेरी अखिल, प्रेममय हो।
कहता खलिल आज हिन्दू-मुसलमान,
सब मिलके गाओ जननि तेरी जय हो॥

भजनलाल चिल्लाकर बोला—तुम्हे हमारा हुकुम मानना पडेगा। हमारे एक भाई को कल तुम फासी दोगे और आज हमसे समझौता चाहते हो? इन्कलाब जिन्दाबाद!

सभा तितर-बितर हो गई और बडे ज़ोर से नारे लगने लगे। जेल वाले भी उकताए हुए थे। फौरन सीटी बजी और बडे ज़ोर का लाठी-चार्ज हुआ। दोनो तरफ से क्षति हो गई।

कल तक आन्दोलन यह रूप ले चुका था कि जमादार और नम्बरदार कैदियो को उठाकर भीतर रख देते थे। वे जाकर अपनी जगह पर बैठ जाते थे, फिर वे बाहर आने की कोशिश नही करते थे, पर आज तो भीतर किसीको ले जाना ही टेढी खीर हो रहा था। सत्याग्रही पूरा ज़ोर लगाकर अपने को छुडाने की कोशिश कर रहे थे और यदि वे किसी तरह भीतर ले भी जाए गए तो वे फौरन बाहर आने की चेष्टा में लग जाते थे। इसलिए एक-एक आदमी को उठाकर ज़बर्दस्ती भीतर कर देने के बाद दरवाज़ा पूरी तरह बन्द कर देना पडता था और जब अगले आदमी को भीतर डालने के लिए दरवाज़ा खोला जाता था तो भीतर के लोग बाहर आने की

जी तोड कोशिश करते थे।

इसका नतीजा यह हुग्रा कि बहुत-से सिर फूट गए। परेश, रामचरण ही नहीं, ग्राज रघुवशनाथ भी बिल्कुल पागल की तरह हो रहे थे। वे पहले भीतर ले जाए गए थे, पर दरवाज़ा खुला पाकर ही वह बाहर चले ग्राए थे। नतीजा यह हुग्रा था कि ग्राज उनपर बहुत मार पडी थी। ग्रन्तिम लाठी से उनकी खोपडी कही से खुल गई ग्रौर उसमे से खून निकलकर दाहिनी ग्राख पर से होता हुग्रा बह रहा था। ऐसा मालूम होता था जैसे उनकी ग्राख भी फूट गई है ग्रौर उसीमे से खून निकल रहा हो।

जब मौलाना बन्देग्रली ने उन्हे इस रूप मे देखा तो वे बहुत ज़ोर से चिल्लाकर बोले—भाइयो, ग्राज जिसकी खोपडी न फूटे, समझना चाहिए कि उसने ग्रपनी मा का दूध नही पिया—कहकर वे उधर लपके जिधर बडी तेजी से लाठिया चल रही थी। फौरन ही उनके सिर पर लाठी पडी ग्रौर वे गिर पडे। गिरने के बाद भी उन्होने चिल्लाकर कहा—भाइयो, पीछे न हटो, खुदा हाफिज़!

दो घटे तक यह ग्रजीब युद्ध चलता रहा। एक तरफ मारने की ग्रातुरता थी तो दूसरी तरफ मरने की व्यग्रता थी। कहा तो बाल की खाल निकल रही थी ग्रौर ग्रब ग्रस्थियो से मज्जा निकलने की नौबत ग्रा गई थी। ग्राज लोग ज़बर्दस्ती ग्रस्पताल ले जाए जा रहे थे, यद्यपि सब (जिनको होश था) ग्रस्पताल जाने से मना कर रहे थे। एक-एक करके ग्रानन्दकुमार ग्रादि ग्रनेक व्यक्ति ग्रस्पताल पहुचाए गए।

इधर किसी तरह हाते की बैरकें बन्द हुई तो चारो तरफ गगनभेदी नारे लगने लगे। जिसमे 'इन्कलाब ज़िन्दाबाद' के साथ-साथ 'महात्मा गाधी की जय' ग्रौर 'प्रेमचन्द ज़िन्दाबाद' भी बोला जा रहा था।

बन्देग्रली तथा तीन ग्रौर कैदियो की चोट बहुत खतरनाक थी। वे चारो बेहोश ग्रवस्था मे जेल के बाहर के ग्रस्पताल मे पहुचाए गए क्योकि जेल के ग्रस्पताल मे रात के समय ग्रापरेशन करने की उचित व्यवस्था नही थी।

इन चारो को इस प्रकार बाहर ले जाते देखकर ग्रस्पताल के घायल राजनतिक कैदियो मे भी जोश उमड पडा ग्रौर उन्होने भी बैरक मे बन्द होने से इन्कार किया। सिम्पसन दल-बल सहित लौटकर ग्रभी दफ्तर मे बैठकर सारी

व्यवस्था कर रहा था कि इतने मे फिर खबर आई कि अस्पताल मे बैरक-बन्दी का प्रतिरोध हो रहा है।

वह गारद लेकर वहा पहुचा। यहा भी लाठी-चार्ज हुआ। जो घायल थे, वे और भी घायल हो गए। कई खोपडिया और फूटी। साम्राज्यवाद उन दिनो देशभक्तो की खोपडिया ऐसे फोड़ता था जैसे वे मिट्टी के पुतले ही हो। एक और राजनैतिक कैदी को बेहोश अवस्था मे बाहर के अस्पताल मे भेजना पडा।

बड़ी रात तक नारे लगते रहे। जेल मे जो साधारण कैदी थे वे भी नारे बुलन्द कर रहे थे।

अस्पताल मे राजेन्द्र और आनन्दकुमार भारी बैंडेजो से लदकर अगल-बगल लेटाए गए थे। अस्पताल की खाटे खतम हो चुकी थी, इसलिए अब पुआल का एक-एक गद्दा ज़मीन पर बिछाकर आज अस्पताल मे आए हुए लोगो को ज़मीन पर लेटाया गया था।

राजेन्द्र का काफी खून गया था, पर वह खुश लगता था। उसका सारा अविश्वास तथा हिसाबी वृत्ति, सामयिक से ही सही, दूर हो गई थी। उसके मन मे एक अनिर्वचनीय आनन्द लहरे मार रहा था। वह आनन्दकुमार से बोला—सब अच्छा ही रहा, क्यो, आपका क्या ख्याल है?

आनन्दकुमार ने इसके उत्तर मे कुछ नही कहा। केवल एक आख से हस दिए क्योकि एक आख बैंडेज के कारण बची हुई थी।

राजेन्द्र ने थोडी देर बाद फिर पूछा—इस समय आपको अपने पुस्तकालय का अभाव बहुत खटक रहा होगा?

आनन्दकुमार की खुली हुई आख दिव्य ज्योति से चमक उठी। बोले—नही, बिल्कुल नही खटक रहा है। पुस्तकालयो मे बैठने का जो नतीजा होना चाहिए, हम उसके अन्दर से गुज़र रहे हैं, फिर हमे गम किस बात का?

वे शायद कुछ और भी कहते, पर भजनलाल, जिसका एक हाथ आज के झगडे मे उतर गया था और सिर मे भी चोट आई थी, यद्यपि इसे खोपड़ी टूटना नही कह सकते, कराहने के अन्दर से गा रहा था—

सर फरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए क़ातिल मे है।

अब न अगले वलवले हैं और न अरमानों की भीड़,
सिर्फ़ मिट जाने की हसरत यक दिले बिस्मिल में है।
रहरवे राहे-मुहब्बत रह न जाना राह में,
लज्जते सहराने वर्दी दूरिएमंजिल में है।
ऐ शहीदे मुल्को मिल्लत मै तेरे ऊपर निसार,
अब तेरी हिम्मत का चर्चा ग़ैर की महफ़िल में है।

सब लोग स्तब्ध होकर इस ऐतिहासिक बने हुए गाने को सुन रहे थे। बीच-बीच मे किसीका कराहना सुनाई पड जाता था जो इस गीत के लिए बहुत सही पृष्ठभूमि थी।

## ४८

रजत जीवानन्द को यह खबर पहुचाने के लिए भेजा गया था कि कल प्रेमचन्द का फैसला सुनाया जाने वाला है। जीवानन्द ने इसपर उससे जिरह की तो वह कुछ बता नही सका। वह केवल इतना ही कह सका कि तारा ने यह खबर भेजी है। तारा को यह खबर कहां से मिली, कैसे मिली, कहा तक इस खबर पर विश्वास किया जा सकता है आदि बातो का वह कोई उत्तर नही दे पाया। तब जीवानन्द ने पूछा—आप कौन है? मैंने आपको पहली ही बार देखा है।

रजत अपना क्या परिचय देता? क्या वह यह बताए कि मैं तारा से विवाह करने का प्रस्ताव लेकर गया था और इसी नाते मेरा परिचय हुआ था? वह बोला—मैं यो ही उनके यहा आता-जाता हू।

—क्या आप उनके कोई रिश्तेदार हैं?

—हां, यही समझिए।

जीवानन्द इस उत्तर से सन्तुष्ट नही हुआ, पर उसके मन मे अन्य उलझने

थी ; इस खबर से कुछ और पैदा हो गई थी इसलिए उसने रजत को जल्दी छुट्टी दे दी।

रजत को जीवानन्द अजीब शुष्क व्यक्ति लगा। उसे आश्चर्य हुआ कि क्या यही लोग तारा के साथी हैं ? तारा कितनी कोमल और भावुक है और जीवानन्द किस प्रकार अक्खड और 'मैटर आफ फैक्ट'। वह पुलिस मे होता तो अच्छा लगता। कही रोमास छू भी नही गया था। इसपर भी रजत खुश था क्योकि वह तारा के काम आया था। जहां तक वह समझ सका काफी महत्वपूर्ण था। अवश्य वह यह समझ नही सका कि इस सन्देश का अर्थ क्या था ? यदि कल फैसला होने वाला है तो क्या ? इस सूचना का क्या इस्तेमाल किया जा सकता था ?

कुछ समझ मे नही आया। पर जितना ही कम समझ मे आया, उतना ही उसे अच्छा लगा। हां, वह आदमी कौन था जो तारा के साथ भीतर बात कर रहा था ? उसने बहुतेरा चाहा था कि उसकी एक झलक दीख जाए, पर असफल रहा। क्या उसीने तारा को यह सूचना दी थी ? तब तो वह कोई क्रांतिकारी होगा। रजत को इतना पता तो था ही कि इस घर मे तारा की मा और उसके छोटे भाई प्रदीप के अतिरिक्त कोई और नही रहता। इन दोनो मे से उस वक्त कोई भी मौजूद नही था।

तारा ने यह नही बताया था कि सूचना भीतर से मिली थी। शायद वह भूल गई थी। वह तो पत्रो का वह बंडल उठा लाई थी जिन्हे विभिन्न लोगों ने इस बीच उसके तथा उसकी माता के नाम भेजा था। उन पत्रो मे चार तो सोलहो आने प्रेम-पत्र थे और उनकी भाषा बिल्कुल उच्छ्वासित थी।

तारा ने वे पत्र क्यो दिखाए ? क्या वह यह दिखाना चाहती थी कि मेरे बहुत-से प्रशसक हैं ? मैं चाहू तो इनमे से किसीको अपना कृपापात्र बना सकती हू ?

क्या वह रोब डालना चाहती थी ?

नही-नही, वह सम्पूर्ण रूप से इस प्रकार की इच्छा के अयोग्य थी। फिर भी वे पत्र उसे बुरे लगे थे और उसने सरसरी तौर पर उन्हे देखकर जल्दी से लौटा दिया था। क्या इन पत्र-लेखको मे से कोई आकर यहा मिल गया था ?

तारा ने बताया था कि किसी पत्र का उत्तर नही दिया गया, इसलिए केवल

दो ने दो बार पत्र लिखा था। एक तो अब भी लिख रहा है। उसके कुल मिलाकर तीन पत्र आ चुके है। उसकी भाषा भी बडी अद्भुत थी। रजत को तो बुरी ही लगी।

ऐसा लगता था कि पत्र-लेखक पारसी थियेटरो के गानो से बहुत प्रभावित है। उसकी भाषा पर ऐसे गीतो का भारी असर था। उसने लिखा था—"मेरी मलका, इस समय तुम भारत के नौजवानो की आखो का नूर हो···काश मै तुम्हे अपने आगोश मे पा सकता··।

यह पत्र घटिया आवेग से इतना पूर्ण था कि किसी सभ्य स्त्री के पढने लायक नही था। यदि यह पत्र किसी वेश्या को लिखा गया होता, तब तो समझ मे आता।

ऐसे पत्र को सुरक्षित रखने का क्या उद्देश्य था ? ऐसे पत्रो का तो बस एक ही उपयोग था कि उन्हें भगवान् अग्निदेव को समर्पित कर दिया जाए। कितना धृष्ट था—मेरी मलका, ' आंखो का नूर'···पा जाता···आगोश····काश !

रजत ने उसी समय आवेश मे कहा भी था—इन पत्रो का लिखने वाला कोई उजड्ड आदमी मालूम होता है, जिसे सस्कृति का कोई लाभ नही मिला। आपने इन्हे रखा क्यो है ? ऐसे पत्रो को तो फौरन जला देना चाहिए।

इसपर तारा ने कहा था—मैने तो इन पत्रो को पढा भी नही। मा जैसा चाहे करती है।

सुनकर रजत आश्वस्त हुआ था। कहा था—तुमने अच्छा ही किया नही पढा। लाओ देखू, इसपर कोई पता भी है ?

इसपर तारा ने अद्भुत तरीके से मुस्कराते हुए कहा था—ना बाबा, मै पता नही दूंगी। कही आप पिस्तौल लेकर उसपर चढाई न कर दे।

रजत को यह बात बहुत अच्छी लगी थी और अनायास उसके मानस-पटल पर कालिदास का वह श्लोक उद्भासित हो गया था।

**तन्वी श्यामा शिखरदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी**
**मध्ये क्षामा चकितहरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः।**

श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातु[1] ॥

उसने बाग-बाग होकर कहा था—पिस्तौल लेकर वह जाए जो ठुकराया गया हो, यहा तो···

वह वाक्य सम्पूर्ण नही कर पाया था कि तारा पत्रों का बडल उठाकर चली गई थी।

उसके बाद जब वह लौटी तो उसका चेहरा गुणगत रूप से बदला हुआ था। वह 'ना बाबा', खिलखिलाकर हसना आदि किसीका कही पता नहीं था। दोनो तटो को प्लावित करती हुई वर्षा की नदी का रूप जैसे शीतकाल के अन्त मे सिमट गया था। यह और ही मुद्रा थी। उस तारा से मालूम होता था कि जन्म-जन्मान्तर का परिचय है और यह जैसे लगती थी कि बिल्कुल निस्पृह, अनैहिक, अप्राप्ता और अप्राप्या है। वह आते ही, जैसे वह कुछ भूल गई थी और एकाएक जैसे वह बात आ गई, बोली—आपको एक सन्देश पहुचाना है।

कहकर उसने किसे सन्देश पहुचाना है, क्या पहुचाना है, यह सब थोडे मे बता दिया था। जब बताने का यह काम समाप्त हो गया तो उसने उसकी तरफ ऐसे देखा जैसे दो कामकाजी आदमी एक दूसरे को देखते हैं। उस दृष्टि मे न तो कोई आकर्षण था न लगावट। ऐसा ज्ञात होता था कि रेल मे मिले थे और अब मोड आ जाने पर अपने-अपने गन्तव्य स्थल मे जा रहे हैं। यह नही कहा कि आगे मिलना है या नही मिलना है, कुछ उत्तर लाना है या नही लाना है।

उसका काम केवल संदेशवाहक का था। पर नही, यह कहना पूर्ण सत्य कहना न होगा। सदेश ज़बानी था और बडा महत्त्वपूर्ण था। ऐसे क्षेत्र मे सदेशवाहक होना केवल सदेशवाहक होना नही था बल्कि यह एक तरीके से विश्वासपात्र होने का प्रमाणपत्र था।

सम्भव है, उस अज्ञात व्यक्ति ने, जिसका स्वर उसने सुना था, पर जिसे

---

१ वह दुबली-पतली, नन्हे-नन्हे दातों वाली, पके बिम्बाफल के समान लाल होंठों वाली, पतली कमर वाली, चकित हिरणी के समान आखों वाली, गहरी नाभिवाली, नितम्बों के बोझ से धीरे-धीरे चलने वाली और स्तनों के भार से कुछ आगे को झुकी हुई युवती है।

देख नही पाया था, उसे सन्देशवाहक बनाने के सम्बन्ध मे कहा हो।

तो क्या ?

तो क्या वह व्यक्ति उन दोनो की बातचीत सुन रहा था ? अरे ! यह तो बहुत ही भोंडी बात है।

रजत फिर से याद करने लगा कि क्या-क्या बातचीत हुई थी। क्या उसने कोई अशोभन बात कही थी ? नही, उसने कोई ऐसी बात नही कही थी, जो अनुचित हो।

सोचते-सोचते रजत के माथे पर बल आ गए। क्यो नही ? उसने जो कुछ कहा था, उसमे उसका प्रेम-निवेदन तो स्पष्ट था।

क्या इसीको प्रेम-निवेदन कहते है ?

ज़रूर, फिर भी यानी सारी बातचीत सुनने पर भी उस व्यक्ति ने उसे सन्देशवाहक चुना, इससे यह स्पष्ट था कि वह उससे नाराज़ नही हुए। तारा ने जिस तरह चाय पिलाई उससे भी यही बात सिद्ध हुई। सन्देशवाहक होने के सम्बन्ध मे फिर भी एक बात हो सकती है कि उस व्यक्ति ने कुछ न कहा हो। तारा ने ही उसे सन्देशवाहक बनाया हो। तब तो और भी अच्छी बात है।

उसे उस व्यक्ति से क्या मतलब ? उसे तारा से ही मतलब है। बाकी ससार से कोई मतलब नही। वह तारा का विश्वासपात्र है, इतना ही उसके लिए यथेष्ट है।

उसने सन्देश सहेजते समय इतनी रुखाई से काम क्यो लिया ? वह उसी बात को और भी मधुर तथा सहज करके कह सकती थी। वह तो किसी भी हालत में उसकी आज्ञा का पालन करता ही। इस सम्बन्ध मे उसे कुछ शिकायत थी। चलते समय वह कुछ कह तो सकती थी। कम से कम मीठे ढग से रजत बाबू तो कह सकती थी, या रजत ही कहती, तब तो सबसे बढिया रहता। पर इस सम्बन्ध मे शिकायत रखना व्यर्थ है। प्रत्येक कार्य के लिए एक विशेष मुद्रा और आसन होता है, इस सन्देश के साथ शायद वही मुद्रा सही थी।

रजत इस सन्देश के सम्बन्ध मे सोचने लगा तो उसकी समझ मे यह नही आया कि आखिर इस सन्देश मे ऐसी कौन-सी महत्व की बात है ? यह तो सारे ससार को मालूम था कि प्रेमचन्द के मामले मे जल्दी ही फैसला सुनाया जाने वाला है। इसमे तो कोई गुप्त बात नही है। हां, वह कल ही सुनाया जाएगा,

यह जरूर नई बात है। पर यह भी कोई राज्यीय गुप्त रहस्य नही है।

तो क्या क्रान्तिकारी प्रेमचन्द को फैसले के दिन अदालत से भगा लेना चाहते हैं ? एक अस्पष्ट अफवाह बहुत दिन से सुनने मे आ रही थी कि प्रेमचन्द को फांसी होने नही दी जाएगी।

क्या उसीसे इस सन्देश का कोई सम्बन्ध है ? उसने अखबारो में चित्रकूटी के भगाने की खबर पढी थी। इसपर उसने यह टिप्पणी भी सुनी थी कि असल मे प्रेमचन्द ही भागने वाले थे, पर उनका रसोइया इन्हीके साधनो का उपयोग कर उनसे पहले भाग निकला, इसलिए सारा मामला फिस्स हो गया। शायद उसीकी पूर्ति के लिए अब दूसरा प्रयास होने वाला हो।

तब तो यह सन्देश बहुत ही महत्वपूर्ण है। अच्छा यह प्रमोदकुमार उर्फ जीवानन्द कौन है ? यह दल का कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति मालूम होता है। इसके चेहरे पर भी वही निर्लिप्तता, निस्पृहता या रुखाई कह लीजिए, प्रचुर मात्रा में थी, जो तारा के चेहरे पर उस समय देखने मे आई थी जब वह सन्देश दे रही थी।

सरकार से लडते-लडते, लोगो पर अविश्वास करते-करते, हर समय सतर्क रहते-रहते ये क्रान्तिकारी यदि रूखे हो जाते हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्या तारा भी आगे चलकर इसी तरह रूखी हो जाएगी ?

इसकी कल्पना तो नही की जा सकती। रजत को यह विचार अप्रिय था, इसलिए उसने इस सम्बन्ध मे कुछ नही सोचा था। पर उसने इस विचार का जितना ही प्रतिरोध किया, वह लौट-लौटकर उतना ही उसके दिमाग मे आने लगा।

क्या तारा भी उन राजपूत ललनाओ की परम्परा मे है, जो हसते-हसते अपने पति तथा पुत्र को युद्धक्षेत्र मे भेज देती थी ? क्या उसने उसे सन्देशवाहक बनाकर इसी प्रकार की वीरागना की मनोवृत्ति का परिचय दिया है ?

वीरागना ! अच्छी बात है। रजत तारा की तरफ इसीलिए आकृष्ट हुआ था कि वह वीरांगना है, वह सत्याग्रह करने गई, उसपर लाठियो का प्रहार हुआ और फिर वह भगाई गई। यह स्मरण होते ही तसद्दुक पर बडा क्रोध आया।

कल्पना-नेत्रो से वह चाहने लगा कि काश प्रेमचन्द की जगह वही होता।

तारा के लिए फासी पर चढता।

जब रजत यहा तक सोच पाया था, तब एकाएक उसके मन मे ऐसा विचार आया जिससे वह एवरेस्ट की चोटी पर से अर र र धम्म् ! एक खाई मे गिर पडा। कही प्रेमचन्द तारा का प्रेमिक तो नही था ? किसी और अर्थ मे नही, अफलातूनी अर्थ मे।

वह प्रेमचन्द को अच्छी तरह जानता था। यद्यपि कभी मुह-दर-मुह बातचीत करने का मौका नही लगा था। एफ० ए० क्लास के उसके साथी उसे बोहिमियन कहते थे। कई लडकिया उसके इर्द-गिर्द घूमती थी। एक के बाद एक सिगरेट पीता जाता था और उसकी ख्याति यह थी कि रात-रातभर सिगरेट पीते और मोटी-मोटी किताबे पढते काट देता है। लोग बताते थे कि वह जिस कमरे मे रहता है, उसकी हालत २४ घटे ऐसी बनी रहती है, मानो अभी-अभी कोई आधी आ चुकी हो। उसीमे वह सुखी रहता है।

था तो वह मनोविज्ञान का लेक्चरार, पर प्रिंसिपल भी उससे डरते थे क्योकि वह बडा मुहफट था, पता नही कब क्या कह जाए। कोई भी नही समझता था कि वह क्रान्तिकारी भी हो सकता है, पर एकाएक एक दिन वह गिरफ्तार हो गया और तबसे बराबर लोगो की आखो के सामने बना हुआ है। नही, वह अफलातूनी अर्थ मे भी तारा का प्रेमिक नही हो सकता।

यो सम्भव है कि कभी ये लोग मिले हो और जब जेल मे प्रेमचन्द ने यह सुना हो कि इस-इस तरह वही तसद्दुक जो उन्हे सरकारी गवाह बनाने के लिए उनपर अत्याचार करता है, तारा को भगा चुका है और असदुद्देश्य से कही बन्द करके रखा है तो मौका देखकर उसका काम तमाम कर दिया। या महज इन्होने अपने ही ऊपर किए गए अत्याचारो का बदला लिया हो, रपट पडे तो हर गगा।

तसद्दुक को मारने के पहले भी प्रेमचन्द मशहूर हो रहे थे, पर एक खाम-ख्याल के रूप मे। लोग उनकी हसी उडाते थे। एक सहपाठी ने कहा था—गया था मजिस्ट्रेट को मारने, पर वहा कोई विरला किस्म की चिडिया मिल गई और आप उसे देखने लगे, इसी हालत मे धर लिए गए।

एक दूसरा सहपाठी इसपर नाराज़ होते हुए बोला—चिडिया वाली बात तो मनगढ़न्त है। मौका नही लगा, इसलिए पकड लिए गए, पर यह नही देखते

कि किस सफाई से पिस्तौल गायब कर दी ।

वही प्रेमचन्द रातोरात सार्वजनिक वीर, क्रान्तिकारी नेता, स्त्रियो के सम्मान के रक्षक, सत्याग्रहियो के लिए प्राण अर्पण करने वाले, और जाने क्या-क्या हो गए । और सब इसी तारीफ की बदौलत ।

रजत के अन्तिम विचारो मे कुछ कडवापन इसलिए था कि जब तारा उसकी है तो उसके लिए, बल्कि उसके द्वारा वीर बनने का अधिकार उसीको है, दूसरे किसीको नही । जो हो रहा है, दूसरे रूप में होना चाहिए था । सारी बाते वही होती, पर उनका मध्यमणि प्रेमचन्द न होकर वह होता, तब सही होता ।

जीवानन्द से मिलने के बाद रजत इन्ही बातो को सोचते हुए घर पहुच गया, पर वह शान्तिपूर्वक अपने अध्ययन मे नही लग सका । भीतर से एक बेचैनी उठ रही थी, जैसे कही कुछ हो रहा है, या हो चुका है, या होने वाला है जो होना नही चाहिए, क्योकि इससे उसकी खराबी थी । बडी देर तक वह सोचता रहा पर यह नही समझ पाया कि किस कारण मन क्षुब्ध हो रहा है । अब तो स्पष्ट यह लग रहा था कि जो चीज़ उसे सबसे अधिक प्रिय थी, वह उसे मिलते-मिलते रह गई या मिलकर भी उससे छिन गई । ऐसा विचार क्यो आ रहा था ?

उसने अपने से बार-बार यह प्रश्न पूछा । आकाश की तरफ देखा तो अभी सूर्य भगवान मध्याह्न रेखा पर नही पहुच पाए थे । उनका रथ तेज़ी के साथ बढ रहा था, पर उसकी तो अजीब हालत हुई कि वह मध्याह्न सूर्य के स्थान पर पहुच गया, फिर एकदम पाताल के अन्धकारमय गर्त मे गिर पडा ।

उसने एक गिलास पानी पिया फिर चेष्टा की कि अध्ययन मे मन लगाए ।

पर, पुस्तक की सतरे एक लकीर-सी मालूम हो रही थी । कुछ भी दिमाग मे धस नही रहा था । उसे बडा भय लगा कि यह क्या हो रहा है ? तारा ने तो उसके साथ बडा अच्छा व्यवहार किया, बहुत ही अच्छा । वह मनोविज्ञान का अध्यापक नही है, पर इतना तो वह भी समझ सकता है, रही वह रुखाई, सो वह तो वैसी ही वस्तु थी जैसे फौजियो के लिए वर्दी, इसका कोई विशेष अर्थ नही ।

हा, वह अज्ञात व्यक्ति····

वह कौन था, पर उस बिन्दु पर तो वह अच्छी तरह सोच चुका है कि उस अज्ञात व्यक्ति ने तारा को उसके विरुद्ध भडकाया नही। फिर वह सन्देश ही न देती और न प्रमोदकुमार से उसका परिचय ही कराती।

वह तो सब ठीक है।

पर ?

देर तक वह सोचता रहा। यहा तक कि भोजन का समय आया। मा से वह बहुत डरता था, इसलिए इच्छा न होते हुए भी उसने थोडा-बहुत खाना खाया।

फिर भी मा की आखे ताड ही गई, बोली—तबियत ठीक है न बेटा ?

—बिल्कुल ठीक है। रात को देर तक पढता रहा।

जाने क्यो यह कहकर ही उसे प्रेमचन्द की बात याद आई जो पुस्तके पढकर रात काट देता था।

—विशेष देर तक पढने की जरूरत क्या है ? रात जगना अच्छा नही होता।

—हा, अच्छा नही होता।

उसने इन शब्दो को ऐसे कहा जैसे प्रेमचन्द के रात जागकर पुस्तके पढने पर ही कोई निर्णय दे रहा हो।

मा बोली—रात जागकर उन्हे पढना पडता है, जो रोज़ की पढाई ठीक से नही करते।

रजत ने यान्त्रिक रूप से जैसे बात की आवृत्ति-सी करते हुए कहा—रात जागकर उन्हे ही पढना पडता है जो रोज का कर्तव्य नही करते।

अरे, यह बात भी जैसे उसने अपने लिए नही, प्रेमचन्द के सम्बन्ध मे ही कही। प्रेमचन्द कमरे मे अस्त-व्यस्त रहता है। किताबो को ठीक से नही रखता। चारो तरफ सिगरेट के अधजले टुकडे पडे रहते हैं। नीद ने धर पकडा, तो कही भी लुढक पडा। तकिए के बदले सिर के नीचे कोई मोटी-सी किताब ही सही।

उसने थु. करके थूक दिया। मा ने पूछा— क्या सालन मे कोई ककडी थी ?

रजत ने काल्पनिक जगत से वास्तविक जगत मे उतरते हुए कहा—यो ही थूका, कोई खास बात नही थी।

वह मेज़ से उठकर अपने कमरे मे चला गया। अब जैसे उसके सामने वह बात कुछ-कुछ आ रही थी जिससे उसे बेचैनी थी। पर यह तो केवल प्रसव-

यत्रणा थी।

कई घटे तक वह समझ ही नही पाया कि उसे किस बात का भय हो रहा है।

जब वह बात उसके दिमाग मे अन्ततोगत्वा आई तो वह इतनी अद्भुत थी कि उसने उसे स्वीकार करना नही चाहा। फिर भी वह बात तो आकर के ही रही। दिन के सूर्य की तरह स्पष्ट, अपने हाथ की तरह प्रत्यक्ष, हृदय की धडकन की तरह निश्चित, जिससे इन्कार नही किया जा सकता।

वह प्रेमचन्द के बाहर आने की सम्भावना से घबडा रहा था।

यह ऐसा आत्मदर्शन था कि वह अपने ही सम्मुख कुछ छोटा हो गया। उसने अपने साथ तर्क करने का प्रयास किया कि प्रेमचन्द इस समय भारत की युवक शक्ति का, बल्कि युवशक्ति का, क्योकि युवक के साथ-साथ इसमे युवतियो को भी सम्मिलित करना है, प्रतीक है। सही माने मे उसने अपने यौवन का सदुपयोग किया है। आज सैकडो भारतीय उससे अनुप्रेरणा ले रहे हैं तथा उसकी विपुल प्राणधारा मे अवगाहन करके अपने को पवित्र कर रहे है।

उसकी जीवन-रक्षा का अर्थ सारी युवशक्ति की रक्षा है।

यहा पर रजत को थोडा सन्देह हुआ। मन के निभृत कोने मे किसीने कहा—तो क्या वह फासी पर टग जाए तो देश के युवशक्ति की रक्षा नही होगी? क्या यह सत्य नही है कि इस क्षेत्र मे ऋण ही धन है और प्रलय ही सृष्टि है? यदि वह छूटकर आया तो उसके वैयक्तिक पथ-प्रदर्शन मे बहुत-से लोग अपने जीवन को धन्य कर सकेंगे, पर यदि वह शहीद हो गया तो युग-युगान्तर तक सैकडो पुश्तो के लोग उससे अनुप्रेरणा लेंगे और उसके त्याग की स्मृति को पाथेय बनाकर जीवन मे आने वाले झझावातो से लोहा लेंगे।

प्रिय वस्तु को होम देना ही यज्ञ है। फिर इस प्रकार लोग अदूरदर्शिता से क्यो चल रहे हैं?

स्वय मैं भी तो होमे जाने के लिए उद्यत हू। मेरे प्रेम ने मुझे भीरु या कापुरुष नही बनाया, बल्कि गतानुगतिक आचल की ओट मे सयत्न रक्षित प्रदीप की अवस्था से निकालकर जीवन के वात्याक्षुब्ध थपेडो के बीच रख दिया,।

आज जो वह जीवानन्द से मिला, यह तो क-ख-ग-मात्र था। जीवानन्द कोई खतरनाक व्यक्ति है। कौन जाने उसपर कुछ इनाम भी हो। ऐसे लोगो

से तो मिलना ही खतरनाक होता है।

मै यह तो नही कहता कि विपत्तियो से बचा रहू और प्रेमचन्द फासी पर चढे। नही, मैं भी देर-सबेर उसीके पगचिह्नो पर चलना चाहता हू। पर मौका तो मिले। तारा के इगित पर कोई भी त्याग ऐसा नही जो मैं न कर सकू।

जब रजत अपने प्रेम और उससे अनुप्रेरित होकर त्याग करने की बात सोचता था तो उसका मन आश्वस्त होता था। उसकी आत्मा एक अनिर्वचनीय आनन्द से दीप्त हो जाती थी, पर ज्यो ही उससे हटकर प्रेमचन्द की याद आती थी, त्यो ही मन क्षुब्ध होता था। इसमे सन्देह नही कि प्रेमचन्द आज युवशक्ति का प्रतीक माना जाता है, पर लोग उसके अन्तरग जीवन के बारे मे कितना जानते है?

अस्तव्यस्त जीवन, अस्तव्यस्त रहन-सहन और अस्तव्यस्त चिन्तन। हर वक्त लडकियो से घिरा रहना, देखने मे उनके प्रति उदासीन, पर जिस प्रयास से वह कपडे बदल-बदलकर आता था, रोज़ नये कपडे, सुन्दर से सुन्दर सिलाई, अच्छी से अच्छी महक वाली सिगरेट और समय-समय पर अजीब अल्हडपन के साथ पाइप पीनी, पैरो को फैलाकर खडे होना, अक्सर पैन्ट का एक बटन खुला हुआ होता था, अजीव बात है कि किसीने उसे कभी बताया नही, सब हसते थे, पर कोई बताता नही था, पाइप पीते हुए बाते करना, हर समय अन्यमनस्क रहने का ढकोसला करना, चाय मे केवल नाम के लिए पाच बूद दूध डालना और छठी बूद पडते ही ऐसे मुह बनाना जैसे कोई घोर अनर्थ हो गया हो, हर समय हाथ मे कोई मोटी-सी किताब लिए रहना, वह भी ऐसी जिनकी जिल्दे या तो बहुत सुन्दर हो या बिल्कुल उघडी हुई हो, और उन्हे देखकर यह धारणा बने कि पढते-पढते इनका सुहाग लुटा इस तरह लुटा है, हर समय क्रान्ति की बातें करना, फिर शौकी क्या अजीब थे कि चिडियो के पीछे-पीछे जगलो मे घूमना, रग-बिरगी विरल तितलियो का सग्रह करना, पर ऐसे मौको पर हमेशा मनपसन्द एक या दो तरुणिया साथ रखना, यह सब क्या है? क्या कुणाल जी ऐसा करते थे?

इन बातो से कोई श्रद्धा तो नही उत्पन्न होती, हा, नादान छोकरिया जरूर प्रभावित होती हैं। वे तो उसकी लौ के पास ऐसे दौडकर पहुचती थी, जैसे परवाने भी दीपक के पास क्या पहुंचेंगे?

और केवल तरुणिया थोडे ही, नवयुवक भी उसके इर्द-गिर्द मडराते थे। उतनी ही सख्या मे। पर रजत नही गया, इसलिए कि जिसलिए नवयुवक वहा पहुचते थे, उसका लोभ उसमे नही था। नवयुवक प्रेमचन्द के व्यक्तित्व से आकर्षित होकर थोडे ही जाते थे, वे तो उसके इर्द-गिर्द चलने वाली तरुणियो से प्रलुब्ध होकर पहुचते थे।

रजत यदि प्रेमचन्द को अपने कालेज के दिनो मे कुछ समझता था तो यही समझता था कि वह उसका प्रतिद्वन्द्वी है। पर एक सफलता के उच्चतम शिखर पर था और दूसरा केवल उसे जब-तब इतराते हुए देखकर झीकता था। वह तो चाहता था कि उससे कभी उसकी भेंट न हो, पर भाग्य का विपर्यय था कि अब फिर साबका पड रहा था और अजीब रूप मे........

रजत जल्दी से उठा। चाय पीने का समय हो रहा था, पर उसने मा से कह दिया कि एक जरूरी काम से वह बाहर जा रहा है और वह सीधे तारा के घर पर पहुच गया।

सौभाग्य से तारा घर ही मे थी। देखते ही मुस्कराकर बोली—धन्यवाद। आपने सही जगह खबर पहुचा दी थी। आप शायद उसकी रिपोर्ट देने आए हैं ?

रजत अपने ही विचारो मे वहा जा रहा था, कितना सुना, पता नही पर उसने यह देखा कि तारा ने मुस्कराकर उसका स्वागत किया था। इससे जो विचार वह लेकर आया था, उसे प्रोत्साहन मिला। वह एकाएक गम्भीर होकर बोला—क्या प्रेमचन्द जी को कल जेल से भगाने का कोई कार्यक्रम है ?

तारा का मुस्कराता हुआ चेहरा बुझ गया और वह कठिन पड गई, जैसे किसीने उसके चेहरे पर बिना कारण जोर से तमाचा मारा हो। वह स्वर मे अधिक से अधिक रुखाई घोलकर बोली—यह आप क्यो पूछते है ? क्या किसीने ऐसा कहा है ?

रजत समझ गया कि उसने बडी भारी गलती की है, ऐसी गलती जिसका प्रायश्चित्त शायद कभी सम्भव न हो। वह इतना तो क्रान्तिकारियो के सम्बन्ध में साहित्य पढकर ही जानता था कि कौतूहल उनमे कोई गुण नही माना जाता। वह पीला पड गया, क्योकि उसका उद्देश्य किसी भी प्रकार, से तारा को क्रोध दिलाना या मानसिक आघात पहुचाना नही था। उसके अविश्वास का पात्र वह

किसी भी हालत मे बनना नही चाहता था। उसने अपनी आखो के सामने अन्धकार देखा, निरन्ध्र अन्धकार। ऐसा मालूम हुआ कि वह बडी तेज़ी के साथ एक अतल गह्वर के अन्दर गिर रहा है, गिरता चला जा रहा है।

पर एकाएक जैसे बादलो के अन्दर बिजली चमकी। उसे एक राह की रेखा मिल गई। उसने डूबते हुए व्यक्ति की तरह तिनके को पकड लिया और अपने को कहते हुए पाया—मेरी बडी इच्छा है कि यदि कोई ऐसा कार्यक्रम है तो उसमे मुझे वह हिस्सा दीजिए, जो सबसे ज्यादा खतरनाक है।

उन शब्दो ने जादू की तरह असर किया और जादू यह हुआ कि उसने देखा, तारा पूर्णिमा के चाद की तरह मुस्करा रही है। सारी सृष्टि उसके साथ-साथ मुस्कराने लगी।

रजत आश्वस्त हुआ। थोडी देर तक उसने भी शीत से बुरी तरह पीडित व्यक्ति की तरह उस मुस्कराहट की आग को तापा, पर अगले ही क्षण सन्देह का काटा चुभने लगा। यह मुस्कराहट उसके लिए थी या कि प्रेमचन्द के लिए ? वह छूटकर आएगा, फिर पैर फैलाकर खडा होगा, पाइप पीते हुए अल्हडपन के साथ अग्रेज़ी लहजे मे हिन्दी बोलेगा, क्या यही चित्र तारा के मानस-पटल पर आ जाने से वह मुस्कराई थी ?

फिर उसके मन ने उसे मजबूर किया। बोला—यदि तुम्हारी अनुमति हो तो मैं छोटे मुह एक बडी बात करू ?

तारा यह समझी कि वह शायद प्रेम-निवेदन करना चाहता है। उसे कुछ निराशा हुई कि इतनी बडी-बडी घटनाए हो रही है, पर इस युवक को अपनी ही पडी है। साथ ही खुशी भी हुई, पर उसने इस खुशी को पास आने नही दिया। बोली—क्या ?

फिर अगले ही क्षण बोली—क्या वह बात इतनी ज़रूरी है कि आज ही कही जाए ?

—हा, बहुत ज़रूरी है। आज के बाद उसका मौका नही रहेगा।

—वह क्या बात है ?—तारा की आखो मे सम्भावनाए कोलाहल करने लगी।

रज़त फिर भी फौरन नही बोला। कुछ सोच-समझकर अन्तिम रूप से पानी मे उतरते हुए बोला—एक-एक करके चला जाए !

—हा ।

—व्यक्ति समष्टि से छोटा है, तुम तो इसे मानती ही होगी ?

—हा ।

—समष्टि के लिए व्यक्ति का बलिदान होना चाहिए ।

—हा ।

—हमे इसीलिए किसी भावुकता मे नही बहना चाहिए । हमें व्यक्ति को इतिहास-निर्माण की ईंट मात्र समझना चाहिए और जहा जरूरत हो उसे चुन देना चाहिए । देखना यह चाहिए कि कहा पर उसका उपयोग सबसे अधिक हो सकता है । निर्णय करने मे व्यक्तिगत रागद्वेष से परिचालित नही होना चाहिए । वस्तु जितनी प्रिय है, उसका बलिदान उतना ही बडा है ।··· ···

—हा ।

तारा यह समझी कि रजत इसी बात पर ज़ोर दे रहा है कि उसे जल्दी से जल्दी विपत्ति मे झोक दिया जाए । अब तक उसके चेहरे पर जो मुस्कराहट खेल रही थी, वह अत्यन्त पुनीत और दीप्त होने पर भी थी वह पार्थिव ही । पर अब वह दिव्य हो गई । सद्गृहस्थ के चूल्हे की आग जैसे एकाएक होमाग्नि मे परिणत हो गई । बोला—हा, ठीक तो है । आप चाहते क्या हैं ?

रजत ने तारा के प्रदीप्त चेहरे की ओर देखा और वह एक क्षण मे ही यह समझ गया कि वह कुछ गलत समझ रही है । उसके प्रस्ताव से शायद तारा को ठेस लगे । कहे या न कहे ? कहे ? नही, न कहे तो ही अच्छा है ।

इतने मे उसे फिर वही चित्र याद आ गया ·· पैर फाडकर खडे होना··· पैंट का एक बटन खुला होना · बोला—इस समय श्री प्रेमचन्द भारत की युव-शक्ति के प्रतीक हैं । वह एक तरफ ब्रिटिश साम्राज्यवाद जैसी खूंख्वार सस्था से लोहा ले रहे हैं, तो दूसरी तरफ नारी जाति के सम्मान के लिए भी अपना सर्वस्व अर्पित करने के लिए तैयार हैं । अब प्रश्न यह है··· —कहकर वह सहसा रुक गया जैसे अगली चढाई पर चढ़ने के लिए फेफड़े को आक्सीजन से भर रहा हो ।

तारा समझ गई कि कोई विशेष बात आ रही है, पर जिस ढर्रे पर वह सोच रही थी, उसमे उसे यही सूझा कि रजत अब यही कहेगा कि प्रेमचन्द की जगह मेरी कुर्बानी की जाए । देवी की भूख भी मिटे और देश को लाभ भी हो।

बोली—हा, आगे चलिए।

—प्रश्न यह है कि देश को किस बात से लाभ है। जीवित रहकर रास्ता बताने वाले प्रेमचन्द से या फासी पर चढे हुए प्रेमचन्द से जो युग-युगान्तर तक प्रेरणा देता रहे···

उसने एकाएक अपनी वाक्यधारा पर ब्रेक लगा दिया क्योकि उसने देखा कि तारा के चेहरे पर लगभग कोई रासायनिक परिवर्तन हो गया और उसका सारा अस्तित्व जैसे कुचन-प्रसारण की अनवरत प्रक्रिया मे विक्षिप्त हो गया। उसने भर्राई आवाज़ मे कहा—क्या मतलब ?

दो ही शब्द थे पर उसमे चुनौती के साथ-साथ सारे ससार का कटु से कटु, कठोर से कठोर तिरस्कार था। जैसे खाज और घाव से नुचे-नुचे-से किसी कुत्ते ने एकाएक देवता के नैवेद्य पर मुह मार दिया हो। तारा की उस दृष्टि मे जैसे करोडो गन्दी गालियो का निर्यास समाया हुआ हो। वह बोली—क्या म-त-ल-ब? अभी तो आप कुछ और कह रहे थे, अभी कुछ और कह रहे हैं !

रजत को अब 'तुम' कहने का साहस नही हुआ। घिघियाकर बोला—आप लोग इसपर ठण्डे दिमाग से विचार कीजिए। बात बडी भोडी लगती है, पर बृहत्तर स्वार्थ देखना चाहिए।

इसपर तारा उठ खडी हुई। वह थर-थर काप रही थी। बोली—आप सिद्धात की आड मे अपनी ईर्ष्या को छिपाना चाहते है। आपको यह बुरा लगता है कि देश के सैकडो युवक और युवतिया उनपर मर मिटने को तैयार है। और आपको इतना साहस है कि मेरे ही सामने, जिसके कारण वह मृत्यु के द्वार पर खडे हैं, ऐसी बाते कह गए !—कहकर वह सिसकने लगी।

उधर से एलोकेशी और प्रदीप आ गए। उन्हे देखकर तारा हिचकियां भरने लगी, बोली—मा, इस आदमी से कहो कि यह यहा से निकल जाए। इसे इतनी हिम्मत कि कहता है कि प्रेमचन्द जी को फ़ासी लगना ही देश के लिए कल्याणकारक है। ऐसा कहते हुए इसका मुह झुलस नही गया, जीभ गल नही गई····

एलोकेशी समझ नही पाई कि किस बात पर इतना कुहराम मच गया। उसने फिर भी उसे चुप कराने का प्रयत्न किया, पर तारा उन्मादग्रस्त व्यक्ति की तरह थर-थर कांप रही थी। उसके मुह से झाग-सा निकल रहा था, नमें

तन गई थी।

रजत ने जो यह परिस्थिति देखी तो उसे काठ मार गया। वह भी तारा के साथ ही खडा हो गया था, समझ नही पा रहा था कि क्या करे ? यो तो कोई ऐसी बात नही थी जो वह करने के लिए तैयार न हो, वह तो तारा के पैरो पर गिरकर उससे क्षमा मांगने के लिए और उसके पथ-प्रदर्शन मे सारी ज़िन्दगी चलने का वादा करने के लिए तैयार था, पर उसकी मा आ गई थी।

प्रदीप रजत को ऐसे घूर रहा था, जैसे मारने के लिए पिल पडना ही चाहता हो।

रजत न तो कुछ कर सका न कुछ कह सका। मन्दिर मे अनधिकार प्रवेश के लिए पकडे गए भिखमगे कोढी की तरह वह चुपके से निकल गया। उसकी आखो मे केवल आश्चर्य था, महान आश्चर्य।

## ४९

चित्रकूटी के भागने के बाद प्रेमचन्द जिस स्थान मे लाकर बन्द किया गया था, वह पता नही क्यो कैदियो मे आदि काल से कुत्ताघर नाम से मशहूर था। बैरक क्या वह एक बडी-सी कोठरी थी जिसमे साथ ही पाखाना आदि बना हुआ था, पाखाना नही खुड्डी। यानी भगी को भीतर आने की ज़रूरत नही पडती थी, वह बाहर से ही सफाई कर सकता था। इस कोठरी से चारो तरफ मुश्किल से पाच-पाच फुट ज़मीन थी और बाद को ऊची और काफी मोटी दीवार थी। ऊंची इतनी कि जेल को जो सबसे बाहरी दीवार होती है, उससे कुछ ही कम।

पुरानी इमारत होने पर भी बराबर उसपर पोताई आदि होती जाती थी, इसलिए यह गिरी नही थी, नही तो कब का खंडहर हो जाता। एक छोटा-सा लोहे का ठोस दरवाज़ा था, जिसमे कही कोई सास नही थी। यह बाहर से बन्द होता था और एक जमादार पहरे पर रहता था।

बहुत दिनो से कुत्ता घर मे कोई कैदी रखा नही गया था। जेलर ने इसे

सीताफल और प्याज का गोदाम बना रखा था, पर घण्टे भर के अन्दर यह साफ किया गया था और प्रेमचन्द को लाकर इसमे रखा गया था।

अब तक प्रेमचन्द को बराबर किसी न किसी रूप मे एक न एक कैदी मिला हुआ था जो उसके हाते मे झाड़ू लगाता था या उसका खाना पकाता था, पर उस दिन से उसके साथ किसी कैदी का सम्बन्ध नही रखा गया, फिर भी खाना तो बनाना ही था और सफाई भी होनी ही थी, सो इसके लिए सिम्पसन ने बहुत सोचने के बाद यह तरीका निकाला कि एक कर्मचारी पूछ जाता था कि आज क्या खाना चाहते है, और उसीके अनुसार खाना बनवा दिया जाता था। सफाई के लिए यह व्यवस्था हुई कि जब भी भंगी या सफैया जाए, दिन मे तीन दफे तो जाना ही था, तब-तब चीफ हेड वार्डर साथ मे जाए और यह कैदी प्रेमचन्द से बात न कर पाए।

यो प्रेमचन्द इन आदेशो को अपने अधिकारो का हनन मानता था और कदाचित लड भी जाता पर सारी सुविधाए होते हुए भी बाहर जाने से इन्कार करने के बाद उसके मन के तार इतने अपार्थिव सुर मे बध गए थे कि वह इन छोटी-छोटी बातो के प्रति उदासीन हो चुका था। यो वह बहुत अस्तव्यस्त स्वभाव का जीव था, हमेशा से ऐसा ही था, पर दो मामलो मे वह कभी अस्त-व्यस्तता या सिलबिलापन पसन्द नही करता था। एक तो जिन पुस्तको को वह पढ़ने के लिए चुनता था, उन्हे बहुत सोच-समझकर तब ग्रहण करता था। दूसरे वह पेटू तो नही, पर उच्चकोटि का भोजन-रसिक था।

वह किसी भी प्रकार घटिया या बुरी तरह, जिस किसी तरह पकाया हुआ भोजन पसन्द नही करता था। पकाने से भी वह ड्योढा महत्व परोसने को देता था। इसीलिए वह कभी दूसरो के यहा खाता नही था। अपने यहा भी अक्सर वह बिना खाए ही रहता था क्योकि कही न कही उसकी खामख्याली पूरी होने से रह जाती और वह अपने नौकरो को भला-बुरा कहकर मेज़ से उठ खडा होता।

फिर भूख लगती तो एकाध बिस्कुट और चाय पी लेता। यहा तक कि उसका नौकर अपने साथियो से कहा करता था कि—मैं तो सिर्फ गालिया खाने का पैसा पाता हू। पकाने की नौबत तो कभी-कभार आती है।

हां, जिस दिन वह बिल्कुल ही अभुक्त चल देता था, उस दिन सिगरेट का

डिब्बा खत्म कर देता था।

शायद अर्चना ने भोजन सम्बन्धी उसकी अद्भुत रुचि का पता पाकर ही उसे अपने वश मे कर लिया था।

जो कुछ भी हो, उसने भोजन सम्बन्धी नई व्यवस्था को जिस उदासीनता से मान लिया उससे जेल-कर्मचारियो को भी आश्चर्य हुआ क्योकि वे लोग भी जान गए थे कि यह कैदी भोजन को बहुत महत्व देता है। उन्हे यह भी पता था कि चित्रकूटी तो नाम के लिए रसोइया है, असल मे तो वह स्वयं ही खाना पकाता है।

प्रेमचन्द अब जैसे दूसरा ही आदमी हो गया था। जब से जेल मे उसे सिगरेट पीने की आज्ञा मिली थी, तब से प्रतिदिन वह पचास का एक टिन पी जाता था। इसमे से दो-चार ही कैदियो में बाटता था, बाकी स्वय फूंक डालता था।

पर इस नये स्थान मे आकर उसने पहले दिन तो पहले की तरह काफी सिगरेट पी, पर जब उसे पता चला कि उसके कारण जेल के राजनैतिक कैदियो मे बेचैनी है और उन लोगो ने बैरक-बन्दी का विरोध शुरू कर दिया है, तो सिगरेटो से भी उसका मन हट गया।

भोजन के सम्बन्ध मे उसने जो उदासीनता दिखाई साथ ही सिगरेटो के सम्बन्ध मे भी उसने जो लापरवाही बरती उसकी खबर एक तरफ अफसरो को गई और दूसरी तरफ साधारण कैदियो मे फैली। कुत्ताघर के अन्दर क्या हो रहा है, इसकी कोई खबर बाहर किसीको तो मिलती नही थी, पर जब यह मालूम हुआ कि प्रेमचन्द ने सिगरेट का डिब्बा लौटा दिया, तो उसका अर्थ कैदियों ने यही लगाया कि उनकी सिगरेट बन्द कर दी गई। केवल यही नहीं, साथ मे यह भी फैला कि कुत्ताघर मे बडा अत्याचार होता है। जिस प्रकार कि प्रेमचन्द को सारी दुनिया से, यहा तक कि जेल से काट दिया गया था, जिस प्रकार जाच के नाम पर उनकी मिलाई आदि रोक दी गई थी, वही अत्याचार के रूप मे काफी था। पर कैदियो ने नमक-मिर्च इसलिए मिलाया कि कुत्ताघर मे कुछ कुत्तापन तो होना ही चाहिए।

जेल के अधिकारी प्रेमचन्द से पुस्तकें भी छीन लेना चाहते थे क्योकि उन्हे सन्देह था कि जंगला काटने की आरी किसी पुस्तक की जिल्द में ही बाहर से

आई है, पर जमादार रामगुलाम ने तथा अन्य जो लोग उसकी प्रकृति से थोडा परिचित हो चुके थे, उन्होने इसके विरुद्ध सलाह दी । नतीजा यह हुआ कि पुस्तके बच गईं, पर आगे से जो पुस्तके बाहर से आने लगी, उनकी विशेष छानबीन की जाने लगी। इसका प्रेमचन्द को कुछ पता नही चला । पर कैदियो को इस सम्बन्ध मे पता था क्योकि इधर दो-एक कडी जिल्द वाली पुस्तको की जिल्द काटी गई थी और जेल के जिल्दसाज ने फिर उनपर पुरानी जिल्द चढा दी थी, यह बात भी कैदियो मे फैली थी ।

जब राजनैतिक कैदियो ने आदोलन किया तो प्रेमचन्द को पहले ही दिन उसका पता मिल गया । कुत्ताघर बन्द होने के बाद वह खडा था कि उसने सुना कि राजनैतिक कैदियो के हाते की तरफ बडे ज़ोर से जयकारा लग रहा है । यह मामूली जयकारा नही था । लोग चिल्ला-चिल्लाकर कुछ कह भी रहे थे । कोई भारी गड़बड थी। सध्या की अन्तिम किरणे अभी पश्चिम के आकाश मे झिलमिला रही थी (हाय, पश्चिम क्या, किसी तरफ का क्षितिज इस जगह से दिखाई नही देता था ।), चिडिया अभी चहचहाकर चुप नही हुई थी, बल्कि चुप होकर, ऐसा मालूम होता था कि अन्तिम बार के लिए चुप होकर फिर से सहगान करने के लिए तैयार हो रही थी ।

अन्त मे अन्धकार का लबादा सारी प्रकृति पर बिछ गया । चिडिया चुप हो गई और अब तो स्पष्ट सुनाई पड़ रहा था कि राजनैतिक कैदी अन्य जय-कारो के साथ उसकी भी जय बोल रहे थे ।

एक क्षण बल्कि एक क्षण के हज़ारवे अश के लिए प्रेमचन्द को जैसे भविष्य, दूर भविष्य की झलक मिल गई, वह न होगा, पर

**शहीदो की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले ।**
**वतन पर मरने वालो का यही बाकी निशां होगा ।।**

उस मेले मे उसने बहुत-से परिचित लोगो की, तरुण और तरुणियो की, सर्वोपरि अर्चना की डबडबाई हुई झलक देखी । बाहर न जाने से और अपने एवज मे चित्रकूटी को भेज देने से अर्चना के कोमल मन को कितनी गहरी ठेस पहुची होगी । वह तिलमिला गई होगी । कोई ताज्जुब नही जो वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ी हो ।

पर अर्चना की मूर्च्छा के चित्र से प्रेमचन्द को कोई विशेष कष्ट नही हुआ

उसे तो और बहुत-से कष्ट झेलने है। अभी तो उस दिन का कष्ट झेलना है जिस दिन वह दुनिया को अलविदा कहेगा। थोडा मुहावरा पडना अच्छा है। कुछ भी हो, वह क्या कर सकता है ?

उधर से फिर जयकारा हुआ और उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे मार पड रही हो। उसने कान खडे किए तो फिर जयकारा लगता हुआ और मार पड़ती हुई जान पडी। वह कुछ कर नही सकता था। क्या उसने बाहर न जाकर गलती की ? बाहर जाकर इस अत्याचार का कुछ तो जवाब दे सकता था।

पर नही।

वह तो दूसरे ही कारण से बाहर नही गया। अत्याचार के जवाब मे वैय-क्तिक आतकवाद और उधर से फिर आतकवाद, यह कब तक चलता। इस सिलसिले को तो कही तोडना ही था। वैयक्तिक आतकवाद नहीं चाहिए, चाहिए क्रान्ति। सामूहिक रूप से आतकवाद का जवाब देना, जवाब देने के उद्देश्य से नही, बल्कि शत्रुपक्ष को समाप्त करके अपना अधिकार स्थापित करने के उद्देश्य से।

इस दृष्टि से प्रेमचन्द ने जो कुछ किया वह उसे सही लग रहा था, न जाने क्यो आज प्रेमचन्द को इस वास्तविक रूप से एकान्त कोठरी मे खडे होकर सध्या समय ग्रीक दार्शनिको की याद आ रही थी।··

सबसे पहले तो आर्किमिडीज़ की याद आई, जिसने यह कहा था कि मुझे खडे होने भर की जगह मिल जाए तो मैं एक डडे से पृथ्वी को अक्षच्युत कर सकता हू।

खडे होने भर की यह जगह तैयार करने के लिए ही तो उसे स्वेच्छामृत्यु, हा, अब फासी पर चढने को स्वेच्छामृत्यु ही कहना पडेगा, स्वीकार करनी पड़ रही है। फासी का तख्ता वह स्थान है, वह एकमात्र स्थान है जहा खडे होकर वह बिना किसी भय के अपने पूरे विचार कह सकता है। यदि वह उससे हट-कर उन्ही विचारो को सामने रखे तो पागल, दुश्चरित्र, कायर न जाने क्या-क्या समझा जाए।

वह हसा कि मानवजाति भी कैसी अद्भुत है कि साच कहे तो मारन धावे, झूठ कहे पतियाय। जो बाते उसने अपने अन्तिम पत्र मे लिखी हैं, यदि वह उस दिन दीवार फादकर बाहर जाकर कहता तो सबसे पहले अर्चना ही उसकी

नरेटी दबाने के लिए तैयार हो जाती ।

फिर भी वे बाते उतनी ही सत्य होती ।

सत्य क्या है ?

कोई बात सत्य क्यो समझी जाती है ? जब लोग किसी विशेष दिशा मे चलने लगते हैं तो वही बात सत्य हो जाती है, कम से कम उस समय के लिए। निरवच्छिन्न सत्य कुछ है कि नही, कौन जाने । सामयिक सत्य तो होते है ।

कोई सत्य दस वर्ष के लिए होता है, तो कोई सौ वर्ष के लिए, कोई हज़ार वर्ष के लिए । जब वन्देमातरम् कहने पर मार पड़ती थी, कोई भी शिक्षित आदमी औपनिवेशिक स्वराज्य के आगे सोचने की हिम्मत नही करता था (वाह रे शिक्षा), तब चाफेकर, खुदीराम, धीगरा आदि की जरूरत थी, पर अब जब कि जन-आन्दोलन कुछ विकसित हो चुका है, और सौभाग्य से जन-आन्दोलन जिस रूप मे हर देश मे विकसित होता है, उसी रूप मे यहा भी विकसित हो रहा है, तो आतकवाद का तत्व त्यागकर ही क्रान्ति आगे बढ सकती है ।

फिर से एक बार जयकारा सुनाई पडा, पहले से कही स्पष्ट । रात की ऐसी ही महिमा है कि उसे जो भी छेड देता है, गूज अधिक होती है, थोडी-सी आवाज़ भी कोलाहल बनकर सुनाई पडती है ।

पर यह थोडी-सी आवाज़ तो नही है । जन-विद्रोह है । इस प्रयाग मे आकर क्रान्तिकारी धारा और महात्मा गाधी की चलाई हुई जन-आन्दोलन की धारा मिल जाती है ।

प्रेमचन्द इसी प्रकार कभी अपने ऊपर सोचता, कभी उसके विचार दूर तक प्रसारित हो जाते । इतनी दूर कि उसका ओर-छोर नही रहता । उसके मन मे एकाएक अज्ञात कवि की वह पक्ति आई :

> "Socrates—
> Who, firmly good in a corrupted state,
> Against the rage of tyrants single stood
> Invincible".

सुकरात, ओह ! उसने अपने हाथ से ज़हर का प्याला पिया था । इसलिए पिया था कि वह जो कुछ समझाना चाहता था, वह बन्दीगृह से भागकर पूरा नही होता था । उसके मित्र क्रीटो ने आकर उससे कहा था कि बन्धु चलो,

जहर का प्याला पीने मे क्या धरा है ?

तब सुकरात ने कहा था—इस तरह सोचो, समझो कि मैं भागने के लिए तैयार खडा हू और उस समय कानून और सरकार मुझसे आकर पूछ बैठते हैं—सुकरात, क्या तुम इस प्रकार हम लोगो की जड नही काट रहे हो ? क्या तुम समझते हो कि कोई भी ऐसा राज्य जी सकता है जिसके निर्णयो में कोई शक्ति नही होती और व्यक्ति उन निर्णयो को दूर फेक देते हैं और उन्हे कुचल देते हैं ? बन्धु क्रीटो, यह तो कहो कि हम इन बातो का क्या जवाब देंगे ? क्या हम यह जवाब देंगे—बेशक ! पर राष्ट्र ने हम लोगो को आघात पहुचाया है और अन्याय-पूर्वक सज़ा दी है !

प्रेमचन्द के मानस पर सुकरात का बहुत असर था। वह जानता था कि कुछ लोग सुकरात को इतिहास का प्रथम सत्याग्रही मानते हैं, पर सकीर्ण अर्थ मे नही, सकीर्ण अर्थ मे इसका कोई अर्थ नही होता। वह सत्याग्रही थे तो क्रान्तिकारी भी थे।

क्रान्तिकारी की जो सबसे बडी विशेषता है, वह उनमे थी। क्रान्तिकारी कानून तोडने वाला भी होता है। पर वह साथ ही सबसे बढकर कानून को मानने वाला होता है। वह तो एक व्यवस्था को समाप्त कर दूसरी व्यवस्था चाहता है। वह अव्यवस्था नही चाहता। इसलिए आधारभूत रूप से वह उन लोगों से अलग नही है, जिनकी व्यवस्था वह इस समय तोडने, ध्वस करने, चकनाचूर करने मे लगा हुआ है।

यदि यह पूछा जाए कि वह अपने निर्यातको के अधिक पास है या अव्य-वस्था के उपासको के, तो यह कहना पडेगा कि वह निर्यातको के अधिक पास है। वह अपने निर्यातको के आधार को अस्वीकार तो नही करता।

वह केवल आधार मे परिवर्तन चाहता है, उसका झगडा प्रकार-भेद का है न कि सम्पूर्ण विनाश का।

तभी तो सुकरात एक तरफ कानून तोडने वाले थे, दूसरी तरफ उन्होंने कानून तोडने से इन्कार किया। अव्यवस्था और कानून के सिद्धान्त उन्हे इतने प्यारे थे कि उन्होने उसके लिए अपने प्राण दे दिए।

सुकरात के वे ज्वलन्त शब्द वातावरण के सारे अन्धकार को जैसे चीरते हुए प्रेमचन्द को दृष्टिगोचर हो रहे थे।

सुकरात ने अन्तिम रूप से कहा था—प्रिय क्रीटो, यही वह आवाज है, जिसे मैं अपने कानो मे उसी प्रकार से सुनता रहा हूं, जैसे रहस्यवादी बासुरी सुनते हैं। मैं जानता हू कि तुम जो कुछ भी कहोगे, उसका मुझपर कोई असर नही पडेगा। इसलिए मुझे ईश्वर की इच्छा को पूर्ण करने के लिए और उसके बताए हुए मार्ग का अनुसरण करने के लिए छोड दो।

अवश्य सुकरात की स्थिति कुछ अशो मे उससे भिन्न थी, पर बहुत भिन्न नही थी। सुकरात को मृत्यु से कोई प्रेम नही था। वे जीवन से त्रस्त या भयभीत नही थे। वे निराशावादी नही थे, फिर भी अपने सिद्धान्तो को बल पहुचाने के लिए उन्हे ज़हर का प्याला पीना पडा। उन्होने इच्छामृत्यु का आलिगन किया।

प्रेमचन्द भी वही कर रहा है। इस अर्थ मे वह अपने युग के क्रान्तिकारी शहीदों से कुछ भिन्न है। वह सुकरात की श्रेणी मे आता है। फिर भी उसने मन ही मन कविता की उन पंक्तियो की आवृत्ति की और उनसे उसे बल मिला।

जयकारा फिर सुनाई पडा। अबकी बार और भी स्पष्ट। उसे अपना नाम स्पष्ट सुनाई पडा। उसे यह सोचकर हसी आई कि ये लोग तो कुछ और ही सोच रहे है। काश ये लोग जानते कि उसने किस प्रकार क्रीटो के आह्वान को अस्वीकार कर जहर का प्याला पीने का निश्चय किया है। क्रीटो नही, अर्चना।

वह मन ही मन कल्पना कर सकता था कि क्रीटो की शकल कैसी होगी। यदि यह भी मान लिया जाए कि क्रीटो अपने मित्र सुकरात की तरह ही सुन्दर होगा, तो भी वह अर्चना के मुकाबले मे क्या होगा ? कुछ भी नही। इस तुलना पर स्वय हसी आई, पर साथ ही उसने और भी ज़ोर के साथ यह अनुभव किया कि यो तो सुकरात उसके पूज्य है, पर उनके ज़हर का प्याला किसी प्रकार कम कडवा नही है।

वह हहराकर हसा, जैसे सारी मानव जाति पर ही हस रहा हो। हसने का कारण तो बहुत बडा था। ग्रीक बहुत सभ्य समझे जाते है। पर वहा महापुरुषो के साथ क्या हुआ ? अरस्तू को एथेस छोडकर भागना पडा। वह अरस्तू जो बाद को चलकर एक हज़ार वर्ष तक सारे यूरोपीय विज्ञान के पितामह ही नही, कालपुरुष समझे जाते रहे। बेचारे अरस्तू को सभ्यो की महानगरी एथेस छोडकर मेसेडोनिया मे आश्रय लेना पडा, जो उन दिनो एक असभ्य इलाका

समझा जाता था।

प्रोटागोरस को भागना पडा और प्रचलित देवताओ के विरुद्ध उसने जो पुस्तके लिखी थी, वे जला दी गई। एनक्सागोरस को गिरफ्तार किया गया, पर वह किसी तरह भाग निकले। डायोजिनस पर देवताओ के विरोधी होने का अभियोग लगाया गया, और यही दशा थेलिस, डेमोक्रेटस आदि महापुरुषो की हुई।

यह परिपाटी बहुत पुरानी है। उसे कोई अफसोस नही है कि वह इसी परिपाटी के अनुसार अकाल मृत्यु प्राप्त करने जा रहा है।

पर एक हूक तो उठती ही थी।

अ—र्च—ना!

एक पलडे पर अर्चना को रखा जाए और दूसरे पर सारे ग्रीक दार्शनिक, और कपिल, कणाद, बुद्ध, महावीर को रखा जाए तो कौन भारी निकलेगा?

वह या वे?

किसी भी तरह वह अर्चना की चिन्ता से मुक्त न हो सका। उसका असली जहर का प्याला तो फासी का फन्दा नही, अर्चना की याद थी। वह लोगो से ज़ोरो के साथ कहा करता था कि पुराने क्रान्तिकारी बडे गलत तरीके से सोचते थे, वह दिखा देगा कि यूरोप मे तो क्रान्तिकारी स्त्रियो से दूर नही रहते थे। यहा के भी क्रान्तिकारी वैसा ही कर सकते है। पर आज उसे मालूम हो रहा था कि यदि उसके जीवन मे वह विद्युत की लपट 'फैन्टम आफ डिलाइट' अर्चना नही देती तो आज वह एक योगी की तरह आसन लगाकर मज़े में तत्व-चिन्तन कर सकता था।

तब यह हूक तो नही उठती जिसके कारण उसका अस्तित्व काटे की सेज या शरशय्या हो रहा है।

अच्छा अब शरशय्या का अर्थ समझ में आया। असली शरशय्या तो वही है कि बार-बार शरीर और मन छिद रहा हो, एक-एक पल युग बन रहा हो।

उसने बलपूर्वक अपने मन को दूसरी बातो मे उलझाना चाहा। सुकरात बडा भाग्यवान था कि उसका मित्र क्रीटो एक पुरुष था और इस प्रकार की किसी कमज़ोरी की गुजाइश नही थी। कोई पीछे से उस महापुरुष की टाग पकडकर जीवन की तरफ तो नही खीच रहा था। वहा तो केवल विशुद्ध

निरवच्छिन्न तत्व-चिन्तन था। कोई और भटकाने-बहकाने वाली बात नही।

यदि अर्चना न होती?

हाय, इससे भी कुछ तसल्ली नही हो रही है। इसके लिए तो उसका स्वभाव ही दोषी है, कहना चाहिए। अर्चना न होती, कोई और होती। दिल तो कही न कही उलझता।

तो अर्चना केवल एक न्युक्लस है, जिसके इर्द-गिर्द उसके मन की कोमल अनुभूतिया एकत्र हो गई है। वह न्युक्लस न होता तो और कोई न्युक्लस होता।

रात धीरे-धीरे गहरी होने लगी। बीच-बीच मे जयकारा सुनाई पड रहा था। पर वह भी सध्या समय चहकती हुई चिडियो की चहचहाहट की तरह धीरे-धीरे विलीन हो गया। केवल बीच-बीच मे रात्रि के अन्धकार की लहरो मे विक्षेप करती हुई नम्बरदारो की रिपोर्ट सुनाई पड रही थी—ताला, जगला, लालटेन सब ठीक है हजूर! ·· इतने कैदी ··अमुक नम्बर।

—हा, सब ठीक है।

राज्यशक्ति के हाथो मे यही तीन तो उपकरण है, बडे लम्बे-चौडे जटिल, ताला, जगला और लालटेन। उनका ठीक रहना बहुत ज़रूरी है। आई० सी० एस० से लेकर पहरेदार तक, सब इन्ही तालो, जगलो और लालटेनो को ठीक रखने मे व्यस्त हैं। इस सेवा के फलस्वरूप उन्हे आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत करने की बल्कि ज़िन्दगी के मजे लूटने की सुविधा दी जाती है।

इसी प्रकार प्रेमचन्द खडे-खडे देर तक सोचता रहा, पर जैसे गाय कही भी चरे उसका ध्यान बछडे की तरफ रहता है, उसी प्रकार से वह चाहे जितनी उडाने भरता, चाहे ग्रीस मे पहुचता चाहे रोम मे, दो हज़ार वर्ष पहले के भारत मे पहुंचता, चाहे आधुनिक काल मे आता, उसका ध्यान अर्चना पर लौटकर ज़रूर उलझ जाता।

जब टन्-टन् करके दो बज गए, तब भी वह बिस्तरे पर पडा-पडा अपने विचारो, स्मृतियों और दिवास्वप्नो से जूझ रहा था।

निद्रादेवी तो एक देवी होने के नाते तभी अभिसार करती जब एकान्त होता, पर वहां तो प्रेमचन्द के मन मे दर्शनो, गुत्थियो और विचारो की रेल-पेल थी। यहा तक कि जब प्रातःकाल की ठण्डी हवा ने उन सबको हटाना चाहा, तब भी वे नही हटे और उसने बाल सूर्य की सकुचाती-सी किरणो का

स्वागत थकी हुई आखो से किया।

यद्यपि यह सूर्योदय का समय था, पर आख लगते ही उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे सूर्यास्त का समय हो रहा है। जो घटना उसने कभी प्राचीन ग्रीक पुस्तको मे पढ रखी थी, वह उसे प्रत्यक्ष दिखाई देने लगी

क्रीटो ने सुकरात से पूछा—हम आपको किस प्रकार से समाधिस्थ करें?

इसपर सुकरात ने अपनी स्वभावसिद्ध मुस्कराहट के साथ कहा—जैसे भी तुम चाहो। पर एक बात है, तुम हमे अच्छी तरह पकडे रहना। कही ऐसा न हो मैं नौ-दो ग्यारह हो जाऊ।

इसके बाद सुकरात एकत्र साथियो की ओर मुडे और मुस्कराकर बोले —मैं क्रीटो को यह विश्वास नही करा सकता कि मैं वही सुकरात हूं, जो इस समय तक बातचीत और तर्क-वितर्क कर रहा हू। वे समझते हैं कि मैं वह दूसरा सुकरात हू जिसे वह जल्दी ही एक लाश के रूप मे देखेंगे, तभी तो वे पूछ रहे है कि हम आपको कैसे समाधिस्थ करेगे? और यद्यपि मैंने यह बताने का प्रयास किया है कि ज़हर का प्याला पीकर जब मैं तुम्हे छोडकर जाऊगा तो मैं परमलोक मे पहुंचूगा। पर अब मैं देख रहा हू कि मेरे इन शब्दो का, जिनके द्वारा मैं तुम लोगो का और शायद अपना ढाढ़स बधा रहा हू, क्रीटो पर कोई असर नही हुआ। इसलिए अब मैं चाहता हू कि मेरे लिए तुम लोग उनके सामने जमानतदार हो जाओ क्योकि मुकदमे मे तो वह जजो के सामने मेरे लिए जमानतदार थे, पर वह जमानत दूसरी किस्म की थी, उसमे यह आश्वासन दिया गया था कि मैं हाजिर होऊगा, पर इसमे यह आश्वासन होगा कि मैं नही होऊगा। इससे मेरी मृत्यु पर क्रीटो को उतना कष्ट नही होगा और जब मेरे शरीर को वे जलते हुए या गडते हुए देखेंगे तब भी उन्हे कष्ट नही होगा। मैं यह नही चाहता कि मेरे कष्टकर भाग्य पर या मेरे समाधि दिए जाने के समय उन्हे यातना हो, इसलिए मेरे प्यारे क्रीटो, तुम यह सोचना कि तुम केवल मेरे शरीर को गाड रहे हो और जो-जो अनुष्ठान उस मौके पर उचित हो, उन्हे करते जाना और कोई परवाह मत करना।

प्रेमचन्द ने देखा कि सुकरात उठे और नहाने के कमरे मे गुसल करने चले गए। क्रीटो उनके पीछे-पीछे गए। बाकी सब लोग वही बैठे रहे। जो लोग बैठे रहे, वे आपस मे विचार करते रहे कि कौन-सा ऐसा विषय छेडा जाए जिससे

समय का सबसे अधिक सदुपयोग हो, साथ ही वे अपने ऊपर पडे हुए दु.ख की भी बात करते रहे। बैठे हुए लोगो की भाव-भगिमा ऐसी थी कि ,लगता था कि पितृवियोग आसन्न है और किसी तरह वे अपने को परीक्षा की उस घडी के लिए तैयार कर रहे है।

प्रेमचन्द की आखे सुकरात को देखने के लिए बावली हो रही थी। यदि उसका बस चलता तो वह सुकरात को ही देखता रहता। सुकरात गुसल करके बाहर आए। इसके बाद उनके बच्चे लाए गए (जिनमे से दो छोटे बच्चे थे और एक बडा) साथ ही उनके परिवार की स्त्रिया भी आईं। सुकरात ने निर्लिप्त रूप से क्रीटो के सामने बातचीत की फिर उन्हे जाने के लिए कहकर स्वय शिष्य-मडली मे लौट आए।

प्रेमचन्द ने देखा कि कुत्ताघर की दीवारो के ऊपर से होकर सूर्य की अतिम किरणे पड रही है। सुकरात ने गुसल मे काफी समय लिया था। जब वह गुसल करके शिष्य-मडली मे बैठे तो प्रेमचन्द ने देखा कि वह भी उनमे बैठा हुआ है। उसके रोंगटे खडे हो गए। अजीब बात है कि बाकी सब लोग ग्रीक परिच्छद मे थे, पर प्रेमचन्द कमीज़ और पैन्ट मे था। इसपर प्रेमचन्द को लज्जा मालूम हो रही थी। पर उसने देखा कि सुकरात ने सदय दृष्टि से उसकी ओर देखा। इससे वह आश्वस्त हुआ।

फिर जेलर आया। प्रेमचन्द को आश्चर्य हुआ कि इस जेलर का चेहरा जाने किस अधिकारी से मिलता है, पर अधिक सोचने का समय नही था क्योंकि प्रेमचन्द जेलर की प्रत्येक बात सुनना चाहता था।

जेलर जाकर सुकरात के पास खडा हो गया, बोला—सुकरात महोदय, मैं जानता हू कि यहां अब तक जो लोग आए हैं, उनमे आप सबसे उदार हृदय, सबसे कोमल प्रकृति और सर्वश्रेष्ठ हैं। दूसरे लोग मुझे देखकर आग-बबूला हो जाते हैं और गालिया देने लगते है। यद्यपि मेरा दोष केवल इतना ही होता है कि मैं शासन की आज्ञा से उन्हे ज़हर का प्याला पीने को कहता हू, पर मुझे पूरा भरोसा है कि आप मुझपर क्रोध नही करेंगे क्योकि आप जानते है कि मेरा कुछ दोष नही है, दूसरो का दोष है। आसन्न को आप आसानी से सहने का प्रयास करे—कहकर जेलर जैसे कुछ रुक गया। फिर बोला—आप जानते है कि मेरे आने का उद्देश्य क्या है······

इतना कहकर जेलर एकाएक सिसकने लगा। उसने मु ह फेर लिया और बाहर चला गया।

शिष्य-मडली भी रो रही थी और प्रेमचन्द ने देखा कि वह स्वय भी रो रहा है।

सुकरात ने जेलर की तरफ देखा और कहा—मैं तुम्हारे प्रति शुभेच्छाए व्यक्त करता हू और जैसा भी तुम कहोगे, वैसा करूगा।

इसके बाद सुकरात शिष्य-मडली की ओर, और प्रेमचन्द को मालूम हुआ विशेषकर उसकी ओर, देखते हुए बोले—यह आदमी कितना भला है। जब से मैं जेल मे आया हू, तब से यह बराबर मेरी देख-भाल करता है, कभी-कभी यह मुझसे बातें भी करता है और जितनी अच्छाई कर सकता है करता है। अब देखो कि मेरे कारण यह कितना दुखी है। क्रीटो, हमे उसकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। इसलिए यदि ज़हर तैयार हो गया हो तो प्याले लाने के लिए कहो और यदि तैयार न हो तो मुलाजिम से कहो कि तैयार करे।

पर शिष्य-मडली यह नही चाहती थी कि अभी इसी समय सुकरात ज़हर का प्याला पिए। प्रेमचन्द के मन मे एकबार यह बात आई कि यदि सुकरात भागने से इन्कार कर चुके हैं तो इतने ही से अपना कर्तव्य समाप्त नही होता। शिष्य-मडली का कर्तव्य है कि जबरदस्ती उन्हे भगाए। क्रीटो कुछ कहने जा रहा था, शायद वह यही कहे।

पर क्रीटो अपने सखा और गुरु को अच्छी तरह जानता था। बोला—अभी तक सूरज पहाड की चोटी पर लरज रहा है और मुझे मालूम है कि इससे पहले मृत्युदण्ड प्राप्त कई लोगो ने ज़हर का प्याला देर से पिया है। और प्याला पीने के लिए कहे जाने के बाद खाया-पिया और अपने साथियो की सगत का आनन्द किया, इसलिए जल्दी की कोई ज़रूरत नही है। अभी समय बहुत है।

प्रेमचन्द भी यही चाहने लगा कि अभी सुकरात प्याला न पिएं। इस बीच कुछ सोचा जाए, पर सुकरात ने सबकी आशाओ पर पानी फेरते हुए कहा—क्रीटो, ठीक है, जिनके बारे मे तुमने यह बात कही है, वे ज़रूर सोचते होगे कि देर करके वे अपना फायदा कर रहे हैं, पर मैं अपने तईं उस दृष्टात का अनुसरण करना उचित नही समझता क्योकि मैं ऐसा मानता हू कि यदि ज़हर पीने मे देर करूं तो उससे मेरा कोई लाभ नही होने वाला है। जिस जीवन को ज़ब्त किया

जा चुका है, उसे थोडी देर बचाने पर मैं अपनी ही आखो मे हास्यास्पद हो जाऊगा, इसलिए कृपया वही करो जो मै कहता हू और मेरी बात पर ननुनच न करो।

प्रेमचन्द तथा अन्य शिष्यो का हृदय धक् से हुआ। क्रीटो ने पास खडे नौकर को इशारा किया, वह फौरन बाहर चला गया और जेलर के साथ ज़हर का प्याला लेकर लौट आया।

सुकरात ने किसीको सोचने का समय ही नही दिया, बोले—मेरे अच्छे दोस्त, आप इन मामलो मे तजुर्बेकार है, इसलिए मै कैसे क्या करू, यह आप बताते जाए।

इसपर उस आदमी ने सुकरात के हाथ मे जहर का प्याला देते हुए कहा—आप तब तक टहलते रहे जब तक कि आपके पैर भारी न पड जाए। उसके बाद आप लेट जाए और जहर अपना काम करेगा।

अन्तिम मुहूर्त था। कोई जादू नही हुआ। सुकरात ने तपाक से हेमलाक का प्याला ले लिया। न उनके हाथ थरथराए, न पैर लड़खडाए, न आखे झपकी, न चेहरे पर कोई शिकन आई। बिल्कुल स्थितप्रज्ञ की तरह उन्होने प्याला हाथ मे लेकर अपने स्वभाव के अनुसार कहा—क्या मैं इसमे से थोडा-सा किसी देवता को चढा सकता हू ? हा, या नही ?

इसपर वह आदमी अर्थपूर्ण ढग से बोला—सुकरात, हम केवल उतना ही ज़हर घोलते है, जितना यथेष्ट पड़ जाए।

इसपर सुकरात ने कहा—मै समझ गया, मैं देवताओ को भले ही न चढाऊ, पर उनसे यह प्रार्थना तो कर ही सकता हू कि इस जगत से मेरे उस जगत के प्रयाण को शुभ बनाए।

इसके बाद उन्होने मुह से प्याला लगा लिया और खुशी-खुशी ज़हर पी गए।

अब तक शिष्य-मडली मे बहुत-से लोग अपने आप पर नियत्रण रखने मे समर्थ हुए थे, पर जब लोगो ने उन्हे एक शिशु की तरह निर्भीक होकर ज़हर पीते देखा और यह भी देखा कि उन्होने ज़हर की अन्तिम बूद तक पी ली, तो लोग विकल हो गए और रोने लगे। लोगो ने मुह ढंक लिया। प्रेमचन्द भी उस मडली मे बैठकर रोने लगा। उसने पैन्ट मे हाथ डालकर रूमाल निकालना

चाहा । पर रूमाल नदारद था, तब वह दूसरे शिष्यो की तरह हाथ से मुंह ढापकर सिसकता रहा ।

क्रीटो सबसे अधिक धैर्यवान था, पर अब वह भी टूट गया । वह उठ खडा हुआ और कई लोग उसके पीछे-पीछे बाहर चले गए । अपोलोडरस नामक व्यक्ति तो पहले से ही रो रहा था । वह अब धाडे मारकर रोने लगा, जिससे सब लोगो के धैर्य का बाध अन्तिम रूप से टूट गया ।

केवल सुकरात अचल, अटल, स्थिर और आत्मसमाहित बने रहे । बोले—यह क्या वावेला है ? मैने स्त्रियो को विशेषकर इसलिए हटा दिया कि वे रौला न मचाए । पर तुम लोगो ने यह क्या शुरू कर दिया ? क्या तुमने यह सुना नही है कि मनुष्य को शान्ति मे मरना चाहिए ? इसलिए धैर्य धारण करो और शान्त हो जाओ ।

उनकी बातो ने तूफान पर तेल के घडो की तरह काम किया । लोग शर्मिन्दा हो गए और यद्यपि भीतर ही भीतर उनका हृदय बैठा जा रहा था, पर उन्होने रोना बन्द कर दिया । प्रेमचन्द ने कान खडे कर लिए और आखो को पूर्णरूप से विस्फारित रखा ताकि वह उस ऐतिहासिक बलिदान के एक भी ब्यौरे से वचित न रह जाए । सुकरात अब जेल के मुलाजिम की हिदायत के अनुसार टहल रहे थे । थोडी ही देर टहले थे कि उन्होने कहा—मेरे पैर अब काम नही दे रहे हैं ।

तब वे उस आदमी की हिदायत के अनुसार चित लेट गए । वह आदमी अब उनके पैर के तलुओ को ध्यान से देख रहा था । थोडी देर के बाद उसने सुकरात के तलुओ को जोर से दबाया और पूछा—श्रीमन्, क्या आपको कुछ मालूम हो रहा है ?

सुकरात ने कहा—नही ।

इसी प्रकार वह धीरे-धीरे पजो से ऊपर की ओर दबाता चला गया और वही प्रश्न पूछता गया ।

सुकरात भी कहते गए— नही ।

तब सुकरात ने शिष्य-मडली को दिखलाया कि किस प्रकार शरीर नीचे से ठडा और जड़ होता चला जा रहा है । उन्होंने स्वय हाथ लगाकर जडीभूत

अश को देखा और बोले—जब ज़हर हृदय तक पहुच जाएगा, तब अवसान हो जाएगा····

अब वह कमर तक ठडे पड चुके थे। उन्होने मुह ढक रखा था पर एकाएक उन्होने मुह उघाडते हुए कहा—क्रीटो, एस्कलेपियस के मदिर मे मैने एक मुर्गा चढाने की मानता की थी, मै भूल गया। उसे पूरा कर देना।

यही उनके अन्तिम शब्द थे।

क्रीटो ने कहा—प्रभु, हो जाएगा, और कोई बात तो नही है।

इस प्रश्न का कोई उत्तर नही मिला।

तत्पश्चात् एकाएक एक सिहरन हुई और मुलाजिमो ने उनकी चादर खोल दी।

प्रेमचन्द ने देखा कि उनकी आखे पथरा गई थी। क्रीटो ने धीरे से उनकी आखे और मुह बन्द कर दिया।

प्रेमचन्द और भी देखना चाहता था, पर इतने मे जमादार ने ज़ोर से लोहे का दरवाज़ा खोला और उसकी आखे खुल गई।

जमादार ने एक ही दृष्टि से कोठरी की हालत देखते हुए कहा—बाबू जी, कल आपने खाना नही खाया ?

प्रेमचन्द की आखो मे अभी प्राचीन ग्रीस का वह दृश्य बसा हुआ था, बोला—जब आदमी पीता है, तो वह खाता नही।

जमादार समझा कि प्रेमचन्द सिगरेट पीने की बात कर रहा है। बोला—पर आपने सिगरेट भी तो नही पी।

प्रेमचन्द ने इसका कोई उत्तर नही दिया।

## ५०

अमिताभ कई दिनो से उसुर-खुसुर करते थे, बाहर निकलते थे तो जल्दी ही लौट आते थे। जो कुछ हो रहा था, उससे उन्हे बडा आश्चर्य था। अखबार उठाते थे तो आन्दोलन की जो थोड़ी-बहुत खबरे उसमे मिलती थी, उनसे वे

भाप जाते थे कि जितना छप रहा है उससे कही ज़्यादा कुछ हो रहा है।

जनता अब नई तकनीक से ही काम ले रही थी। पहले नमक बनाते या सभा करते समय पुलिस आती, तो लोग वही मोर्चे पर डटे रहते और पडे-पडे मार खाते। बाबाजी इसी तरह शहीद हुए थे और सैकडो आदमी इसी तरह मारे गए थे, हजारो इसी तरह जख्मी हुए थे। इसमे हानि यह थी कि जो सबसे बहादुर आदमी होते थे, वे जेल पहुच जाते थे, या इतने मारे जाते थे कि हफ्तो बिस्तरो पर पड़े रहते थे।

नई तकनीक से पुलिस घबडाती थी, क्योकि कोई पकड मे आता ही नही था और किसीपर मार-पीट करने का मौका भी नहीं मिलता था।

पुलिस ने भी एक नई तकनीक निकाली थी। वह यह कि लोगो को जेल भेजने की बजाए उन्हे लारी मे भरकर बीस-पचीस मील या समय-समय पर इससे भी दूर जगल मे या किसी बीहड स्थान मे छोड आती थी। उनकी नगा-झोली लेकर सारे पैसे उनसे ले लिए जाते थे (ये पैसे खज़ाने मे नही बल्कि सिपाहियो की जेब मे जाते थे) ताकि वे किसी सवारी पर न चढ सके। इस तरह उनके दो-चार दिन खराब हो जाते थे साथ ही यदि सोने की जगह आदि नही मिली तो लोग बीमार होकर लौटते थे और सरकार को जेल मे रखकर इनका बोझ नही उठाना पडता था।

फिर भी कुछ लोग ऐसे थे, जो पुराने ढग की वीरता दिखाते चले जा रहे थे। ऐसे लोगो मे बाबू गनू का नाम उन दिनो सबसे प्रसिद्ध हुआ।

काग्रेस के स्वयसेवक विलायती कपडों की दुकानो मे जाकर गाठो पर मुहर लगवा देते थे ताकि चोरी से गाठे खोलकर कपडा बेचा न जा सके। विदेशी कपडो के व्यापारी इससे बडे दुखी थे। ऊपर से तो वे काग्रेस की आज्ञा मान लेते थे और अपनी गाठो पर मुहर लगवा लेते थे, पर चुपके से इन गाठो को हटवाकर देहातो की दूकानो पर पहुचाते थे या अन्य किसी उपाय से उनकी बिक्री करते थे।

इसी प्रकार एक लारी मे विदेशी कपडा चोरी से कही भेजा जा रहा था। यह बम्बई के कालबादेवी रोड की घटना थी।

इसपर बाबू गनू नामक नवयुवक ने आपत्ति की। पर वह अकेला था। लारी पर सामान लद चुका था और कही ज्यादा भम्भड न मचे इसलिए लारी

चलाने का इंगित हो गया।

बाबू गनू लारी के सामने महात्मा गाधी की जय का नारा देकर लेट गया।

पर मुनाफे को अपना ईश्वर समझने वाले व्यापारी इससे निवृत्त कैसे हो सकते थे ? इसके अलावा इन्हे पूरा भरोसा था कि आज उनका और ब्रिटिश सरकार का स्वार्थ एक ही है। यदि वह अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए कोई कानून तोडेगे, विशेषकर ऐसा कानून तोड़ेगे, जिससे सरकार को हानि पहुचती है तो उसपर चश्मपोशी की जाएगी।

जल्दी-जल्दी लारी के ड्राइवर और मालिक मे कुछ बातचीत हुई और ड्राइवर ने क्लच खीचा। गाडी सामने लेटे हुए बाबू गनू के सीने पर से निकल गई।

एक क्षण पहले का अच्छा-भला युवक अब एक तडपता हुआ बृहत मास का लोथडा था। और चारो तरफ खून का फौवारा छूट रहा था। लारी लाल निशान छोड़कर निकल गई थी।

यह खबर जाने कैसे अखबारो में छप गई थी। बाबू गनू का त्याग बहुत बड़ा त्याग था और उन दिनो हर महीने 'बाबू गनू दिवस' मनाया जाने लगा था।

अमिताभ यही सोचा करते थे कि इस प्रकार के त्याग बहुत स्वस्थ हैं और मुर्दा जाति की नसो मे उनसे प्राणसचार होता है।

पर गाधीजी की गिरफ्तारी के बाद ही शोलापुर मे जो स्थिति उत्पन्न हुई थी, वह दूसरी ही तरह थी। और यदि सारे भारत मे वही परिस्थिति उत्पन्न होती तभी जन-आन्दोलन का पूरा लाभ होता। यानी तभी जन-आन्दोलन क्रान्ति मे परिणत होता।

शोलापुर मे ब्रिटिश राज्य बिल्कुल खतम हो गया था और वहां स्वयसेवक ही कानून और व्यवस्था का सचालन कर रहे थे। ऐसा एक-दो दिनो नही कई दिनो तक चला। पहले तो जिला मजिस्ट्रेट यह प्रयत्न करते रहे कि फिर से किसी तरह ब्रिटिश अधिकार जम जाए, पर वह सम्पूर्ण रूप से असमर्थ रहे।

स्वयंसेवक हर मौके पर अहिंसा पर ही डटे रहते हो, ऐसी बात नही। एक मौके पर पुलिस वालो और स्वयसेवको मे टकराव हुआ और चार-पाच पुलिस

वाले मारे गए।

१२ मई को मजिस्ट्रेट ने सैनिक अधिकारियो के हाथ मे शासन सौंप दिया। ऐसा करने से पहले उसने बम्बई सरकार से अनुमति ले ली थी। भारत सरकार को यह सूचना अगले दिन प्रातकाल मिली और १५ मई को शोलापुर मार्शल ला अधिनियम पास किया गया।

मार्शल ला के युग मे यहा पर फिर एक बार वही दृश्य उपस्थित हो गए, जो जलियान वाला मे हुए थे। एक धनी सेठ तथा अन्य व्यक्तियो को सैनिक नियम से फासी दे दी गई और बहुत-से लोगो को मार्शल ला के अनुसार लम्बी सजाए दी गईं।

बहुत भारी दमन किया गया और शोलापुर के लोगो को कुचल दिया गया।

यदि देश भर मे इस तरह समान्तराल सरकार कायम हो जाती तभी इस आन्दोलन की सार्थकता थी। तब समझौते का पल्ला बिछाकर दर-दर की ठोकरें नही खानी पड़ती।

जनता मे जागरण फैलने के साथ-साथ एक और घटना हुई थी, जिससे अमिताभ की आशा बहुत बढी थी।

पेशावर तथा सीमाप्रान्त में पहले से ही गडबडी चल रही थी। २२ अप्रैल को अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की तरफ से एक अनुसधान-मडली भेजी गई थी कि वह जाकर देखे कि वहा किस तरह अत्याचार हो रहा है। पर इस मडली को अटक से आगे नही जाने दिया गया, इसकी खबर मिलने पर पेशावर मे जुलूस निकला तथा सभा हुई और कुछ नेता गिरफ्तार कर लिए गए।

चारो तरफ सभाए होने लगी और जुलूस निकलने लगे। एक घुडसवार पुलिस-अफसर जुलूस मे आया तो लोगो ने राष्ट्रीय गाने गाए, इसपर तीन वर्मावृत्त गाडिया आईं और वे जनता मे घूमने लगी। इसी बीच एक अग्रेज़ मोटर साइकल पर आया और उसकी साइकल वर्मावृत्त गाडी से लड गई। वह वही गिर पडा और उसपर से गाडी निकल गई। इसपर किसीने गाडी के अन्दर से गोली चलाई। फिर तो डिप्टी कमिश्नर एक कार से निकले। उनपर किसीने हमला कर दिया और वे बेहोश हो गए। फिर गोलिया ही गोलिया चलती रही। लगभग तीन घटे तक यह स्थिति जारी रही। सरकारी तौर पर

यह बाद को माना गया कि तीस मरे और तैंतीस घायल हुए। पर जनता का यह कहना था कि २०० से ऊपर मरे और घायल हुए। बराबर पुलिस वाले मामूली से मामूली बहाने पर गोलिया चलाते रहे।

यो तो चारो तरफ गोलिया चल रही थी, पर केवल गोलिया चलने से देश आगे नही बढ सकता था। जनता अधिक से अधिक सह चुकी थी। इससे अधिक सहना लाभदायक नही हो सकता था।

अब तो आन्दोलन मे गुणगत परिवर्तन आने की जरूरत थी। कही-कही नेताओ के न चाहने पर भी इस प्रकार के परिवर्तन आ रहे थे और लोग यहा तक कि काग्रेस के लोग भी इस ढर्रे पर सोचना शुरू कर चुके थे, जिससे क्रान्ति की प्रवृत्ति सूचित होती थी।

पेशावर काग्रेस कमेटी ने पोस्टर तथा बुलेटिन छापकर जनता को यह सूचना दी थी कि तुरगजई के हाजी से उनका पत्र-व्यवहार चल रहा था। उन्हे यह निमत्रण दिया गया था कि वे आकर पेशावर को स्वतत्र कर दे। पोस्टर मे बताया गया था कि तुरगजई के हाजी इस बात पर राजी हो गए है और वे इसके लिए लश्कर तैयार कर रहे है।

अमिताभ इन्ही विषयो पर विचार करते रहते थे क्योकि दिन मे बाहर जाना उनके लिए काफी खतरनाक था। क्रान्तिकारी सम्भावनाए बहुत थी, पर अहिसा का दर्शन सिर पर, गले मे बधे हुए पत्थर की तरह होने के कारण जन-आन्दोलन कही भी हाथ-पैर खोलकर किसी भी क्रान्ति की दिशा मे नही जा पा रहा था। अवश्य समय-समय पर किए हुए क्रान्तिकारी कार्य, जैसे चटगाव शस्त्रागार काण्ड, आदि से जनता के स्वस्थ सुझाव मिलते रहते थे, पर कोई भी सुझाव अधिक दूर तक नही जाता था।

फिर भी दस साल पहले की तुलना मे परिस्थिति बहुत अच्छी थी। गांधीजी भी इस बीच मे बहुत बदल गए थे, ऐसा लगता था। उन्होने चौरी-चौरा मे कुछ पुलिस वालों के मारे जाने पर असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया था, पर शोलापुर मे इतना बडा काण्ड हुआ, और भी कई जगह जनता की ओर से समान्तराल सरकार कायम करने तथा क्रान्तिकारी ढग से शक्ति पर कब्ज़ा करने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ी, पर गांधीजी कुछ नही बोले।

अवश्य इस बार वे जेल मे थे, पर इससे क्या ? यदि वे आन्दोलन

स्थगित करना चाहते तो सरकार बडी खुशी से उन्हे छोड देती और पूरी सुविधाएं देती। आन्दोलन के फलस्वरूप जो स्थिति उत्पन्न हुई थी वह सरकार के लिए बहुत ही कष्टकर थी। फौज पर भी इसका असर पडने लगा था।

मा सब पढा करती थी और अपना काम करती जाती थी। पर जब अमिताभ केवल पढते रहे और घर से नही निकले तो वह बोली—क्या बात है ? अब पढने से ही सारा काम बन जाएगा ?

अमिताभ झेपते हुए बोले—नही, पर कुछ साफ रास्ता भी तो नही सूझता।

मा ने माला जपना जारी रखते हुए कहा—कुछ न करने से गलत काम करना भी अच्छा है।··

दोनो मे से किसीने कुछ नही कहा।

अमिताभ अपना अखबार आदि समेटने लगे। मा ने उनके मन की ही बात कही थी। कुछ करना चाहिए। और कुछ नही तो भ्रमण। भ्रमण के द्वारा प्रकृति तथा जनसाधारण से अनुप्रेरणा मिलती है। फिर अखबार कब जनता के प्रतिनिधि हैं ? ये तो जनता की बात तोड-मरोडकर ही पेश कर सकते हैं। कुछ तो डर है और कुछ खबर लिखने वालो का सस्कार ही ऐसा है।

मा बोली—देखो बेटा, तुम अब यहा से चले जाओ।—वह जिस गायत्री मत्र का जप कर रही थी, उसका एक हिस्सा अमिताभ को सुनाई पड गया—

···भर्गो देवस्य धीमहि···

उत्तेजना के कारण ही वह जोर से गायत्री मत्र बोल गई थी।

अमिताभ मा के पास गए और बोले—क्यो क्या बात है ?

मा ने बिना आख मिलाए ही कहा—मेरी आत्मा कहती है कि अब तेरा यहा रहना ठीक नही।

—इसके माने यह हुए कि अब मैं काशी आऊ ही नही ?

—हां, अब तू काशी मत आ।

—क्यो ?

मा ने कोई उत्तर नही दिया, जैसे कुछ हिसाब लगा रही हो। अमिताभ ने मां का माला वाला हाथ पकडकर कहा—क्या बात है ? मैं भी तो कुछ सुनू।

मा ने माला रख दी और बोली—आज जब मैं स्नान करके लौट रही थी

तो मुझे ऐसा लगा कि एक आदमी मुझे बहुत ध्यान से देख रहा है। ··

—सम्भव है कि उसने किसी और के धोखे मे तुम्हे देखा हो।

मां हसी। बोली—एक यमराज ही ऐसे हैं जो मुझे भूल गए है। बाकी कोई तो मुझे भूल नही सकता। यदि मेरी उमर चालीस साल कम होती, तो मैं सोचती कि वह किसी और कारण से मेरी तरफ देख रहा है, पर अब मै बूढी हो गई हू, तू अब जा।

—यह बात है ?

—हा।

—अभी ?

—हा ! शुभस्य शीघ्रम्। यो तो मै उसे चकमा देने के लिए कई मन्दिरो मे गई, पर उसकी आखें भूलती नही। उसका कोई न कोई कारण होना चाहिए।

अमिताभ ने जल्दी से दो-एक कपड़े उठाए और वह मा को प्रणाम करके निकल पड़े।

आज ही प्रेमचन्द का फैसला सुनाया जाने वाला था। यो तो फैसला मालूम था, पर वे चाहते थे कि फैसला हो जाने पर ही रवाना हो। पर मा की जैसी इच्छा।

और मा की इच्छा कोई मामूली इच्छा न थी। चौदह साल पहले मा अपने एकमात्र बेटे नरेन्द्र को फांसी के तख्ते पर जाते हुए देख चुकी थी।

बडे ज़ोर से प्रथम महायुद्ध चालू था। अभी यह पता नही लग रहा था कि कौन पक्ष जीतेगा। क्रातिकारी यह समझ रहे थे कि जर्मन जीतेंगे। जर्मन जीते या न जीतें, जर्मनो से सहायता लेकर अंग्रेजो से लडने मे कोई बुराई तो थी नहीं।

देश के बाहर गए हुए भारतीयो मे बडा जोश था। बर्लिन में भारतीय क्रांतिकारियों की एक समिति बनी हुई थी। इसकी शाखा-प्रशाखा अमेरिका के भारतीयो मे भी फैली थी।

नरेन्द्र बहुत अच्छा बेटा इस माने मे नही था कि जब उसके पिता का देहान्त हो गया, तो वह कुछ दिनों तक मां की सान्त्वना के लिए घर मे बना रहा, पर अन्त मे यौवन-सुलभ सैलानीपन ने ज़ोर मारा और वह भागकर यूरोप चला गया। इग्लैंड मे उसका जी नही लगा तो वह मध्य यूरोप चला गया।

अभी वह सैर-सपाटा कर ही रहा था कि महायुद्ध छिड गया। बस वह क्रातिकारी कार्यों मे लग गया। पहले वह अमेरिका भेजा गया। वहा फिर उसका जी नही लगा। काम भी विशेष नही बना, तब वह भारत भेजा गया कि पजाबी क्रातिकारियो के साथ मिलकर क्राति की तैयारी करे। वह इसीमे लगा हुआ था कि एक रोज़ रात को वह पता लगाकर मां के पास पहुचा।

मा तो यह समझ चुकी थी कि नरेन्द्र से अब भेट नही होगी। जब से वह गया था, उसका कोई पत्र नही आया था और लोग तो यही कहते थे कि वह मर गया होगा। जब लडाई छिडी तो मा बहुत दुखी रहने लगी। वह यह समझती थी कि उसके बेटे के लिए खतरा बढ गया।

इसलिए जब नरेन्द्र एकाएक एक दिन उसके कलकत्ते वाले मकान मे प्रकट हुआ, तो मा ने एक रात मे खोई हुई सारी दिवालियो की कसर पूरी कर ली। बेटे को अपने हाथ से खाना पकाकर खिलाया, तरह-तरह के खाने बनाए, फिर बेटे की कहानी सुनी। मा को क्राति से विशेष मतलब नही था। बोली—तुमने शादी कर ली ?

नरेन्द्र सोचता रहा कि क्या कहने पर मा को खुशी होगी। फिर बोला—मैंने एक मगियार लडकी से शादी कर ली है और वह लडाई के बाद देश मे आएगी।

—बच्चे भी है ?

नरेन्द्र ने झूठ बोलते हुए कहा—हा, एक बच्चा है और एक बच्ची।

मा बहुत खुश हुई। पूछती रही कि लडाई कब खतम होगी। महाभारत की उतनी बडी लडाई तो केवल १८ दिन चली थी और इस लडाई के इतने दिन हो गए ?

नरेन्द्र ने कहा था—बस देर नही है। अगले साल इन दिनो तक तुम्हारा पोता और पोती तुम्हारे पास होगे।

मा ने कहा था—वे यहा की भाषा तो नही जानते होगे, खैर मै सिखा लूगी। मैं अपनी भाषा के अलावा कुछ बोलूगी ही नही तो वे क्या करेंगे ?

मां उस दृश्य को सोचकर हसी थी, पर नरेन्द्र दुखी हो गया था। उसे अब मालूम हो रहा था कि उसने मा को इस प्रकार अनाथ छोड़कर बहुत भारी अन्याय किया था। न जाने मा के इतने साल कैसे बीते होगे। वह तो इस

बीच मे सारा ससार घूम आया और जाने क्या-क्या देख चुका है और मा कलकत्ते की इस गली मे बराबर घुटती रही है। काश उसे सुबुद्धि होती और वह मा को बीच-बीच मे चिट्ठी ही लिख दिया करता।

मा और बेटे एक ही बिस्तरे मे सोए, जैसे वे बीस साल पहले सोते होंगे।

सबेरे की तरफ मा और बेटे की आख लग गई थी। नरेन्द्र पहले जगा। मा तो अभी सो ही रही थी क्योंकि इतने सालो बाद वे पहली बार ठीक से सोई थी। नरेन्द्र को उसी समय जाना था। वह धीरे से उठा तो मा जग गई।

नरेन्द्र ने कहा—मा, मै अब जाता हू। मेरा फोटो हर थाने पर लगा हुआ है। जिस जहाज से मैं उतरा था, उसके सभी लोग फरार करार दिए गए हैं।

पर मा राजी नही हुई, बोली—इतने दिन बाद आए हो। ··

नाश्ता बना और नरेन्द्र खा ही रहा था कि पुलिस का एक दस्ता आया और जिस तरह चील गौरैए के बच्चे को घोसले से उठा ले जाती है, उसी तरह वे नरेन्द्र को उठा ले गए।

नरेन्द्र पर १२१ और १२२ का मुकदमा चला कि उसने राजद्रोह किया और फौज मे बदअमनी फैलाई। तीन महीने के अन्दर नरेन्द्र को फासी हो गई।

फासी के बाद ही मा कलकत्ते का छोटा-सा मकान बेचकर काशी आ गई थी।

केवल अमिताभ ही यह कहानी जानते थे। इसीलिए मा उन्हे खदेड रही थी। वह नही चाहती थी कि नरेन्द्र के इतिहास की पुनरावृत्ति हो।

तभी मा ने यह भी नही कहा कि चाय पीते जाओ।

और मा की सहजात बुद्धि इस सम्बन्ध मे कितनी रही थी, यह थोडी ही देर मे प्रमाणित हुआ। स्वय जानसन पुलिस के एक दस्ते के साथ वहा पहुचा।

पहले ही सारी गलिया घेर ली गई थी। और सफेदपोश पुलिस वाले नुक्कडो पर खडे हो गए थे। सबके पास अमिताभ का ही नही अन्य कई फरारो के फोटो थे। उन्हे यह हुक्म था कि कोई भी आदमी हाथ उठाने से इन्कार करे तो उसे फौरन गोली मार दो। सरकार इस समय बिल्कुल निर्दय थी। उसकी आखो मे पानी रह ही नही गया था। भारत मे ही नही सारे ससार मे ब्रिटिश साम्राज्य की कलई खुल चुकी थी।

पुलिस कप्तान दुर्गाप्रसाद ने भीतर प्रवेश करते हुए मा से पूछा—बुढिया, तू नरेन्द्र की मा है न ?

मा इस बात से बहुत खुश थी कि सबेरे ही अमिताभ को रवाना कर दिया था। बाल-बाल बच गया था। बोली—मैं तैंतीस करोड की मा हू।

कहकर वह फिर माला जपने मे लग गई। दुर्गाप्रसाद ने जानसन को यह दिखाने के लिए कि वह हिन्दू होने पर भी इतना राजभक्त है कि अपने धर्म की कोई परवाह नही करता, उसने बूढी मा के हाथ से माला छीननी चाही, पर मा ने माला छोडी नही। नतीजा यह हुआ कि माला टूट गई और उसकी गुरिया ज़मीन पर बिखर गईं। कुछ गुरिया ही मा के हाथ मे रह गईं।

दुर्गाप्रसाद ने गुरियो को जूते के नीचे मसलकर कहा—मुझे मालूम है कि तू वही है। इतने सालो से तू यहा है, पर किसीको पता नही लगा था। बोल तेरे पास कौन ठहरा है ?

जानसन ने इस समय भारत-हितैषी और भद्र अग्रेज़ का हिस्सा अदा करने के लिए आगे बढकर कहा—दुर्गाप्रसाद तुमने माला क्यो तोड दी ? हम किसी के धर्म मे हाथ नही डालते। बुढिया, यह बताओ कि तुम्हारे यहा जो आदमी ठहरा था, वह कहा है ?

इस बीच पता तो हो ही चुका था कि इस मकान मे कोई और आदमी नही है।

बूढी मां बोली—मेरे यहा कोई नही है।

जानसन की गम्भीर भद्रता उधड-सी गई, बोला—ठीक-ठीक बताओ नही तो हमे कानूनी कार्रवाई करनी पडेगी। जानती हो फरार को घर मे रखना सख्त जुर्म है ?

मां हाथ की गुरियो को भी ज़मीन पर बिखराती हुई बोली—मैं सब जानती हू।

दुर्गाप्रसाद सामने आकर बोला—हुज़ूर, यह ऐसे नही मानेगी। जब इसके लडके को फासी हो गई, फिर भी यह नही चेती, तो यह आसानी से कोई बात बताने वाली नही है।

इस बीच जानसन का ध्यान अखबारो के पुलिन्दे पर गया। बोला—यह अखबार कौन पढता है ?

कहकर उसने एक अखबार उठा लिया, जो आज प्रात काल का था। बोला —तुम अग्रेज़ी जानती हो ?

मां ने कहा—जानती हू ।

—तो तुम अखबार पढती हो ?

मां ने व्यग्य के साथ कहा—मैं यह नही जानती थी कि अखबार पढना भी कोई जुर्म है ।

दुर्गाप्रसाद कुछ कर दिखाने के लिए व्याकुल हो रहा था । सत्याग्रहियो पर हाथ छोडते-छोडते, पिकेटिंग करने वालो पर डडेबाजी करते-करते उसे कोई भय या लज्जा नही रह गई थी ।

उसने मा का हाथ पकडकर खडा कर लिया और धमकाते हुए कहा—तू पति को खा चुकी है, पुत्र को खा चुकी है अब क्या सत्तर साल की उमर मे अपनी बेइज्ज़ती भी कराएगी ? साहब रहमदिल है पर मैं पूरा जल्लाद हू । तेरी सारी बदमाशी निकालकर रख दूगा ।

मां थर-थर काप रही थी । उसके मुह से कोई बात नही निकली । उसे नरेन्द्र से लेकर अमिताभ तक जाने कितने ही मा कहने वाले युवको की याद आई जो मा का यह अपमान होते देखते तो न जाने क्या कर डालते । । सबसे अन्तिम अमिताभ की महक अभी उन कमरो मे मडरा रही थी । यदि वह किसीको इस प्रकार मां का हाथ पकडे देखते तो चाहे कुछ भी होता, उसका माथा तोड-कर गोली निकल जाती ।

पर इस समय कोई नही था ।

अच्छा ही था ।

मा ने हाथ छुड़ाने की चेष्टा करते हुए कहा—तुम चाहते क्या हो ?

दुर्गाप्रसाद के कुछ कहने से पहले ही जानसन ने कहा—दुर्गाप्रसाद, तुम हाथ छोड दो । यह बताएगी कि इसमे कौन रहता था ।

दुर्गाप्रसाद ने हाथ छोड दिया, पर मा कुछ नही बोली ।

तब दुर्गाप्रसाद ने फिर से मा का हाथ पकडते हुए कहा—जो तू अपनी बेइज्ज़ती चाहती है तो बोल ।

अबकी बार हाथ उसने केवल पकड़ा ही नही । उसे इतना कसकर पकडा कि मा की आखो मे पानी निचुड आया ।

मा के शरीर मे जाने कहा से शक्ति आ गई और उन्होने हाथ छुडा लिया, फिर छिटककर दूर जाकर अपनी बिना किनारी की सफेद साडी एक ही झटके मे खोलकर डालती हुई बिल्कुल नगी होकर बोली—ले राक्षस, अपनी मा को देख ले। तू मुझे इसीका डर दिखाता था न ?

जानसन पीछे हट गया और सिपाहियो ने मुह फेर लिया। अपने को राजभक्त प्रतिपन्न करने के लिए व्यग्र दुर्गाप्रसाद की आखे भी नीची हो गई।

जानसन ने सबकी इज्जत बचाने के लिए वापस चलने का इशारा किया। मा वही पर प्रस्तर-मूर्ति की तरह नगी खडी रही।

अगले दिन मुहल्ले वालो ने देखा कि मा उसी प्रकार नग-धड़ग मरी पडी है और उसकी गुरियो की माला बिखरी पडी है।

## ५१

यो ही शहर के लोगो मे बडा जोश फैला हुआ था क्योकि आज प्रेमचन्द के मुकदमे का फैसला सुनाया जाने वाला था पर सबेरे ही यह खबर उड गई कि प्रसिद्ध काग्रेसी नेता बन्देअली रात को मर गए।

बन्दे अली मुस्लिम समाज मे बहुत बडे आलिम माने जाते थे और बाकी लोगो मे वह इस नगर के काग्रेसियो के पितामह समझे जाते थे। यो तो उनकी उम्र ६८ या ७० के लगभग थी, पर किसीने यह नही सुना कि वे कभी बीमार भी पड़े हो। हा, जेल मे बैरक-बन्दी-विरोध का जो आन्दोलन चल रहा था, उसके सम्बन्ध मे लोगो को मालूम था कि रोज़ उसमे दस-बीस घायल हो रहे हैं।

पर उसकी पूरी खबर किसीको नही मिलती थी और मिलती भी कैसे ? जिले मे ऐसा आतक फैला हुआ था कि अखबार वाले किसी ऐसे-वैसे तरीके से मालूम होने पर कोई खबर छापने से तबतक डरते रहते थे जबतक कि वह किसी समाचार-सेवा के जरिए से वाकायदा न आए।

पर बन्देअली की मृत्यु की खबर फैलने के साथ ही यह खबर भी फैली कि

वह इसी आन्दोलन मे नेतृत्व करते हुए लाठियो से मार डाले गए।

सब लोग, जैसे जिसको मालूम होता गया, अपने नेता के अन्तिम दर्शन के लिए उस अस्पताल की तरफ दौडे, जहा उनकी मृत्यु होने की खबर थी। पर पुलिस वाले जनता से अधिक चालाक या क्षिप्र साबित हुए।

जबतक भीड अस्पताल के हाते मे पहुची, तबतक उनका शव वहा से हटा दिया जा चुका था। अस्पताल के चारो तरफ पुलिस की एक टुकडी का पहरा था।

जब लोगो से कहा गया कि बन्देअली की मृत देह यहा नही है, तो किसी-ने विश्वास नही किया और भीड बढने लगी।

नौ बजे तक १५ हज़ार जनता इकट्ठी हो चुकी थी। जो लोग सबेरे आए थे वे कुलबुला रहे थे। धूप के साथ-साथ उनका क्रोध भी बढ रहा था।

जब अस्पताल के घडियाल ने नौ बजाए, तब लोग एकदम से बेचैन हो गए, जैसे उन्होने इसीको धैर्य की सीमा निर्दिष्ट कर रखी हो। एक व्यक्ति कुछ न पाकर एक पेड के तने पर चढ गया और वहा से लोगो को आवाज़ देते हुए बोला—भाइयो, यह सब झूठ है। डाक्टरो की सरासर बदमाशी है। असली बात यह है कि वे उनकी लाश देना नही चाहते क्योकि उससे उनकी खूनी दास्तान का पर्दाफाश होगा।

सामने एक और पेड था। उसपर पहले ही से लोग चढे हुए थे। उन्होने इसका समर्थन किया। एक बहुत ही मामूली चेहरे का आदमी बोला—भाइयो, आप कल्पना कीजिए कि कैसे वे मार-मारकर मारे डाले गए होगे। उनकी सफेद दाढी खून से लाल हो गई होगी। जालिमो को कुछ भी रहम नही आया। जेल मे बन्द रखा और वहा लाठियो से मार डाला।

एक ने, जिसे कुछ अच्छी जानकारी थी, सारी कहानी कह सुनाई कि क्यो जेल मे कैदियो ने यह आन्दोलन चलाया और जनता मे बडे ज़ोर से 'मौलाना बन्देअली जिन्दाबाद', 'प्रेमचन्द ज़िन्दाबाद' आदि नारे लगाए जाने लगे।

जब नारे लगने शुरू हो गए तो फिर आदि काल से जितने शहीद हुए थे उनकी और अखिल भारतीय तथा स्थानीय काग्रेसी नेताओ की जय बोली जाने लगी। सर्वोपरि 'महात्मा गाधी की जय' बोली जा रही थी।

जय बोलते-बोलते लोगो मे कुछ ऐसी गरमी आई कि लोग अस्पताल के अन्दर जबर्दस्ती दाखिल होने के लिए तैयार हो गए। पुलिस वाले लाठी तानकर

नैयार थे ही । स्थानापन्न ज़िला-मजिस्ट्रेट निकलसन हाथ मे मोटा बेत लिए वहीं खडा था ।

अब जिस किसी समय मुठभेड शुरू हो सकती थी। हो भी जाती, पर उस समय अस्पताल का इचार्ज डाक्टर गले मे स्टेथेस्कोप डालकर अस्पताल के ऊचे फाटक की दीवार पर प्रकट हो गया । यह वही व्यक्ति था जिसने एक बार पहले (उस समय भीड बहुत छोटी थी) यह कहा था कि यहा से मौलाना की लाश जा चुकी है । उसे देखते ही किसीने एक ढेला खीचकर मारा जो उसके स्टेथेस्कोप पर लगा, पर उसका कपडा खराब हो गया ।

फिर भी वह व्यक्ति नही झिझका । उसने पहले निकलसन की तरफ हाथ उठाकर फिर उमडती हुई जनता की तरफ कैन्यूट की तरह हाथ उठाकर कहा—भाइयो, पहले आप सुन ले, फिर जो चाहे सो करे । अस्पताल एक ऐसा स्थान है, जहा लोगो का इलाज होता है, हम यह नही चाहते कि अस्पताल के सामने और अस्पताल के नाम पर कोई रक्तपात हो...

जनता मे से एक आदमी ने चिल्लाकर कहा—तुम्ही लोगो ने तो उन्हे मारा है...

डाक्टर ने उस आवाज़कशी की परवाह न करते हुए कहा—मैने पहले भी आपसे बताया और अब भी बता रहा हू कि बन्देअली साहब की लाश यहा नही है । कल रात दस बजे जेल से कुछ आदमी घायल हालत मे इलाज के लिए यहा भेजे गए थे । इनमे से मौलाना बन्देअली का रात तीन बजकर सात मिनट पर इन्तकाल हो गया । हमने उनका भरसक इलाज किया, पर वे बहुत बूढे थे इसलिए हम उन्हे बचा नही सके....

जनता से आवाज़ आई—सब झूठ, बिल्कुल झूठ, मारो साले को ·

कहने के साथ ही एकदम ढेला डाक्टर के सिरपर पडा और खून जारी हो गया । स्टेथेस्कोप मे भी खून लग गया । सूर्य की किरणे सीधी डाक्टर पर पड रही थी, उसमे वह रक्त से सनकर अद्‌भुत दिखाई पड़ा ।

पुलिस वाले बेचैन हो रहे थे । निकलसन भी उत्तेजित होकर कुछ कह रहा था, पर डाक्टर ने निकलसन की तरफ इशारा किया और बोला—आप लोग मेरा विश्वास नही कर रहे हैं, इसलिए आप मे से पांच आदमी मेरे साथ अस्पताल के अन्दर आए और मैं उन्हे सब कुछ दिखाऊगा । मैं उन्हे उन लोगो

से भी मिलाऊंगा जो कल जेल से घायल होकर आए है ।

एक तो डाक्टर का लहूलुहान चेहरा और उसकी दृढता देखकर जनता शात हो गई थी, दूसरे उसने जो प्रस्ताव रखा, वह बहुत ही सगत था। लोग आपस मे कानाफूसी करने लगे । इतनी बडी जनता का प्रतिनिधि कैसे चुना जाता ?

पर बात की बात मे पाच आदमी, जिनमे दो मुसलमान भी थे, जनता के प्रतिनिधि के रूप मे आगे बढे । उन्हे न तो कोई विशेष जानता था और न कोई वोट ही लिया गया था, पर खद्दर की पोशाक और गाधी टोपी, यह प्रतिनिधि मान लिए जाने के लिए यथेष्ट थी । फिर इसमे कोई ऐसी-वैसी बात नही थी, कोई भी पाच व्यक्ति प्रतिनिधि हो सकते थे ।

वे पाच व्यक्ति अस्पताल के भीतर जाने के लिए तैयार हो गए। उधर से डाक्टर (उसने इस बीच मे खून पोछ लिया था और सिरपर एक बैंडेज भी हो गया था) प्रतिनिधियो का स्वागत करने के लिए तैयार था । पर निकलसन ने बीच मे आकर उन प्रतिनिधियो को रोका और अग्रेजी मे बोला—एक शर्त है, डाक्टर पर जिसने ढेला फेका है, उसे आप मेरे हाथ मे सौप दे । यह नही हो सकता कि हजारो आदमियो के सामने जिसने इस प्रकार अपराध किया, एक निरीह और सभ्य आपके भारतीय डाक्टर को ही मारा, वह कानून के पजे से बचा रहे ।

जो पाच व्यक्ति प्रतिनिधि बने थे, वे बडे असमजस मे पड गए क्योकि एक तो वे जानते थे कि उनका यह प्रतिनिधित्व बहुत कुछ मनमाना है । वे लज्जित थे कि वे प्रतिनिधि बनाए गए, उन्हे कुछ आश्चर्य भी था । अब जो यह माग रखी गई तो वे बहुत घबडाए ।

पर डाक्टर ने उनकी सहायता की । वह मधुर हंसते हुए अपने स्टेथेस्कोप से खेलते हुए बोला—मै किसी पर दोष नही लगाता । मिस्टर निकलसन, आप इन्हे आने दे ।

पर निकलसन इस अनुरोध से विचलित नही हुआ, बोला—डाक्टर, मैं बहुत खुश हू कि आपने ऐसा कहा । एक डाक्टर के नाते आपने बहुत बडप्पन दिखाया, पर कोई राष्ट्र एकतरफा बडप्पन पर विश्वास नही करता । आपने बडप्पन दिखाया, अपने तरफ से उस अपराधी को क्षमादान दे दिया । उधर से भी

बड़प्पन होना चाहिए। आपपर दो ढेले पडे, हमे दो आदमी चाहिए····

प्रतिनिधियो तथा सब सुनने वालो के ध्यान मे यह बात तीर-सी चुभी कि पहले तो एक ही बलि के बकरे की माग थी और अब दो की माग की जा रही है।

डाक्टर ने फिर भी समझाया, पर निकलसन पर कोई असर नही हुआ। बोला—आप इस मुकदमे के मुद्दई नही हैं, बल्कि अब सरकार मुद्दई है। हम आपकी गवाही भी नही मागते।

बडी अद्भुत परिस्थिति उत्पन्न हो गई।

साफ दिखाई पड रहा था कि निकलसन शरारत पर तुला हुआ है और उसकी पिस्तौल भूखी है।

मौलाना बन्देअली की बूढी देह से साम्राज्यवाद की चण्डी तृप्त नही थी। उसकी जीभ लपलपा रही थी और वह जनता के ताज़े लहू के लिए क्षुब्ध और लालायित थी।

प्रतिनिधि किंकर्तव्यविमूढ होकर पीछे हटने लगे, पर निकलसन ने उनसे कहा—आप इस तरह जा नही सकते। यदि आप अपराधी को ढूढकर मुझे नही सौंपेंगे, तो मैं आप लोगो को हिरासत मे ले लूगा।

थोडी-थोडी करके सारी बात, कुछ विखण्डित रूप मे ही सही, जनता मे पहुंचती जाती थी और उसी मात्रा मे जनता का पारा चढता जा रहा था।

प्रतिनिधियो ने आपस मे कुछ बातचीत की, फिर वे पाचो अस्पताल के उसी फाटक पर खडे हो गए जहा डाक्टर खडा था। फिर उनमे से भाषण देने का आदी व्यक्ति सामने आया और उसने लोगों को सारी परिस्थिति समझाई।

वह व्यक्ति इसी बीच तीन महीने की जेल भी काट आया था, इस नाते वह अपने को कुछ विशेषज्ञ भी मानता था। बोला—अहिंसा की दृष्टि से तो ढेला मारना अनुचित था, फिर भी ऐसी उत्तेजनापूर्ण स्थिति मे इस प्रकार का आचरण अस्वाभाविक नही कहा जा सकता। निकलसन साहब की शर्त हमारे सामने है, अब आप जो आज्ञा दें सो किया जाए।

इसपर जिन दो व्यक्तियो ने ढेला मारा था वे चिल्लाकर बोले—हमने ढेला मारा, हम जेल जाने को तैयार हैं।—कहकर वे उस तरफ बढने लगे जिधर निकलसन तथा पुलिस का प्रधान दस्ता खडा था।

पर इस समय एक अजीब बात हुई। सारी जनता मे से आवाज आने लगी—मैने ढेला मारा, मैंने ढेला मारा, मुझे जेल भेजा जाए। बदेअली जिन्दाबाद·· प्रेमचन्द जिन्दाबाद ··

जनता पहले जितनी उत्तेजित थी, अब उससे कही अधिक उत्तेजित हो गई थी। अब उसकी उत्तेजना का लक्ष्य कोई अशरीरी सस्था या सरकार नही थी, बल्कि अब उसका सारा रोष निकलसन के विरुद्ध केन्द्रित होकर उफन रहा था। डाक्टर ने जो भव्य व्यवहार किया था, उससे जनता का एक-एक आदमी उसका खून बहाने के लिए अपने को दोषी समझता था और जितना ही लोग अपने को दोषी समझ रहे थे उतना ही वे अपने इस दोष को निकलसन के रक्त से धो देना चाहते थे।

निकलसन ने भी इस बात का अनुभव किया। एक साथ तीस-चालीस हजार आखें (उस समय तक भीड बढ चुकी थी) उसकी तरफ इसी प्रकार भयावने ढग से जल रही थी, जैसे शेर अघेरे से शिकार पर दृष्टि डालता है। उस सम्मिलित दृष्टि के बोझ से दबकर निकलसन पीछे हट गया और वह अपने दस्ते के साथ अस्पताल के अन्दर हो गया। पर उसे अन्दर करने को अस्पताल का फाटक खुला तो भीड भी हहराकर अस्पताल मे घुसने लगी, पर सामने ही वह प्रियदर्शन डाक्टर गले मे उसी प्रकार स्टेथेस्कोप लटकाए और सिर पर बैंडेज किए हुए खडा था। उसे देखते ही भीड मन्त्रौषधिरुद्धवीर्य नाग की तरह हो गई। वह आगे नही बढी। एक मिनट का मौका मिल गया। इसी बीच मे निकलसन अपने दस्ते के साथ अस्पताल के पिछले फाटक से निकल गया।

डाक्टर ने भीड को हाथ से अस्पताल के वार्डों की तरफ इशारा किया जो निकलसन के द्वारा अनुसृत रास्ते से भिन्न दिशा मे था। पर अब प्रतिनिधि सामने आए और उन्होने भीड को रोका। वह पाच आदमी भीतर चले गए। उन्होने ही फाटक बन्द कर लिया।

इस प्रकार एक भयकर गोली-काण्ड बच गया।

थोड़ी ही देर मे प्रतिनिधि लौट आए और उन्होने भीड से कहा—सबेरे पाच-बजे मौलाना बन्देअली के साहबजादे उनके शव को उठा ले गए है। अब हम वहीं चलेगे। आप लोगो को मालूम है न कि मौलाना का घर मदनपुरा मे है? ··

भीड इस बीच मे ही कुछ छट चुकी थी क्योकि लोग यह जान गए थे कि जब डाक्टर ने कही है तो बात जरूर सही होगी। डाक्टर ने अपने व्यवहार से सबका मन जीत लिया था। यदि डाक्टर ब्रिटिश सरकार का नौकर न होता तो जनता मे ऐसे हजारो लोग थे जो उसका जुलूस निकालते। पर यो चुपचाप लोग तितर-बितर हो गए।

लोग दौडकर मदनपुरा की ओर चलने लगे। कुछ लोगो ने रास्ते मे कहा कि आज तो प्रेमचन्द का फैसला अभी दस बजे सुनाया जाने वाला है। इसपर भीड के दो हिस्से हो गए, दो क्यो, तीन। क्योकि एक हिस्सा और शायद काफी बडा हिस्सा थककर चला गया था।

जो भीड जेल के फाटक पर पहुची उसे भी निराशा हुई क्योकि जज ने भीड बचाने के लिए सबेरे नौ बजे ही फैसला सुना दिया था। भीतर सिवा वकील और रिश्तेदारों के किसीको जाने नही दिया गया था। अर्चना भी बाहर निराश खडी थी।

बहुत बड़ी भीड मौजूद थी, पर उसके सामने जेल की ऊची-ऊची दीवारें ही थी। क्या उन दीवारो पर कुछ लिखा था।

## ५२

अर्चना बडी तैयारी के साथ प्रेमचन्द के मुकदमे का फैसला सुनने आई थी। तैयारी इस अर्थ मे कि वह सबेरे ही प्रेमचन्द के पक्ष के वकील रामशरणलाल के घर पर पहुच गई थी। वह यह जानती थी कि जेल के अन्दर जाना कठिन होगा, पर साथ ही यह समझती थी कि यदि कोई भीतर ले जा सकता है तो मिस्टर लाल ही ले जा सकते हैं।

मिस्टर लाल उससे अच्छी तरह परिचित थे। इसका प्रमाण यह था कि वह उसे देखकर मुस्कराए और जैसा कि वकीलो और डाक्टरो का नियम है, उन्होने बिना सोचे-समझे उसे आश्वासन भी दे डाला कि मैं किसी न किसी प्रकार आपको भीतर ले जाऊगा।

अभी अर्चना को यह आश्वासन दिया ही गया था कि जज के अर्दली ने आकर एक रुक्का दिया। जिसमे यह लिखा था कि जज साहब दस बजे ही शहर छोडकर विलायत रवाना हो जाएगे इसलिए फैसला ९ बजे ही सुनाया जाएगा।

फिर वकील साहब तैयारी मे लग गए और भागते-भागते जेल के फाटक पर पहुचे। उस समय ९ बजने मे १५ मिनट रहते थे। फाटक पर पुलिस का बहुत कड़ा प्रबध था, इसलिए वकील साहब को ही प्रवेश करने मे पाच-सात मिनट लग गए। उन्होने बहुतेरा कहा कि यह लडकी मेरे साथ भीतर जाएगी, पर किसीने उनकी बात नही सुनी, तब अन्तिम उपाय के रूप मे अर्चना स्वयं आगे बढी और उसने जो वहा अधिकारी-इचार्ज था उससे कहा—मैं श्री प्रेमचन्द की मगेतर हू।...

इसपर इस अधिकारी ने अर्चना को पहले से ज्यादा ध्यानपूर्वक ज़रूर देखा, पर उसने कहा—मैं मजबूर हू। मुझे इस सम्बन्ध मे बहुत कडी हिदायत है, मैं किसीको भीतर नही जाने दे सकता।

अर्चना ने ऐसा पीडित और आर्त चेहरा बनाया जैसे उसका जीवन ही व्यर्थ हो गया हो, तब उसने महज करुणा के वशवर्ती होकर कहा—आप इतना परेशान क्यो होती हैं ? आज तो केवल फैसला सुनाया जाएगा। फासी चढते-चढाते अभी जाने कितने दिन लगेगे।

उस अधिकारी ने तो ये शब्द सान्त्वना के रूप मे कहे थे, पर अर्चना को ये शब्द इतने निर्मम लगे कि उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे वह बहरी हो गई है। तो इन लोगो ने फासी को सूर्यास्त-सा अनिवार्य मान लिया है ? उसकी आखो पर अधेरा छा गया और ऐसा लगा कि न केवल वह बल्कि चारो तरफ के पेड़-पौधे औंधे हो गए हैं।

मिस्टर लाल भीतर जा चुके थे। जाते समय वह आंखो-आखो मे ही माफी मांग गए थे, जिसका मतलब था, मजबूर हू, क्या करू ? वकील को तो हर हालत मे प्रेमचन्द के पास जाना ही था।

सबसे अधिक निराशा अर्चना को इस बात से हुई थी कि यहा बहुत थोड़े लोग जमा थे। प्रेमचन्द को देश के लिए फासी हो रही है और किसीको इतनी भी फुरसत नही है कि एक बार जेल के फाटक पर आए। उसे अभी तक बन्दे-अली की मृत्यु की बात मालूम नही थी। सम्भव है उसके सामने ही किसीने

इसका ज़िक्र किया हो, पर वह अपने विचारो मे इस प्रकार गर्क थी कि सुना ही नही।

पर भीड धीरे-धीरे बढ रही थी और अर्चना को इस बात से खुशी हुई कि भीड की आखो मे एक तरफ यदि कौतूहल और कुछ हद तक बेचैनी या भय था तो दूसरी तरफ उसमे बर्बरता भी झलक रही थी। लोग केवल तमाशा देखने या मातम मनाने नही आए थे, बल्कि उनकी आखो मे ज़बर्दस्त प्रतिवाद और विरोध था। स्वाभाविक मृत्यु के सामने जैसे मनुष्य अपने को असहाय पाता है, उनकी दृष्टि मे वैसी ही असहायता का कोई पुट नही था। वे जानते थे कि कौन दुश्मन है और किसके कारण यह दिन देखने को मिल रहा है।

अर्चना ने जब इस उमडती हुई भीड की तरफ देखा तो उसे अब तक जिस एकाकीपन का अनुभव हो रहा था, वह जाता रहा। ये सब लोग प्रेमचन्द के लिए आए हैं। उसका प्रेमचन्द! उसका क्यो? सबका। या उसका तो है ही, पर सबका भी है। अर्चना की आखो के प्यालो मे गौरव का सरूर छलकने लगा।

वह इधर-उधर देख रही थी कि कोई और तरकीब भीतर जाने की हो सकती है या नही, कि उसने आश्चर्य के साथ देखा कि कई लोग जेल से बाहर निकले आ रहे हैं। इनमे मिस्टर लाल भी थे।

तो क्या किसी कारण से फैसला आज नही सुनाया गया? उसके हृदय की धडकन एकदम से बढ गई। न मालूम क्या सुनने को मिले।

तो क्या?

नही, नही, इतनी आशा कैसे की जा सकती है कि प्रेमचन्द को सन्देह का फायदा देकर बरी कर दिया जाए।

रात्रि के अन्धकार में हवाई जहाज़ को खोजने वाली घूमती हुई सर्चलाइट की तरह अर्चना की आंखो ने कचहरी से लौटते हुए आदमियो को एकबारगी देख डाला, पर उनमे प्रेमचन्द नही था।

मिस्टर लाल थोडी ही देर मे बाहर आए तो भीड के अगुआ के रूप मे अर्चना ने पूछा—आप इतनी जल्दी आ गए? क्या हुआ?

मिस्टर लाल ने कहा—जजमेंट बडा लम्बा था, इसलिए जज ने केवल मृत्यु-दण्ड के आदेश वाला अश ही सुनाया और उठ गए।

भीतरी मन मे तो कोई आशा थी नही, जाने कहा से एक बाहरी झोका आ गया था, फिर भी अर्चना ने अनुभव किया जैसे उसके वक्षस्थल पर किसीने एक भारी पत्थर जमा दिया। थोडी देर तक वह अवाक् रह गई। इस दिन की प्रतीक्षा वह इतने दिनो से कर रही थी और उसके लिए मानसिक रूप से तैयारी कर रही थी, पर इस समय मालूम हुआ कि उसने इस घडी की जो कल्पनाए बनाई थी, वे सब वास्तविक की तुलना मे बहुत ही फीकी थी।

उसे सचमुच सारा ससार असार मालूम हुआ। अवश्य इस भीड से कुछ सात्वना मिल रही थी जो मृत्युदण्ड की बात सुनकर ही जोर-जोर से शहीद का जयकारा लगाने लगी थी, पर यह भी क्या था ?

इसमे वास्तविकता कितनी थी ? यह तो क्षणिक जोश था, जो जयकारो के जरिए से क्षय होता जा रहा था।

वह फिर भी यन्त्रचालितवत् मिस्टर लाल के पीछे-पीछे चली और जब जनता बिल्कुल पीछे रह गई तो उसने मिस्टर लाल से पूछा—भेट हुई ?

जब फैसला दो मिनट मे सुना दिया गया तो यह भी हो सकता है कि अभियुक्त को बिना बुलाए ही निर्णय सुना दिया गया हो।

मिस्टर लाल अब तक अदालत के दृश्य मे डूबे हुए थे, पर सहसा जैसे चेतना ने चाबुक जमाया और उन्होने ध्यान से अर्चना को देखा। उनके चेहरे पर अनुकम्पा के बादल छा आए। बोले—हा, भेट हुई थी। वे बहुत खुश थे।

अर्चना के दिमाग पर जैसे एक कील जड दी गई, रुआसी होकर बोली—खुश थे ?

—हा, उन्हे देखकर यह बिल्कुल पता ही नही लगता था कि वह फासी की सज़ा सुनने के लिए आए है।

दिमाग पर एक और कील ! अबकी बार पहले से कुछ मोटी, और एक ही हथौडे मे मगज़ तक उतर गई। बोली—उनके साथ इस बीच कुछ अत्याचार हुआ था ?

—नही तो—कहकर मिस्टर लाल ने आखे ऐसी कर ली जैसे उनपर ज़ोर लगाकर कोई दूर की चीज़ देख रहे हो।

असल मे मिस्टर लाल ने इस ख्याल से अभियुक्त की तरफ देखा ही नही था। वे तो स्वय बहुत उत्तेजित थे। यो तो सभी कह रहे थे और उनकी

अन्तरात्मा भी कह रही थी कि इस मुकदमे मे फांसी के सिवा कुछ हो ही नही सकता। देखा जाए तो कोई सफाई दी ही नही गई थी, जो दी गई थी, उसका कोई मूल्य नहीं था।

पर कई बार ऐसा होता है कि जज किसी ऐसे बिन्दु को देख लेता है जिस पर किसीकी निगाह नही पडी और कसा-कसाया मुकदमा बिखर कर ढेर हो जाता है। यदि ऐसा इस मुकदमे मे हो जाता तो मिस्टर लाल की बडी नाम-वरी होती। योही इस मुकदमे को लेने के कारण उनकी ख्याति बहुत बढ गई थी और किसी भी पेशे के लिए ख्याति बहुत बडी चीज है।

फिर भी उन्होने अर्चना से जो कुछ कहा, वह ठीक ही था। यदि प्रेमचन्द को कोई चोट आई होती तो उसके व्यवहार मे कुछ तो फर्क आता। फिर मामूली चोट आने पर अर्चना को बताने की क्या ज़रूरत थी?

मिस्टर लाल ने दोबारा कहा—नही, नहीं, कोई चोट नही थी। तुम जेल मे चले हुए उस आन्दोलन को सामने रखकर कह रही होगी। बस इतना ही सही है कि प्रेमचन्द को ले जाकर कुत्ताघर मे बन्द किया गया है और उनका रसोइया छीन लिया गया है।

अर्चना का ध्यान अकस्मात रसोइए पर गया। बोली—तो उनकी रसोई अब कौन करेगा?

मिस्टर लाल ने कुछ पूछा नही था और न प्रेमचन्द ने कुछ कहा था। जब जान पर बन रही है तो रसोई कैसे होती है, या नहीं होती है, यह कौन पूछे?

अब अर्चना एक ही बात पूछना चाहती थी, पर वह सहसा वह प्रश्न पूछ नही सकी। प्रश्न बहुत ही वैयक्तिक था, फिर भी पूछना तो था ही। उसने सब साहस बटोरकर पूछा—आपने मेरे विषय मे बताया?

मिस्टर लाल ने कुछ भी बताया नहीं था। बहुत भारी गलती हुई। बेचारी घटो से उन्हे समझाकर लाई थी कि यदि मैं भीतर नही जा पाई तो आप मेरा सन्देश उन तक पहुचा दे कि मैं आई और आपसे मिल नही सकी, पर अग्रेज जज ने कुछ ऐसी जल्दबाज़ी की कि जहा घटे-दो घंटे का साथ होना था वहा मिनटो मे सब काम निबटा दिया गया। जज साहब पर तो जैसे भूत सवार था।

फिर भी वह यह कैसे मानते कि सन्देश नही पहुंचाया, घडी की तरफ

देखते हुए बोले—हा, हा, सब कुछ कह दिया। यह कहा कि सबेरे से तुम मेरे साथ रही····

—इसपर वे क्या बोले ?

मिस्टर लाल तेज़ी से आगे बढते हुए बोले—बोलते क्या, उन्हे इसकी पूरी आशा थी। सुनकर गम्भीर हो गए। तुम कोई चिन्ता मत करो। हाईकोर्ट से कम से कम फासी तो हट ही जाएगी।

मिस्टर लाल की अन्तिम बात सुनकर अर्चना का अहम् एकाएक सजग हो उठा, उसे अपने अहम् मे कोई दिलचस्पी नहीं थी, पर इस समय उसका अहम् प्रेमचन्द के अहम् का हिस्सा था, इसलिए उसकी विधिवत् रक्षा करना ज़रूरी था। बोली—वह तो शायद जेल मे सडने की बजाय फासी पर चढना पसन्द करेंगे···

मिस्टर लाल ने प्रतिवाद नही किया, यद्यपि यह दृष्टिकोण उनकी समझ मे नही आया और न उन्हे इस दृष्टिकोण से कोई सहानुभूति थी। उन्हे विवेचन की यह पद्धति बिल्कुल अस्वाभाविक और अव्यावहारिक लगती थी। बोले—अभी फैसले की प्रति प्राप्त करनी है, मै चला।

मिस्टर लाल तो चले गए और अर्चना वही रह गई।

क्यो रह गई, यह उसे मालूम नही था। मिस्टर लाल के अनुरोध पर कि मेरे साथ चलो, उसने यही कहा था कि अभी मैं थोडी देर रुकूगी।

इसीके बाद अस्पताल वाली वह भीड भी आ गई और कुछ देर तक बडी हलचल रही। अर्चना ने इसी समय कही पर तारा की एक झलक देखी, पर वह फिर नहीं दिखाई पडी। शायद भीड छटने के साथ चली गई।

ये लोग सब इग्लिश टाइम से आए थे! अर्चना हसी। इग्लिश टाइम। साम्राज्यवाद के सुविधानुसार सब कुछ बदल जाता है। दस की बजाय नौ बजे ही फैसला सुना दिया जाता है, पर ये लोग इग्लिश टाइम की ही लीक पीटते जा रहे हैं। घडी दो घडी तो क्या सुविधानुसार इतिहास ही बदल दिया जाता है।

तारा से भेंट होती तो अच्छा रहता। उस लडकी की इज्ज़त के पीछे ही प्रेम-चन्द ने अपना बहुमूल्य जीवन बलिवेदी पर चढा दिया था।

वह भी चली गई···

अर्चना को इस बात पर एक खुशी-सी हुई (यदि ,इस हालत मे उसे खुशी हो सकती थी तो) कि वही रह गई। राजद्वारे श्मशाने च य तिष्ठति स बान्धवः।

अर्चना ने देखा कि जब वह भीड छटने पर भी रह गई तो उसपर दो-तीन जोडी आखें लगी हुई थी। यह तो कोई भी बता सकता था कि यह खुफिया पुलिस के लोग थे। पर उसने उनकी तरफ ध्यान नही दिया।

यदि वह गिरफ्तार हो जाए तो क्या? गिरफ्तारी तो उसके लिए सबसे बडा वरदान होगा।

उसे यह सान्त्वना तो होगी कि वह भी प्रेमचन्द के साथ और एक हद तक उनके लिए कष्ट उठा रही है। उससे बढकर और क्या हो सकता है?

पर नही। यह कायरपन है। उसे एक बडा भारी काम सौंपा गया है और उसे उस काम को कर दिखाना है।

जब तक वह उस पत्र को प्रकाशित करके प्रेमचन्द की वास्तविक महत्ता को जनता के सामने नही ला देती, तब तक उसका कार्य समाप्त नही होगा। यह जनता अभी-अभी प्रेमचन्द जिन्दाबाद चिल्ला रही थी, पर इसे क्या पता था कि प्रेमचन्द शहीदो मे भी अपना सानी नही रखते। उन्होंने जान-बूझकर केवल एक सन्देश देने की सामर्थ्य बढाने के लिए मौका पाकर भी भागना स्वीकार नहीं किया।

इसी प्रकार अर्चना विभिन्न विचारो मे उलझी रही। घर जाने की इच्छा नही हो रही थी। सच तो यह है कि कोई इच्छा रह ही नही गई थी।

**अब न अगले वलवले हैं और न अरमानों की भीड़,**
**सिर्फ मिट जाने की हसरत यक दिले बिस्मिल मे है।**

हा, लौटकर उस पत्र को प्रकाशित करने की इच्छा उसमे जग रही थी। पर फासी के पहले उस पत्र को प्रकाशित करना उचित नही था, अमिताभ का यह विचार वह मानती थी। अमिताभ को उसने कितना बुरा-भला कहा था क्योंकि उस जमाने मे वह यह समझती थी कि प्रेमचन्द के मन पर से अमिताभ का सिक्का हटाए बगैर अपना सिक्का नहीं जम सकता।

पर अमिताभ ने पत्र के सम्बन्ध मे कितना उचित परामर्श दिया था। नही तो वह शायद अब तक उसे छपवा देती। उसका नतीजा कितना बुरा होता।

लोग समझते कि प्रेमचन्द प्राणभिक्षा माग रहा है, जबकि तथ्य इसके बिल्कुल विपरीत था।

कोई वैन आने की आवाज़ हुई।

अब अर्चना के सिवा कोई बाहरी आदमी जेल के बाहरी अहाते मे नही रह गया था। लारी की आवाज़ सुनकर उसके कान खड़े हो गए। विशेषकर इसलिए कि वैन की आवाज़ आने के साथ ही जयकारा भी करीब आ रहा था।

कुछ लोग वैन मे जेल लाए जा रहे थे।

कौन थे ?

वैन आकर बिल्कुल जेल के फाटक के सामने रुकी। जयकारा बहुत ज़ोर से होने लगा :

महात्मा गाधी की जय !

भारत माता की जय !

वन्दे मातरम् !

प्रेमचन्द ज़िन्दाबाद !

भगतसिह ज़िन्दाबाद !

इसके बाद तो सब शहीदो तथा नेताओ की जय बोली जाने लगी। मौलाना वन्देअली का नाम भी इन शहीदो के नाम में था।

अर्चना दूर से ही उस लारी को देखती रही। इच्छा होते हुए भी वह फाटक से दूर ही बनी रही क्योकि उसने फाटक के सामने के जेलवाले सन्तरी तथा अब तक मौजूद पुलिस वालो की आखो मे कोई ऐसी बात देखी जिससे वह समझ गई कि यदि वह आगे बढेगी तो रोक दी जाएगी।

वैन खुली और उसमे से कैदी निकाले जाने लगे।

तो क्या कुछ क्रान्तिकारी गिरफ्तार हुए है ? उसके मन ने कहा, नहीं, ऐसा नही हो सकता, गिरफ्तारी होती तो मेरी भी होती।

यही बात सही भी निकली। जो लोग उतारे गए, उनमे से कोई भी अर्चना का परिचित नही था, पर नही !

यह युवक कौन है ?

यह तो पहचाना हुआ-सा लगता है ?

हा ! नही, कुछ-कुछ पहचान मे आ रहा है, पर यह कौन है ? यह तो

कैदियो मे विशिष्ट भी मालूम हो रहा है।

अरे, यह तो वही है, जिसने कल आकर उसे खबर दी थी कि आज प्रेमचन्द के मुकदमे का फैसला होने वाला है।

हा, हा, याद आया। यह वही है। इसका नाम रजत है। यह विदेशी वस्त्रो की पिकेटिंग मे आया होगा।

सब बाते धीरे-धीरे समझ मे आ रही थी। अच्छा तारा ने इसकी परीक्षा लेने के लिए इसे पहले पिकेटिंग मे भेजवा दिया होगा या कौन जाने श्यामा ने ही ऐसा किया हो। पर यह असल मे तो तारा के कारण ही खिचकर आया है।

तो अपना खेल समाप्त हुआ, तारा का खेल शुरू हो रहा है। यही ससार है। यही जीवन है। रगमच तो खाली नही रह सकता।

रजत ने सीखचो के अन्दर प्रवेश करते हुए बडे ज़ोर से नारा दिया—प्रेमचन्द और बन्देअली ज़िन्दाबाद !

बाकी कैदियो ने इस नारे को ले लिया और नारा लगाते हुए वे जेल-राक्षसी के खुले हुए लौह जबडो मे समा गए। हा, उनका जयकारा देर तक सुनाई पडता रहा।

अर्चना को बहुत खुशी हुई। अबकी बार सचमुच खुशी हुई कि ये लोग वाहर का हव्य बल्कि हृदय का नैवेद्य भीतर के सत्याग्रहियो तथा सर्वोपरि प्रेमचन्द को पहुचा रहे हैं। उसके मन मे इस समय कोई शब्द नाच गया :

कु···ता···घ··र !

मिस्टर लाल ने यह शब्द प्रेमचन्द के सम्बन्ध मे किसी प्रसग मे इस्तेमाल किया था।

उसने तो पूछा भी नही था कि इस शब्द का क्या अर्थ है ? यह क्या है ?

एक पश्चात्ताप मन को कचोटने लगा।

पर ऐसे जाने कितने पश्चात्ताप थे, उनकी भीड मे यह खो गया।

अर्चना की आखे जेल के फाटक की ओर ही लगी हुई थी। वह जैसे कुछ आशा करती थी। क्या आशा करती थी ? क्या वह इसीलिए बैठी थी कि रजत को जेल जाते हुए देखे ?

यह एक महत्वपूर्ण घटना है, इसमे सन्देह नही। यह धारावाहिकता का द्योतक है। धारा ही असली सत्य है। धारावाहिकता ही असली सफलता है।

बहुत अच्छा है । देश तो आगे बढ रहा है, बढेगा, पर अपना क्या होगा ?

वैन उसी प्रकार खडी थी । शायद कागजो पर दस्तखत हो रहे हो और जब हो जाएगे तो वैन चली जाएगी ।

अब भी भीतर से रजत वाली टुकडी का जयकारा जब-तब सुनाई पड जाता था । या वह टुकडी तेज छुरी की तरह कारा-राक्षसी के हृदय मे धसी जा रही थी, यह उसीकी गूज है ?

या यह भ्रम था ? केवल अपने मन की प्रतिध्वनि थी ?

वह थानेदार या दारोगा फाटक से निकल आया । मालूम होता है चार्ज देने की लिखा-पढी खत्म हो गई । अब वह जाकर वैन की सामने वाली सीट पर बैठेगा और वैन चली जाएगी ।

पर यह क्या ? यह तो फाटक से निकलकर दूसरी तरफ गया और हेडकानस्टे-बिल को बुलाकर कुछ बाते करने लगा । अर्चना को लगा कि वे कोई ऐसी बात कर रहे हैं जिससे उसका सम्बन्ध है ।

क्यो ऐसा लग रहा है ? क्या उसका दिमाग कुछ खराब हो रहा है ? प्रेमचन्द का मृत्युदण्ड सुनकर उसका मस्तिष्क कुछ विकृत तो नही हो गया है ?

यह तो साधारण-सी बात है, आजकल हर समय होती रहती है । कैदी को लेकर पुलिस वैन आई और कैदी छोड गई । -

हा, पर उसने उसके कान मे क्या कहा ? और ये लोग जाते क्यो नही ? वह पुलिस-अधिकारी सिगरेट पीने लगा और बाकी सिपाही इधर-उधर बिखर गए । यह तो स्पष्ट था कि वैन अभी नही जा रही है ।

क्यो ऐसा ? क्यो ?

फाटक के सन्तरी ने ग्यारह का घटा बजाया । अभी उसकी आवाज़ हवा मे गूज ही रही थी कि सब लोग सावधान हो गए और एक अग्रेज़, हा, यह तो सुप-रिन्टेन्डेन्ट सिम्पसन है, चमचमाती हुई साइकल पर जाने किधर से प्रकट हुआ । सब लोग तनकर खडे हो गए थे । पुलिस वालो ने सलामी दी, फाटक के सन्तरी ने बन्दूक से सलामी दी और जेल का बडा फाटक, जो अब तक किसीके लिए भी नही खुला था (रजत आदि खिडकी वाले दरवाज़े से भीतर गए थे) दोनो पल्ले पसार कर पूरा खुल गया । और उस अग्रेज़ ने साइकल से उतरकर साइकल यो ही छोड दी । दो सन्तरियो ने लपककर साइकल पकड ली और

सिम्पसन भीतर चला गया ।

और साथ ही बडा फाटक बन्द हो गया और उसमे ताला पड गया ।

और भी कुछ समय निकल गया । अर्चना यह सोच रही थी कि अब उसे चल देना चाहिए, पर लौटने की इच्छा नही हो रही थी । पैर उठ नहीं रहे थे । कोई सवारी भी तो दिखाई नही पड रही थी । उसने निश्चय किया अब की बार कोई इक्का या तागा आए तो उसमे चली जाएगी ।

पर कोई इक्का या तागा नही आया और बारह बज गए । अब वह पुलिस-अधिकारी व्यग्र हो गया । उसने फाटक पर जाकर भीतर वाले सन्तरी से कुछ कहा और उस सन्तरी ने जाकर भीतर कुछ कहा ।

अब की बार अर्चना को फिर लगा कि उसीके विरुद्ध कुछ बातचीत हुई, बल्कि उसे ऐसा जान पडा कि पुलिस-अधिकारी ने कनखी से उसकी ओर देखा भी । तो क्या ये लोग टेलीफोन से उसकी गिरफ्तारी का परवाना मगा रहे हैं या और कोई बात है ?

एक बार तो उसके मन मे आया कि चल दे, पर अगले ही क्षण ख्याल आया कि इस समय गिरफ्तार हो जाना ही सबसे बडा सुख है । यदि साथ फासी नही चढ़ सकते तो कम से कम जेल मे तो रहे ।

उसी समय एक इक्के पर कोई आदमी आया और इक्का वाला अपनी सवारी उतारकर चलने लगा । उसने उसे देखकर पूछा भी कि शहर चलना है ?

पर अर्चना ने ज़िद मे आकर कह दिया—नही ।

यदि वे गिरफ्तार ही करना चाहते है तो करें ।

इक्के वाला निकल गया, तब अर्चना को ख्याल आया कि अरे नही, उसे तो किसी भी हालत मे गिरफ्तार नही होना चाहिए क्योकि फिर प्रेमचन्द के पत्र को प्रकाशित कौन करेगा ? यो लोग तो प्रेमचन्द को एक मामूली शहीद समझेंगे, उनका असली बडप्पन अज्ञात रह जाएगा । पर इक्का तो चला गया ।

इसके अलावा यहा एक तसल्ली यह तो है कि मैं प्रेमचन्द से सौ-दो सौ गज़ के अन्दर हूं । यह क्या कोई छोटी बात है ? 'अवश्य वे नहीं जानते, पर मैं तो जानती हू । यदि वह भी जानते तो अच्छा रहता । मिस्टर लाल ने तो कह ही दिया है कि वह फाटक पर आई है और उसे भीतर नही जाने दिया गया था ।

पुलिस-अधिकारी अब बहुत व्यग्र हो रहा था। उसने जाकर भीतर वाले सन्तरी से चिल्ला-चिल्लाकर कुछ कहा। भीतर वाले सन्तरी ने उसी अनुपात से चिल्लाकर जवाब दिया पर वह भीतर की ओर गया और आकर फिर चिल्लाकर कुछ बोला।

पुलिस-अधिकारी अब अर्चना को ही देख रहा था। क्या यह आगे बढेगा?

अर्चना को यह ख्याल आया कि जब ये लोग मुझे गिरफ्तार करने का ही इरादा कर चुके है तो मैं ही क्यो न आगे बढ जाऊ? कोई मुझे फासी तो न होगी। लौट के आऊगी तो प्रेमचन्द के उस पत्र को उचित टिप्पणियो के साथ प्रकाशित करूगी। जेल से लौटने पर मेरी एक मर्यादा बन जाएगी और इस सम्बन्ध मे मैं जो कुछ कहूगी, वह भी अधिक ध्यान से सुना जाएगा।

वह बढकर फाटक के पास पहुच गई। बिल्कुल बाहर वाले सन्तरी और वैन के पास।

अजीब बात है कि अब उसे केवल बाहर वाला बन्दूकधारी सन्तरी देख रहा था। बाकी लोग उसकी तरफ देख भी नही रहे थे। शायद इसलिए नही देख रहे थे कि बात खुल न जाए। मन मे चोर होने से ऐसा ही होता है।

वह पुलिस-अधिकारी फिर भीतर वाले सन्तरी से कुछ बाते करने लगा। अब की बार उसने ज़ोर-ज़ोर से बाते नही की, नही तो वह भी सुन लेती। जान-बूझकर ही वह धीरे-धीरे बोल रहा था।

अर्चना की समझ मे एक बात नही आ रही थी कि यदि उसे गिरफ्तार करना ही है तो इस वैन की क्या ज़रूरत है? यही पास मे ही औरतो की जेल है उसमे पहुचा दे। केवल इतनी दूर पहुचाने के लिए वैन?

अर्चना इस प्रकार सोचते-सोचते कुछ अन्यमनस्क हो गई थी, पर एकाएक उसके विचार जाने कितनी छलागे एक साथ भरकर प्रेमचन्द को प्रत्यक्ष करने लगे। अचानक जैसे नीद टूट गई, बल्कि चेतना की भी बहुत-सी पपडियां उखड गई और उसने देखा कि प्रेमचद बेडियो से लैस और धारीदार कुर्त्ते-जाघिये मे दोनों फाटको के बीच खडे होकर मुस्करा रहे हैं।

अर्चना को ऐसा लगा कि उसका दिमाग बिल्कुल फिर गया है और वह दिन मे स्वप्न देख रही है।

पर नही, प्रेमचन्द तो प्रत्यक्ष थे और ऐसे थे जैसे वह कल्पना करती

आई थी ।

भीतर वाले सन्तरी ने जल्दी से खिडकी वाला दरवाजा खोल दिया । प्रेमचन्द बाहर आए । पुलिस ने उन्हे घेर लिया ।

तो उन्हे ही वैन मे जाना था ? उनका कही चालान हो रहा था ।

प्रेमचन्द ने ही पहले बात छेडी । उन्होने सिपाहियो की परवाह किए बिना कहा—मैं जानता था कि तुम यहां मिलोगी । मैं कानपुर भेजा जा रहा हू ।

—कानपुर ? क्यो ?

प्रेमचन्द ने एक पैर वैन की तरफ बढ़ाते हुए कहा—अब तो मेरा शरीर इनका है, जहा चाहे ले जा सकते हैं ।

अर्चना सहसा कुछ कह न सकी । बोली—मैं तो देख रही हू कि शरीर अब रहा ही नही । तुम कितने दुबले हो गए हो ? केवल आत्मा ही आत्मा रह गई है ।

दूसरा पैर भी वैन पर रखते हुए प्रेमचन्द ने कहा—तुमने बहुत अच्छी बात कही । यह मेरा पाथेय रहेगा ।

वैन का इजन चालू हो चुका था । समय बिल्कुल नहीं था । निस्सन्देह यह अन्तिम दर्शन था । बिल्कुल अन्तिम । अब कभी भेंट न होगी…

अर्चना पागल की तरह दौडी और सिपाहियो के रोकने पर भी उसने प्रेमचन्द के पैर छू लिए । उसी समय वैन चालू हो गई ।

प्रेमचन्द ने भीतर से चिल्लाकर कहा—वन्देमातरम् !

अर्चना अपने को सम्हाल नही सकी । ऐसा लगा कि वह बेहोश हो जाएगी, पर जेल के फाटक के सामने बेहोश ! उसने पूरी इच्छाशक्ति लगा दी । ऐसा मालूम हुआ कि वह सफल हो गई…

पर संध्या समय उसने देखा कि वह अपने कमरे मे लेटी हुई है और तारा उसके पास बैठी है ।

पूछने पर धीरे-धीरे पता चला कि वह जेल के फाटक पर ही बेहोश हो गई थी । शायद उसने कसकर प्रेमचन्द के पैर पकड लिए थे और उसी समय झटके से वैन चली, तब वह गिर पडी थी । कम से कम जेल-सन्तरी का यही कहना था ।

सौभाग्य से उसी समय कुछ लोग आ गए थे जिनमें तारा भी थी । वे लोग

यह सुनकर आए थे कि जेल के अन्दर के कुछ राजनैतिक कैदियों को बहुत चोट आई है।

इस समय अर्चना का मुह कडवा हो रहा था और शरीर बहुत कमजोर हो गया था। कुछ देर तक तो वह चुपचाप रही, पर तारा ने उसे धीरे-धीरे फल का रस पिलाना शुरू किया और थोड़ी ही देर मे अर्चना बिल्कुल चगी होकर उठ बैठी।

तारा ने उससे कहा—दीदी, आप बहुत देर तक बेहोश रही, मै तो श्यामा दीदी को बुलाने ही वाली थी। वे इस बीच दो बार हो गई हैं।

पर अर्चना ने इन बातो मे कोई दिलचस्पी नही ली, मानो वह इसके लिए कृतज्ञ ही न हो कि उसे होश मे लाया गया। बोली—मैं बिल्कुल बेहोश नही थी, मै एक स्वप्न देख रही थी।

फिर उसने बताया कि किस प्रकार वहा खडे-खड़े अप्रत्याशित रूप से प्रेमचन्द से भेट हो गई थी और उसे मालूम हुआ था कि वे कानपुर जेल भेजे गए है।

इसके बाद वह फिर लेट गई और उसने आखे मूद ली।

तारा एक प्रशिक्षित नर्स की तरह उसे पथ्य और दवा देती रही। बोली—मैं प्रदीप से मा को कहला चुकी हू कि आज मैं यही रहूंगी, इसलिए आप चिन्ता न करे।

अर्चना ने आखे बन्द किए ही एक हाथ तारा की जाघ पर कृतज्ञता के साथ रख दिया।

फिर धीरे-धीरे बोली—मै एक स्वप्न देख रही थी जो बहुत ही अद्भुत था। अच्छा तारा, तुम्हे कुछ याद है कि क्रीटो पुरुष था या स्त्री? मुझे तो बिल्कुल भूल गया।

तारा ने विस्मय के साथ पूछा—कौन क्रीटो?—कहकर उसने अर्चना की तरफ भयमिश्रित आश्चर्य के साथ देखा कि कही दीदी के दिमाग का कोई पुर्जा इधर-उधर तो नही हो गया?

उसे तो कभी सुना-सा नही लगता था। बोली—कौन क्रीटो?

अर्चना के चेहरे पर दया और व्यग्य, दया अधिक व्यग्य कम, की रेखाए नाच गई। हाथ से जाघ को दाबते हुए बोली—पगली, तुमने सुकरात की

कहानी नही पढी ?

—अच्छा, आप उनकी बात कर रही हैं।

—हा, उन्हीकी बात कर रही हू····

वह अचानक चुप हो गई, पर चेहरा देखने पर यह ज्ञात होता था कि उसकी बन्द आखो के सामने कोई छायाचित्र चल रहा है, वह उसे देखकर उत्तेजित, द्रवित हो रही है। बोल पडी—सुकरात से क्या मतलब ? आप एकाएक सुकरात की बात क्यो कर रही हैं ?

तारा की यह धारणा दृढ हो रही थी कि कुछ खलल जरूर है। कही दिमाग पर कोई चोट तो नही आ गई ? डाक्टर ने तो कहा कि कही भी चोट नहीं है, केवल कमजोरी है।

कुछ देर तक तारा अर्चना के रग बदलते हुए चेहरे को देखती रही, फिर उसने शकित होकर कहा—आप प्रेमचन्द जी की बात करते-करते सुकरात की बात क्यो करने लगी ?

अर्चना ने इसका कोई उत्तर नही दिया। शायद उसने प्रश्न ही नही सुना। वह तो अपने ही विचारो में बहती हुई मालूम हो रही थी या वह कोई ऐसी चित्रमाला देख रही थी जिसे देखने के लिए वह विवश ज्ञात होती थी।

तारा बोली—सुकरात की बात कैसे आई ?

अर्चना ने फिर कोई उत्तर नही दिया और ऐसा लगा जैसे वह सो गई। चेहरा स्थिर हो गया। उसपर रेखाओ मे आलोक और अन्धकार का जो नृत्य चल रहा था, वह बन्द हो गया। एक मृदु खुर-खुर सुनाई पडने लगी।

तारा को अच्छा नही लगा। शायद एक क्षण के लिए भय भी लगा। क्यो न इनके भाई को खबर दी जाए ? यदि कुछ हो गया तो ? बेचारी कुछ कर भी नही पाई और इस बुरी तरह बीमार हो रही है। शरीर से तो ठीक है, पर दिमाग पर पता नही क्या असर पडा है।

प्रेमचन्द जी को उस हालत मे देखकर अवश्य बहुत दुःख हुआ होगा। उतना शौकीन आदमी, पर कुर्ता-जाघिया और बेडी, ऊपर से लटकता हुआ फासी का फदा।

यह सब तो समझ मे आया। यह भी समझ मे आया कि क्रीटो सुकरात का मित्र है, इस नाते पूछा था, पर सुकरात की बात यहां कहा से आई ?

प्रेमचन्द की बात करते-करते वे सुकरात की बात क्यो करने लगी ?

अधिक से अधिक दो मिनट तक वह मृदु खुर-खुर जारी रही, फिर अर्चना ने जोर से एक सास ली। सुडकने की आवाज हुई, फिर वह बिल्कुल साधारण तरीके से आख खोलकर बोली—तारा, तुम अवतारवाद मे विश्वास करती हो ?

तारा ने शकित दृष्टि से अर्चना को देखा, बोली—अवतारवाद कैसा ?

—यही कि पहले कोई और था, फिर वह दूसरे रूप मे पैदा हुआ।

—हा, रामायण मे अवतारो की बात लिखी है।

अर्चना ने फिर आखे बन्द कर ली। वह कुछ नही बोली।

तारा ने अर्चना को जगाए रखने के लिए कहा—अब दीदी, आपके लिए कोई और चीज बनवाए ? डाक्टर कह गया है कि आप सब कुछ खा सकती है।

—पी भी सकती हू ?—अर्चना ने उसी तरह आखे बन्द किए हुए पूछा।

तारा अबकी बार बहुत अधिक शकित हुई कि यह पीने-पिलाने की बात क्या कर रही है ? वह उठ खडी हुई और बोली—दीदी, तुम्हारी तबियत तो ठीक है न ? मैं डाक्टर को खबर करू ?

—डाक्टर को क्या खबर करोगी ?—कहकर अर्चना ने आखे खोल ली और जब उसने सामने तारा को भीत और सन्त्रस्त देखा तो हसकर कहा —तुम घबडा रही होगी कि मेरा दिमाग खराब हो गया पर यह बात नही। मैंने सचमुच सुकरात को स्वप्न मे देखा। घटो देखती रही।

—अजीब बात है !

तारा बैठ गई। तब अर्चना जो बाते बताई, उनका संक्षिप्त विवरण यह है कि उसने स्वप्न मे वह पूरा दृश्य देखा जब सुकरात गुसलखाने से नहा-धोकर आए और उन्होने जहर का प्याला पिया। धीरे-धीरे, एक-एक करके उनके अग पैर की तरफ से किस प्रकार मरते गए, किस प्रकार उन्होने अन्त मे अपनी मानत की बात कही कि कही वचन-मिथ्या न हो जाए और किस प्रकार शांति के साथ उनका देहान्त हुआ।

सारी बाते बताकर अर्चना उत्तेजना मे उठ बैठी और बोली—पर मैंने यह देखा कि सुकरात का चेहरा बिल्कुल प्रेमचन्द की तरह है और उनके मित्र क्रीटो की जगह स्वय मै हू। इसीलिए मैने पूछा था कि क्रीटो पुरुष था या स्त्री ?

तारा के रोगटे खडे हो गए थे । भय, आश्चर्य, भक्ति, श्रद्धा जाने कितनी ही भावनाए मिलकर एक साथ उसके चेहरे पर प्रगट हो रही थी ।

अर्चना भी बहुत उत्तेजित थी । उसने तारा को अपने पास खीच लिया और बोली—लो, सुन लो ! यह कोई गलत स्वप्न नही है । सचमुच उन्होने जान-बूझकर फासी का फन्दा अपने गले मे डालना स्वीकार किया है ।

इसके बाद उसने तारा को उस रात की और उसके बाद दिन की पूरी कहानी सुनाई, जब प्रेमचन्द के बदले चित्रकूटी बाहर चला आया था और सबको निराशा हुई थी ।

उसने उस चिट्ठी की बात भी बताई, बल्कि प्रत्यक्ष प्रमाण देने के लिए उसने प्रेमचन्द की चिट्ठी की नकल भी दिखला दी । असली चिट्ठी तो उसने कही छिपाकर रखवा दी थी, जिससे वह किसी भी हालत मे पुलिस के हाथ न पड़ सके ।

दोनो देर तक इस विषय मे बातचीत करती रही । दोनो ने साधारण तरीके से बूढे मगरू का पकाया हुआ खाना खाया । यहा तक कि दोनो सोने के लिए तैयार हो गईं । यद्यपि दोनो जानती थी कि नीद आनी मुश्किल है ।

फिर भी बत्ती बुझा दी गई । रात्रि की स्तब्धता दोनो की आत्मा मे छाने लगी । कहीं कोई इक्का या बग्घी या कोई दूसरी गाड़ी निकल जाती थी तो उससे शान्ति भग हो जाती थी ।

एकाएक अर्चना चीख पडी जैसे स्वय रात्रि ही चिल्ला पडी हो । बोली—अरी तारा, मैंने तुम्हे एक बात तो बताई ही नही ! रजत जेल पहुच गया है । वह जिस वैन मे जेल पहुंचा, उसी वैन मे प्रेमचन्द का चालान हुआ ।

फिर से बातचीत शुरू हो गई और रात भर चलती रही ।

जब पहला मुर्गा बोला तो शायद लजाकर या थककर दोनों चुप हो गईं ।

तारा के मन के तार अब बहुत ही ऊचे सुर मे बध गए थे । प्रेमचन्द की महत्ता को मालूम करने वाला प्रथम व्यक्ति होने के नाते उसे गौरव तो था ही, साथ ही इस बात का भी कम गौरव नही था कि यदि कोई अर्चना का सुकरात है तो उसका भी एक सुकरात है । उसने रजत के साथ कितना अन्याय किया ?

और वह ?

# ५३

अगले दिन अर्चना बिल्कुल स्वस्थ थी।

उसे बडा आश्चर्य हो रहा कि उसने इस बीच कई बाते ऐसी की, जिनकी वह कल्पना भी नही कर सकती थी।

वकील के सामने अपने को मगेतर बतलाया। वह तो इसे लिखकर अर्जी मे भी देने को तैयार थी बशर्ते कि उसे मिलने देते।

मगेतर किसकी ?

फासीघर मे बन्द प्रेमचन्द की ?

हा हा हा हा ··

दूसरी बात जो उसने की नही, बल्कि हुई, वह यह थी कि वह बेहोश हो गई थी।

अब उसे इस प्रेम के लिए कोई दोष नही दे सकता क्योकि इसमे भोग का पक्ष तो कोई है ही नही, है तो केवल त्याग का पक्ष। वर्षो मिटने और घुलने का पक्ष। प्रेमिक के उठ जाने के बाद उसकी अलख जगाने का पक्ष।

कबीर ने कहा था कि प्रेमगली बहुत सकरी है, उसमे दो नही समा सकते। इस क्षेत्र मे उसका कितना अद्भुत और अप्रत्याशित अर्थ निकल रहा है। ठीक है 'ता मे दो न समायँ।'

अकेले वही रह जाएगी।

रही कमज़ोरी-प्रदर्शन की बात, सो उसे इसके लिए कोई पछतावा नही हो रहा था, बल्कि उसकी स्मृति मधुर ही मालूम हो रही थी। शायद इसी मनोवृत्ति से लोग तर्पण और श्राद्ध करते है। यह कौन नही जानता कि मरा हुआ आदमी पिण्ड ग्रहण नही करता, पर अपने को तो सन्तोष होता है।

प्रेमचन्द ने न तो जाना और न कभी जानेगा कि उस दिन जब उसकी वैन सनसनाती हुई निकल गई तो वह भन्नाकर वही गिर पडी, पर इससे क्या ? उसे सन्तोष है।

यदि क्रान्तिकारी इसे कमजोरी समझे तो उनसे बढकर हृदयहीन कोई नही हो सकता। क्या क्रान्तिकारी होने के लिए हृदयहीन होना ज़रूरी है ?

क्या क्रान्ति का आधार ही सहृदयता परम सहृदयता नही है ?

फिर यह निषेध क्यो ?

किसी भी हालत मे वह किसीकी परवाह नही करती। वह तो अपने मन के मार्ग पर ही चलेगी।

उसने उस दिन दो कार्य किए। एक तो कानपुर वाले अपने भाई अरविन्द-कुमार को पत्र लिखा कि मेरी तबियत खराब है, मैं आ रही हू। दूसरे उसने सध्या समय एक गुप्त स्थान मे अपनी टुकडी की सभा बुलाई।

वह तो इसमे जीवानन्द को भी बुलाना चाहती थी, पर उसने सोचा कि इसपर लोग आपत्ति कर सकते है। जीवानन्द भी अक्खड है। कही कहा-सुनी हो गई तो अच्छी बात नही रहेगी। निर्णय कर लिया जाएगा, फिर जो रहेगे, वे जाने और उनका काम जाने।

जब सभा निश्चित समय पर जुडी तो अर्चना सबके चेहरे देखकर ही समझ गई कि लोग उससे विशेष प्रसन्न नही हैं।

अर्चना ने थोडे शब्दो मे यह कहा कि मैं अब कुछ दिनो तक अवकाश लेना चाहती हू। भाई के यहा जाकर रहूगी, इसलिए मैं चाहती हू कि आप लोग मुझे सब भारो से मुक्त कर दे, अपना एक नेता चुन ले और मैं तो यही कहूगी कि अब मुख्यदल के साथ मिल जाना चाहिए।

प्रणवकुमार एकाएक तेज होकर बोला—आप यह साफ-साफ क्यो नही कहती कि आप प्रेमचन्द की इच्छा का अनुसरण कर दल छोड रही हैं।

अर्चना इस आक्रमण के लिए तैयार नही थी। बोली—उन्होने हर्गिज-हर्गिज यह नही कहा है। उन्होने यह कहा है कि परिस्थिति देखकर दल को बदलना चाहिए।

—बदलने का अर्थ काग्रेस बन जाना है ?

—नही बदलने का अर्थ और भी क्रान्तिकारी बनना है। पहले जब क्रान्ति-आन्दोलन का आरम्भ हुआ था, तब वह एक स्वत स्फूर्त प्रतिवाद मात्र था। उसके सामने कोई स्पष्ट लक्ष्य नही था, पर धीरे-धीरे इसमे कई सोपान हुए। विचारो का परिष्करण हुआ। पहले कुछ लोग वैधानिक राजतन्त्र तक के ढग पर सोचते थे जैसे शायद इटली के क्रान्तिकारी पहले सोचते थे, फिर प्रजातन्त्र का विचार आया, दल के नाम तक मे प्रजातन्त्र शब्द आ गया, फिर प्रजातन्त्र यथेष्ट

समझा नही गया और दल के नाम के साथ समाजवादी शब्द भी जोड़ दिया गया। अब तकाजा यह है कि दल और क्रान्तिकारी बने, उसकी कार्यप्रणाली मे भी ध्येय के अनुरूप परिवर्तन हो।

बात बहुत ही ठीक थी, इसपर किसीको कुछ कहना नही था, पर झगडा इस बात का था कि परिवर्तन किस प्रकार का हो।

प्रणवकुमार ने पहले की तेजी कायम रखते हुए कहा—क्रान्तिकारी गण आतकवाद को कभी भी दल का ध्येय नही मानते थे, पर कभी-कभी आतकवाद भी जरूरी होता है। सरदार भगतसिह ने असेम्बली मे बम डालते हुए एक फ्रेंच क्रान्तिकारी का हवाला देते हुए जो पर्चा फेका था, उसमे कहा गया था कि बहरो को सुनाने के लिए धडाके की जरूरत है। क्या आप यह सुझाव दे रही है कि हम मेरठ षड्यन्त्र वालों की तरह कोई दल बनाए जो केवल पर्चेबाजी करे? क्या पर्चेबाजी से ही या गैरकानूनी करार दिए जाने से ही कोई दल क्रान्तिकारी हो सकता है?

इसपर तात्त्विक बहस छिड गई। सबने उसमे भाग लिया। सब यही कहने लगे कि क्रान्तिकारी तो लेनिन का बाल्शेविक दल था जो पर्चेबाजी करने के साथ-साथ सशस्त्र तैयारियो मे भी लगा हुआ था। मेरठ षड्यन्त्र-दल को या उन दिनो जो साम्यवादी दल मौजूद था, वह इस दृष्टि से बाल्शेविक-दल से बहुत घटिया था। उससे तो क्रान्तिकारियो का यह दल ही अच्छा था जो और कुछ नही तो लोगो मे प्रतिरोध की शक्ति को बढा रहा था। हमारा देश जिस सम्पत्ति मे सबसे दरिद्र है, यानी शहीदो की सम्पत्ति मे, उसमे ऐश्वर्यशाली बना रहा था और प्रचलित जन-आन्दोलन की निरन्तर समझौतावादी प्रवृत्ति से ऊबे हुए लोगो को एक रास्ता दिखा रहा था।

अर्चना ने यह सब बताकर कहा—यहां तक तो ठीक है। मुझे स्पष्ट दिखाई पड रहा है कि अब नया कुछ होगा। अमिताभ जी भी यही मानते हैं, पर मै तो व्यक्तिगत कारणो से अवकाश चाह रही हू। कई कारणो से मै अब कानपुर मे ही जाकर रहूगी।

सब लोग समझ गए कि अर्चना क्या कहना चाहती है। इस सम्बन्ध मे किसीको कोई आपत्ति नही थी।

प्रणवकुमार एकाएक जैसे एक नई सूझ से अनुप्राणित होकर बोला—क्या

कोई ऐसा तरीका नही हो सकता जिससे प्रेमचन्द जी को उनकी इच्छा न रहते हुए भी जबर्दस्ती बाहर ले आया जाए ?

अर्चना के घाव को जैसे किसीने खुरच दिया। बोली—मैं इसपर भी सोच चुकी हू, पर यह प्रयास व्यर्थ है। वह जिस बात पर तुल जाते है, उसे करके ही दम लेते है। उस दिन जब वह वैन पर चढाकर बाहर भेजे जा रहे थे, तब मेरे दिमाग मे यह विचार आया था। यदि हमे पहले से पता होता तो हम जैसा प्रणव भाई कहते है वैसा कर सकते थे, उतनी शक्ति तो हममे है, पर वह स्वय लौट जाते।

'स्वय लौट जाते' कहकर अर्चना को कुछ सन्तोष नही हुआ क्योकि इस प्रकार के आचरण मे एक दूसरी ही गन्ध आ जाती। न भागना या भागने से इन्कार करना और बात है, पर यह और बात है। स्वय जाकर अपने को सौप देने मे प्रतिपक्षी के विषय मे कुछ न कुछ आस्था सूचित होती है, जिसमे अर्चना को खोटे सिक्के की खनक सुनाई पडी।

वह व्याख्या के रूप मे बोली—वास्तविक रूप से वह वैसी स्थिति मे क्या करते, यह हमारी कल्पना का विषय नही है। ऐसे क्षेत्रो मे वास्तविकता कल्पना से बाजी मार ले जाती है, हम इसे छोडे, और अपने निर्णय कर ले।

सर्वसम्मति से प्रणवकुमार को टुकडी का नेता या कामान्डर-इन-चीफ चुना गया।

अर्चना चाहती थी कि इसी बैठक मे यह भी तय हो जाए कि प्रणवकुमार जल्दी से जल्दी जीवानन्द से बातचीत करे और दोनो दल फिर एक हो जाए, पर प्रणवकुमार ने कहा—हम एक तो है ही। हममे कोई फर्क नही है। हममे बराबर सहयोग रहता है और रहेगा। पुलिस से बचत की दृष्टि से भी छोटे-छोटे दल अच्छे है। एक दल नष्ट हो जाए, तो बाकी दल बने रहेंगे।

यह तर्क बहुत पुराना था। अर्चना को ऐसा लगा कि प्रणवकुमार अपना नेतृत्व दिखलाना चाहता है, पर उसे दो कारणो से उसपर किसी प्रकार क्रोध नही आया। एक तो यह कि मैं अब अलग हो रही हू, दूसरे यह कि यदि प्रणवकुमार कुछ करके दिखाना चाहता है तो बेशक करे। उससे देश को लाभ ही होगा। युवशक्ति को प्रेरणा मिलेगी, खटिया पर पडे-पडे मरने से किसी भी तरह के संग्राम मे मरना कही अच्छा है। दृष्टान्त तो बनेगा। इतिहास तो बनेगा।

अर्चना ने कोई विरोध नही किया, पर अप्रात्याशित रूप से प्रतिभा ने अजीब ढग से कहा—हमारा दल जिस कारण से मुख्य दल से अलग हुआ, वह कारण सिद्ध नही हुआ। इसलिए अलग रहने का कोई अर्थ नही होता।

प्रणवकुमार ने इसे अपने व्यक्तित्व पर हमला समझा। बोला—हमने प्रेमचन्द उत्पन्न किया। सारे देश मे उनका नाम हो रहा है, यह कोई छोटी बात है ?

फिर तर्क की गाडी चल निकली और उसमे से तरह-तरह की चू-चरं निकलने लगी। प्रतिभा भी तेज होकर बोली—प्रेमचन्द को तो अमिताभ जी ने पैदा किया। वह उन्हींके शिष्य है। हमने उन्हे क्या बनाया ? यह तो महज आत्मश्लाघा है

इस प्रकार कौन किसका चेला है, और कौन किसका गुरु, इसपर लम्बी बातचीत होने लगी। प्रतिभा बोली—ख्याति के अजीब नियम है, उसे छोडिए। यदि यह मान भी ले कि प्रेमचन्द जी के सारे कार्य का श्रेय इसी नये दल को है, तो भी हमारा कार्य कितना है ? हमने तो केवल एक लैसद्दुक को मारा, पर इसी बीच मुख्य दल की काशी शाखा ने ही टेगर्ट को मारा। हम तो इतने कमजोर है कि वाजिब तौर पर जिस चित्रकूटी को हमे रखना चाहिए था, उसके लिए मुख्य दल जोखिम उठा रहा है। हा, हम अगर अपनी लीडरी चाहते है, तो अलग दल रखना जरूरी हो जाता है।....

यह प्रत्यक्ष हमला था। पर अर्चना ही बीच मे पडी। उसने कहा—इस तरह से केवल हत्याओ या डाको की सख्या से क्रान्तिकारी कार्यो को नापना बिल्कुल गलत है। देखना तो यह है कि कहा से कितनी उत्तेजना और अनुप्रेरणा जनता को मिलती है ? यह देखना है कि क्रान्ति का रथ कितना अग्रसर हुआ, स्वतन्त्रता कितने पास आई।

अर्चना ने अपने इस कथन की व्याख्या करते हुए कहा—रूसो और वाल्टेयर ने क्या किया ? उन्होने केवल पुस्तकें लिखी, पर उससे फ्रेंच राज्यक्रान्ति की प्रेरणा मिली। राबस्पीयर और दांतो से उनका कार्य अधिक ठोस था। इसी प्रकार मेजिनी ने 'मनुष्य के कर्तव्य' लिखकर इटली की स्वाधीनता मे हाथ बटाया और जिस मार्क्स का इतना शोर है, वह भी तो मुख्यत लेखक ही थे। अवश्य उनके युग मे परिस्थिति परिपक्व नही थी, पर उनका महत्व लेनिन से

तो कम नही है।··· ·

यही तय रहा कि जैसा सब लोग बाद को उचित समझेंगे वैसा किया जाएगा। असली काम तो नये-नये लोगो को दीक्षित करना और त्याग के लिए तैयार रहना है। क्रान्ति के लिए परिस्थिति तैयार करनी है· ···

अर्चना ने दुःखभरे लहजे मे कहा—बहन प्रतिभा प्रेमचन्द के द्वारा की गई तसद्दुक की हत्या को अधिक महत्व देती है, यह दुख की बात है। मैं तो समझती हू कि उन्होने न भागकर जो सन्देश भेजा है और उस सन्देश को बल देने के लिए ही वे भागे नही है, यही उनकी सबसे बडी कृति और कृतित्व है। यह हम लोगो को भी एक सन्देश देता है साथ ही भारत के साम्यवादियो को भी यह सन्देश देता है कि केवल रोमाटिक ढग से पर्चे बाटने से, या चोरी-छिपे रूस हो आने से कुछ नही होगा। कलमा पढकर मुल्ला बनने से या हज करके हाजी बनने की मनोवृत्ति से कुछ नही होगा। असली चीज़ तो यह है कि बाल्शेविक दल की तरह कोई दल तैयार किया जाए। यदि भारतीय साम्यवादी ऐसा न कर पाए, तो वे कभी सफल नही होगे। ब्रिटिश साम्यवादी दल के आदर्श पर निर्मित भारतीय साम्यवादी दल कोई क्रान्तिकारी सस्था नही है।

प्रणवकुमार शेषोक्त स्पष्टीकरण से बहुत खुश हुआ। बोला—दीदी, आप ही इस दल की असली नेत्री रहेगी, मै तो केवल निमित्त मात्र बनूगा और मैं आपसे काननुर मे मिलूगा।

यही तय रहा और रात दस बजे की गाडी से अर्चना कानपुर रवाना हो गई।

यह अफवाह फैला दी गई कि अर्चना अपील लड़ने के लिए इलाहाबाद जा रही है।

# ५४

घटनाए बडी तेजी से घटित हो रही थी ।

प्रणवकुमार बूढी मा की मृत्यु से बहुत उत्तेजित हुआ था । वह नही जानता था कि बूढी मा है कौन, पर जब उसने सारा इतिहास सुना, तो उसके मन मे यही आया कि जाकर दुर्गाप्रसाद को राजभक्ति का फल चखा दे । उस श्रद्धेया वृद्धा के साथ यह अत्याचार !

उसने सभा मे अपने इस इरादे का उल्लेख नही किया क्योकि वह नही चाहता था कि किसीको कुछ मालूम हो । यहा तक कि अर्चना को भी ।

वह एकाएक यह कृत्य करके शायद सबको चौका देना चाहता था ।

अर्चना के कानपुर चले जाने के बाद उसने दुर्गाप्रसाद के घर के कई चक्कर लगाए और यह पता लेने की चेष्टा की कि कब वह किस हालत मे रहता है । इस प्रकार वह अपनी योजना परिपक्व करता रहा, पर अभी योजना पूरी बन भी नही पाई थी कि वह एकाएक टेगर्ट की हत्या के षड्यन्त्र मे गिरफ्तार कर लिया गया ।

उसी दिन पुलिस जीवानन्द को पकडने के लिए भी गई, पर वह घर मे मिला ही नही और जब उसे मालूम हुआ कि उसके विरुद्ध वारन्ट है, तो वह फरार हो गया । अर्द्ध फरार तो था ही ।

पुलिस को यह मालूम था कि जीवानन्द और प्रणवकुमार एक दल के नही है, फिर भी उसका यह ख्याल था कि टेगर्ट की हत्या मे इन लोगो ने सम्मिलित रूप से भाग लिया था ।

जब जीवानन्द फरार हो गया तो जो युवक चित्रकूटी पर पहरा देने के लिए नियुक्त थे, उन लोगो ने कुछ समझकर पहरा उठा दिया । वह मकान, जिसमे चित्रकूटी रखा गया था, भुतहा मकान करके प्रसिद्ध था ।

जब चित्रकूटी को समय से खाना आदि नही मिला तो वह बुरी तरह चिल्लाने लगा । पडोसियो ने इसे वहा पर भूत होने का प्रमाण समझा, पर दो-एक दिन मे पुलिस वालो का ध्यान इस तरफ गया और उन्होने आकर चित्रकूटी का उद्धार किया । इस प्रकार केचुआ खोदते हुए साप निकला ।

चित्रकूटी ने पूरा बयान दे दिया और उसने प्रणवकुमार को पहचान भी लिया। न मालूम क्या समझकर उसने किसी स्त्री या जेल के जमादार का नाम नही लिया। इसीलिए श्यामा और अर्चना बची रही। पुलिस वालो ने उसे इन लोगो का फोटो दिखलाया तो वह यही कहता रहा—मैंने इनको कभी नही देखा।

पर उसने अमिताभ का फोटो पहचाना।

जानसन उससे पूछ-ताछ करता रहा, पर सारी बाते बहुत अद्भुत थी।

चित्रकूटी ने कहा—हा साहब, मै जो कह रहा हू, मै भागना नही चाहता था। जब मैं उस रोज़ रात को उन्हे खाना खिला चुका तो वे मेरे हाथो मे रस्सी देकर बोले—जा, निकल जा।

—जगला किसने काटा था?

—मैंने नही काटा था।

जानसन ने बार-बार उसके सामने यह सुझाव रखा कि पहले दोनो ने मिल्-कर भागने की तैयारी की थी, पर डाक्टर तेजराम की तरह चित्रकूटी असली गुइया को छोडकर भाग निकला।

पर चित्रकूटी यही कहता रहा कि उसे कुछ नही मालूम था। ऐन मौके पर उसे भागने के लिए मजबूर किया गया।

जानसन बडा निराश हुआ क्योकि उसकी समझ मे कुछ नही आ रहा था कि कैसे क्या हुआ।

फिर भी उच्च पुलिस अधिकारियो के साथ परामर्श करके यह निश्चय किया गया कि अन्तर्प्रादेशिक षड्यन्त्र का मुकदमा चलाया जाए और चित्रकूटी को उसके गवाह के रूप मे इस्तेमाल किया जाए।

यह सब होते हुए भी चित्रकूटी को जेल भेज दिया गया और उसपर भागने का मुकदमा चलाया जाने लगा। मुकदमे का फैसला तो जो होता सो होता, उसके पैरो मे बेडी डाल दी गई और उसे कुत्ताघर में बन्द कर दिया गया।

अलग बन्द करने मे जेल-विभाग तथा पुलिस-विभाग दोनो सहमत थे। पुलिस वाले यह नही चाहते थे कि वह साधारण कैदियो से मिले क्योंकि साधारण कैदियों से मिलते-मिलते राजनैतिक कैदियो से मिलने का भय था, और वे तजर्बे

से जानते थे कि राजनैतिक कैदी उसे बयान बदल देने की सलाह देंगे।

उस हालत में अन्तर्प्रादेशिक षड्यन्त्र चलने का स्वप्न टूट जाता। यों ही उसके सम्बन्ध में पुलिस का यह ख्याल बन चुका था कि वह बहुत कुछ छिपा रहा है।

पुलिस-विभाग के अथक प्रयत्न के बावजूद प्रणवकुमार के विरुद्ध टेगर्ट की हत्या का कोई प्रमाण नहीं मिला। किसीके विरुद्ध कोई भी सबूत नहीं मिला। जानसन ने सारी स्थिति का सिंहावलोकन करने के बाद दांत पीसते हुए कहा—यह उस दुष्ट अमिताभ की विशेषता है कि वह जिस काम में शरीक रहता है उसका कोई सबूत नहीं मिलता।

दुर्गाप्रसाद ने साहब को धीरज बंधाते हुए कहा—पर हुजूर, जेल से भगाने के षड्यन्त्र में तो उसके विरुद्ध प्रमाण मिल गया। चित्रकूटी ने उसका फोटो पहचाना है।

चित्रकूटी के नाम से ही जानसन बहुत नाराज़ हो गया। बोला—मुझे तो यह शक है कि इसका सारा बयान ही झूठा है। यदि जेल से भागने का पक्का प्रमाण न होता तो मैं तो यह भी समझता कि वह जेल से भागा ही नहीं है। बुद्धि बिल्कुल काम नहीं देती है।

दुर्गाप्रसाद ने डरते हुए कहा—मैं भी इस विषय पर बहुत सोचता रहा, पर कोई नतीजा निकालने में असमर्थ रहा।

उधर सत्याग्रह आन्दोलन पहले की तरह तेज़ी से चल रहा था। रोज़ देश भर में गिरफ्तारियां हो रही थीं। अब नमक आन्दोलन केवल नमक-आन्दोलन न रहकर विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, मद्य-निषेध आदि कई रूपों में चल रहा था और विदेशी वस्त्रों तथा शराब की दूकानों पर पिकेटिंग जारी थी। जेलों के अन्दर भी सर्वत्र किसी न किसी बहाने से झगड़े-बखेड़े चल रहे थे।

यद्यपि अधिकांश पुलिस वाले भारतीय ही थे, पर उनका रवैया अंग्रेजों से किसी तरह अच्छा नहीं था—'क्या स्वराज्य लेना चाहते हो ? अच्छा लो !'—कहकर लाठियां बरसाना एक मामूली बात हो गई थी। गांधी टोपी देखने पर मार पड़ने लगती थी। कलकत्ता में तो ऐसा हुआ कि जनता पर इसी तरह मार पड़ रही थी तो छात्रों ने विश्वविद्यालय के बरामदे से चिल्लाकर मारने वालों को कहा—'कायर'।—इसपर दो घंटे बाद एक अंग्रेज़ अफसर के अधीन पुलिस

वाले आए और उन्होने श्रेणियो मे बैठे हुए छात्रो पर हमला बोल दिया। यह नही देखा गया कि चिल्लाने वालो मे ये छात्र थे या नही।

काथी मे पाच देहातियो को ढकेलकर तालाब मे गिरा दिया गया और वे डूब गए। उनका दोष यह था कि वे एक सभा मे शामिल थे।

जब जेल मे राजनैतिक कैदियों को मारते-मारते मार डाला जा रहा था और मौलाना बन्देअली जैसे व्यक्ति को इसी प्रकार मार डाला गया था तो फिर पुलिस के सम्बन्ध मे और बाते कल्पनीय है। गावो मे तो पुलिस वाले यो ही बहुत प्रबल होते है, इस समय तो उन्होने बिल्कुल नादिरशाही मचा रखी थी।

कही-कही टैक्स-बन्दी-आन्दोलन भी हो रहा था। कर्नाटक मे जो कर-बन्दी-आन्दोलन हुआ, उसमे अकेले कनाडा जिले के ही आठ सौ परिवारो ने भाग लिया। सिद्दापुर और अकोला ताल्लुके मे आठ सौ लोगो को सजाए दी गईं, जिनमे सौ स्त्रिया थी।

जनता को इस प्रकार बर्बाद करके, उसकी खेती-बारी नष्ट करके तथा उसकी जायदाद जब्त करके जो नुकसान पहुचाया गया, वह पन्द्रह लाख का था। मनमाने ढग से एक जमीन दूसरे को दे दी गई; इस प्रकार गाव मे झगड़े का बीज भी बोया गया। पुलिस ने खडी फसल जब्त कर दी। जब काटने के लिए स्थानीय लोग नही मिले तो बाहर से किराए के टट्टू मगाए गए।

गुजरात मे भी इसी प्रकार कुछ जगह कर-बन्दी-आन्दोलन हुआ।

सरकार ने इसके फलस्वरूप काग्रेस को दबाने मे कोई कसर नही रखी। काग्रेस के दफ्तर बन्द कर दिए गए। उनके कागजात, बही, किताबें, झडे छीन लिए गए। जहा चाहा १४४ धारा लगाकर लोगो के मुह पर तथा कलम पर ही नही चलने-फिरने पर भी ताला जड दिया गया। छापेखानो पर बराबर हमले होते रहे। ज़रा-सा बहाना मिलते ही अखबारो से जमानत माग ली जाती थी और छापेखानो पर ताला जड दिया जाता था। सज़ा के साथ बडी रकम का जुरमाना किया जाता था और उसे वसूल करने मे भी बडी बेदर्दी से काम लिया जाता था। सत्याग्रही अपना जुरमाना अदा नही करते थे, इस बहाने दस रुपये के बदले मे एक हज़ार का माल उठा ले जाना आम बात हो गई थी।

कही-कही जनता अपने ढग से प्रतिरोध भी कर रही थी। एक स्थान पर

पुलिस ने काग्रेस-कार्यकर्ताओ को आश्रम से मार-पीटकर निकाल दिया और पुलिस वाले आश्रम पर कब्जा जमाकर बैठ गए। रुई, सूत, खादी जो कुछ भी हाथ लगा, उसे मनमाने ढग से लूट लिया या फक दिया।

जब आसपास के गाव वालो को इस बात का पता लगा तो उन लोगो ने आश्रम पर कब्जा करने के लिए निहत्थे जत्थे भेजे, पर ये जत्थे सफल कैसे होते। लोग गिरफ्तार होते गए।

बाद को कुछ गाव वाले एक हद तक अहिंसा से च्युत हो गए, पर इसमे कुछ लाभ नही हुआ। अत्याचार और अधिक हुआ।

इन बातो से देश के अन्दर जितने भी अग्रेज़ थे, सबके मिजाज बहुत बिगडे हुए थे, वे यही समझते थे कि हम तो इनपर शासन करके इनके साथ एहसान कर रहे है, इन्हे सभ्य बना रहे है, इनका बोझ उठा रहे है और ये हमसे लडने के लिए तैयार है।

कुछ प्रमुख भारतीय अपनी राजनीतिज्ञता की यही पराकाष्ठा समझते थे कि काग्रेस मे और सरकार मे समझौता कराया जाए। आन्दोलन शुरू होने के साथ ही साथ, इन लोगो ने अपनी कार्रवाई शुरू कर दी थी। जुलाई १९३० मे सर तेज बहादुर सप्रू और एम० आर० जयकर बीच-बचाव के लिए वायसराय और नेताओ के बीच दौडने लगे। वे पडित मोतीलाल, जवाहरलाल आदि नेताओ से मिले। ये नेता नैनी जेल मे थे। इन्हे महात्मा जी से मिलाने के लिए यरवदा जेल ले जाया गया। यह चेष्टा व्यर्थ गई।

इसके बाद होरेस एलैक्जेन्डर नामक एक अग्रेज अध्यापक ने भी समझौते की चेष्टा की जो व्यर्थ गई।

इन वार्ताओ के सम्बन्ध मे जेलो मे बहुत दिलचस्पी रहती थी, एक तरह से इस प्रकार की वार्ताए दुधारी तलवार थी। इनसे जो वास्तविक स्वतन्त्रता के इच्छुक योद्धा थे उनके मन मे यह भय बनता था कि कही आन्दोलन मझधार मे ही न रह जाए और स्वतन्त्रता के नाम पर हमे १९१८ के शासन-सुधार की तरह शासन-सुधार की कोई और किश्त न मिले।

दूसरी तरफ जो लोग जेल मे पडे-पडे घबडा रहे थे, वे खुश होते थे ।[1]

बनारस जेल मे भी इस प्रकार की बहस रहती थी । राजेन्द्र आदि लोग समझौता चाहते थे, पर मुह से कहते नही थे । दूसरी तरफ रामचरण, परेश आदि लोग समझौते के कट्टर विरोधी थे । प्रेमचन्द के चालान के बाद धीरे-धीरे साधारण अवस्था हो गई थी और अस्पताल मे गए हुए लोग धीरे-धीरे लौट आए थे । जो लोग बाहर के अस्पताल मे गए थे, उनमे से कुछ तो बीमारी के बहाने छोड दिए गए थे, बाकी लोग जेल मे लौट आए थे ।

आनन्दकुमार ही एक ऐसे व्यक्ति थे जो कहते थे कि गांधी जी समझौता करेगे, तो वह भी ठीक ही होगा और नही करेगे तो भी वह ठीक ही होगा ।

## ५५

अर्चना जब अपने भाई डाक्टर अरविन्दकुमार के घर पहुची तो उसे देखकर उसकी भाभी सरोज ने पहला ही प्रश्न यह किया—अरे, तुम्हारी मांग मे सिन्दूर पडा हुआ है और यहा तो हम लोगो को कुछ पता भी नही लगा''

कहकर सरोज ने घर भर को इकट्ठा कर लिया । भुवन और रमेश ये दोनो बच्चे तो कुछ समझे नही, पर वे भी काफी उत्तेजित हो गए । इतना तो

---

१ राजेन्द्र बाबू ने अपनी आत्मकथा में इस परिस्थिति का जो वर्णन किया है, वह इस प्रसग में द्रष्टव्य है—"मैंने अपने लोगों में, जो हजारीबाग जेल में थे, एक बात देखी । जब समाचारपत्रों में समझौते की कोई खबर छपती तो उसे वे बहुत उत्सुकता से पढते और सभी बातों पर आपस में बहुत बहस करते । ऐसा मालूम होता कि उनमें से बहुतेरे समझौते के लिए उत्सुक हैं । हा, कुछ लोग अवश्य ऐसे थे जो इस बात पर डटे रहते थे कि जब तक स्वराज्य सम्बन्धी सन्तोषजनक बात न तय पावे, समझौता नही होना चाहिए । पर दूसरे ऐसे लोग भी थे जो समझते थे कि गोलमेज-कान्फ्रेन्स में कुछ न कुछ सन्तोषजनक बात हो जाएगी, इसलिए इस समय यहा अधिक झगडा न उठाकर वहा जाना स्वीकार कर लेना चाहिए । जब समझौता न हो सका तो ऐसे लोगों को वह जरूर नापसन्द हुआ ।"

समझ ही गए कि कोई खास बात हुई है। नौकर भी आ गए। खैरियत यह थी कि सब नये थे।

डाक्टर अरविन्दकुमार अपनी बहन को अच्छी तरह जानते थे। इसके अलावा वह किसी प्रकार बहन की भद्द उडाना नही चाहते थे, इसलिए बोले—इसमे नई बात क्या है ?—फिर बहन के चेहरे पर स्नेहपगी दृष्टि डालते हुए बोले—तेरा चेहरा उतरा हुआ कैसे है ? क्या रास्ते मे बहुत कष्ट रहा ?

सरोज यह समझ गई कि पति यह नही चाहते कि अभी विवाह के सम्बन्ध मे कुछ पूछताछ की जाए। इसलिए नहाने-धोने की व्यवस्था हुई, फिर नाश्ता हुआ।

अरविन्दकुमार यह समझते रहे कि अर्चना स्वय ही कुछ न कुछ बताएगी। कौतूहल तो उन्हे भी था, पर जब अर्चना ने इस सम्बन्ध मे कोई बात नही कही तो वह कुछ चिन्तित होकर डिस्पेसरी के लिए चल दिए।

डाक्टर ने मन ही मन यह समझ लिया कि जैसे आजकल होता है, लोग तीन दिन की जान-पहचान मे प्रेम-विवाह कर लेते है, बाद को बहुत ही छोटी बात पर अलग होने की नौबत पहुच जाती है, ऐसा ही कुछ हुआ होगा।

उन्होने चलते समय सरोज से कह भी दिया—तुम उससे कुछ पूछना मत। यह तो जाहिर ही है कि कुछ न कुछ ट्रेजेडी हुई होगी, नही तो सालो बाद भाई-भौजाई की याद कैसे पडी ?

सरोज ने कहने को तो 'हा' कह दी, पर उसके मन मे वह प्रश्न बहुत ही जोर से कुलबुलाता रहा, यहा तक कि उसके पेट मे मरोड-सी उठने लगी। उसने स्त्री-बुद्धि से यह पहचान लिया कि बुद्धू मिया (पति के सम्बन्ध में, यहा तक कि बहुत प्यारे होने पर भी स्त्रियो के मन मे अक्सर जो धारणा रहती है उसी के अनुसार) जैसा समझ रहे है, बात वैसी नही है, नही तो यह माग मे देहाती स्त्रियो की तरह ढेर-सा सिन्दूर क्यो लगाती ?

उसकी समझ मे तो जब पति से अनबन हो गई और उससे विछोह हो गया तो इस प्रकार दिखावा करके सिन्दूर लगाने की कोई जरूरत नही थी। बात कुछ और ही थी।

क्या ?

इधर-उधर की बातो से सरोज कई बार उस प्रश्न के पडोस मे पहुच गई,

पर अर्चना ने उसे सम्पूर्ण रूप से निराश किया। वह तो समझकर भी नही समझ रही थी।

इस प्रकार दो-तीन घटे तक मगज मारने के बाद भी जब कोई सुराग नही मिला तो सरोज सारी सावधानी को तिलाजलि देकर पूछ बैठी—इधर तो पढी-लिखी स्त्रियो मे बिल्कुल प्रतीकात्मक रूप से सिन्दूर की पतली रेखा लगाने की परिपाटी प्रचलित हो रही है, पर काशी तीर्थस्थान होने के कारण शायद वहां अभी पुराना ढर्रा चालू है।

अर्चना ने फिर भी कुछ नही कहा। घडी की तरफ देखकर बोली—मैं जरा जेल हो आऊ।

सरोज ने अचम्भे के साथ कहा—जेल क्यो ?

तब अर्चना ने प्रेमचन्द के सम्बन्ध में सारी बात बताई और कहा—मैं उन्हींसे मिलने के लिए यहा आई हू।

सरोज प्रेमचन्द के सम्बन्ध मे पहले ही अखबारो मे पढ चुकी थी और एक नारी के नाते उसके मन मे उनके प्रति प्रगाढ श्रद्धा भी थी। उसे यह मालूम नही था कि वह उसके ननदोई निकलेंगे।

अब पूरा रहस्य खुला। ननद ने बहुत साल बाद शादी की, पर वह क्राति-कारी निकला और जेल मे जाकर राजनीतिक हत्या कर बैठा। भाभी होने के नाते तसल्ली देते हुए सरोज ने कहा—तुम चिन्ता मत करो। डाक्टर साहब को आने दो। वह इलाहाबाद के कई बडे वकीलो को जानते हैं

इसके आगे वह कुछ कह नही सकी क्योकि उसने देखा कि अर्चना की आखों मे बहुत तीक्ष्ण तिरस्कार है। अर्चना बोली—अपील तो होगी ही, पर मैं उसके लिए नही आई हूं।

अर्चना उठकर चल पड़ी और जेल पहुंची। उसने लिखकर प्रेमचन्द से मिलने की अर्जी दी।

जेल-अधिकारी ने उसे ठहरने के लिए कहा। बोला—उनकी मिलाई पुलिस की सलाह पर ही मजूर की जाएगी। या तो आप कल आइए या बैठिए।

अर्चना उसी प्रकार खडी रही जैसे वह उस दिन बनारस जेल के फाटक पर खड़ी थी। उसी तरह सूर्यनारायण आकाश के मध्य स्थल पर पहुंच रहे थे।

फाटक भी करीब-करीब वही था, सन्तरी भी उसी प्रकार का था, पर कितना फर्क था !

एक घटे के अन्दर ही एक पुलिस-अधिकारी पहुचा। उसने उससे जिरह की, पर सन्तुष्ट न होकर बोला—हमारी सूचना के अनुसार प्रेमचन्द के केवल एक भाई ही है। प्रेमचन्द का विवाह हुआ ही नही।

अर्चना करीब-करीब रुआसी होकर बोली—पर मैं तो कहती हू, कोई शरीफ लडकी खामख्वाह किसीको अपना पति थोडे ही बताएगी ?

—यह न कहिए, क्रातिकारी सब कुछ कर सकते है।

उसने इस सम्बन्ध मे कोई बहस नही करनी चाही और निर्णयात्मक ढग से बोला—हम इस सम्बन्ध मे कुछ नही कर सकते।

फिर उसको जाने क्या याद आ गया, उसने अर्चना को बडे ध्यान से देखा और बोला—आप मेरे साथ चलिए और किसी शरीफ आदमी से मुकाबला करा दीजिए कि आप कौन हैं ?

अर्चना दु.खी तो थी ही, अब नाराज़ हो गई। बोली—मैं किसीसे आपका मुकाबला कराने के लिए तैयार नही हू, यदि आप चाहे तो मुझे गिरफ्तार कर सकते हैं।

वह पुलिस-अधिकारी भी अक्खड था। उसने रुखाई के साथ कहा—मुझे गिरफ्तार करने का कानूनी अधिकार तो नही है पर परिस्थितिया कुछ ऐसी हैं कि आपको मेरे साथ थाने तक जाना पड़ेगा। आप चाहे तो इसे गिरफ्तारी ही समझे।

अर्चना गुस्से मे तो थी ही, बोली—आप जहा चाहे ले चले, कुछ आना-जाता नहीं।

पर उसके मन मे एकाएक तारा की बात याद आई कि उसे गिरफ्तार करने के नाम पर तसद्दुक अपने अड्डे पर ले गया था। बोली—बिना गिरफ्तारी के परवाने के मैं आपके साथ हर्गिज़ नही जाऊंगी। आप पहले यह तो साबित कीजिए कि आप पुलिस के ही आदमी हैं।

उस व्यक्ति के लिए यह प्रमाणित करना कोई कठिन नही था क्योकि जेल-अधिकारी उसे अच्छी तरह जानते थे। उसने यही कहा, पर अब तो अर्चना कुछ दूसरा ही निश्चय कर चुकी थी। वह बोली—जब मै भेट नही कर सकी

तो जाती हू, आप जो चाहे कर सकते हैं।

कहकर अर्चना रवाना हो गई। उसका तागा पास ही खडा था। वह उसपर जाकर बैठ गई और पुलिस-अधिकारी साइकल पर पीछे-पीछे चला।

अर्चना पहले तो घर ही जा रही थी, पर रास्ते मे उसे ख्याल आया कि घर जाना उचित न होगा। भाभी यो तो बडी अच्छी और सहानुभूति रखने वाली है, पर पुलिस आदि के झंझट से ज़रूर घबड़ाएगी। इसलिए वह डिसपेसरी मे पहुंची और तांगे वाले को पैसे देकर बिना कुछ कहे भीतर चली गई।

अभी अर्चना भीतर जाकर बैठी, वह भाई के पास तो जा नही पाई क्योकि वह किसी रोगी को देख रहे थे और उसे भी रोगियो मे बैठना पडा, कि उसने देखा वह पुलिस-अधिकारी भी आकर रोगियो मे बैठ गया और गुस्ताखी के साथ इधर-उधर ताकने लगा। शायद वह समझने की कोशिश कर रहा था कि यहा आने का क्या उद्देश्य हो सकता है?

अर्चना ने एक पुर्जे पर भाई को कुछ लिखा और जो रोगी भीतर था उसे देखना समाप्त होते ही अरविन्दकुमार रोगी के पीछे-पीछे अर्चना के पास आए और उसे बुलाकर भीतर ले गए।

कही रोगी यह न समझे कि किसी रोगिणी के साथ पक्षपात हो रहा है, इसलिए अरविन्दकुमार ने झेपकर अपने रोगियो को सम्बोधित करते हुए कहा—यह पेशेट नही मेरी सगी बहन है।

पुलिस-अधिकारी इतना ही जानना चाहता था, वह वहा से फौरन उठकर चला गया।

अर्चना ने भाई को जल्दी मे सारी परिस्थिति समझाई।

सुनकर डाक्टर साहब कुछ परेशान हुए। वह नही चाहते थे कि डिस्पेसरी के अन्दर किसी प्रकार की उत्तेजना फैले। लोग तो यही देखेंगे कि पुलिस आई है और डाक्टर साहब की जवान बहन के पीछे पडी है। न उन्हे कुछ कहने का मौका मिलेगा और न समझाने का। वे तो अपनी उल्टी-सीधी धारणा बना कर चल देंगे। उनके चेहरे से कदाचित यह उद्विग्नता झलक गई।

अर्चना ने उठते हुए कहा—अच्छा मैं उसे समझा लूगी, आप काम कर लीजिए।

ज्यादा से ज्यादा थाने मे ही तो जाना पडेगा। वह उसके लिए तैयार होकर बाहर आई तो देखा, पुलिस-अधिकारी जा चुका है।

वह डिस्पेसरी से बाहर निकलकर देखती रही कि शायद वह प्रतीक्षा कर रहा हो। उसने कई बार अच्छी तरह देखा, पर उसका कही पता नही था।

अब उसके सामने यह प्रश्न आया कि वह घर जाए कि कहां जाए ? जिस उद्देश्य को लेकर वह यहा आई थी, वह तो व्यर्थ हुआ जान पडता था। किसी भी प्रकार प्रेमचन्द से मिलना सम्भव नही था। उसे इस सम्बन्ध मे कोई राह नही सूझ रही थी।

उसका कानपुर आना ही व्यर्थ हुआ।

तो क्या वह लौट जाए ?

वह डिसपेसरी के बाहर खड़ी-खडी यही सब सोच रही थी कि उसके दिमाग मे एक विचार आया, पर उस विचार को कार्यान्वित करने के लिए भी बहुत कुछ करना था और सर्वोपरि डाक्टर साहब की मदद की जरूरत थी।

घर मे तो इस सम्बन्ध मे बात करना सम्भव नही था इसलिए अर्चना डिसपेन्सरी के अन्दर लौट गई और रोगियो के साथ बैठ गई। अभी सात रोगी और थे। इसके अलावा और रोगी भी आ सकते थे।

पर अब प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त कोई उपाय नही था।

क्या सोचा था और क्या होने जा रहा है ? इतनी सारी रोमांचकारी घटनाओ का यह गद्यमय अन्त ! गद्यमय ही नही अत्यन्त इकरस और नीरस अन्त ! यह कैसा कानून है कि वह प्रेमचन्द से मिल नही सकती जबकि वह भी उससे मिलना चाहता है और वह तो इस बात पर प्राण तक न्योछावर करने के लिए तैयार है। इससे क्या होता है ? वह पथ के बीच मे पड़ी है और साम्राज्यवाद का खूखार रथ उसके सीने पर से निकल रहा है।

इस अत्यन्त रोमासहीन जगत मे प्रेमचन्द ने वह रोमास किया जो सुकरात के युग के योग्य था। इससे क्या लाभ रहा ? कुछ थोडे-से लोग अवश्य इस प्रकार जान-बूझकर जान देने की बात समझेगे, पर पता नही वह समय कब आएगा। अभी तो केवल रथ के निर्मम चक्रो का घर्घर ही सुनाई पड रहा था। उसकी पृष्ठभूमि मे जीवन की जो मधुर रागिनी बज रही है, उसे कोई नही सुन पा रहा है।

यदि प्रेमचन्द भागते तो क्या उनके विचारो का प्रचार न होता ? माना कि यह एक विचार को बहुत जबर्दस्त तरीके से सामने रखना चाहते हैं, पर वह काम तो ऐसे भी हो सकता था।

यदि वह भागते तो भी फासी का फन्दा हर समय उनके सामने झूलता ही रहता। उनकी कही हुई बातो को उतना ही महत्व प्राप्त होता। यह कौन कहता कि वह प्राणभिक्षा माग रहे है या मृत्यु से घबडा रहे हैं ? भागने का अर्थ फासी से बचना नही होता बल्कि उसे स्थगित करना होता है जैसे अमिताभ सालों से करते आ रहे है। फिर क्या पता फासी ही होती, सम्भव है कुणाल की तरह सम्मुख युद्ध मे मृत्यु हो जाती। लोग जानते भी और यह जो महीनों फासीघर मे सडने की प्रक्रिया है, इससे छुट्टी मिलती।

उसे बैठे-बैठे प्रेमचन्द पर क्रोध आ रहा था, कम से कम लोगो से, अपने लोगो से कुछ सलाह तो कर लेते।

यदि भागना मजूर नही था तो पत्र लिखते और साथियो को यह मौका देते कि वे अपनी बात कहे।

पर यह तो सम्पूर्ण रूप से सारा फैसला अपने हाथों मे लेना हुआ और फैसला भी कैसा ? इकतरफा !

अब दो ही रोगी रह गए थे। यह अच्छा ही है कि भइया को मालूम नही है कि वह यहा बैठी है। कोई अपना काम किसी और के लिए क्यो रोके ? सब अपना-अपना काम करते हैं।

प्रेमचन्द ही केवल ऐसे निकले कि वह विचारों को ही प्रधानता देते रहे। अभी तो अर्चना को प्रेमचन्द पर क्रोध आ रहा था, पर अब उसपर दया आने लगी। दया नही, शायद बडी बहन या मा की भावना रोगी भाई या रोगी बेटे के प्रति ऐसी ही होती है। अरे उसकी आखे नम हो गई है ! ये रोगी क्या समझेगे ?

यो ही रोगी उसे सन्दिग्ध दृष्टि से देख रहे थे क्योकि बहन के लिए इस तरह भाई की डिस्पेन्सरी मे बैठा रहना कुछ अस्वाभाविक तो था ही।

उसने आखे पोछ ली और रोगियो की तरफ से दृष्टि हटाकर दीवार पर टगे हुए एक कैलेंडर पर बने हुए राधा-कृष्ण का चित्र देखने लगी।

राधा कृष्ण की ब्याही हुई स्त्री कब थी ? वह तो खोजो के अनुसार कृष्ण

की मामी लगती थी, फिर भी किसीने कभी इस बात पर आपत्ति नही की। और यहा केवल इसीलिए कि प्रेमचन्द के साथ उसकी शादी नही है, उसे मामूली से मामूली अधिकार, खाचे मे बाहर से मिलने का अधिकार तक नही दिया जा रहा है।

अब अन्तिम रोगी भीतर गया था।

बारह बज रहे थे।

अब किसी भी समय भाई साहब बाहर आ सकते हैं। पता नही उसे वे बाहर देखकर क्या समझे। जो भी समझे, अब तो सब कुछ करना है। क्या वह पराजित होकर कानपुर से चली जाएगी ?

नही।

अन्तिम रोगी भी बाहर आ गया। भाई साहब अपने किसी कम्पाउन्डर या कर्मचारी को कुछ समझा रहे थे। जितना ही उनके आने की घडी पास आ रही थी अर्चना उद्विग्न हो रही थी।

यह कानपुर भी अजब शहर है। वह जब-जब आई, इस शहर की आत्मा से कोई घनिष्ठता नही बना पाई, कुछ दूरी बनी ही रही, और अबकी बार तो ऐसा लग रहा है जैसे वह शत्रुपुरी मे आ गई हो।

डिस्पेन्सरी के बाहर जयकारो के साथ कोई जुलूस जा रहा था। एक ही मुहूर्त मे अर्चना के मन का सारा अवसाद दूर हो गया। वह तनकर खडी हो गई और बाहर जाकर देखने लगी।

उसने कान खडे कर लिए कि ये लोग कौन-कौन-सी जय बोलते है।

पर निराशा हुई।

ये लोग नही जानते कि इन्हीके शहर मे बल्कि इनकी जेल मे इस समय प्रेमचन्द मौजूद है।

डाक्टर साहब बाहर आ गए थे। उन्हे अब मालूम हो चुका था कि तबसे अर्चना यही बैठी है, पर कहा ?

वह ध्यान से जुलूस देख रही थी कि डाक्टर साहब ने पीठ पर हाथ रख दिया, बोले—मुझे अभी चार-पाच 'काल' 'अटेन्ड' करने हैं। तुम मेरे साथ मोटर मे चलो, रास्ते मे बातचीत होती जाएगी।

—मै आपके रोगियो के घर जाकर क्या करूगी ?

—नही, किसीके घर मत जाना, मोटर मे ही बैठी रहना।

यही तय रहा। भाई और बहन बातें करते हुए चले।

अन्तिम रोगी देखने के बाद जब डाक्टर साहब लौटे तो अर्चना ने कहा—ऐसा नही हो सकता कि यहा का मजिस्ट्रेट मुझे विवाह का सार्टिफिकेट दे दे?

डाक्टर साहब ने बहन की तरफ देखा और बोले—जब शादी हुई ही नहीं तो सार्टिफिकेट का प्रश्न कैसे उठता है? शादी हो और उनके सामने हो तो सार्टिफिकेट मिल सकता है।

अर्चना थोडी देर चुप रही, फिर बोली—क्या अदालत मे शादी नही हो सकती?

डाक्टर साहब ने सोचते हुए कहा—कोई कानूनी बाधा तो नहीं है, पर अजीब बात मालूम होती है। मैं वकील से पूछूगा।

उस दिन बात वही तक रही, कुछ फैसला नही हो सका। सन्ध्या समय तक शायद डाक्टर साहब अपनी प्रतिज्ञा की बात भूल भी गए। वे बहुत ही सफल डाक्टर थे।

## ५६

बहुत दिनो से गोलमेज़ सम्मेलन बुलाए जाने की बात सुनाई पड रही थी। ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस को टटोला, पर वह बिना शर्त के गोलमेज में जाने के लिए तैयार नही हुई। इसलिए ब्रिटिश सरकार ने यह निश्चय किया कि बिना कांग्रेसियो के ही गोलमेज़ सम्मेलन बुलाया जाए।

सरकार ने विशेष रूप से दो कारणों से ऐसा किया। एक तो वह कांग्रेस के अन्दर के समझौतावादियो पर यह असर डालना चाहती थी कि जो लोग समझौता नही कर रहे है, वे एक बहुत बडा मौका खो रहे हैं इसलिए देश के साथ धोखा कर रहे हैं। दूसरे सरकार संसार के सामने यह दिखाना चाहती थी कि कांग्रेस के अलावा भी बहुत-से ऐसे भारतीय नेता हैं जो सरकार के साथ

सहयोग करने के लिए तैयार हैं। काग्रेस तो एक छोटा-सा दल है, उसकी अवज्ञा की जा सकती है।

काग्रेस के समझौतावादी बहुत कुलबुला रहे थे। इसका असर आन्दोलन की गति पर भी पड रहा था। लोग जेल जाने से बचना चाहते थे। जब योंही समझौता हो रहा है तो कष्ट उठाने की क्या ज़रूरत है ? इस तरह की मनोवृत्ति ज़ोर कर रही थी।

भारत के सारे क्रान्तिकारी दल (क्योकि कई दल थे) समझौते की सम्भावना से बहुत दुखी और उत्तेजित थे। वे चाहते थे कि किसी तरह यह समझौता हो ही न पाए। उन्हे पूरा विश्वास था कि समझौते से कोई लाभ न होगा। सरकार काग्रेस की अवज्ञा करके गोलमेज बुला रही है, भले ही बुलाए, काग्रेस को इससे दबना नही चाहिए।

इस परिस्थिति मे उठने वाली सारी समस्याओ पर विचार करने के लिए नवम्बर १९३० मे क्रान्तिकारी दलों की केन्द्रीय समिति की एक बैठक कानपुर मे बुलाई गई। कानपुर मे इस बैठक को करने का उद्देश्य यह था कि क्रान्तिकारी एक तो पंजाब के करीब ही यह बैठक करना चाहते थे, जहा इस समय नौजवान भारत सभा एक जन-आन्दोलन के रूप मे परिणत हो चुकी थी, दूसरे कुछ प्रमुख क्रान्तिकारी जो मज़दूरो के जीवन से कुछ परिचय प्राप्त कर चुके थे, मज़दूरो के साथ मिलकर देखना चाहते थे कि समझौते के विरोध मे उनकी क्या सहायता मिल सकती है।

जो लोग इस बैठक मे भाग लेने के लिए आए, उनमे अमिताभ, जीवानन्द आदि कई व्यक्ति थे। अमिताभ कही निकलते नही थे, क्योकि पुलिस को इस बैठक की बात मालूम हो गई थी और वह क्रियाशील थी।

विलायत मे कथित गोलमेज़ सम्मेलन प्रारम्भ हो चुका था। इसमे राजाओ की तरफ से १६, ब्रिटिश भारत से ५६, और विलायत से १३ प्रतिनिधि लिए गए। सुप्रसिद्ध वक्ता तथा उदारदलीय नेता श्रीनिवास शास्त्री तथा लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना इस बैठक मे भाग लेने वालो मे प्रमुख थे।

इस गोलमेज़ मे जो लोग गए थे, उनमे से उक्त दो व्यक्तियो को छोडकर बाकी शायद सभी लोग ऐसे थे जो ब्रिटिश सरकार की हा मे हा मिलाने वाले थे। भारत मे तो लोग इनकी पोल जानते थे, पर सारे ससार के सामने झूठे

प्रचार-कार्य का एक अच्छा साधन बन गया था।

क्रान्तिकारियो की बैठक मे वेदव्यास ने कहा—ब्रिटिश सरकार जान-बूझकर लन्दन के रंगमच पर यह तमाशा इसलिए कर रही है कि विदेशी पत्रो मे भारतीय जन-आन्दोलन के विषय मे जो प्रकाशन होने लगा था, उसमे कमी आ जाए और इस बोगस गोलमेज सम्मेलन के सम्बन्ध मे अखबारो की सुर्खिया बने।

प्रत्येक वक्ता ने इस कथित गोलमेज़ सम्मेलन की बहुत निन्दा की। अमिताभ बोले—ब्रिटिश सरकार हमपर दो साधनो से शासन करती रही है, सबसे पहला साधन तो अस्त्रबल है चाहे उसपर जितना भी मुलम्मा चढा हो। जन-आन्दोलन के दिनो मे इस मुलम्मे की रक्षा की परवाह भी नही की जाती और उसके खूनी पजे की कलई खुल जाती है। और तो और शहीद नरेन्द्र की मा के साथ जो कुछ हुआ उसे सब सुन ही चुके हैं। दूसरा साधन है झूठा प्रचार। यो तो इस समय हिटलर को झूठे प्रचार का सरताज बताया जा रहा है, पर ब्रिटिश सरकार से वह कुछ सीख ही सकता है। जो लोग अपने सिवा किसीका प्रतिनिधित्व नही करते, वे ससार के सामने भारत के प्रतिनिधि होकर पेश हो रहे हैं....

जीवानन्द भी अर्द्ध सदस्य के रूप मे इस बैठक मे मौजूद था। उसने कुछ दबते हुए कहा—पर जिन्ना इसके अपवाद हैं। मुसलमानो मे उनका काफी प्रभाव है।

अमिताभ ने अपना व्याख्यान जारी रखते हुए कहा—जिन्ना पहले तो किसीका प्रतिनिधि नही था, पर ब्रिटिश सरकार उसे हर सम्मेलन मे बुला-बुलाकर नेता बना ही देगी। इसके अलावा मुसलमान पिछडे हुए तो है ही, उन्हे अभी धर्म के नाम पर बडी हद तक उभाडा जा सकता है। अवश्य हिन्दुओं का दोष काफी रहा है, यहा तक कि हमारे यहा राष्ट्रीयता का रूप ही बहुत कुछ हिन्दू बन गया है। पर मुसलमान आगे नही आए, इसके लिए मुसलमान ही दोषी हैं। इसी कारण राष्ट्रीयता पर हिन्दू रग चढा। इस प्रकार यह एक दुश्चक्र बन गया। हिन्दू रग चढा, इस कारण मुसलमान बिदके, मुसलमान बिदके इसलिए हिन्दू रंग पक्का हुआ।

जीवानन्द ने महज़ जिज्ञासा बुद्धि से प्रेरित होकर कहा—तो मुसलमान

राष्ट्रीयता से अलग ही रहेगे ?

अमिताभ इस प्रश्न के लिए तैयार ही थे, बोले—हा वे शायद ही राष्ट्रीयता अपनाए। वे या तो पक्के सम्प्रदायवादी बनेंगे जिससे वे पिछड़ जाएगे, नही तो वे सीधे समाजवाद मे पहुचेगे···

इस प्रकार सभी ने गोलमेज़ की निन्दा की। अजीतकुमार उर्फ दादा सारी बाते सुनते रहे और वह अन्त तक गोलमेज़ पर कुछ नही बोले। फिर भी सबको यह प्रतीत हो रहा था कि अपने लगभग सफेद बालो की बर्फीली सतह के नीचे उनका दिमाग एक ज्वालामुखी की तरह भडक रहा था।

अमिताभ भी उनको अपना गुरुजन मानते थे। बोले—दादा, आपने कुछ नहीं कहा।

इसपर उनका चेहरा तमतमा गया, बोले—हाम इशपर क्या बोलेगा ? हाम को तो आज मालूम होता है कि हाम कुछ भी विप्लवी नही है। अगर विप्लवी होता तो हाम मे इतना ताकत होता कि हाम नरेन्द्र का मां पर जुलुम का बदला राउण्ड टेबल मे गया हुआ एक-एक प्रतिनिधि को जहाज मे ही गोली मारकर चुकाता····नही, कुछ को जहाज़ मे मारता और कुछ को मीटिंग मे मारता, तब पब्लिशिटी होता।

सबने यह स्वीकार किया कि ऐसा होता तो सबसे अच्छा रहता। ये बनावटी प्रतिनिधि इसी योग्य हैं। यही ब्रिटिश सरकार की चाल का सबसे उपयुक्त उत्तर होता। यह निश्चय हुआ कि जब यह किया नही जा सकता तो कम से कम एक पर्चा निकाला जाए, जिसमे जनता से यह कहा जाए कि वह समझौतावाद का विरोध करे। उस पर्चे मे गोलमेज़ मे गए हुए लोगो को जयचन्द और मीर जाफर की श्रेणी मे रखा जाए और यह भी लिखा जाए कि क्रान्तिकारी दल को जब मौका मिलेगा तो भारत लौटने पर उन लोगो को पुरस्कृत करने की चेष्टा की जाएगी।

विचारणीय विषय और भी थे जो मुख्यत सगठन सम्बन्धी थे, पर अमिताभ ने कहा—सगठन पर हम बाद को बातचीत करेंगे, पहले प्रेमचन्द के उस पत्र पर विचार किया जाए।—कहकर उन्होने प्रेमचन्द के पत्र की प्रतिलिपियां सब सदस्यो के सामने रख दी।

इसके पहले ही सब सदस्य यह पत्र पढ चुके थे, फिर भी सब लोग पत्र

पढने मे लग गए।

अमिताभ ने यह देखा कि कई लोग पत्र पढ चुके हैं, फिर भी कुछ कह नही रहे हैं।

तब उन्होने जीवानन्द से कहा—तुम हम लोगो मे सबसे कमउम्र हो, इसलिए तुम्ही पहले इस विषय मे अपना वक्तव्य दो।

यह एक तरह से चुनौती थी। जब यह पत्र पहले पहल सामने आया था, तब जीवानन्द ने उसे पागल का प्रलाप और दल की जड काटने वाला अभिलेख कहा था, पर अब थोडे-से दिनो के अन्तर मे ही चुनौती दिए जाने पर भी उसने अपने को इस प्रकार की उग्र बाते कहने में असमर्थ पाया। सभास्थल से आधे मील के अन्दर ही प्रेमचन्द फासीघर मे बन्द था। प्रणवकुमार गिरफ्तार हो चुका था। अर्चना भी यही कही भटक रही होगी। प्रतिभा ने प्रेमचन्द के दल को फिर मुख्यदल से सयुक्त कर दिया था, घूम-फिरकर बिछुडे हुए लोग, बल्कि भाई-बहन फिर एकत्र हो गए थे। दल के सारे अस्त्र दल के पास लौट आए थे, सिवा उस पिस्तौल के जिसे प्रेमचन्द टेगर्ट के बगले पर ले गया था। पर इसके बदले एक राइफल और दो दोनाली बन्दूके और उनके यथेष्ट कारतूस दल के शस्त्रागार को प्राप्त हुए थे। प्रणवकुमार ने इन अस्त्रो को प्राप्त किया था।

फिर भी जीवानन्द ने ज़ोर के साथ कहा—केन्द्रीय समिति इस पत्र पर बेकार मे अपना समय नष्ट कर रही है। यह पत्र तो एक तरह से क्रान्तिकारी दल के लिए मृत्युदण्ड का परवाना है। इसपर विचार करना व्यर्थ है।···

उसने और भी बहुत कुछ कहा। जब वह सारी बातें कह चुका तो अमिताभ बोले—यह एक क्रान्तिकारी का सुचिन्तित मत है। हम इसपर विचार करने से बच नही सकते। रहा यह कि यह जो कहा गया है कि यह पत्र क्रान्तिकारी दल के लिए मृत्युदण्ड का परवाना है, मैं इसे बिल्कुल गलत समझता हू। जो कुछ इस पत्र मे कहा गया है, वह इतना ही है कि दल को और क्रान्तिकारी होना चाहिए। उसे अपना ध्येयपक्ष स्पष्ट करना चाहिए, जनता से अधिक सम्पर्क बढाना चाहिए। इसमे केवल एक ही बात पर कुछ आपत्ति की गई है, यद्यपि वह भी खुलकर नही की गई, वह है आतकवाद।

जीवानन्द ने फौरन ही कहा—क्रान्तिकारी दल तो कभी आतकवाद मे विश्वास नही करता रहा, हमने तो जब भी किया है तो प्रत्यातकवाद किया है,

यानी सरकार ने आतक फैलाया है तो हमने उसका कुछ जवाब दिया, जिससे हमारी आत्मा सरकारी आतकवाद से कुचलकर नष्ट-भ्रष्ट न हो जाए।

यह तर्क कोई नया नही था। सब लोग इसे बार-बार कहते थे और अपनी बारी मे सुनते भी थे। इसमे तो कोई सन्देह नही था कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद इतिहास की सबसे बडी आतकवादी सस्था थी।

प्रेमचन्द के पत्र पर यही मत रहा कि उसपर और विचार किया जाएगा। इस बीच नवयुवको के अतिरिक्त मजदूरो और किसानो मे काम बढाया जाए।

अजितकुमार उर्फ दादा ने कहा—हमारे बागाल मे तो हाम शमाजवाद भी पढ रहा है और दुष्टु अफशरो की भवलीला भी साग कर रहा है। हाम तो जियादा थ्योरी-योरी शमझता नही है। देश जब भी इन्डिपेन्डेन्ट होगा तो वह विप्लव से ही होने शकता है। विप्लव जितना गहरा होगा, श्वाधीनता भी उतना खरा होगा। मजदूर लोग भी अपना ही भाई है।

इसके बाद सगठन सम्बन्धी प्रस्तावो पर विचार होने लगा। यहा तक कि विचार करते-करते अधिक रात हो गई।

## ५७

अर्चना ने अपने भाई डाक्टर अरविन्दकुमार को इस बात के लिए राजी कर लिया कि दोनो मजिस्ट्रेट के बंगले पर चले और उनसे बात करे।

मजिस्ट्रेट मिस्टर ब्रोमफील्ड अभी-अभी दो साल हुए विलायत से आए थे। वह एक उच्च मध्यवित्त परिवार के थे और सचमुच विश्वास करते थे कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद सभ्यता फैलाने की एक बहुत बडी सस्था है। वह उन अग्रेजो की अन्तिम पुश्त के लोगो मे थे जो यह समझते थे कि ससार मे दो ही प्रगतिशील शक्तिया है, एक ईसाइयत और दूसरी ब्रिटिश साम्राज्यवाद।

वे इसीके एक स्वयंसेवक के रूप मे भारत मे आए थे। जब वे आए थे तभी सत्याग्रह आन्दोलन की भनक कान मे पडी। उन्होने यह समझा कि यह

प्रतिक्रियावादियो के विरोध का एक रूप है जो स्वय ही धीरे-धीरे प्राकृतिक मृत्यु से मर जाएगा। उनका यह विचार था कि इसके विरुद्ध युद्ध समझकर नही लडना चाहिए, बल्कि रोग समझकर इसकी चिकित्सा करनी चाहिए।

इसी कारण कानपुर मे आन्दोलन दबाने मे उतनी हिंसा या अत्याचार का प्रयोग नही हुआ था।

डाक्टर अरविन्दकुमार को वह एडिनबरा से ही जानते थे, इसी नाते अर्चना को विश्वास था कि कुछ न कुछ हो जाएगा। वह कोई खास रियायत तो चाहती नही थी, केवल यह चाहती थी कि सब फासी वालो को अपने आदमियो से मिलने दिया जाता है, उसी प्रकार उसे प्रेमचन्द से मिलने दिया जाए।

अरविन्दकुमार ने ब्रोमफील्ड को समझाया कि किसी कारण से शादी की रस्म अदा होने से रह गई, इस कारण यह कठिनाई पैदा हो गई है। यदि कोई ऐसा तरीका निकले जिससे इनकी मिलाई हो सके तो अच्छा है।

ब्रोमफील्ड पहले ही प्रेमचन्द के विषय मे सुन चुका था। उसने फोन पर जेल-सुपरिन्टेन्डेन्ट से सारी परिस्थिति पूछी तो मालूम हुआ कि प्रेमचन्द की मिलाई अन्य साधारण फासी वालो की तरह जेल के अधिकारियो के हाथ मे नही है, बल्कि इस सम्बन्ध मे उन्हे पुलिस से पूछताछ करनी पडती है और पुलिस की देख-रेख मे ही मिलाई हो सकती है।

तब ब्रोमफील्ड ने पुलिस-कप्तान मिस्टर ब्राउन को टेलीफोन किया। उसने पूछ-ताछकर यह बताया कि उसकी सूचना के अनुसार प्रेमचन्द की कभी कोई शादी नही हुई, इसलिए किसीको उसकी पत्नी मानकर मिलाई करने के लिए आज्ञा नही दी जा सकती।

ब्रोमफील्ड ने जब चारो तरफ से इस प्रकार रूखा जवाब पाया तो उसे बड़ी कोफ्त हुई। उसने स्वय ही सुझाव देकर ब्राउन से कहा—मान लीजिए कि किसी तरह यह प्रमाणित हो जाए कि प्रेमचन्द यों तो कानूनी दृष्टि से विवाहित नही था, पर उसका किसी स्त्री से पति-पत्नी का सम्बन्ध था और वह स्त्री गर्भवती है तो क्या उसके सम्बन्धो को बच्चे के स्वार्थ को देखते हुए कानूनी रूप देना किसी प्रकार गर्हित या विधिवहिर्भूत होगा ?

डाक्टर अरविन्दकुमार तथा अर्चना गर्भवाली बात सुनकर चौंके, पर उन्होने

यह समझा कि केवल तर्क के लिए एक बात कही जा रही है तो कही जाए, कोई हर्ज नही। कोई लिखा-पढी तो हो नही रही है। यदि इससे काम बनता है तो बुरा क्या है ?

ब्राउन ने ब्रोमफील्ड से कहा—आप कहते तो ठीक हैं, यूरोपीय मानदण्ड से आपकी बात सही मानी जाएगी, पर यहा के क्रातिकारी किस प्रकार हृदय-हीन और नृशस हैं, उनके साथ उन मानदण्डो का प्रयोग करके कोई रियायत करना मेरी समझ मे अनुचित होगा, पर आप चाहे तो कानूनी विवाह करा सकते हैं, पर उसके लिए एक पक्ष को नोटिस आदि जो देने की ज़रूरत है, उसे आप समझ लीजिए।

ब्रोमफील्ड ने कहा—मैं दोनो के बीच सिविल मैरिज हो जाने मे कोई आपत्ति नहीं देखता। कानून तो अपना रास्ता ले ही रहा है। किसी प्रकार क्षमा या दया की कोई बात नही उठती, पर विवाह हो जाने मे कोई हर्ज नही है।

पर ब्राउन झुन्नाकर बोला—मैं तो समझता हू, इस प्रकार के एक खूनी की सन्तान होने की बजाय दोगला होना कही अधिक मर्यादा सम्पन्न है। आगे आप जैसा समझे, करे। पर अच्छी तरह सोच लीजिएगा।

अन्तिम शब्दो मे कुछ धमकी-सी थी, पर ब्रोमफील्ड ने इसकी परवाह नहीं की क्योकि वह इन पुलिस-अफसरो को जानता था। ये अधिकाश सेना से आए हुए होते थे। ब्रोमफील्ड इन्हे पढा-लिखा समझता ही नही था।

वह डाक्टर से बोला—आप इस सम्बन्ध मे जो कानूनी कार्रवाई कीजिए, मैं अवश्य आपकी सहायता करूगा। कानून मे एक तरफ यदि भावुकता की गुंजायश नही है तो दूसरी तरफ प्रतिहिंसा की भावना भी वर्जित है ··

दोनो राजनैतिक परिस्थिति पर दबे-दबे बीतचीत करते रहे और जब पाचेक मिनट हो गया तो डाक्टर ने विदाई लेने की बात कही। पर उसी समय एक टेलीफोन आ गया।

अरविन्दकुमार और अर्चना उठ खडे हुए थे और अन्तिम अभिवादन करके जाने ही वाले थे कि ब्रोमफील्ड ने टेलीफोन करते-करते उन्हे हाथ से बैठने का इशारा किया। यह स्पष्ट था कि टेलीफोन उनसे सम्बन्धित था।

दोनो बैठ गए। पर अर्चना का मन एक अज्ञात आशका से धडक रहा था। उसे यह डर था कि कहीं प्रेमचन्द ही विवाह करने से इन्कार न कर दे।

यदि उसे समझाने का मौका मिलता तो उससे बहुत कुछ कराया जा सकता था, पर मुसीबत् तो यह थी कि एक मिनट बात करने, यहा तक कि चिट्ठी लिखने तक का मौका नही था और प्रेमचन्द मनमानी कर सकता था।

ब्रोमफील्ड उत्तेजित होकर टेलीफोन पर कह रहा था—जी हा, मैं उस सम्बन्ध मे कार्रवाई कर रहा हूं....

उधर से पता नही क्या कहा गया, पर ब्रोमफील्ड बोला—मैं कानून के दायरे के अन्दर ही सारी बाते कर रहा हू। कानून मे एक तरफ यदि भावुकता की गुजाइश नही है तो दूसरी तरफ प्रतिहिंसा की भावना भी वर्जित है।

उधर से फिर कुछ कहा गया। अरविन्दकुमार और अर्चना के कान खडे हो गए। तो बातचीत उन्ही के सम्बन्ध मे हो रही थी ! वही पुलिस-कप्तान बोल रहा था ? नही, उससे तो ब्रोमफील्ड दूसरे ही लहजे मे बात कर रहा था। यह ब्रोमफील्ड का कोई अफसर मालूम होता है क्योकि यह उससे 'सर'-'सर' करके बात कर रहा है।

अबकी बार उधर से कुछ लम्बा व्याख्यान-सा हुआ। ब्रोमफील्ड केवल हामी भरता रहा।

ब्रोमफील्ड का चेहरा धीरे-धीरे फीका पडता जा रहा था। अन्त मे वह बोला—जब आप ऐसा कहते है तो मैं इसे कार्यान्वित करने के लिए बाध्य हू।

उधर से कुछ सक्षिप्त धन्यवाद-सा हुआ और ब्रोमफील्ड ने टेलीफोन बन्द कर दिया।

उसने चेहरा गम्भीर बनाते हुए कहा—मिस्टर ब्राउन ने कमिश्नर मिस्टर गोल्ड स्टुकर को टेलीफोन किया और वे कह रहे हैं कि विवाह मे कोई कानूनी बाधा तो नही है, पर राजनैतिक दृष्टि से यह उचित न होगा।

अर्चना के मन मे जो शका घुघुआ रही थी, उसकी तुलना मे यह बहुत मामूली बात थी। वह आश्वस्त ही हुई। अवश्य आश्वस्त हो जाने के बाद उसे निराशा हुई, पर उतनी नही, जितनी कि अन्यथा होती।

डाक्टर साहब ने फिर भी तर्क किया—इनमे राजनैतिक मामला क्या आ पड़ा ?

ब्रोमफील्ड ने इसका उत्तर नही दिया और उसका चेहरा इंग्लैण्ड मे या स्काटलैण्ड मे परिचित व्यक्ति से बिल्कुल भिन्न, सरकारी हो गया। अरविन्दकुमार और

अर्चना ने चुपचाप अभिवादन किया और वे बाहर चले गए।

घर लौटने की बजाय डाक्टर साहब अपनी बहन को लेकर फूल बाग पहुचे और वहा एक बैंच पर बैठकर बातचीत करने लगे। अर्चना यह तो समझ ही गई थी कि बातचीत करने के लिए ही वे फूल बाग आए हैं।

पहले तो डाक्टर साहब ने घडी देखी फिर उसके बाद मालियो की निन्दा की कि वे आजकल मुफ्तखोर हो रहे हैं, क्यारियो पर ठीक से मेहनत नही करते। इसीसे बनारस के विक्टोरिया पार्क की बातचीत चली। आध घटे से ऊपर हो गया। सरोज प्रतीक्षा कर रही होगी, सडे ही सही, पर टाइम से तो सब काम करना है।

वह एकाएक बोले—अर्चि, एक बात कहूं ? यो तो ब्रोमफील्ड, ब्राउन, गोल्ड स्टुकर सब बदमाश है, इग्लैण्ड मे इन्हे कोई दो कौडी के नही समझेगा, पर यहा नवाब के नाती बने हुए है ! फिर भी मैं इस बात से दुखी नही हू कि विवाह नही हो सका। तुम अभी जो चाहती हो, दो साल बाद भी वही चाहोगी, यह नही कहा जा सकता। अभी तुम जवान हो। सम्भव है, बाद को किसी और से तुम्हारा जी लग जाए। तब यह विवाह तुम्हारे मार्ग का रोड़ा ही बनेगा। गुनाहे बेलज्जत इसीको कहते है।

अर्चना ने इस सम्बन्ध मे कुछ कहना जरूरी नही समझा। कितने ही जोर से वह अपनी बात कहती, वह कहना मौन के मुकाबले मे कमजोर ही होता।

डाक्टर ने पता नही इसका क्या अर्थ लगाया। कुछ झिझकते हुए बोले—हा, यदि वह बात है जो ब्रोमफील्ड ने ब्राउन से तर्क के रूप मे कही थी, तब तो स्थिति कुछ और बनती है।

अर्चना शायद डाक्टर की बात सुन ही नही रही थी या यह समझ रही थी कि वैसा होता तो कुछ तसल्ली ही होती···

डाक्टर बोले—पर उस परिस्थिति मे भी मैं सहायता कर सकता हू। है तो बुरी बात और हजारो रुपये पर भी मैं वह काम नही करूगा, पर तुम्हारे लिए वह भी कर सकता हू।

अर्चना को ये सभी बाते बहुत बुरी लगी, बोली—ऐसी कोई बात नही है, यदि होती तो मै आपके पास नही आती। चलिए···

कहकर वह उठ खडी हुई। डाक्टर अपने पेशे के बाहर बहुत कम बात

करते थे। उन्होने समझा शायद कोई गलती हो गई। चुपचाप मोटर पर जाकर बैठ गए।

# ५८

अर्चना यह समझती थी कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद एक विराट आक्टोपस की तरह है, उसकी सड बहुत लम्बी और क्रूर है, पर वह इतना हृदयहीन है, यह उसे अब ज्ञात हुआ। उसे ऐसा महसूस हुआ कि वह एक ऐसी अन्धेरी काल-कोठरी मे बन्द कर दी गई है, जिसमें वह खडी नही हो सकती। वह जीवित अवस्था मे ही जैसे कब्र मे दफना दी गई है।

कोई कुछ नही समझता। भाभी पूरी घटना को एक विराट रोमास मात्र समझती रही, ऐसा हृदय-विदारक रोमांस जिसमे हृदय का कोई स्पर्श ही नही है। बेचारे भाई साहब ने अपने ढग से सब कुछ किया, शायद इसलिए उन्हें कुछ झुकना भी पडा, पर सब तरह से हाथ-पैर मार लेने के बाद उन्हे कदाचित् यह धारणा हो गई कि वे इन बातो को समझते ही नही हैं, इसलिए लच के बाद से वे जो चुप हुए सो फिर मुह खोला ही नही। अब वे इस सम्बन्ध में कुछ नही कहेगे। वे बेचारे सहायता तो करना चाहते हैं, पर कर क्या सकते है ?

तो क्या उसका यहा आना बिल्कुल ही व्यर्थ जाएगा ? विवाह करना कोई लक्ष्य नही है, चाहती तो बीस बार प्रेमचन्द से विवाह कर लेती

यह सोचते-सोचते उसका माथा कुछ ठनका कि क्या वह ऐसा कर पाती ? प्रेमचन्द जिस प्रकार झक्की है, उसमे कुछ कहा नही जा सकता। अभी तो कही कोई रास्ता, कही रोशनी की कोई रौप्य रेखा दिखाई नही पड रही है।

कुणाल जी एक बहुत अच्छी बात कहा करते थे कि जब चिन्ताए अधिक हो और कही से कोई रास्ता न दिखाई देता हो तो सो जाओ, अवश्य सिरहाने भरी पिस्तौल रखकर।

उस समय तो यह बात सुनकर हसी आती थी कि जिस व्यक्ति पर हजारो का इनाम है, वह ऐसी बात किस मुह से कहता है ?

बहुत ही बडा कलेजा होगा, तभी तो ऐसी बात कहते थे। और केवल कहते नही थे, उसे कार्यान्वित भी करते थे। प्रणवकुमार ने इसके एक नही दो-चार किस्से बताए है।

पर अब जान पडता है कि जीने का तरीका ही यही है। वह रात को खाना खाकर लेट गई और सोने की चेष्टा करने लगी।

भाभी ने अभी खाना नही खाया था क्योकि डाक्टर साहब को आज एका-एक कोई आपरेशन करना पड गया। पता नही उसमे कितनी रात होती। अर्चना ने बच्चो के साथ खाना खा लिया था और सिर दर्द का बहाना बना-कर इस कमरे मे चली आई थी।

वह सोने की चेष्टा करने लगी। आज कुणाल जी के उस नुस्खे को आजमाने का अच्छा मौका था।

शायद कुछ झपकी आ गई थी।

उसने सुना, स्वर परिचित-सा लग रहा था।

—नही, मैं चोरी-ऐसे किसी महान उद्देश्य को लेकर नही आया था।

अब की बार भाभी की आवाज़ मालूम पडी। सरोज बोली—तो तुम चोर नही तो चितचोर होगे।

वह दूसरी आवाज़ कुछ झेप से मिश्रित हो गई। जवाब मिला—आपने मुझे पकड़ लिया है जो चाहे सो कर सकती है पर मैं आपको विश्वास दिलाता हू कि मैं अर्चना देवी से मिलने के लिए आया हू।

—क्या आपका नाम प्रेमचन्द है ?

अब की बार भाभी की आवाज़ मे कुछ सम्मान था। अर्चना ने सुना और उसने बहुतेरा चाहा कि हडबडाकर उठे और उस बातचीत की जगह पर पहुचे, पर उसके हाथ-पैर तो जैसे सौ-सौ मन भारी हो रहे थे। वह उठ न सकी।

उस अपरिचित व्यक्ति ने कहा—नही, मुझे ऐसा सौभाग्य प्राप्त नही है। मैं एक साधारण व्यक्ति हू।

—आपका प्रयोजन ?

—प्रयोजन उन्हीसे बताऊगा।

भाभी ने कहा—पर आप दीवार फादकर क्यो आए ? आप यो भी तो आ सकते थे।

उस व्यक्ति ने दृढता के साथ कहा—मैने देखा, दरवाज़ा बन्द है, इसलिए दूसरा मार्ग अपनाया।

—मार्ग ? क्या आप दीवार लाघने को मार्ग कहते हैं ?

वह व्यक्ति गहरी सास खींचकर बोला—अफसोस है कि आज सही मार्ग वही रह गया है।···

भाभी ने बतरस लेते हुए कहा—आप बडे विदग्ध मालूम होते हैं।

अब वह व्यक्ति भी बातो मे रस लेने लगा था। बोला—मैं यह तो नही कहूंगा कि मैं विदग्ध हू, पर इतना कह सकता हू कि कई लकाकाण्डो मे दग्ध हो चुका हूं, इसीलिए शायद मेरी दग्धता ही आपको विदग्धता लग रही हो।

भाभी ने एकाएक कहा—अच्छा यह सब तो हुआ, अब बताइए मैं यदि आपको पुलिस के हवाले कर दू, तो आप क्या करेगे ?

वह व्यक्ति जैसे हंसा। अरे यह हसी तो बिल्कुल प्रेमचन्द की हसी की तरह लग रही थी, जैसे वे दोनो पैर फैलाकर खड़े होते हुए सिगरेट की कशो के बीच में हंसते थे। प्रसगानुसार उस हसी के कितने ही अर्थ होते थे।

अर्चना ने उठ खडे होने की बहुत ज़ोर से चेष्टा की, पर हड्डियो मे तो पारा भरा हुआ था। वह हिल भी नही पाई।

हसकर उस व्यक्ति ने कहा—यह देखिए···

अर्चना समझ गई कि उसने पिस्तौल-ऐसी कोई चीज़ दिखाई होगी। अरे भाभी यह क्या कर रही है ? यह सात साल पहले जैसी थी, अब भी वैसी ही चुलबुली है, न तो परिस्थिति देखती है और न व्यक्ति को ही महत्व देती है। वह कोई न कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति तो होगे ही। सम्भव है अमिताभ हो, या उनका भेजा हुआ कोई व्यक्ति हो।

उधर जैसे एक पूर्ण विराम हुआ।

थोडी देर तक किसीकी बातचीत नही सुनाई पडी और न कोई हिला-डुला। मालूम होता है चुलबुली भाभी को रोग के उपयुक्त दवा मिल गई। पर नही, यह उचित नही है। वह आदमी कितना अक्खड है कि एक स्त्री को एकात मे और सो भी रात्रि के अन्धकार मे पिस्तौल दिखाता है।

पर दोष तो भाभी का ही है, उसने पुलिस का नाम क्यों लिया ? पुलिस का नाम लेने पर एक क्रान्तिकारी मे इस प्रकार की प्रतिक्रिया स्वाभाविक ही थी।

भाभी भी बहुत गलती पर नही थी। वे यह थोडे ही कह रही थी कि तुम क्रातिकारी हो, इसलिए तुम्हे पुलिस मे दे दूगी। वे तो चित चोर कहकर पुलिस मे देने का मजाक कर रही थी।

भाभी ने कुछ कहा और उसने कुछ समझा। दोनो अपनी-अपनी जगह पर ठीक थे। पर कोई बोलता क्यो नही ?

क्या वह आदमी लौट गया ? अरे मै उठ क्यो नही पाती ? हाथो और पैरो को हो क्या गया है ? आखे भी तो नही खुल रही है। अजीब असहाय परिस्थिति है।

क्या वह स्वप्न देख रही है ?

अजीब स्वप्न है, न सिर न पैर !

अर्चना ने बहुत कोशिश की कि वह जग जाए या कम से कम मालूम तो हो जाए कि यह स्वप्न है या सत्य ? यह परिस्थिति बहुत ही कष्टकर है, पर शरीर तो हिलता ही नही। आखे खुलती ही नही।

इतने मे दरवाजा खुला। बत्ती जल उठी, साथ-साथ उसकी आखें भी खुल गई।

भाभी और एक मुह ओढा हुआ आदमी भीतर आया। भाभी ने अपने स्वभावसिद्ध अल्हड़पन से कहा—यह साहब दीवार फादकर तुमसे मिलने आए है। जब मैंने इसपर आपत्ति की तो इन्होने पिस्तौल दिखाई।

अर्चना हडबड़ाकर उठ खड़ी हुई और साथ ही साथ उस व्यक्ति ने अपना चेहरा खोल दिया तो अर्चना ने देखा कि प्रेमचन्द नही, अमिताभ नही यह तो जीवानन्द है, पर इन्ही कई दिनो के अन्दर वह काफी कृश हो गया है जैसे उस-पर से बहुत-सी आधिया गुजर गई हो।

अर्चना बोली—भाभी, ये हमारे दल के एक नेता हैं। किसी काम से ही आए होगे।

कहकर उसने जीवानन्द को सम्बोधित करते हुए कहा—आपने मेरा घर कैसे पहचाना ?

—किसी कार्य से हम कानपुर आए थे तो आपको फूलबाग में देखा। वहां

मौका नही लगा। पीछा किया तो आप गाडी पर हवा हो गई। तब मैने गाडी का नम्बर याद कर लिया। फिर तो सारी बात आसान हो गई।

भाभी बीच मे बोल पडी—तब तो आप बडे खत्तरनाक आदमी हैं!

जीवानन्द के कृश चेहरे पर आत्मश्लाघा की चमक आ गई। उसने कुछ नही कहा, पर अर्चना ने उसकी तरफ से कहा—इनके लिए यही तो एक पाथेय है कि खतरनाक समझे जाते है।

जीवानन्द अबकी बार खुलकर हसा। बोला—साम्राज्यवाद-ऐसी राक्षसी शक्ति हमे खतरनाक मानती है, सचमुच यह हमारे लिए बहुत ही गौरव की बात है।

अर्चना ने जीवानन्द को कुर्सी पर बैठने का इगित किया फिर बोली—पर खतरनाक आदमियो मे खराब बात यह होती है कि वे दूसरो को समझ नही पाते। हमारी भाभी आपको बहुत अद्भुत लगी होगी, पर हैं वे बडी ममतामयी और इसके प्रमाण मे वे अभी आपके लिए खाना लाएगी।

सरोज बिल्कुल ही बदल गई और व्यस्त होकर बोली—हा, हा, मैं तो भूल ही गई थी। यह अच्छी याद दिलाई। जो मेहमान दरवाज़े से होकर आता है, उसकी तुलना मे उस मेहमान का अधिक स्वागत होना चाहिए जो दीवार फादकर आता है।

जीवानन्द ने हसते हुए कहा—केवल 'दीवार फादकर आता है,' कहने से मेरी अप्रतिष्ठा होती है। उसके साथ यह भी कहिए कि मोटर के नम्बर से घर का पता लगाकर आया हू ...।

भाभी बाहर की तरफ पैर बढाकर बोली—ज़रूर ही आकर्षण इतना भारी होगा कि वह आपको इस प्रकार असाध्य साधन कराने मे समर्थ हुआ।

भाभी ने उत्तर के लिए प्रतीक्षा नहीं की और कमरे से बाहर चली गई। उधर के कमरे मे प्लेटो और चमचो की खनखनाहट मालूम हुई।

मौका मिलते ही जीवानन्द ने पूछा—प्रेमचन्द जी से कुछ सम्बन्ध स्थापित हो सका?

अर्चना ने सक्षेप मे कहा—नही।

उसने इस बीच मे प्रेमचन्द से मिलने के लिए जो प्रयास किए थे, उनका कोई ज़िक्र नही किया। बेकार मे फालतू बात करने की आवश्यकता ही क्या

थी ? फिर जीवानन्द बहुत कृच्छ्र-साधक टाइप का क्रान्तिकारी है, कुणाल का सच्चा चेला, बल्कि कुणाल से भी अधिक कट्टर। उसे ब्रोमफील्ड के यहा की सारी बात बताने का कोई अर्थ नही होता, विशेषकर जब कि उस बातचीत का कोई नतीजा ही नही निकला।

जीवानन्द ने पिस्तौल निकालकर सामने की छोटी-सी मेज़ पर रख दी और उसे पास ही पडी एक पुस्तक खीचकर जिस किसी तरह ढक दिया।

अर्चना ने चारो तरफ देखा। क्या जीवानन्द को यहा कोई खतरा महसूस हो रहा है ?

उसने पूछा—क्या आपका कोई पीछा कर रहा है ?

—नही, मैं तो बनारस से ही मायामुक्त होकर आया हू, पर आपके पीछे ज़रूर पुलिस होगी।

कहकर अजीब ढग से हसते हुए बोला—अच्छा वैद्य वही है जो रोग के पहले ही दवा की व्यवस्था कर ले।

फिर उसने जैसे जबर्दस्ती इन विचारो से अपने को हटाने के लिए कहा—पर कोई भय की बात नही है, खुफिया पुलिस वाले आपके दरवाज़े पर निगाह रख रहे होगे, मै तो दीवार फादकर आया हू।

—हूं।

जीवानन्द ने कहा—मैं आशा करता हू कि जल्दी ही फांसी घर से सम्पर्क स्थापित हो सकेगा ?

—कैसे ? कैसे ?—अर्चना ने बडी व्यग्रता ढालकर यह प्रश्न पूछा। जैसे उसे एकाएक कोई वरदान मिला हो।

भाभी खाना लेकर आ गई। बोली—मैंने आपको खाने के कमरे मे जाने का कष्ट नही दिया क्योकि अभी इनके भाई साहब आते होगे। मैं समझती हू कि उनसे भेट करने का आपका कोई कार्यक्रम नही है।

जीवानन्द ने हंसकर कहा—मै उनका दर्शन कर चुका हू…

भाभी खाना रखकर चली गई। अर्चना ने उससे एक बार भी यह नही कहा कि मेहमान को खाना खिलाती जाओ। उसने तो डर के मारे बात ही नहीं की कि कही बात से बात न बढ़े।

भाभी के जाते ही फिर बोली—कैसे ?

जीवानन्द ने खाना आरम्भ करते हुए कहा—एक वार्डर आज दिखाई पड गया था, जो असहयोग के जमाने मे बनारस जेल मे था। पता नही उसकी ड्यूटी कहा है, पर उसके जरिए कुछ न कुछ हो जाएगा, ऐसी आशा है।

जीवानन्द खाता रहा और बनारस की ताज़ी खबरे सुनाता रहा। अर्चना ने सारी खबरें बहुत कौतूहल के साथ सुनी, पर कोई प्रश्न नही पूछा। उसके सामने तो इस समय केवल एक ही लक्ष्य था। वह उस लक्ष्य से बिल्कुल ध्यान हटाना नही चाहती थी। वह घूम-फिरकर उसी वार्डर की बात पर आने लगी।

इसी बीच कब डाक्टर साहब घर आए और उन्होने खाना खाया, यह अर्चना को पता नही लगा। वह तो यही तय करने मे व्यस्त थी कि किस प्रकार जीवानन्द से फिर भेंट होगी।

जब घटे भर बाद भाभी ऐन सोने के पहले आई तो देखा कि थाली बिल्कुल खाली है, और इतनी खाली कि चीटी भी रोकर वापस चली जाए। कमरे में केवल अर्चना है।

सरोज ने आश्चर्य के साथ कहा—वे चले भी गए। मैं तो समझती थी कि वे रात भर यही रहेगे।

अर्चना अपने विचारो मे इतनी तल्लीन थी कि उसने पूरी बात नही सुनी। बोली—वे जिस रास्ते से आए थे उसी रास्ते से गए।

भाभी ने थाली उठाते हुए कहा—इसके माने यह हुए कि जिस दीवार को फादकर वे आए थे, मैं उधर एक मोटा-सा गद्दा बिछा रखू ?

अर्चना ने फिर भी मज़ाक को मज़ाक के रूप मे नही लिया। बोली—भाभी, ये लोग ऐसे ही हैं। इन्हे जिन्दगी का सीधा रास्ता कभी पसन्द नही आता। टेढा और खतरनाक रास्ता ही इन्हे सीधा मालूम होता है।

भाभी कुछ समझ नही पाई कि ननद जी इतनी भावुक क्यो हो रही है। वह थाली हाथ मे लेकर दरवाज़ा भेडकर अनुमान भिडाती हुई चली गई।

## ५९

जीवानन्द कानपुर मे ही रह गया। उसकी अनथक कोशिश के बाद प्रेमचन्द से कोई सम्बन्ध स्थापित नही हो सका। प्रेमचन्द के सम्बन्ध मे जो थोडी-सी बातें मालूम हो जाती थी, वह प्रेमचन्द के भाई सुगनचन्द की भेट से ही मालूम होती थी।

अर्चना ने इस आशा से न जाने कितने पत्र लिखे कि किसी न किसी जरिए से प्रेमचन्द के पास पत्रो को पहुचाना सम्भव होगा, पर पत्र नही पहुचाए जा सके और फाड डाले गए।

डाक्टर अरविन्दकुमार ने तो यहा तक सदेह किया कि बहन का मानसिक स्वास्थ्य तेज़ी के साथ बिगड रहा है। वह कपडे-लत्तो के प्रसाधन की तरफ से बिल्कुल उदासीन हो चुकी थी। खैरियत है कि सरोज की सेवाओ के कारण वह एकदम सिलबिल्ली नही हो सकी थी। चेहरा एकदम सूख गया था, मानो वर्षों से किसी क्षयजनक रोग से ग्रस्त हो, कभी हसती नही थी और हमेशा जब बात करती तो गम्भीरता के साथ बात करती। हा, ढेर-सा सिन्दूर ज़रूर लगाती थी।

एक दिन तो डाक्टर अरविन्दकुमार ने यहा तक सोचा कि जीवानन्द से कहा जाए कि आप झूठ-मूठ कह दें कि पत्र प्रेमचन्द को पहुच गया। पर अपने स्वभाव के अनुसार वे किसी निश्चय पर नही पहुच सके और समय निकलता गया।

सचमुच समय बडी तेज़ी के साथ निकल रहा था। नवम्बर मे जो गोलमेज़ सम्मेलन जुडा था, वह कुछ आगे नही बढ पाया था। सरकार इस गोल-मेज़ के डन्डे से काग्रेस की अकल ठिकाने लाना चाहती थी। जब वह उद्देश्य सिद्ध नही हुआ तो सरकार उस प्रेमिका की तरह हो गई जो ऐश्वर्य की आशा से प्रेम करती है, पर एकाएक यह आविष्कार करती है कि उसका प्रेमिक तो कौड़ी-कौड़ी का मुहताज है।

फिर भी श्रीनिवास शास्त्री, सप्रू और दूसरे विलायत मे डटे हुए थे। पता नहीं वे क्या समझते थे, इन कथित उदारनीतिक दल के नेताओ की यह आदत-

सी बन गई थी कि वे समझते थे कि बातचीत से ही, लच्छेदार अंग्रेज़ी मे भाषण देने से ही और कानूनी दावपेच निकालने से ही इतिहास का निर्माण होता है।

प्रधान मत्री मि० मैक्डोनल्ड गोलमेज़ मे गोलमोल बाते करते रहे। लम्बे-चौडे मसविदे बनते थे, पर मुद्दा कौडी भर नही होता था। पर गोलमेज मे गए हुए स्वयसिद्ध नेता रात भर बैठकर खुर्दबीन से प्रधान मत्री के व्याख्यान का विश्लेषण करते और अगले दिन फिर बातो का फौवारा चल निकलता।

शोर काफी होता, पर सार कोई न होता। पहले तो अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे इस सम्मेलन की धूम हुई थी, पर विदेशी पत्रकार जल्दी ही समझ गए कि यह तो मिली भगत है, धोखा है, इसका कोई मतलब नही है। हा, इन स्वयसिद्ध नेताओ ने भारतीय कर-दाताओ के पैसो पर लदन मे महीने-दो महीने खूब गुलछर्रे उड़ाए।

जेल मे बन्द राजनैतिक कैदी इनके व्याख्यान पढ-पढकर आग-बबूला हो जाते, पर कुछ लोग यह भी समझते कि चलो और कुछ नही तो सरकार की कलई तो खुल रही है, यही क्या कम है। सप्रू और श्रीनिवास शास्त्री इन दिनो जो पत्र भारत मे लिख रहे थे, उन सबमे यह भनक होती थी कि कुछ न कुछ हो ही जाएगा।

प्रतिनिधि बनकर गए हुए लोग तो मौज़ उड़ा रहे थे, पर ब्रिटिश सरकार का मन इस तमाशे से जल्दी ही भर गया था। आन्दोलन घटने की बजाए कई स्थानो पर अजीब रुख ग्रहण करता जा रहा था, जिससे यह शका हो रही थी कि कही वह नेताओ के हाथ से निकल न जाए। इन्ही दिनो पडित मोतीलाल नेहरू को बीमारी के बहाने से छोड दिया गया। पडितजी को छोडने का विशेष कारण यह था कि सरकार यह समझती थी कि बडे नेताओ मे वही एक ऐसे है जो समझौता जल्दी कर सकते हैं।

पर पडित जी ने छूटते ही कुछ नही किया। उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड गया था। वे इलाज के लिए कलकत्ता गए। असल मे वे परिस्थिति का अध्ययन कर रहे थे। आन्दोलन का भार भी इस समय उनपर पडा। समझौते के रास्ते मे सबसे बडा रोडा उस समय यह था कि काग्रेस की कार्य-समिति, प्रातीय तथा दूसरी बहुतेरी समितिया गैर कानूनी थी। इसलिए कार्य-समिति

की बैठक नही हो सकती थी ।

पर नेताओ को मालूम हो गया कि सरकार अपने खुफियो के जरिए से सारी प्रवृत्तियो से परिचित है, इसलिए बेजाब्ता तौर पर कार्य-समिति की बैठक पर सरकार को आपत्ति न होगी।

उधर ब्रिटिश प्रधान मत्री मैक्डोनल्ड ने फिर कुछ ऐसी गोलमाल बातें की जिनका मतलब यह लगाया जा सकता था कि सरकार गोलमेज़ सम्मेलन में काग्रेस को शरीक करना चाहती है और उसके लिए एक और प्रयत्न किया जाएगा । इसपर कार्य-समिति की बैठक के लिए तैयारी हो रही थी । यो तो सरकार को इसकी सूचना मिली ही थी, पर लाहौर मे कार्य-समिति के एक सदस्य के पास वह गश्ती पत्र भी मिल गया जो सदस्यो को सभा मे आने के लिए भेजा गया था ।

उस पत्र की खबर अखबारो मे भी छप गई, तब पडित मोतीलाल ने आगे बढकर यह आज्ञा दी कि अखबारो मे यह छपवा दिया जाए कि मेक्डोनल्डन के भाषण पर विचार करने के लिए ही यह बैठक हो रही है। ऐसा छपवाने का आशय यह था कि सरकार यह न समझे कि आन्दोलन तेज करने के लिए बैठक बुलाई गई है ।

सरकार ने इसके पहले ही १९३० की पहली जनवरी तक जितने भी लोग कार्य-समिति के सदस्य बने थे उन्हे छोड दिया था । ३१ जनवरी को इलाहाबाद मे कार्य-समिति के मौलिक तथा स्थानापन्न सदस्य एकत्रित हो चुके थे । सरकार ने इसपर कोई कार्यवाही नहीं की और सभा होती रही । उधर से श्रीनिवास शास्त्री और सप्रू ने यह तार भेजा कि जल्दी मे कोई फैसला न किया जाए, इसलिए आपसी आलोचना होती रही पर कोई निर्णय प्रकाशित नही हुआ ।

इन्ही दिनो ६ फरवरी को पडित मोतीलाल का देहान्त हो गया। देश शोकमग्न हो गया पर समझौते की ओर कदम बढता ही रहा। सप्रू और शास्त्री जल्दी से लन्दन से लौट आए। उन्होने यह रिपोर्ट दी कि सरकार बहुत कुछ करना चाहती है, तदनुसार तय हुआ कि महात्मा जी १७ फरवरी को वायसराय लार्ड इर्विन से मिले ।

क्रातिकारी इन घटनाओ को बडे ध्यान से देखते रहे। इतने बडे जन-

आन्दोलन का फिर से कबाडा होने जा रहा है, इसपर वे दुखी हुए। बंगाल मे जहा क्रातिकारी सगठन बहुत मज़बूत था, ज़ोरो से आतकवादी या उनकी भाषा मे कहा जाए तो प्रत्यातकवादी कार्य चालू हो गए। फिर से एकबार जेलो के अन्दर और बाहर राजनैतिक कार्यकर्ताओ मे बहुत जोर का तर्क-विनर्क शुरू हुआ।

यह विचारो की दृष्टि से एक प्रबल मन्थन और तर्क-वितर्क का युग था।

जीवानन्द ने पुलिस के उपद्रव के कारण काशी छोड़ दी थी और अब वह मुख्यत: पजाब मे ही कार्य कर रहा था। उसने बहुत चेष्टा की पर किसी भी तरह प्रेमचन्द तक कोई पत्र नही पहुचा सका।

अर्चना को कुछ काम तो था नही अत: वह अखबार बहुत ब्यौरे मे पढा करती थी। वह यही सोचा करती थी कि अपील से तो कुछ नही होने वाला है, यदि समझौता हो जाए तो शायद कुछ हो। शायद दूसरे राजनैतिक कैदियो के साथ क्रान्तिकारी कैदी भी रिहा कर दिए जाए, पर इस सम्बन्ध मे उसे बहुत सन्देह था क्योकि गाधीजी जब भी कैदी छोडने की बात करते थे तो वे इन शब्दो के अन्दर क्रातिकारी या उनकी भाषा मे हिंसात्मक अपराधो के कैदियो को नही गिनते थे। इसपर देश भर के युवक-सघो तथा नौजवान भारत सभाओ मे बहुत असन्तोष था, पर काग्रेस के महान नेता उसकी कोई विशेष परवाह करते हुए ज्ञात नही होते थे।

हाईकोर्ट मे फरवरी के दूसरे सप्ताह मे प्रेमचन्द की अपील की सुनवाई होने वाली थी। अभी इलाहाबाद शहर पर पडित मोतीलाल की मृत्यु का शोक छाया हुआ था। अर्चना वहा पर अपने भाई डाक्टर अरविन्दकुमार के साथ पहले से ही पहुच गई थी और सुगनचन्द ने जो वकील नियुक्त किया था, उसके अलावा उन्होने एक एग्लोइडियन बैरिस्टर मिस्टिर ऐन्थनी को भी नियुक्त किया, जो फौजदारी के मामलो मे सबसे प्रमुख माने जाते थे।

पर वकील और बैरिस्टर क्या करते? गवाहिया इतनी पक्की थी और घटना इस प्रकार घटित हुई थी कि उसमे बचत की कोई गुंजाइश थी ही नही।

मिस्टर ऐन्थनी ने सुगनचन्द के द्वारा नियुक्त वकील बाबू रामप्रसाद को

यह सलाह दी कि हम हत्या की घटना को तो किसी प्रकार चुनौती दे ही नही। हम इतना ही कहे कि तसद्दुक ने जिस प्रकार एक सत्याग्रही तरुणी को भगाकर रखा था और शायद उसपर अत्याचार भी किया था, उसकी" खबर सुनकर प्रेमचन्द ऐसे आदर्शवादी, उच्च शिक्षित, सच्चरित्र युवक को जोश आ गया और उसने आवेश मे उसकी हत्या कर डाली।

पर बाबू रामप्रसाद का यह कहना था कि इस प्रकार हम हाथ-पैर बाधकर अपने मुवक्किल को जल्लादो के हाथ सौंप देंगे। हम तो यह बहस करना चाहते हैं कि एकाएक आवेश मे प्रेमचन्द ने हमला कर दिया, वह हत्या करना नही चाहता था, पर कोई हाथ ऐसा-वैसा पड गया और सयोग की बात है कि तसद्दुक मारे गए।

दोनो मे इसपर बहस होती रही और किसीने किसीकी बात नही मानी। अन्त मे कुछ फैसला न हो सका और अपील का दिन आ गया।

बाबू रामप्रसाद ने तो अर्चना, डाक्टर अरविन्दकुमार, और सुगनचन्द के सामने यहा तक कहा—यो तो ऐन्थनी बडा अच्छा बैरिस्टर है, पर इस मामले मे एक एग्लोइंडियन होने के नाते उसका मन हमारे साथ नही, बल्कि इस्तगासे के साथ है। वह रुपयो के लिए तो सफाई पक्ष मे आया है, पर क्लब मे बैठकर यही कहता होगा कि जितने एजीटेटर हैं इन सबको फासी देकर राज्य निष्कटक बनाना चाहिए।

इजीनियर सुगनचन्द बहुत सीधे-सादे आदमी थे। वे यह सारी स्थिति देखकर परेशान हो रहे थे और उनकी समझ मे यह नही आ रहा था कि क्या होना चाहिए। जब नीव के सम्बन्ध मे ही मतैक्य नही है तो इमारत कैसे खडी होगी।

अर्चना ने यह देखा कि बेचारे सुगनचन्द इतने सीधे हैं कि वे अदालत मे कहने के लिए नही, बल्कि मन से यह विश्वास करते हैं कि उनका भाई सम्पूर्ण रूप से निर्दोष है और उसे फसाया गया है। वे तो बार-बार गत महीनों मे अर्चना से यह कह चुके थे—वह तो एक चीटी को देखकर डरता है, वह हत्या कैसे कर सकता है? ··

उन्हे अपने ढग से ब्रिटिश शासन की निष्पक्षता पर तो नही, पर ब्रिटिश न्याय पर बडा विश्वास था। वे समझते थे कि भले ही जेल और पुलिस-

विभाग ने प्रेमचन्द के साथ अन्याय किया हो, पर ब्रिटिश न्याय-विभाग अवश्य इस सम्बन्ध मे दूध का दूध और पानी का पानी करके रख देगा।

रामप्रसाद और ऐन्थनी की आपस मे होने वाली कानूनी बहस मे उन्होने कोई हिस्सा नही लिया था। उनकी मान्यताओ मे से एक यह भी थी कि जैसे दूसरे लोग इजीनियरिंग नही समझते, वैसे मैं कानून के दाव-पेच नही समझता। जब इतने बडे-बडे दो कानूनी मगरमच्छ आपस मे मतभेद रखते है तो फिर मेरे कुछ कहने का कोई महत्व नही।

डाक्टर अरविन्दकुमार इस प्रकार अपनी बुद्धि को एक विषय तक ही सीमित शायद नही मानते थे, पर वे भी दोनो की बहस चुपचाप सुनते रहे, फिर जब अकेले पाकर बाबू रामप्रसाद ने ऐन्थनी के विरुद्ध ईमानदार न होने का अभियोग लगाया तो उनसे चुप नहीं रहा गया। बोले—माफ कीजिएगा, मैं ऐसा नही समझता। इसमे सन्देह नही कि ऐन्थनी की निजी राय क्रान्तिकारियो के विरुद्ध होगी, पर वह किसी भी कारण से अपने मुवक्किल से धोखा नही करेगा। ··

बाबू रामप्रसाद अपने वक्तव्य को अधिक फैलाव देना नही चाहते थे। उन्होने बस इतना ही कहा—अगर यह बात है तो बहुत ही सुन्दर है, पर मुझे तो मामले के तथ्य बिल्कुल स्पष्ट लगते हैं, इसलिए मैंने यह बात कही थी।

डाक्टर अरविन्दकुमार अधिक बोलने के आदी नही थे, पर जब बोलना शुरू करते तो पूरी बात कहकर ही दम लेते थे। बोले—वकालत का पेशा अपनाने का मतलब यह नही है कि व्यक्ति अपनी निजी राय का विसर्जन कर देगा। अवश्य ही वह निजी राय रखेगा, पर जब वह कचहरी मे पहुचेगा तो मुवक्किल के पक्ष मे ही बात करेगा। यह परम्परासिद्ध है और लोगो की ऐसी आदत ही पड जाती है। आप ऐन्थनी के वक्तव्य पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें।

सुगनचन्द ने कानून और परम्परा को जैसे विशेष महत्व नही दिया। बोले—जब वह निर्दोष है तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि वह छूट जाएगा। यही मैंने बराबर अर्चना बहन से कहा है।

उनके चेहरे पर उनकी यह आस्था चमक दे गई। पर बाकी सब लोगो

को विशेषकर अर्चना को उनकी बाते बहुत ही अद्भुत नही तो अप्रासगिक लगी।

फिर भी वह दात मे दात-सा डालकर चुप रह गई। क्योकि उसके मन मे एक विचार बहुत दिनो से था, शुरू से ही आ रहा था, जिसे उसने किसीसे नही कहा था। सुगनचन्द से तो कहा ही नही था, पर उस विचार को कार्यान्वित करने के लिए सुगनचन्द का सहयोग जरूरी था। वह उस सहयोग के लिए कोई भी दाम देने को तैयार थी।

उस दिन बनारस जेल के फाटक पर प्रेमचन्द की एक झलक देख ली थी तब से वह जैसे स्वप्न हो गया था। एक पत्र तक न जा सका न आ सका। हां, सुगनचन्द के जरिए से नमस्ते तो वह भेज देती थी, पर नमस्ते का क्या अर्थ होता है? अवश्य यह बहुत बडा तथ्य था कि प्रेमचन्द को यह मालूम हो गया था कि वह तब से कानपुर आकर रह रही है। शायद इससे उनको कुछ खुशी हुई हो।

सुगनचन्द के जरिए से कहा ही क्या जा सकता था। वे इतने बुजुर्ग, ज्ञानी और मानी लगते थे कि उनसे कुछ कहते डर मालूम होता था। स्नेहमय वे अवश्य थे, पर उनकी स्नेहमयता पर कोई ऐसा मोटा पर्दा चढा हुआ था जिसे देखकर पूरा चेहरा देखना असम्भव था।

सारे ससार के लोग प्रेमचन्द को कुछ और समझते हैं पर उनके भाई उन्हे कुछ और समझते हैं। दोनो भाइयो मे मामूली फर्क ही नही, बल्कि जमीन-आसमान का फर्क है। एक तो जैसे कछुए जैसा है, बहुत कम हाथ-पैर या मुह खोलता है और दूसरा सूर्य की किरण-सा स्पष्ट है।

कम से कम उसे ऐसा ही लगता है। या कौन जाने दोनो एक-से ही हो। कुछ भी हो इनके इस कथन मे कि मेरा भाई अवश्य छूट जाएगा, उसे खोटे सिक्के की-सी गलत खनक सुनाई पडती थी।

इस व्यक्ति को तो शायद यह भी पता नही है कि देश मे कोई आन्दोलन चल रहा है और उस आन्दोलन मे कई परते, प्रकोष्ठ और स्तर हैं। उसने उनसे राजनीति पर बात करके भी देखा तो उनका मत कुछ ऐसा मालूम हुआ कि जैसे अखबार वाले अपने अखबारो को सरस बनाने के लिए ऐसी घटनाओ की सृष्टि करते रहते है जिनका जीवन से कोई विशेष सम्बन्ध नही होता या उतना

ही सम्बन्ध होता है जितना कि मासिक पत्रो मे छपी हुई किसी कहानी का होता है।

यह सब होने पर भी सुगनचन्द उसे बहुत भले लगते थे। बहुत ही भले।

इसके अलावा उनके द्वारा वह कार्य कराना था, पर अभी तो उसका जिक्र भी असम्भव था। क्या उनसे कोई इस समय कह सकता है कि यदि प्रेमचन्द की सजा बहाल रही तो आप ऐसा करिए, वैसा करिए।

नही, अभी तो बताना असम्भव था, शायद बहुत धक्का लगेगा। अजीब भोले आदमी हैं कि एक बार भी यह नही पूछा कि तुम प्रेमचन्द मे इतनी दिलचस्पी क्यो रखती हो।

ससार मे जो कुछ भी होता है उसे वे स्वयसिद्ध मान लेते हैं। शायद जब फासी की सजा बहाल रहेगी तब भी वे ऐसा ही करेगे।

ब्रिटिश न्याय पर उनके विश्वास का क्या हश्र होगा? पर वे उस समय शायद इस प्रश्न को साधारणीकृत रूप मे देखे ही नही।

यद्यपि वकील और बैरिस्टर आपस मे लड रहे थे और इससे पैरोकार घबड़ा रहे थे, पर ऐन सुनवाई के समय यह देखा गया कि दोनो पूर्ण सामजस्य के साथ एक ही दिशा मे कार्य कर रहे हैं। उन्होने अदालत के सामने यह रुख लिया कि अव्वल तो दण्डित स्त्रियो के सम्मान की रक्षा के लिए आवेश मे प्रेमचन्द मृत व्यक्ति पर टूट पडा था और उसके मन मे हत्या का उद्देश्य बिल्कुल नही था, और यदि मृत्यु हो ही गई तो आवेश मे आने का पूर्व और यथेष्ट कारण था।

ऐन्थनी ने ही मुख्य बहस की और उन्होने दसियो ऐसे सदर्भ पेश किए, जहा इस प्रकार के मामले मे केवल हाईकोर्ट ही नही, बल्कि भारत के सभी हाईकोर्टों मे विशेषकर कलकत्ता और बम्बई ने दण्डित को दण्डमुक्त कर दिया था। उन्होने प्रीवी कौंसिल के भी इस सम्बन्धी कई सन्दर्भ पेश किए। उन्होने इसे राजनीतिक मामला बनने ही नही दिया।

अन्त मे दण्डित के साथ कितना अन्याय हुआ, इस ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहा—माई लार्ड, देखिए कि मनोविज्ञान के इस जनप्रिय, पर हतभाग्य अध्यापक के साथ कितना अन्याय हुआ कि वह एक विरल किस्म के पक्षी का अनुसरण करते हुए मजिस्ट्रेट के बगले मे पहुचा, तो यह कहा गया कि उसके पास पिस्तौल थी और वह इस अभियोग मे गिरफ्तार किया गया कि वह मिस्टर

टेगर्ट की हत्या करने गया था ।

ऐन्थनी कुछ बौना-सा था, मुश्किल से पाच फुट होगा, पर जब वह हाई-कोर्ट के सामने बहस करने के लिए खडा होता था तो वह लगभग पजो पर खड़ा हो जाता था और हर बात पर ज़ोर देकर अधिकारपूर्वक कहता था। उसका रौब ऐसा था कि प्रतिपक्षी वकील उसे टोकता नही था क्योकि वह जानता था कि टोकने का अर्थ यह होगा कि एक की बजाय दस सन्दर्भ पेश हो जाएगे और सबके सब 'टु दी प्वाइन्ट' और चालू मुकदमे से सम्बन्ध रखने वाले।

ऐन्थनी ने जोश मे आते हुए पजो के बल खडे होकर कहा—आप देखिए कि इस हतभाग्य तरुण अध्यापक के साथ कितना अन्याय हुआ कि कुछ भी प्रमाण नही था फिर भी उसे हत्या के प्रयत्न के अभियोग मे जेल मे रखा गया। इस बीच यह दुर्भाग्यपूर्ण वारदात हो गई तो पुलिस ने एक तरह से चुपके से उस मौलिक मुकदमे को वापस ले लिया, यो तो वापस नही लिया पर उस सम्बन्ध मे ऐसी लचर, अविश्वसनीय और मूर्खतापूर्ण गवाहिया पेश कीं कि हमारे योग्य मित्र प्रतिपक्षी वकील श्री कचरू ने आपके सामने उनका ज़िक्र ही नही किया। मुझे विश्वास है कि वे मन ही मन अपने पक्ष की इस कमज़ोरी से इतने लज्जित थे कि उन्होने इस तरफ आपका ध्यान आकर्षित ही नहीं किया...

ऐन्थनी ने एक बार सम्बद्ध सभी लोगो का जैसे सर्वेक्षण किया, फिर बोले—माई लार्ड, अब जिस अभियोग पर दण्डित को फासी की सज़ा दी गई है, उसे भी ज़रा देखिए तो आपको मालूम होगा कि इस्तगासे ने और पुलिस ने उस अध्यापक के साथ अन्यायो का ताता जारी रखा...

इसके बाद ऐन्थनी ने उल्लिखित ढग से सारे मुकदमे की प्रदक्षिणा की और प्रत्येक वक्तव्य की पुष्टि के लिए कानून की मोटी-मोटी किताबो के ढेर लगा दिए।

इस मुकदमे को सुनने के लिए हाईकोर्ट के बहुत-से वकील तो आए ही थे इसके अलावा जनता भी काफी आई थी। पत्र-प्रतिनिधि तो थे ही।

मुकदमे की सुनवाई मे पूरे दो दिन लगे, और फैसले के लिए एक दिन छोड़-कर अगला दिन तय हुआ।

सुनवाई के दूसरे दिन अर्चना ने देखा कि तारा भी वहा मौजूद थी। तारा

पहले से अधिक स्वस्थ और सुन्दर मालूम हो रही थी। उसके चेहरे के हर गली-कूचे पर जैसे छोटे-छोटे अदृश्य बल्व निरन्तर जल रहे थे, फिर भी उसका चेहरा कुछ उदास था।

वह अर्चना को देखते ही उससे लिपट गई और बराबर यही पूछने लगी कि आप इतनी दुबली क्यो हो गई ?

इसके उत्तर मे अर्चना ने केवल एक मरोड के साथ हस दिया और इसीमे तारा को प्रश्न का उत्तर मिल गया, बल्कि वह लज्जित हुई कि उसने यह प्रश्न पूछ ही कैसे लिया।

तारा तो अन्तिम मुहूर्त मे आई। वह पहले आ ही नही रही थी क्योकि वह जानती थी कि रजत यो तो बहुत ही उदार और उदात्त है, शायद ही कोई ऐसा उदार हो सकता हो, पर वह जेल जाने के पहले और छूटने के बाद किसी समय भी प्रेमचन्द के प्रति उचित रुख ग्रहण नही कर सका।

वह रजत से छिपकर इलाहाबाद आई थी। अब यहा आने पर जब उसने ऐन्थनी के तर्क सुने तो उसे विश्वास हो गया कि उसने आकर अच्छा ही किया। यदि न आती तो वह एक अपराध होता। उसीके सम्मान की रक्षा के लिए कोई जान दे दे और वह इतना भी न कर सके। उसे तो इससे अधिक करना चाहिए था।

जिस प्रकार से अर्चना उसी दिन से जाकर कानपुर मे पडी है, तारा को भी उसी प्रकार वहा जाकर रहना चाहिए था। एक तो मा राजी नही होती और दूसरे अर्चना थी ही इसलिए वहा नही आई थी और इस कारण उसके मन में पश्चात्ताप भी नही था, क्योकि अर्चना से अधिक वह क्या कर सकती थी।

तारा दूर के एक रिश्तेदार के यहा ठहरी थी, पर अर्चना ने उसे मजबूर कर दिया और वह भी अहियापुर मे उसी मकान मे आ गई जहा डाक्टर साहब और अर्चना ठहरी हुई थी। दोनो मे खूब घुल-घुलकर बाते होने लगीं, पर दोनो दो अलग मनोदशा मे थी।

एक के जीवन मे वसन्त का प्रथम रोमाच हो रहा था और दूसरे के जीवन मे घोर पतझड़ चल रहा था।

तारा कह रही थी—ऐन्थनी साहब ने इतनी अच्छी बहस की और इतने सन्दर्भ पेश किए कि और कुछ नही तो कुछ सजा घटनी चाहिए···

पर अर्चना इसके पास भी नही गई। बोली—यह सब मन-समझौवल है, काशी का क्या हाल है ?

यह प्रश्न औपचारिक मात्र था, क्योकि जीवानन्द से अर्चना को काशी की सारी खबरें मालूम होती रहती थी। उसे यह ज्ञात था कि अब वहा फिर एक ही दल रह गया है, पर जब उसने यह खबर सुनी थी न तो तब उसे इस सम्बन्ध मे रुचि थी और न अब रुचि थी।

इधर-उधर की बातें करने के बाद एकाएक उसने जैसे लगर तोड दिया और कहा—इतने महीने हो गए, पर मैं अभी तक उनसे पत्र-व्यवहार भी न कर सकी।

तारा को इसपर बहुत आश्चर्य हुआ। वह कुछ और ही समझती थी, बोली —चित्रकूटी के कारण ही यह सब हुआ।

चित्रकूटी का नाम सुनते ही अर्चना को वह रात्रि, कालरात्रि याद आई जब वह बडी आशाए और आकाक्षाए लेकर प्रेमचन्द को जेल से निकालने गई थी।

एक मुहूर्त का एक निर्णय यही था, जिसने सारा इतिहास ही बदल दिया। यदि प्रेमचन्द उस दिन आ जाते····

तो सारी घटनाएं और ही तरीके से होती। आज वह अर्द्ध उन्मादिनी न होकर एक दल की वैधानिक नही तो वास्तविक नेत्री होती। प्रेमचन्द ने अपने जीवन के साथ न्याय नही किया, साथ मे वह भी विनष्ट हो गई। उसकी सारी उच्चाकाक्षाए धूल मे मिल गईं। उसने कभी बडे तेज के साथ कहा था कि कुछ भी हो जाए वह क्रान्तिकारिणी रहेगी, पर अब वह इच्छा बिल्कुल नही रह गई, जैसे सब इच्छाओ की जड ही कट गई।

अब केवल ठूठ खडा था। न उसमे पत्तो की हरियाली थी, न चिडियों की चहचहाहट और अब तो फिर भी कुछ है, पर दो दिन बाद वह ठूठ भी कटकर ईंधन बनाने के लिए चूल्हे के सामने पहुच जाएगा। कुछ भी नही रहेगा।

न रहे !

## ६०

माननीय जजो ने निर्णय सुनाते हुए प्रेमचन्द की अपील खारिज कर दी और सज़ा बहाल रखी। जजो ने सबसे अधिक महत्व रामगुलाम जमादार के बयान को दिया, इसके अलावा उन्होने यह लिखा कि प्रेमचन्द ने वह बयान जान-बूझकर लिखा था, जिससे तसद्दुक अन्यमनस्क हो जाए और उसकी हत्या करने का मौका मिल जाए। इसमे कोई सन्देह नही कि दण्डित ने जान-बूझकर सोच-समझकर तसद्दुक की हत्या की।

यद्यपि अर्चना यह समझती थी कि ऐसा ही कुछ होगा, पर जब उसने निर्णय सुना तो उसे ज्ञात हुआ कि उसने जितनी जो कुछ आशका की थी, उससे वास्तविकता कही अधिक भयकर रही। उसे फिर वैसी ही अनुभूति हुई, जैसी उस दिन जेल के फाटक पर हुई थी और वह गश खाकर गिरने ही वाली थी कि अरविन्दकुमार, जो उसका निरीक्षण कर रहे थे, और तारा ने पकड लिया।

सुगनचन्द स्तब्ध रह गए। वे सोलहो आना यह आशा करते थे कि उनका भाई छूट जाएगा, पर जब ऐसा नही हुआ तो उनके मन मे विभिन्न भावनाओं तथा सस्कारो की एक साथ टकराहट हुई और वे भीतर से बहुत विक्षुब्ध हुए।

सम्हलने के तुरन्त बाद अर्चना सुगनचन्द के पास गई और बोली—अब आप कहां जाएगे ?

सुगनचन्द ने इस विषय मे कुछ सोचा नही था, बोले—क्यो ? क्यो ?

—आप दिल्ली चलेंगे ?

—हा, प्रीवी कौंसिल के लिए प्रबन्ध करने के बाद।

ऐन्थनी की राय ली जाने पर उसने कहा—हर मामले मे प्रीवी कौंसिल मे अपील नही होती। इसलिए मुश्किल ही है।

सुगनचन्द को ऐसा लग रहा था कि प्रिवी कौंसिल मे अवश्य न्याय होगा इसलिए उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि हर एक मामला प्रिवी कौंसिल मे जा नही सकता। वे तो अब तक यही समझते थे कि यदि कोई मामला

प्रिवी कौसल मे नही जाता है तो इसका कारण पैरोकारो की गरीबी है न कि और कुछ।

ऐन्थनी ने प्रिवी कौसिल मे अपील करने के लिए हाईकोर्ट की अनुमति मागी, उसमे दो दिन लग गए। अनुमति नही मिली।

अब तो कोई चारा नही था।

सुगनचन्द दिल्ली चले गए, जहा वे काम करते थे।

अर्चना भी उनके साथ दिल्ली गई। अरविन्दकुमार इसपर कुछ क्षुब्ध हुए, पर बहन की मानसिक दशा को देखकर वे चुप रह गए।

सरकार ने विभिन्न कारणो से यह तय किया कि समझौते की वार्ता समाप्त होने के पहले ही प्रेमचन्द को फासी दे दी जाए।

फासी के पहले दिन सपरिवार सुगनचन्द प्रेमचन्द से मिलने आए। यद्यपि सुगनचन्द स्वय विलायत-पलट थे और फ्रास से इजीनियरिग की कोई डिग्री ले आए थे, पर उनका परिवार प्राचीन पन्थी था। घर के लोग उतने आधुनिक नही थे, जितने वे या प्रेमचन्द।

मिलाई करके जब उनका परिवार भीतर से लौटा तो सब लोग बुरी तरह रो रहे थे। पर इस रोने के बावजूद पुलिस सतर्क थी। सब स्त्रियो के घूंघट इस रोने-धोने के कारण खुल गए थे, पर एक स्त्री घूंघट से बुरी तरह चिपटी रही और जेल के फाटक के बाहर पैर रखते ही पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया क्योकि वह अर्चना ही थी।

साथ मे सुगनचन्द भी गिरफ्तार कर लिए गए। ब्रिटिश न्याय के सम्बन्ध मे सुगनचन्द की धारणाए मद्धिम पडते-पडते लुप्त हो गई थी, वे गिरफ्तार हुए तो और अकड गए और अर्चना ने आश्चर्य के साथ देखा कि यह वही फौलाद है जिससे प्रेमचन्द बना है।

दोनो ब्रोमफील्ड के पास पहुचाए गए। ब्रोमफील्ड को इस सम्बन्ध मे पहले जो पराजय मिली थी, उससे वह नाराज था, उसने साथ मे आए हुए मिस्टर ब्राउन से पूछा—इनपर क्या अभियोग है?

ब्राउन ने सारी बात बताई तो ब्रोमफील्ड बोला—फासीघर मे बन्द एक व्यक्ति को विवाह बधन मे आबद्ध होने से आप रोक सकते हैं, पर आप एक मुक्त नागरिक को विवाह से कैसे रोक सकते हैं? जब कागजात मे उन्होने यह लिखा

है कि उनके साथ तीन स्त्रिया हैं, जिनमे एक श्रीमती सुगनचन्द है, और दो उनकी बहने, तो आप क्या कर सकते है ?

ब्राउन झुंझलाकर बोला—पर श्रीमती सुगनचन्द तो बाहर मौजूद थी, वे भीतर गईं ही नही, उनके बदले यह लडकी गई जो पहले प्रेमचन्द से शादी करने के लिए आई थी ।

ब्रोमफील्ड ने कहा—हिन्दू धर्म मे दो विवाह जायज है । इसलिए जब तक आप यह प्रमाणित न करे कि विवाह हुआ ही नही तब तक मैं कुछ नही कर सकता ।

ब्राउन बोला—उन लोगो का क्या है, सम्भव है इन लोगो ने किसी पडित को दस-पाच रुपये देकर दिखाने के तौर पर कानून को धोखा देने के लिए शादी भी कर ली हो ।

ब्रोमफील्ड ने अन्तिम रूप से कहा—चाहे उन्होने जिस उद्देश्य से किया हो, हम, जब तक कि आप प्रमाण नही देते, दो भले आदमियो का अपमान नही कर सकते । ब्रिटिश न्याय भारत मे यो ही बहुत बदनाम हो चुका है ।

मामला इस तरह बिल्कुल सुलझ गया था । बाद को जो कुछ होता, देखा जाता, पर इस बिन्दु पर अर्चना अप्रत्याशित रूप से चीख उठी—मैंने जान-बूझकर धोखा दिया । मैं श्री सुगनचन्द की पत्नी नही हू और न उनके साथ मेरी शादी हुई है । मैं किसीकी पत्नी नही हू । मैं चिरकुमारी और चिर विधवा हू ।....

यदि वह केवल इन बातो को कहती तो कदाचित वह प्रभाव नही पड़ता, पर उसने बातो के साथ-साथ जो मुद्राए की, जिस प्रकार उसका चेहरा रोष, आक्रोश, पराभूत इच्छा और विषाद से तना और सिकुडा, उससे सब लोग स्तब्ध और चकित रह गए ।

सुगनचन्द ने समझा कि वह गश खाकर गिरने जा रही है, पर नही गिरी और आग्नेय नेत्रो से ब्राउन की तरफ देखती रही । इतने आग्नेय नेत्रों से कि ब्राउन एक कदम पीछे हट गया ।

अब परिस्थिति बिल्कुल बदल गई । ब्रोमफील्ड ने जो स्थापनाए की थी, वे जड़-मूल से नष्ट हो चुकी थीं । और ऐसा स्वयं अर्चना के बयान से ही हुआ था, जो किसी ऐसे-गैरे के सामने नही, बल्कि अंग्रेज जिला-मजिस्ट्रेट और अंग्रेज

पुलिस-सुपरिन्टेन्डेन्ट के सामने दिया गया था।

उससे पीछे किसी तरह हटा नही जा सकता था।

अभियुक्ता उससे पीछे हटना भी नही चाहती थी। उसके चेहरे से स्पष्ट था कि वह गिरफ्तार होना चाहती है, स्वतन्त्र रहने मे उसे कोई आनन्द नही है।

ब्रोमफील्ड ने अन्तिम रूप से फैसला-सा देते हुए कहा—अब तो आपको बयान भी मिल चुका, आप जो कहते थे, उसकी पुष्टि हुई, अब आप इन्हे ले जाकर मुकदमा चलाइए, कानूनी कार्रवाई कीजिए।

अर्चना पहले की तरह चीखकर बोली—हा, मुझे गिरफ्तार करो। इस राज्य मे मुक्त रहने से बन्दी रहना ही अधिक इज्जत की बात है। वही स्वाभाविक है....

ब्राउन थोडी देर पहले ब्रोमफील्ड से टक्कर लेने पर तैयार था, पर अब जब कि उसे बैठे-बिठाए सारा प्रमाण मिल गया तो उसमे बिल्कुल उत्साह नहीं रहा। बोला—दि लेडी इज आउट आफ माइन्ड (इस औरत का दिमाग़ फिर गया है)...

अर्चना बडे ज़ोर से चिल्लाकर बोली—नो, आई ऐम नाट आउट आफ माई माइन्ड। प्लीज, अरेस्ट मी। ( मेरा दिमाग फिरा नही, मुझे ...आप गिरफ्तार कर लीजिए )

ब्राउन अभिवादन करके पीछे को लौटा और वहा से मोटर पर बैठकर चला गया।

ब्रोमफील्ड ऐसा नही कर सकता था क्योकि यह उसका घर ही था, पर वह भी खडा हो गया और बोला—मिस्टर सुगनचन्द, आप जा सकते हैं..

सुगनचन्द ने अर्चना की पीठ पर हाथ रखा और कहा—चलो बहन, चले। कल तो और भी बुरा होगा।

अर्चना स्वप्नचालित-सी सुगनचन्द के साथ हो गई, बोली—कल? क्या कोई कल है?

सुगनचन्द ने इसका कोई उत्तर नही दिया और दृढता के साथ अर्चना का हाथ पकडकर बाहर निकल पडे। वहा उनका सारा परिवार और अरविन्द-कुमार, सरोज आदि उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। ब्राउन को निकलते देखकर

वे कुछ समझ नही पा रहे थे। अब जो उन्होने उन्हे सकुशल निकलते देखा तो आगे बढ आए।

# ६१

प्रेमचन्द जब से कानपुर आया था, तब से उसे कोई पत्र नही मिला था। न उसे पत्रो की कोई चाह ही रह गई थी। उसने अपनी आत्मा के साथ पूरी शांति स्थापित कर ली थी। न उसे कोई भय रह गया था, न दुःख, न आकाक्षा।

वह प्रतिपल अन्तिम आहुति के लिए प्रस्तुत हो रहा था। वह यह समझता था कि वह समिधा के रूप मे यज्ञकुड मे पहुच चुका है, केवल यज्ञाग्नि प्रज्वलित करने की प्रक्रिया बाकी थी।

उसकी उसे कोई चिन्ता नही थी।

वह सुकरात की तरह शिष्य-मडली-वेष्टित नही था। पर उसके अलावा नेत्रो के सम्मुख भविष्य की पूरी पीढियां हर समय साथ बनी थीं, जिनके सामने वह उसी प्रकार अपनी कल्पनाओ मे लौ देकर बल रहा था, जैसे सुकरात।

तब फासी का दिन निश्चित नही हुआ था और उसे एकाएक भंगी ने एक छोटा-सा पत्र दिया।

उसने चारो तरफ देखा, कोई नही था। पत्र कहा से आया? पत्र देने वाला बाल्टी रखकर चला गया था।

इसलिए उसने पत्र पढना शुरू किया। नहीं, अर्चना का नही था।

उसका हृदय धक् से हुआ। अर्चना यही है, इस दीवार के उस पार, पर वह उससे मिल नही सकती। भाई साहब हर दफे आकर उसकी बात कह जाते है और कहते हैं, नमस्ते कहा है।

नमस्ते!

क्या अजीब शब्द है?

शायद दुनिया मे इससे नीरस और घिसा-पिटा शब्द कोई नही है। हर

कोई हर किसीसे नमस्ते करता है ।

पर जब भाई साहब दूसरो का नमस्ते पहुचाते है तो उनका चेहरा अविचलित रहता है, और जब वे अर्चना का नमस्ते कहते हैं तो एक बार उनकी आंखें भी झप जाती हैं। लोहा-लक्कड से लडते-लडते उनका हृदय कठोर हो गया, पर वे भी मिलाई के उस पर्व पर पहुचकर कुछ उदास हो जाते हैं। कभी उन्होने यह नही पूछा कि अर्चना तुम्हारी कौन है या तुम नमस्ते के अलावा कुछ कहना चाहते हो या नही ।

बस वे नमस्ते के जवाब मे नमस्ते ले जाते हैं ।

पत्र के हरफ बहुत छोटे थे । अभी कोई वार्डर आदि आने वाला नही था। झांके तो कोई हर्ज नही । वह पत्र छिपा सकता है । इस समय किसी चीज़ की कमी खटक रही है क्योकि इतने छोटे हरफ हैं ।

एक सिगरेट मिल जाती तो अच्छा रहता ।

खैर देखा जाए पत्र मे क्या लिखा है ?

पत्र मे लिखा था :

परम श्रद्धेय भाई साहब,

मुझे भी भद्रसेन के प्रथम हत्या-प्रयास के सिलसिले मे पकडा गया था, पर मेरे विरुद्ध कोई प्रमाण नही मिला । इसलिए मैं ११० मे घर लिया गया और मुझे तीन साल की सज़ा हो गई । एक दिन मैंने आपका दर्शन किया था। आप विश्वास रखें भारत के सब नवयुवक आपके साथ हैं । आपने साहस की पराकाष्ठा का जो उदाहरण प्रस्तुत किया है, वह प्रत्येक भारतीय के लिए अनुकरणीय है।

प्रयत्न करने पर भी अधिक कागज़ नही मिल सका, पर आप स्मरण रखें कि मैं जब भी छुटूगा तो आपके पदाक का अनुसरण करने का प्रयास करूगा । मैं प्रतिज्ञा करता हू कि जिस जज ने आपको फासी की सज़ा सुनाई है, मैं उसको यमपुर पहुचा दूगा । आपके चरणो मे प्रणाम करता हू ।

आपका

श्रीकान्त 'शिशु'

पत्र पढ़कर प्रेमचन्द की हालत अजीब हुई । वह यह नही समझ सका कि इसपर खुश हो या दुखी । हसे या रोए । निस्सन्देह जिस युवक ने पत्र लिखा

था, वह बहुत ही जोशीला है और जोश के कारण ही जब उसने गोली चलाई होगी (या कि छुरा लेकर गया होगा ) तब उसका हाथ इतना हिल गया होगा कि भद्रसेन बेदाग बच गया होगा।

प्रेमचन्द ने पत्र के टुकडे-टुकडे कर डाले फिर उसे पानी मे घोला, यहा तक कि सारी लिखावट मिट गई फिर उसने उसकी लुगदी बनाकर जगले से बाहर फेंक दिया।

इस समय फासीघर मे अकेला ही वह बन्द था। जब उसने वह लुगदी फेकी तो उतने ही से उसपर तैनात दोनो वार्डर एक साथ उसके जगले के पास आए और बोले—बाबूजी, आप कुछ कह रहे हैं? आपको कुछ चाहिए ?

प्रेमचन्द 'चाहिए' शब्द पर चौंक-सा पडा। बोला—क्या चाहिए ? हवा है, पानी है, सूर्य-किरण है, और क्या चाहिए ?

कहकर उसने मुह फेर लिया और एक पुस्तक उठाकर पढने लगा। पढने की कोई इच्छा नही थी, पर वह चाहता था कि वार्डर चले जाए।

उसके दिमाग मे वही शब्द गूज रहे थे—'मैं प्रतिज्ञा करता हू कि जिस जज ने आपको फासी की सज़ा सुनाई है, मैं उसको यमपुर पहुचा दूगा।'

बडी अच्छी प्रतिज्ञा है! जैसे उस जज ने ही मेरा कुछ बिगाड़ा हो। लड़ाई तो एक पद्धति से है न कि व्यक्ति से। काश उसे मौका मिलता और वह उस जोशीले युवक को ही समझा सकता। पर मौका कौन देता है? पता नही उसने चित्रकूटी के हाथ जो पत्र भेजा था, वह पहुचा या नही, और पहुचा तो उसका क्या हुआ ?

इस प्रश्न का उत्तर उसे उस दिन मिला जिस दिन अर्चना एक बिल्कुल ही पर्दानशीन, दकियानूसी, बहुत-से गहने पहनी हुई स्त्री के रूप मे उसके भाई के साथ अप्रत्याशित रूप से मिलने के लिए आई। वह जैसे डर रही थी कि शायद बोलते-बोलते ही उसका मुह बन्द कर दिया जाए, इसलिए वह मिनट मे १२० शब्द की रफ्तार से बोली—प्रेमचन्द, तुम्हारा वह पत्र छपकर उचित टिप्पणियो और फोटो के साथ तैयार है "हज़ारो प्रतियां""कल बटेगी।

जब उपस्थित कर्मचारियो ने अर्चना को नहीं रोका तो अर्चना बोली—भगवान अमिताभ देख चुके हैं "सब देख चुके हैं ' सब सराहते हैं""कोई चिन्ता न करो"

कहकर वह जाने कैसी हो गई। जैसे किसीने गुब्बारे मे से हवा निकाल दी हो। या यो कहा जाए, वह उस प्रकार बन्द हो गई, जैसे चाभी खतम होने पर ग्रामोफोन बन्द होता है।

फिर तो प्रेमचन्द की बात परिवार के अन्य लोगो के साथ होती रही।

अर्चना उसे बराबर देखती रही। वह उसे अपनी आखो मे अच्छी तरह बसा लेना चाहती थी, उसकी इतनी फिल्मे बना लेना चाहती थी कि कभी चुके ही नही। अरे, यह तो अर्चना ने अभी तक देखा नही था। प्रेमचन्द ने दाढी और बाल बढा लिए थे।

अब तो कोई पोज की बात नही थी। अब तो जो कुछ था, हाय, वह आत्मसुखाय था। शायद स्वय भी वह अपना चेहरा देख नही सकता था।

जाघिया कुर्ते मे वह एक तपस्वी लगता था।

तपस्वी तो बहुत हलका शब्द है। खैर कोई बात नही। कल सारा भारत जानेगा कि किस प्रकार भागने का मौका पाकर भी वह नही भागे। अपने विचारो को केवल जनता के लिए भेज दिया।

सबसे अजीब बात थी कि अर्चना शात थी, प्रेमचन्द शान्त था, प्रेमचन्द की बहने शात थी। अवश्य सबके चेहरे पर बादल छाए हुए थे, बिल्कुल काली-काली घटा। पर सुगनचन्द, जिन्हे अर्चना बिल्कुल हृदयशून्य नहीं तो कठिन हृदय समझती थी, वे बराबर रोते जाते थे। यद्यपि वे उसे छिपाने का भरसक प्रयत्न कर रहे थे। रोते-रोते वे एक बार प्रेमचन्द को देखते और एक बार अर्चना को।

जब मिलाई समाप्त हो गई, तो अर्चना ने लज्जा और भय को सम्पूर्ण रूप से तिलाजलि देकर उस तरफ को हाथ बढाया, जिधर प्रेमचन्द के पैर थे, पर बीच मे जाली होने के कारण उसकी अगुलिया जाली छूकर ही वापस आ गईं। एक बार उसमे प्रबल इच्छा हुई कि यही पर ढेर हो जाए, पर वह कुछ सोचकर सम्हल गई।

इसके बाद प्रेमचन्द अपनी कोठरी मे लौट आया था। उसे बारी-बारी से भाई, बहनो तथा अर्चना के सजल नेत्र याद पड़ रहे थे। वह देर तक इन आखो की जुगाली करता रहा। ज्यो-ज्यों करता रहा, त्यो-त्यो उसका मन मधु से भरता रहा।

उसे बडा बल मिलता रहा, यद्यपि बल की शायद उसे आवश्यकता नही थी।

सध्या समय तक उसके मन का गीयर बिल्कुल बदल चुका था, बल्कि यों कहना चाहिए कि उस मधुर चिन्तन पर एक दूसरी पपडी पड़ गई थी। अब वह यही सोच रहा था कि बारह घटे के अन्दर उसका सदेश सबको पहुचेगा।

बारह घटे बाद!

या उससे भी कुछ कम!

रात के समय नायब जेलर साहब पूछने आए—आपकी कोई अन्तिम इच्छा है?

प्रेमचन्द व्यग्य के साथ बोला—बहुत-सी।

नायब जेलर सम्हल गया। बोला—कुछ मेरे करने लायक?

प्रेमचन्द ने कहा—एक डिब्बा सिगरेट, रात काटने के लिए।

सिगरेट का डिब्बा आ गया, पर दियासलाई वार्डर के पास रही कि जब-जब मागे, तब-तब सिगरेट सुलगा दे।

प्रेमचन्द रात भर सिगरेट पीता रहा और टहलता रहा। कभी-कभी झुककर उन पुस्तको को देखने लग जाता था, जो उसके साथ अन्तिम समय तक थी।

यथासमय उसे कानूनी अनुष्ठानो के साथ फासी पर चढा दिया गया। उसने 'इन्कलाब जिन्दाबाद' का नारा लगाया और फासी पर चढ़ गया।

जब विधिपूर्वक यह घोषित हो चुका कि प्रेमचन्द मृत है, तब जेल के फाटक पर सुगनचन्द तथा उन्होने जिन लोगों को कहा, उन दस आदमियो को भीतर जाने दिया गया।

सुगनचन्द यह नही चाहते थे कि कोई महिला भीतर जाए, पर अर्चना इसपर राजी नही हुई। तब पहले दिन की तीन महिलाए और सुगनचन्द, अरविन्दकुमार आदि सात पुरुष भीतर गए।

नायब साहब साथ-साथ चले। वे कुछ नही बोल रहे थे। कोई कुछ नही बोल रहा था। ये लोग जेल की भीतरी दीवारो के अन्दर न जाकर बाहरी दीवारो के साथ-साथ चलते रहे। अन्त मे एक जगह पहुचकर नायब ने लोहे

की चादर के ठोस फाटक पर धीरे से दस्तक दी और उधर से दरवाज़ा खुल गया।

नायब साहब आगे चले और पीछे-पीछे यह मातमी जलूस। यही फासी-घर था।

इसमे एक कोठरी का दरवाजा खुला हुआ था। नायब साहब ने उसकी ओर उगली से इशारा कर दिया।

सुगनचन्द ने आगे बढकर देखा तो एक पतले-से मूंज के फट्टे पर लाश पडी है, जिसपर एक काला कम्बल सिर से पैर तक ढका हुआ है।

सुगनचन्द ने अरविन्दकुमार की तरफ देखा और अरविन्दकुमार ने सुगनचन्द की तरफ। इतने विपुल प्राण की यह परिणति देखकर शायद उनके दिल पथरा गए थे।

कौन आगे जाए ? यह प्रश्न था। किसीको हिम्मत नही हो रही थी कि प्रेमचन्द की चिरनिद्रा मे बाधक बने।

अरविन्दकुमार तो सालो तक लाशो की चीर-फाड कर चुके थे, पर उनको भी, भय तो नही कहना चाहिए, हा, भय की तरह कुछ लग रहा था।

बाकी लोग तो केवल कन्धा देने का गौरव प्राप्त करने आए थे।

कुछ देर तक सम्पूर्ण गतिरोध रहा, तब अर्चना आगे बढी। वह सीधे उस कोठरी मे घुस पडी और जिधर सिर जान पडा, उधर का कम्बल थोडा-सा खोल दिया।

ऐसा करना था कि प्रेमचन्द की बहने और सुगनचन्द बहुत ज़ोर से रो पडे।

अर्चना ने मुह ढाप दिया और फिर उसने प्रेमचन्द के पैर खोल लिए, जिनके नाखून बडे-बडे हो रहे थे और उसने ज़मीन पर बैठकर उन शीतल पडे हुए अकडे पैरो मे अपना सिर टेक दिया।

बहनें भी प्रेमचन्द से लिपटकर रोने लगी।

ऐसे कई मिनट निकल गए, तब नायब ने खखारकर अपना अस्तित्व जता दिया।

कोठरी मे केवल तीनो महिलाए और सुगनचन्द तथा अरविन्दकुमार जा सके थे क्योकि उसमे इससे अधिक जगह नही थी। बाकी लोग दरवाज़े पर खडे थे।

नायब ने जब देखा कि खखारने का भी कोई असर नहीं हुआ और रोना-

धोना चल रहा है और उधर जेल के अन्दर से पहले राजनैतिक कैदियो की बैरक से और फिर मामूली कैदियो की बैरक की ओर से जयकारे लगने लगे, तो वह व्यस्त होकर बाहर खडे आदमियो मे से एक से बोला—जल्दी करिए, अभी जेल की बैरके नही खुली हैं।

उस व्यक्ति ने आगे बढकर अरविन्दकुमार के कान मे कुछ कहा। अरविन्दकुमार ने अर्चना को स्नेह से पकडकर बाहर कर लिया। बहने भी बाहर आ गईं तब सब लोग लाश उठाकर चलने लगे।

जब सब लोग लाश उठाकर कोठरी से बाहर निकले तो उन लोगो ने आश्चर्य के साथ देखा कि खसखसी दाढी वाले मुसल्मान नायब भी बुरी तरह सिसक रहे हैं।

नायब ने कहा—कल जब मै रात को गया तो मैने पूछा, आपकी कोई इच्छा है ? तो बोले, बहुत-सी हैं। फिर मैंने कहा, मेरे पूरे करने लायक ? तो बोले, एक डिब्बा सिगरेट ले आओ। वह डिब्बा आपने देखा न ? सिरहाने पड़ा है।

किसीने डिब्बा देखा नही था, पर अब अर्चना इस प्रकार उस डिब्बे को लेने के लिए झपटी, जैसे कोई उससे छीन रहा हो। उसने डिब्बा ले लिया, फिर कोठरी मे यत्र-तत्र पडे हुए सिगरेट के टुकड़े उठा लिए और उन्हे एक-एक कर सिर से लगाकर डिब्बे मे रखने लगी।

एक स्थानीय काग्रेसी साथ में आए थे। बोले—जब हमारा देश स्वतत्र होगा तो लोग इस डिब्बे और सिगरेट के इन टुकडो को देखने के लिए आया करेगे।

अभी अर्चना सिगरेट के टुकडे बीन ही रही थी कि एकाएक उसका ध्यान दीवार पर गया, जिसपर कुछ लिखा था। हर्फ बिल्कुल प्रेमचन्द के ही थे। उसी प्रकार बडे-बडे अलकार मुक्त अक्षरो मे लिखा था .

**जब तुम आए जगत में, जग हंसा तुम रोए।**
**ऐसी करनी कर चलो, तुम हसो जग रोए॥**

उसने उसे तीन-चार बार पढा जैसे वे शब्द उससे कुछ कह रहे थे। देर देखकर अरविन्दकुमार भीतर आए तो उसने अगुली के इशारे से दिखा दिया।

अब सब लोग उमड़ पड़े और उसे पढने लगे।

पुरोहित साथ मे थे । वह बाहर ही कुछ अनुष्ठान और मत्रपाठ शुरू कर चुके थे, पर उनकी तरफ कोई नही देख रहा था । सबके मन मे वही दोहा गूज रहा था ।

**जब तुम आए जगत में, जग हंसा तुम रोए ।**
**ऐसी करनी कर चलो, तुम हंसो जग रोए ।।**

नायब साहब ने कहा—जब सबेरे बुलाने गया तो लपककर कोठरी से ऐसे निकले जैसे मार्निग वाक के लिए निकल रहे हो । बोले—नायब साहब, लोग कहते हैं कि फासी चढने के लिए बडी हिम्मत चाहिए, पर मुझे तो कुछ नही मालूम हो रहा है ? आखिर बताइए कि इसमे कुर्बानी कहा है ? जो बात जरूर होती वही तो हो रही है, फिर क्या बात है ?

नायब साहब ने कहा—सामने मजिस्ट्रेट और दीगर बडे अफसर खडे थे । मै क्या कहता, मैं चुप रहा । सूरज निकलने मे अभी देर थी । वह तख्ते पर पहुचकर चारो तरफ देखते हुए बोले—अभी सूरज नही निकला । मेरे लिए अब सूरज नही ही निकलेगा ।

—इसपर ब्रोमफील्ड साहब, वे ठहरे असली अग्रेज, बोले—मैं और तो कुछ नही कर सकता, पर आप चाहे तो मैं सूर्योदय तक प्रतीक्षा कर सकता हू ।

पर उन्होने बडी अदा से कहा—मैं जितनी ही देर करूगा, मानवता के उद्धार मे उतने ही क्षणो की देरी हो जाएगी । मैं तो एक ईंट हूं, जिससे वह अट्टालिका बनेगी ।—कहकर उन्होने जल्लाद से कहा—जल्दी करो ।

—बहुत जल्दी सारा काम हुआ । मैंने बडे-बडे ऐसे डाकुओ को फासी पर चढते देखा है, जिनके नाम से इलाके के इलाके थर-थर कापते थे । वे इस मौके पर अक्सर घबडा जाते थे । कोई ऐसा बन जाता था, जैसे मिट्टी का लौंदा । उसे बालू के बोरे की तरह उठाकर झुला देना पडता था । साहब बडे बहादुर थे ।

स्त्रियां रोना बन्द करके उसकी बातो को ऐसे सुन रही थी कि मानो कोई वेद-वाक्य हो, कही इसकी एक ध्वनि की भी छूट न हो जाए ।····

नायब साहब ने फिर कहा—जब टोपी पहना दी गई और गले में फन्दा डाला जा चुका तब वे बडे जोर से बोले · इन्कलाब ज़िन्दाबाद ।

इसके बाद जल्लाद ने अपना काम किया और उनकी काया एक लम्हा तड़पकर झूल गई ।

पुरोहित जी अपना मत्रपाठ समाप्त कर चुके थे। अब लाश उठाई गई और जेल के बाहर पहुचाई गई। इस समय तक बाहर जनता की अपार भीड हो चुकी थी। लोगो ने हाथोहाथ लाश ले ली।

सुगनचन्द आदि ने चेष्टा की कि वे लाश के साथ रहे, पर जनता ने अपने वीर शहीद की लाश ले ली थी और वह सैकडो कन्धो पर से होती हुई किस प्रकार श्मशान मे पहुची, इसका पता न तो सुगनचन्द को लगा और न अरविन्दकुमार को।

अरविन्दकुमार बडी कठिनाई से अपनी बहन के साथ बने रहे। बाकी लोगो का साथ बिल्कुल छूट गया।

अर्चना ने देखा कि व्यवस्था के अनुसार वे पर्चे जनता मे बट चुके थे। बहुतो के हाथ मे वे पर्चे थे। कई लोग भीड मे उन्हे पढने की व्यर्थ चेष्टा कर रहे थे। अर्चना सिगरेट के उस डिब्बे को दबाए रही, और उसके मन में यह भावना आई कि उसने अपने जीवन का कार्य समाप्त कर लिया है।

अरविन्दकुमार चाहते थे कि अर्चना अब घर चले क्योकि उसकी हालत अच्छी नही मालूम होती थी, पर उन्होने यह कहने का साहस नही किया। ऐसी हालत मे उन्होने उसके साथ बने रहना ही अपना कर्तव्य समझा।

जो भीड जेल के फाटक पर थी, वह श्मशान मे दिखाई पडी। चिता पहले से ही सज चुकी थी, पर लोगो ने लकडी वाली चिता हटा दी और उसके स्थानपर चन्दन की लकडी की चिता लगाई गई। उसीपर प्रेमचन्द के पार्थिव अवशेष को चढाया गया।

जब अरविन्दकुमार अर्चना को लेकर घर पहुचे तो सध्या हो चुकी थी। जेल के बाहर अर्चना ने एक भी शब्द नही कहा था। वह रोई नही, उसके चेहरे पर केवल आश्चर्य था, परम आश्चर्य ! वह विश्वास ही नही कर रही थी कि यह सब हो सकता है, पर उसने तो प्रत्यक्ष देखा था। अरविन्दकुमार को बहन की यह हालत देखकर चिन्ता हो रही थी कि कही इसका दिमाग तो नही बिगड गया। सबसे बुरी बात यह हुई कि वह एक बार भी रोई नही थी।

जब सरोज के देर तक समझाने पर भी अर्चना ने न कुछ खाया न पिया, यहा तक कि पानी नही पिया तो डाक्टर साहब को बडी चिन्ता हुई। रात बारह बजे सरोज को अर्चना के पास छोडकर अपने कमरे मे बच्चो के पास जा रहे

थे कि उधर से दीवार लाघकर जीवानन्द और अमिताभ उतरे।

डाक्टर साहब कभी उनके इस प्रकार आने को पसन्द नही करते थे, किसी तरह सहनमात्र करते थे, पर आज उन्होने उनका इस प्रकार स्वागत किया जैसे स्वर्ग से देवदूत उतर आए हो।

अमिताभ और जीवानन्द को देखकर भी अर्चना बिल्कुल हिली-डुली नही। उसकी आखे उसी प्रकार स्थिर और भाव-शून्य बनी रही।

अमिताभ अर्चना के सिरहाने बैठ गए और उसके सिर पर हाथ रखकर बोले—बहन, तुम प्रेमचन्द के योग्य बनो।

इन शब्दो ने और अमिताभ के पितृतुल्य स्नेहमय स्पर्श ने अवरुद्ध शोक के द्वार को खोल दिया और अर्चना झर-झर आसू बहाने लगी।

डाक्टर साहब के चेहरे पर एक चमक आ गई। सरोज अपने कमरे मे चली गई।

जब वह देर तक रो चुकी, तब अमिताभ ने फिर कहा—योग्य बनो ......।

अबकी बार अर्चना बोली—क्या मैं योग्य नही हू?

—उस योग्यता को कायम रखो, व्यर्थ के शोक से कुछ नही होता। हमे तो अपने रथ को आगे ले जाना है .... ..।

जब सूर्योदय हुआ तो भाई और बहन उस कमरे मे सो रहे थे और रात्रि मे आए हुए अतिथियो का कोई पता नही था। जाते समय अमिताभ कह गए थे—समझौता तो होगा, प्रेमचन्द तो गया, देखो भगतसिंह बचता है कि नहीं...

## ६२

३१ जनवरी, १९३१ को कांग्रेस की कार्य-समिति का एक अधिवेशन स्वराज्य भवन इलाहाबाद मे हुआ। बहुत सोच-विचार के बाद यह प्रस्ताव रखा गया कि लन्दन मे जो कथित गोलमेज़ सम्मेलन हो रहा है उसे कांग्रेस स्वीकृति देने के लिए तैयार नही है। सरकार ने संसार के सामने यह दिखावा करने की

चेष्टा की है कि भारत के प्रतिनिधियो के साथ परामर्श करके एक विधान प्रस्तुत हो रहा है। पर असल मे देश के वास्तविक नेताओ को बराबर जेल मे रखा गया, हज़ारो लोगो को जेल मे भेजा गया और निहत्थी जनता पर लाठी-चार्ज किया गया और गोलिया बरसाई गई । १९३१ की १९ जनवरी को ब्रिटिश प्रधान मन्त्री ने जो वक्तव्य दिया है वह बहुत ही अस्पष्ट है और उसपर कोई कार्रवाई सम्भव नही है। काग्रेस अब भी लाहौर अधिवेशन मे पारित स्वतन्त्रता-प्रस्ताव पर डटी हुई है, पर साथ ही १९३० की १५ अगस्त को यरवदा केन्द्रीय जेल से नेताओ ने इस सम्बन्ध मे जो पत्र लिखा था, उसे मान्यता प्रदान करनी है। जब तक दमन का दौरदौरा जारी है तब तक किसी प्रकार के समझौते की बात नही हो सकती, इसलिए देश से यही अनुरोध किया जा सकता है कि ज़ोर-शोर से सत्याग्रह सग्राम जारी रखे और उसी साहस के साथ काम करे जैसा कि अब तक होता रहा।

इस प्रस्ताव से एक बार साधारण जनता मे फिर बिजली दौड गई। पर क्रान्तिकारी दल की केन्द्रीय समिति ने इसमे सग्राम के लिए आह्वान केवल एक धमकी के रूप मे ही पाया और सब लोग बहुत दुखी हो गए कि ७५ हज़ार लोग जेल जा चुके, सैकडो लोग लाठी-चार्ज और गोली-काण्ड के शिकार हुए, हज़ारो लोगो की सम्पत्ति लूट ली गई, घर जला दिए गए। गावो मे नादिरशाही हुई और जाने क्या-क्या हुआ, फिर भी नेतागण बराबर समझौते की बातचीत कर रहे है।

इस प्रकार क्रान्तिकारी नेताओ को दु.ख तो हुआ, पर साथ ही उन्होने सोचा कि जब यह समझौता होने ही जा रहा है तो क्यो न इस बात का ज़ोर डाला जाए कि प्रेमचन्द आदि जो क्रातिकारी फासी पा गए, पा गए, पर जो लोग अभी फासीघर मे बन्द है, जैसे सरदार भगतसिह तथा उनके दो अन्य साथी, उन लोगों को बचाया जाए।

क्रान्तिकारी नेताओ ने यह सोचा कि यदि भगतसिह और उनके साथियो को बचाया न जा सके तो कम से कम देश के सामने यह बात बहुत स्पष्ट रूप से आ जाएगी कि जब सरकार दो-तीन आदमियो की फासी बन्द करने के लिए तैयार नही है तो फिर सरकार स्वराज्य देने पर कैसे तैयार हो सकती है? यानी जो कुछ वह देने का ढोग रच रही है, वह धोखा होगा।

भगतसिह तथा उनके साथी राजगुरु और सुखदेव बहुत प्रसिद्ध हो चुके थे। भगतसिंह ने एक विशेष मनोवैज्ञानिक मौके पर एसेम्बली मे बम डाला था। इसके पहले ही उन्होने सैन्डर्स की हत्या मे भाग लिया था।

यह जानते हुए कि एसेम्बली मे बम डालने के बाद गिरफ्तार होने का अर्थ निश्चित फासी है, भगतसिह ने इस काम मे भाग लेने की जिद की। उन्होने विशेषकर इसलिए एसेम्बली मे बम डालने का कार्य अपने ऊपर लिया था कि वे यह चाहते थे कि अदालत के मच मे दल के सिद्धान्त, आदर्श, उद्देश्य और बम-विस्फोट के राजनैतिक महत्व को अच्छी तरह जनता के सामने रखा जाए।

उन्होने बहुत लम्बा अनशन भी किया था और वह अनशन राजनैतिक कैदियो के साथ अच्छे व्यवहार किए जाने के लिए था। इसी अनशन मे बगाल शाखा के एक क्रान्तिकारी यतीन्द्रनाथ दास ६२ दिन अनशन के बाद शहीद भी हो चुके थे। इस प्रकार लाहौर षड्यन्त्र तथा उसके नेता भगतसिंह बहुत प्रसिद्ध हो गए थे। वे अखिल भारतीय अर्थ मे युवक भारत के प्रतीक हो गए थे।

केन्द्रीय समिति ने अपनी शाखाओ तथा नौजवान भारत सभाओ के जरिए से देश के सामने एक तो यह बात रखी कि इस समय समझौता होना ठीक न होगा। दूसरे यह कहा गया कि यदि समझौता करना ही है तो कम से कम इस अवसर पर जब कि सरकार के साथ एक बहुत बडा समझौता होने जा रहा है, तब क्रान्तिकारी कैदियो को भी छोडा जाए।

कुछ क्रान्तिकारी नेता काग्रेसी नेताओ से भी इस सम्बन्ध में मिले और उन्हे कुछ आश्वासन भी दिया गया।

इधर तो क्रातिकारी नेता यह सोच रहे थे, पर उधर स्वय जिनको फासी की सजा हुई थी वे कुछ और ही सोच रहे थे। वे यह सोच रहे थे कि उन्हे फासी हो जाए तभी देश का अधिक कल्याण है। भगतसिंह के साथ फासी की सजा पाए हुए सुखदेव ने महात्मा जी के नाम एक पत्र भेजा था, जिसमे उनकी इस अपील का उत्तर दिया गया था कि क्रातिकारी अपना आन्दोलन स्थगित कर दे। सुखदेव ने लिखा था—"क्रातिकारियों का ध्येय इस देश मे सोशलिस्ट प्रजातन्त्र प्रणाली स्थापित करना है। इस ध्येय मे सशोधन के लिए जरा भी गुजाइश नही है।....मेरा ख्याल है....आपकी भी यह धारणा न होगी कि क्राति-कारी तर्कहीन होते हैं और उन्हे केवल विनाशकारी कार्यों में ही आनन्द आता

है। हम आपको बता देना चाहते है कि यथार्थ मे बात इसके बिल्कुल विपरीत है। वे प्रत्येक कदम आगे बढाने के पहले अपने चारो ओर की परिस्थितियो पर विचार कर लेते है। उन्हे अपनी ज़िम्मेदारी का ज्ञान हर समय बना रहता है। वे अपने क्रातिकारी विधान मे रचनात्मक अश की उपयोगिता को मुख्य स्थान देते हैं, यद्यपि मौजूदा परिस्थितियो मे उन्हे केवल विनाशात्मक अश की ओर ध्यान देना पडा है।

"· ·वह दिन दूर नही है जब कि उनके (क्रातिकारियो के) नेतृत्व मे और उनके झडे के नीचे जन-समुदाय उनके समाजवादी प्रजातन्त्र के उच्च ध्येय की ओर बढता हुआ दिखाई पडेगा।"

इसी पत्र मे सुखदेव ने अपनी फासी की सजा के सम्बन्ध मे भी लिखा था —"लाहौर षड्यन्त्र के तीन राजबन्दी जिन्हे फासी का हुक्म हुआ और जिन्होने सयोगवश देश मे बहुत बडी ख्याति प्राप्त कर ली है, क्रातिकारी दल के सब कुछ नही है। वास्तव मे इनकी सज़ाओ के बदल देने से देश का उतना कल्याण न होगा जितना इन्हे फासी पर चढा देने से होगा।"[१]

क्रातिकारी नेताओ के प्रयत्न के बावजूद महात्मा गाधी तथा लार्ड इरविन मे बातचीत चलती रही।

महात्मा गाधी इस बात पर बहुत ज़ोर दे रहे थे कि आन्दोलन के दबाने मे सरकारी कर्मचारियो ने जो ज्यादतिया की हैं, उनके सम्बन्ध मे एक निष्पक्ष जाच समिति नियुक्त हो, इसे भी लार्ड इरविन ने नही माना।[२]

फिर भी भेट चलती रही और गाधी-इरविन पैक्ट हो गया।

इस पैक्ट मे यह बताया गया कि यह सन्धि अस्थायी है। यह तय हुआ कि शासन-विधान के प्रश्नो पर आगे विचार होगा, पर उसके सम्बन्ध मे मुख्य बातें इस प्रकार रही

शासन का स्वरूप फेडरेशन होगा। केन्द्र मे उत्तरदायित्व रहेगा। विदेशी नीति, रक्षा आदि भारत की हित की दृष्टि से होगा।

---

१. यह पत्र वास्तविक रूप से लिखा गया था और शहीद ग्रन्थमाला में प्रकाशित 'यश की धरोहर' के १९९-२०० पृष्ठ पर मौजूद है।

२. राजेन्द्र बाबू ने अपनी आत्मकथा (पृष्ठ ४०६) मे तो यह लिखा है—"लार्ड इरविन इस बात को सुनना भी नहीं चाहते थे।"

यह तय हुआ कि दमन बन्द किया जाएगा। सत्याग्रह आन्दोलन के कैदी छोडे जाएगे पर हिंसात्मक अपराधो के कैदी न छोडे जाएंगे। जुर्माने माफ होगे, पर वसूलशुदा जुर्माने लौटाए न जाएगे।

क्रान्तिकारी नेता इस पैक्ट की शर्तो से बहुत दुखी हुए। केन्द्रीय समिति के लोग यह कह रहे थे कि काग्रेस इस पैक्ट मे किसी बात को यहा तक कि नमक कानून हटवाने मे भी समर्थ नही रही। उस समय आन्दोलन बहुत तेजी के साथ ऊपर की ओर जा रहा था और बिल्कुल क्रान्तिकारी परिस्थिति हो रही थी। बायकाट इतना सफल हुआ था कि विलायत के कारखानो मे रोना-धोना मच गया था। आन्दोलन घट रहा हो ऐसी बात नही, बल्कि वह और उग्र होता जा रहा था। कई स्थानो मे तो समान्तराल सरकार कायम हो गई थी। जनता ने लड़ाई को अपने हाथ मे ले लिया था। ऐसी हालत मे यह समझौता हुआ। अवश्य ही ब्रिटिश सरकार ने तभी समझौता किया, जब उसे अपनी परिस्थिति खतरनाक मालूम हुई।

अजितकुमार उर्फ दादा तो इतने नाराज़ हुए कि उन्होने क्रोध मे महात्मा गाधी को अपशब्द कह डाले। सारे देश की सभाओ मे यह माग की जा रही थी कि यदि भगतसिह तथा उनके साथियो को महात्मा गाधी छुडा नही सके तो उन्हे यह सन्धि रद कर देनी चाहिए, पर उसका कोई असर नही हुआ और २३ मार्च को भगतसिह तथा उनके साथियो को फासी हो गई।

यो फासी पाने वालो को सबेरे फासी दी जाती है, पर इन तीन क्रान्तिकारियो को सन्ध्या समय फासी दी गई। इस सम्बन्ध मे कुछ ठीक-ठीक पता नही चला कि इस प्रकार समय बदल कर फासी क्यो दी गई। उन्ही दिनो अखबारों मे यह निकला कि फासी देते समय इनको फिर से मुखबिर होने के लिए कहा गया था। इसपर इन लोगो ने कुछ तिरस्कार भरे शब्द कहे, जिसका परिणाम यह हुआ कि कुछ गोरे उनपर पिल पडे और उन्हे मारते-मारते बेदम कर दिया, उसी हालत मे उन्हे फासी पर चढा दिया गया।

भगतसिंह ने अपने छोटे भाई को फासीघर से यह अन्तिम पत्र लिखा था :

प्रिय ..

आज तुम्हारी आखो मे आंसू देखकर बहुत दुःख हुआ। आज तुम्हारी आखो मे बहुत दर्द था। तुम्हारे आसू मुझे सहन नही होते। भाई, हिम्मत से शिक्षा

प्राप्त करना और स्वास्थ्य का ख्याल रखना। हौसला रखना और क्या कहू :

उसे फिक्र है हरदम नया तर्जे जफा क्या है,
हमें यह शौक देखें तो सितम का इन्तहा क्या है।
घर में क्यों खफा रहें खर्च का क्यों गिला करें,
सारा जहां अदू सही आओ मुकाबिला करें।
कोई दम का मेहमां हूं ऐ अहले महफिल,
चिरागेसहर हूं बुझा चाहता हूं।
मेरी हवा मे रहेगी ख्याल की बिजली,
यह मुश्तेखाक है फानी रहे न रहे।

अच्छा आज्ञा। 'खुश रहो अहले वतन हम तो सफर करते हैं।' हिम्मत से रहना। नमस्ते।

तुम्हारा भाई
भगतसिह[1]

## ६३

इन फासियो के फलस्वरूप देश का वातावरण ऐसा बन गया था कि क्रान्तिकारी दल के नेता यह आशा करते थे कि कराची काग्रेस मे महात्मा जी का समझौता-प्रस्ताव गिर जाएगा और इस प्रकार काग्रेस एक दूसरे ही मार्ग पर चल निकलेगी। इसलिए यह निश्चय हुआ कि क्रान्तिकारी, नौजवान भारत सभा के सदस्य अधिक से अधिक सख्या मे कराची जाए और परोक्ष तथा प्रत्यक्ष रूप से समझौते के विरुद्ध अपनी शक्ति लगाएं।

अमिताभ भी कराची जा रहे थे, पर वह इसके पहले एक बार अर्चना से मिलना चाहते थे। जीवानन्द से जो खबर मालूम हुई थी, वह बहुत ही दुःख-जनक थी। उसने कहा था—दादा, उसका तो दिमाग खराब हो गया है, वह

१. यह पत्र भी ऐतिहासिक हे और लेखक की 'भगतसिह' नामक पुस्तक मे उद्धृत ह।

शायद ही कभी ठीक हो।

इसलिए वे स्वय उससे मिलना चाहते थे। वे उसी रोज रात को पहुचे जिस सध्या को भगतसिंह को फासी हुई। उनका यह ख्याल था कि वे अगले दिन मिलेगे। पर सबेरे उन्होने एकाएक सुना कि लोग भगतसिह जिन्दाबाद के नारे लगा रहे है और जब वे बाहर निकले तो देखा, गोरो और पुलिस वालो पर हमले शुरू हो गए है।

दो घटे तक कानपुर की यह परिस्थिति रही, कि जैसे यही से क्रान्ति का सूत्रपात होगा और समझौता धरा रह जाएगा। जीवानन्द थोडे दिनो से अब्दुल नाम रखकर मजदूरो मे काम कर रहा था। वह भी बहुत खुश हुआ। तो क्या अब अन्तिम निपटारा होने जा रहा है ?

दोनो सडक पर निकल पडे और स्थानीय क्रान्तिकारियो के घर जा-जाकर उन्हे तैयार होने के लिए कहने लगे। दोनो आपस मे कह रहे थे—आखिर शहीदो का खून रग ले ही आया।

पर यह क्या ?

अभी वे लोग थोडे ही साथियो से मिल पाए थे कि 'अल्लाहो अकबर' और 'मारो सालो को' आदि शब्द सुनाई पडने लगे। उनके कान खडे हो गए, फिर भी उन्होने यही सोचा कि अग्रेजो को मारने की बातचीत हो रही है। थोडी ही देर मे उनकी भ्रान्ति दूर हो गई। शायद किसी भीड ने एक मुसलमान पुलिस-कर्मचारी पर हमला कर दिया था, इसीपर वह इक्के या तागे पर चढकर चिल्ला-चिल्लाकर यह कहता हुआ गया कि मुसलमान मारे जा रहे है।

फिर क्या था, जो लहर क्रान्ति मे परिणत हो सकती थी, वह हिन्दू-मुस्लिम दगे मे परिणत हो गई। थोडी ही देर मे दगा इतना प्रचण्ड हो गया कि लूटमार, अग्निकाड, पशुता, बर्बरता अपनी पराकाष्ठा पर पहुच गईं। साम्राज्यवाद जिस पेच को अपना ब्रह्मास्त्र समझता था, वह बहुत ही सफल रहा। क्रान्ति की परिस्थिति इस तरह दब गई कि लोगो ने यह भुला दिया कि कानपुर दगे का असली सूत्र कहा था।

अमिताभ और जीवानन्द उर्फ अब्दुल ने जब यह हालत देखी तो वह दिन होते हुए भी डाक्टर अरविन्दकुमार के यहा पहुच गए। इस समय कोई शासन-व्यवस्था तो रह नही गई थी।

कुछ घटे पहले जो लोग क्रान्ति की पगचाप सुनकर प्रफुल्लित हो रहे थे, वे अब प्रतिक्रान्ति का मनहूस चीत्कार सुनने लगे। एक बार तो जीवानन्द ने यह सोचा कि चलकर लोगो को समझाया जाए, पर अमिताभ ने उसे रोका। बोले—यह एक-दो व्यक्तियो का काम नही है। शताब्दियो से जो मशीन बिगडी हुई है, उसे एक दिन मे या दो-चार बलिदानो से सुधारा नही जा सकता, इसके लिए तो धर्म की जड ही काट देनी पडेगी जो मनुष्य और मनुष्य मे व्यर्थ के भेदभाव प्रस्तुत करता आया है। इससे शोषको को ही लाभ रहा है।

दोनो इस विषय पर अर्चना के कमरे मे ही बातचीत कर रहे थे। अर्चना निर्जीव-सी लेटी पडी थी। ऐसा मालूम होता था जैसे उसके शरीर मे रक्त रह ही नही गया है। वह किसीसे बोलती-चालती नही थी।

डाक्टर साहब का तो यह कहना था कि अर्चना को 'मेलनकोलिया' हो गया है और वह बहुत मुश्किल से ठीक होगा। पता नही ठीक होगा या नही।

अमिताभ कह रहे थे—यह हमारे देश का एक महान कलक है, पता नही इसके रहते हुए हम कुछ कर भी पाएगे या नही। जब मै यह देखता हू तो मुझे बडी निराशा होती है। ऐसी घटनाओ से वर्षो की कमाई एक ही रात मे गवा दी जाती है··

जीवानन्द ने कहा—दादा, मै इन दिनो रूस मे कैसे कट्टर धर्मियो को धीरे-धीरे रास्ते पर लाया जा रहा है, यह पढता रहा हू। इस सम्बन्ध मे हमे बहुत कुछ करना पडेगा।

—हा, पर सबसे पहले सही दृष्टिकोण चाहिए और हमारे देश मे युवको और युवतियो का एक बहुत बडा जत्था चाहिए जो धर्म के कुप्रभावो से सपूर्ण रूप से मुक्त हो चुका हो—कहकर वे उत्तेजित होकर टहलने लगे और बोले —मै अब समझ रहा हू कि किसी भी उद्देश्य के लिए कोई शार्टकट नही है····

जीवानन्द और अमिताभ इस प्रकार बाते कर ही रहे थे कि अर्चना एका-एक उठकर बैठ गई। जैसे उसमे नवजीवन का सचार हुआ हो। बोली—मैं भी कराची जाऊगी ·

सयोग से डाक्टर साहब भी वही पर थे, उन्होने कहा—नही, तुम नही जा सकती। अभी तुम्हारी तबियत इस लायक नही है।

पर अमिताभ ने कहा—नही, डाक्टर साहब, आप इन्हे जाने दीजिए। हा,

इनके साथ कोई और जाए तो अच्छा है क्योकि मेरा या जीवानन्द का कोई भरोसा नही ।

उसी समय घटे भर के अन्दर एक गाडी जाती थी । स्टेशन पास ही पडता था, इसलिए दगे के बावजूद वे स्टेशन पहुच गए और कराची के लिए रवाना हो गए ।

## ६४

कानपुर का दगा बढता ही गया और गणेशशकर विद्यार्थी आदि नेता उसे शान्त करने मे असमर्थ रहे । पहले दिन ही लोगो को बचाते वक्त विद्यार्थी जी के पैरो मे कुछ चोट आई । उस दिन दगे का उन्हे जो प्रत्यक्ष अनुभव हुआ, उससे वह इस नतीजे पर पहुचे कि पुलिस दगा दबाना नही चाहती, बल्कि उसे बढाना चाहती है । सत्याग्रह आन्दोलन तथा शहीदो के त्याग के कारण जो क्रान्तिकारी वातावरण उत्पन्न हुआ था, पुलिस उसे नष्ट करना चाहती थी ।

जनता मे धर्मान्धता बहुत अधिक मात्रा मे थी, तभी सरकार अपनी कूट-नीति मे सफल हुई । जब जनता के नेता यह समझ रहे थे कि उनके पैर बहुत मजबूत है, तब इस प्रकार का दगा करा देना बहुत ही सफल चाल थी। गणेश-शकर विद्यार्थी ने इस बाढ के विरुद्ध लडना और आवश्यकता हो तो बलिदान देना स्वीकार किया। यह डेढ पसली का दुबला-पतला व्यक्ति नगे पाव, नगे सिर, सिर्फ एक कुर्ता पहने, बिना कुछ खाए-पिए घायलो की तीमारदारी और लोगो को समझाने मे लग गया ।

बगाली मुहाल हिन्दू प्रधान मुहल्ला था । वह वहा पहुचे और मुसलमानो को बचाने मे लग गए । उन्हे भूखा-प्यासा देख हिन्दुओ ने उन्हे जलपान करने को कहा, पर उन्होने कहा—जिस मुहल्ले मे मुसलमान भाइयो पर इतना अत्याचार हो रहा है, वहा का पानी मैं नही पी सकता ।

बाद को वह फिर एक हिन्दू प्रधान मुहल्ले मे गए । वहा भी लोगो ने उनसे

जलपान करने को कहा तो वे बोले—मेरे साथ जो मुसलमान भाई हैं, जब तक वे पानी नही पीते, मैं नही पी सकता ।

इसपर वहा के हिन्दू शरमा गए और उन्होने मुसलमानो को खिलाया-पिलाया, तब विद्यार्थी जी ने खाना खाया ।

किसीने विद्यार्थी जी से यह कहा कि आप हिन्दुओ के मुहल्ले मे मुसलमानो को बचाते फिर रहे है, पर मुसलमानो के मुहल्ले मे हिन्दू मारे जा रहे है, इसपर आप क्या कर रहे है ?

यह एक चुनौती थी, इससे स्वीकार करना ज़रूरी था । विद्यार्थी जी फौरन चल पडे । रास्ते मे मिश्री बाजार और मछली बाजार के कुछ हिन्दुओ की उन्होने प्राणरक्षा की । और वहा से चलकर वे चौबेगोला पहुचे । वहा वे विपत्ति मे फसे हुए हिन्दुओ को निकलवाकर हिन्दू-मुहल्लो मे भेज रहे थे कि एक मुसलमान भीड आई और उसने उनपर तथा उनके साथ के स्वयसेवको पर हमला करना चाहा, इसपर एक मुसलमान स्वयसेवक ने कहा—इन्हे क्यो मारते हो ? इन्होने तो सैकडो मुसलमानो को बचाया है।

इसपर भीड आगे नही बढी और तितर-बितर हो गई ।

इसी तरह वे कई मुसलमान गिरोहो से बचते चले गए, पर अन्त मे ऐसी परिस्थिति आई कि एक हिन्दू साथी ने विद्यार्थी जी को जबर्दस्ती खीचना शुरू किया और कहा—आप इधर न जाए, लोग इस समय किसी तरह का उपदेश या सही बात सुनने को तैयार नही है।

इसपर उन्होने नाराज़ होकर कहा—क्यो घसीटते हो मुझे ? मैं भागकर जान नही बचाऊगा । एक दिन मरना है ही, अगर मेरे मरने से ही इन लोगो के दिल की प्यास बुझती है तो अच्छा है कि मै यही अपना कर्तव्य पालन करते हुए आत्मसमर्पण कर दू ।

भीड पर इसका भी कोई प्रभाव नही पडा और चारो तरफ से धर्मान्ध मुसलमानो की भीड उनपर तथा उनके स्वयसेवको पर टूट पडी । लाठिया और छुरे चले, साथ मे जो मुसलमान स्वयसेवक था वह तो थोडी मार के बाद छोड दिया गया, बाकी दो हिन्दू स्वयसेवक बुरी तरह घायल हुए, इनमे से ज्वालादत्त नाम का एक स्वयसेवक चोट से मर गया, पर दूसरा बच गया । विद्यार्थी जी पर भी हमला हुआ और वे वही शहीद हो गए ।

कैसे क्या हुआ, यह बाद को भी किसीको पूरी तरह पता न लगा, पर मुसलमान स्वयसेवक ने बाद को बयान दिया कि लाठी, काते, भाले, बल्लम, कटार आदि चल रहे थे। जब लोग उनपर टूट पडे तो उन्होने सिर झुका दिया। उनकी मृत्यु हो जाने पर मुसलमानो ने जल्दी से उनका शव वहा से हटाकर छिपा दिया। दो-तीन दिन बाद जब लाश फूलकर बदसूरत हो गई और पहचाने जाने लायक नही रही तो उन्होने उसे किसी तरह और लाशो के साथ मिलाकर अस्पताल भेज दिया। उनकी खोज हो रही थी। २६ तारीख को दिन भर खोज जारी रही। २७ मार्च को एकाएक पता चला कि अस्पताल मे जो बहुत-सी लाशे पडी हुई है, उनमे एक के विद्यार्थी जी की लाश होने का सन्देह है। कई नेता तुरन्त वहा पहुचे। लाश फूलकर काली पड़ गई थी, बहुत कुरूप हो गई थी, फिर भी लोगो ने उनके खद्दर के कपडे, निराले ढग के बाल और हाथ पर खुदे हुए 'गजेन्द्र' नाम आदि देखकर पहचान लिया कि वह विद्यार्थी जी की लाश थी। उनका कुर्ता अभी तक उनके शरीर पर था और उनकी जेब से तीन पत्र भी निकले जो लोगो ने विद्यार्थी जी को लिखे थे। उन्हे देखकर बिल्कुल निश्चय हो गया कि लाश विद्यार्थी जी की ही है।[१]

इस प्रकार गणेश शकर विद्यार्थी ब्रिटिश कूटनीति और भारतीय धर्मान्धता के शिकार हुए।

यह खबर भी कराची पहुची, पर यह और तरह की खबर थी। भगतसिह तथा अन्य क्रान्तिकारी शहीदो की फासी की खबर से वातावरण मे जो रग चढा था, वह इससे कुछ उतर ही गया। वह तो गौरव की बात थी और यह अपने लिए लज्जा की बात थी, ऐसी लज्जा जिससे सबका सिर नीचा होता था। यदि गणेशशकर को डसकर यह अजगर हमेशा के लिए शात हो जाता तो भी कोई बात नही थी, पर भविष्य मे इससे और अधिक भय था।

भगतसिंह आदि की शहादत से राष्ट्रीयता का पलडा भारी पडता था, पर कानपुर के दगे से राष्ट्रीयता का पलड़ा दूसरी ओर ही झुक गया। वामपथियो और उग्र काग्रेसियो के प्रयत्नो के बावजूद सरकार के साथ समझौता सम्बन्धी प्रस्ताव पास हो गया। गाधीजी की जय-जयकार रही। जवाहरलाल से

१ यह विवरण लगभग अक्षरश· 'शहीद ग्रन्थ-माला' के अन्तर्गत देवव्रत शास्त्री द्वारा लिखित 'गणेश शकर विद्यार्थी' से लिया गया है।

यह समझौता सम्बन्धी प्रस्ताव रखवाया गया। उन्होने बताया कि मैंने प्रबल मानसिक सघर्ष तथा बेचैनी मे उस प्रस्ताव को रखना कबूल किया है।

सुभाष बाबू ने भी कथित राष्ट्रीय एकता दिखाने के लिए इस प्रस्ताव का विरोध नही किया।

काग्रेस के अन्दर वे सारी बाते हुईं, जिन्हे गाधी जी चाहते थे। हा, वामपथियो को खुश करने के लिए मौलिक अधिकारो पर भी एक प्रस्ताव पास हुआ, जिसमे यह कहा गया किसीको खिताब नही दिया जाएगा, मृत्युदण्ड नही रहेगा। लगान घटाने का वादा किया गया। यह तय हुआ कि किसी सरकारी नौकर को पाच सौ से अधिक तनख्वाह नही मिलेगी, विदेशी वस्तु तथा विदेशी सूत को देश से निकालने का वायदा किया गया। यह कहा गया कि सब प्रधान उद्योग-धन्धो पर, खानो, रेलो, जलपथो, जहाजो तथा सार्वजनिक यातायात के अन्य साधनो पर या तो राष्ट्र का कब्जा होगा या राष्ट्र उनपर नियन्त्रण करेगा। किसानो की कर्जदारी घटाने तथा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सूदखोरी पर नियन्त्रण का वादा किया गया।

यद्यपि काग्रेस के अन्दर गाधीजी की जय-जयकार रही और उन्होने जो चाहा सो हुआ, पर पडाल के बाहर सैकडो लोगो ने इसपर गाधीजी को काला झडा दिखाया और समझौते के विरोध मे धुआधार व्याख्यान हुए।

वामपथी, जिनमे हमारे पूर्वपरिचित बहुत-से क्रातिकारी भी थे, गाधीजी के साथ-साथ समझौता प्रस्ताव रखने वाले जवाहरलाल को भी कोसते रहे।

समुद्र-गर्जन के साथ इन लोगो का गर्जन भी सुनाई पड रहा था, पर वह भी उसी तरह टकरा-टकराकर व्यर्थता मे पर्यवसित हो रहा था।

एक छोटी-सी सभा मे अर्चना की आवाज भी सुनाई पड रही थी—यह समझौता इन सैकडो लोगो के साथ विश्वासघात है जो देश के लिए बलिवेदी पर चढ गए है। मुझे सबसे आश्चर्य इस बात पर है कि जवाहरलाल नेहरू ने इस समझौते का प्रस्ताव रखा। आपको याद होगा कि भगतसिंह की फासी पर पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने क्या वक्तव्य दिया था।

कहकर उसने एक अखबार की कटिग निकाली और उसे पढकर सुनाया—जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, "मै भगतसिह तथा उनके साथियो के अन्तिम दिनो मे मौन धारण किए रहा क्योकि मैं डरता था कि कही मेरे किसी शब्द

से फासी की सजा रद होने की सम्भावना नष्ट न हो जाए। मै चुप रहा, गोकि मेरी इच्छा होती थी कि उबल पडू। हम सब मिलकर उन्हे बचा न सके गोकि वे हमारे सबके प्यारे थे, और उनका महान त्याग तथा साहस भारत के नौजवानो के लिए एक प्रेरणा की चीज़ थी और है। हमारी इस असहायता पर देश मे दु.ख प्रकट किया जाएगा, पर साथ ही हमारे देश को इस स्वर्गीय आत्मा पर गर्व है और जब इग्लैण्ड हमसे समझौते की बात करे तो हम भगतसिह की लाश को न भूले।"[१]

इसी तरह जगह-जगह सभाए हुई, काले झडे दिखाए गए। सरकार को यह मालूम हो गया कि देश मे क्रातिकारी शक्तिया बहुत प्रबल हो रही है, पर उसे अपने राजनीतिज्ञो और कूटनीतिज्ञो का भरोसा था और यह कूटनीतिज्ञ जानते थे कि जनता को एक दफे सुला दिया जाएगा तो फिर वह जल्दी नही जगने की। गोलमेज के रूप मे उनके पास वह दवा थी, जिससे वे नेताओ को और उनके जरिए से जनता को सुला सकती थी।

*ऐसी ही एक सभा मे आनन्दकुमार ने अर्चना को देख लिया और सभा के बाद वे उससे मिले। उन्हे यह देखकर बहुत खुशी हुई कि अर्चना अब ठीक है और उत्साह के साथ कार्य कर रही है। पूछा— तुम अकेले आई हो ?

इसपर अर्चना ने अजीब तरीके से हसते हुए कहा—मै अकेले तो नही चली थी, मेरे साथ जीवानन्द और अमिताभ भी चले थे, पर वे दो स्टेशन हमारे साथ चलकर ही कानपुर लौट गए थे।

—क्यो ?

—उस दिन दगा शुरू हो चुका था। ट्रेन मे अमिताभ जी एकाएक बोले यो तो हम इस दगे को मिटा नही सकेगे पर हमने हमेशा फल बिना देखे सग्राम किया है, अब भी ऐसा ही करेगे। इस समय कानपुर छोडकर जाना उचित न होगा। जीवानन्द भी उनके साथ लौट गए। इसलिए मुझे अकेले ही आना पडा।

आनन्दकुमार ने सारी बाते सुनकर कहा—उन्होंने ठीक ही किया। उनके जीवन तो इसी प्रकार के सग्रामो के लिए है। उनकी कोई खबर मिली ?

—नही ··

१. यह वक्तव्य ऐतिहासिक है।

उसी समय से अर्चना आनन्दकुमार के कैम्प मे शरीक हो गई और लौटती यात्रा मे भी सबका साथ रहा। अर्चना के अनुरोध पर आनन्दकुमार, श्यामा और कबीर कानपुर उतरे।

घर मे देखा तो कोई नही था। लडके स्कूल गए हुए थे। डाक्टर साहब शायद डिस्पेसरी गए थे। नौकर से पूछा कि भाभी कहा गईं, तो वह अजीब रहस्यमय तरीके से बोला—वह तो रोज़ बच्चो को स्कूल भेजकर चली जाती है, फिर चार-पाच बजे आती है। कभी-कभी और देर हो जाती है। दो-चार रात तो घर मे रही भी नही।

पूछने पर यह भी पता चला कि डाक्टर साहब भी दोपहर का खाना खाने घर नही आते।

यह परिस्थिति देखकर अर्चना को बडी चिन्ता हुई और उसे आश्चर्य हुआ कि दो-चार दिन मे ऐसी हालत हो गई, पता नही क्या हुआ।

फिर भी अतिथियो के स्वागत मे कोई कमी नही हुई। अतिथि १८५७ से सयुक्त ऐतिहासिक स्थानो को देखने के लिए गए, पर अर्चना के मन मे एक काटा चुभता रहा कि पता नही क्या हो गया। क्या भाभी ने कोई नौकरी कर ली, या पति-पत्नी मे कुछ मनमुटाव हो गया? कही मेरे ही कारण तो यह मनमुटाव पैदा नही हुआ? यह जोडी तो बहुत सुखी थी, फिर मेरी छूत लगते ही अनर्थ हो गया?

जब सध्या समय वह घर पर लौटी तो भाभी आ चुकी थी। उसका चेहरा काफी उतरा हुआ था और ऐसा लगता था कि कई दिनो से सोई नही।

भाभी ने स्वय ही बताया—तुम तो चली गईं, पर उस दिन रात को जीवानन्द उसी तरीके से आया तो मुझे बडा आश्चर्य हुआ। कुछ भय भी लगा। डाक्टर साहब भी घर पर नही आए थे और बच्चे सो चुके थे।

जीवानन्द ने बताया कि वे रेल से उतरकर हिन्दुओ और मुसलमानो को समझाने मे लग गए। कुछ सफलता भी मिली। जीवानन्द देखने से मुसलमान लगते ही थे, इसलिए यह जोडी कुछ सफल रही। सफलता से उनका उत्साह बढ गया।

एक जगह कुछ हिंदू एक मुसलमान को पकड़कर लिए जा रहे थे। वह बेचारा बहुत घबडाया हुआ था। अमिताभ दादा ने उन्हे समझाने की चेष्टा की।

पर वे नही माने और उम बेचारे को मारने लगे। तब दादा बीच मे कूद पडे। हिन्दुओ ने जोश मे आकर कहा—पहले इसी साले को मारो। इन्ही जयचन्दो ने देश का नाश किया है।

जब श्यामा और अर्चना यहा तक सुन चुकी तो वे अधीर होकर बोली—बताओ न, वह अच्छे तो हैं ?

भाभी ने कहा—वही तो बताती हू। उन लोगो ने उन्हे लाठियो से मार गिराया, फिर उन्होने जीवानन्द को पकडा। किसीने कहा, चलो एक हिन्दू मरा, तो एक मुसलमान भी मरेगा, बदला हो जाएगा

जीवानन्द पहले तो अकड गया। उसने यह नही बताया कि मैं असल मे हिन्दू हू। लोगो ने उसे दस-पाच लाठिया मारी तब उसे ख्याल आया कि मैं स्वय तो मर ही रहा हू और दादा मे यदि कुछ जान बाकी है तो मै उनको भी मार रहा हू

इसपर वह चिल्लाकर बोला कि मै हिन्दू हूं और ज़ोर-जोर से गीता के श्लोक पढने शुरू कर दिए।

इस बीच लोगो की रक्तपिपासा काफी तृप्त हो चुकी थी या वे डर गए थे। एक ने कहा—साले ने यो ही दाढी रखाई है। दाढी रखाने की मार तो खा ही चुका, छोडो इसे।

पर लोग नही माने। उसका पायजामा खोलकर बाकायदा प्रमाण लिया गया कि वह मुसलमान नही है, तब वह छूटा।

लोगो ने पकडे हुए उस मुसलमान को फिर भी नही छोडा था और उसे मारने जा रहे थे कि जीवानन्द बीच मे कूद पडा। उसने कहा—मैं क्रातिकारी हू और भगतसिंह के साथियो मे हू।

भगतसिंह के नाम का जादू का-सा असर हुआ।

लोगो ने मुसलमान पर मार-पीट करनी बन्द कर दी। पर जीवानन्द बोला—आप लोग इस बेचारे को छोड दे, मैं आप लोगो से सब शहीदो के नाम पर अपील करता हू।

तब भीड की चेतना शायद कुछ जगी। उन लोगो ने फिर भी उस बेचारे को दो-चार लाठी और मारी। जीवानन्द दादा को छोडकर उस मुसलमान को हिन्दू मुहल्ले के छोर तक पहुंचा आया।

जब जीवानन्द लौटा तो भीड जा चुकी थी और दादा बुरी हालत मे पडे हुए थे। जाने कैसे वह फिर उन्हे अपने अड्डे पर ले गया। घाव-वाव धोए। मामूली मरहम-पट्टी की, तब यहा आकर तुम्हारे भइया को खबर दी। पहले तो वे यही ला रहे थे, पर मैंने उनके सिर पर इनाम होने की बात याद दिलाई, इसपर वे एक अन्य स्थान पर रखे गए है। अभी तक होश नही आया है। मै वही तो दिन भर रहती हू।

अर्चना के सीने पर से पत्थर उतरा, वह क्या-क्या सोच रही थी।

सब लोग वहा जाने के लिए व्यग्र हो गए। थोडी देर मे यह काफिला यहा-वहा घूमकर (क्योकि यह दिखाना जरूरी था कि वे यो ही घूम रहे है) वहां पहुचा।

जीवानन्द के सिर पर पट्टी बंधी हुई थी, उसी हालत मे वह उनकी सेवा कर रहा था। असली सेवा तो सरोज भाभी करती थी।

अमिताभ के सारे शरीर मे तरह-तरह की चोटे थी। भेजा दो जगह से खुल गया था, असली चोट वही थी।

प्रश्न के उत्तर मे सरोज बोली—वे कहते है, अभी जीवन का चास फिफ्टी-फिफ्टी है। उनका तो यहा तक कहना है कि और कोई होता तो मर चुका होता, इनका दिल बहुत मजबूत है, इसलिए टिक रहे हैं। शायद इसीसे बच जाएं।

कुछ देर बाद सरोज चली गई और सब लोग दूसरे कमरे मे जाकर जीवानद से दगे और मारपीट का पूरा हाल सुनते रहे।

जीवानन्द सब कुछ सुनाकर बोले—दादा ने चोट खाकर गिरने के पहले कहा था, 'यह सब क्या हो रहा है ?' शायद वे इतनी निष्ठुरता की आशा नही करते थे। अफसोस तो यह है कि उनकी वीरता और उनके ऐसे सैकडो लोगो की वीरता व्यर्थ गई और दगा चलता ही गया··

अर्चना को इस विषय मे कुछ दिलचस्पी नही थी और न श्यामा को ही। वे तो यही जानना चाहती थी कि दादा का जीवन बचेगा या· ?

थोडी देर मे डाक्टर साहब भी आ गए। अच्छी तरह जांच के बाद गम्भीर होकर बोले—अभी वही हालत है····

—फिफ्टी-फिफ्टी ?

•

—हां—फिर कुछ सोचकर बोले—लगभग

अर्चना ने भाई का चेहरा देखा तो उसे निराशा हुई । उसे लगा कि भाई साहब पूरी बात नही बता रहे है। वह एकाएक आकुलता के साथ आनन्दकुमार से बोली—चाचा जी, यह कब तक चलता रहेगा ?

आनन्दकुमार ने कहा—जो कुछ होगा, अच्छा ही होगा । इसमे बुरा तो कुछ हो ही नही सकता ।

श्यामा बोली—अफसोस है कि वे हिन्दुओ के हाथो ही मारे गए ।

आनन्दकुमार ने कहा—प्रत्येक महापुरुष अपने आदमियो के हाथो ही मारा जाता है, पर मुझे विश्वास है कि वे मरेंगे नही।

सब लोगो के चेहरे एकाएक उद्भासित हो गए। पर अगले ही क्षण यह याद आया कि आनन्दकुमार तो डाक्टर नही है।

पर आनन्दकुमार ने कहा—वे इस कारण जिएगे कि उनका जीना जरूरी है ।

रात को सब लोग वही रहे। सरोज ने सबके लिए खाना भेजा, पर आनन्दकुमार, डाक्टर साहब, जीवानन्द और कबीर ने ही कुछ-कुछ खाया। श्यामा और अर्चना ने तो बहाना बनाकर खाना छुआ भी नही ।

एकाएक रात तीन बजे एक आवाज-सी हुई । सब लोग जाग तो रहे ही थे, उठकर लपके। डाक्टर चिन्तित होकर स्टेथेस्कोप लेकर दौडे। उनके चेहरे पर गहरी रेखाए थी। शायद वे इस घटना की बात पहले से ही जानते थे ।

उन्होने स्टेथेस्कोप लगा दिया और एक तरफ उसे कान से लगाए रहे, दूसरी तरफ एक हाथ से नाडी देखने लगे।

सब लोग कभी अमिताभ के चेहरे को और कभी डाक्टर के चेहरे को देखते रहे, पर डाक्टर देर तक कुछ न बोले। मन ही मन जाने क्या हिसाब लगाते रहे ।

ऐसे लगभग दस मिनट निकल गए, फिर एकाएक उनके चेहरे का तनाव घटने लगा, फिर एकदम सौम्य हो गया।

उसी समय पहला मुर्गा बोल उठा ।